UTTRAKHAND OPEN UNIVERSITY

SCHOOL OF SOCIAL SCIENC

LM-105

बैकिंग विधि
(BANKING LAW)

Expert Committee

Prof. K.C. Joshi
Rtd. Vice Chancellor
Kumaoun University, Nainital

Prof. Girija Prasad Pande
Director School of Social Scienc
Uttrakhand Open University, Haldwani

Prof. Harbansh Dixit
Principal
Maharaja Harishchandra
P.G. College (Moradabad) U.P.

Prof. P.C. Joshi
HOD Law Department
SSJ Campus Almora
Kumaoun University, Nainital

Mr. Narendra Kumar Jaguri
Academic Associate
Law Departmet
Uttrakhand Open University
Haldwani

Course Coordination & Book Editing

Mr. Narendra Kumar Jaguri
Academic Associate
Law Departmet
Uttrakhand Open University
Haldwani, Nainital

Unit writer

Mr. Sandeep Khanduri, Dehradun
&
Mr. Narendra Kumar Jaguri
Academic Associate
Law Departmet
Uttrakhand Open University
Haldwani, Nainital

Haldwani (Nainital)

Copy Right @UTTRAKHAND OPEN UNIVERSITY

Edition: June 2013

Publisher : Director Study & Publish

mail : studies@uou.ac.in

Uttrakhand Open University, Haldwani (Nainital) –263139

UTTRAKHAND OPEN UNIVERSITY
HALDWANI

बैंकिंग विधि **LM-105**
Banking Law

खण्ड–1– परिचय एवं बैंकिग पर सामाजिक नियंत्रण (Introduction & Social control over banking) **Page- 1-63**

इकाई–1– बैंकिंग कानून का विकास एवं प्रकृति (Nature and development of banking) **Page-1- 16**

इकाई–2– राष्ट्रीकरण; मूल्यांकनः निजी स्वामित्व, राष्ट्रीकरण एवं विनिवेश (Nationalization; Evaluation: private ownership, nationalization and disinvestment) **Page-17-38**

इकाई–3 जमाकर्ताओं (निक्षेपी) की संरचना का संरक्षण (Protection of depositors; Priority lending; Promotion of under privileged classes) **Page-39-63**

खण्ड–2– - केन्द्रीय बैंक (The Central Bank) **Page-64-123**

इकाई–4– केन्द्रीय बैंक का उद्भव; विशेषतायें; सामाजिक एवं आर्थिक संरंचना (Evolution of Central Bank; Characteristics; Economic and social objectives) **Page-64-77**

इकाई–5– भारतीय रिजर्व बैंक का संगठनात्मक ढ़ांचा एवं कार्य (Organizational structure; functions of RBI) **Page-78-94**

इकाई–6– भारतीय रिजर्व बैंक के कार्य (Functions of the RBI) **Page-95-110**

इकाई–7– गैर बैंकिंग कम्पनियों पर आर0बी0आई0 का नियन्त्रण (Control of RBI over non-banking companies) **Page-111-123**

खण्ड–3– बैंकर एवं ग्राहक के सम्बन्ध एवं भारत में बैंकिंग प्रणाली में अ़द्यतन प्रवाह (Relationship of Banker and Customer and Recent Trends of Banking System in India) **Page- 124-198**

खण्ड–8– बैंकर एवं ग्राहक के मध्य विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध **(Various kinds of relationship between banker and customer)** **Page-124-149**

इकाई–9– नई प्रोद्योगिकी – सूचना प्रोद्योगिकी, स्वचालन एवं स्वचालित यंत्रों के विधिक पहलू **(New technology- Information technology, Automation and legal aspects Automatic teller machine and)**

Page- 150-177

इकाई–10– इंटरनेट का प्रयोग, स्मार्ट कार्ड, विशेषज्ञ प्रणाली/तन्त्र का प्रयोग, क्रेडिट कार्डस **(Use of Internet, Smart Card, Use of Expert System, Credit Card)** **Page-178-198**

खण्ड–4– पराक्रम्य लिखत **(Negotiable Instruments)** **Page- 199-270**

इकाई–11– अर्थ एवं प्रकार : स्थानान्तरण और पराक्रम्य **(Meaning and kinds; Transfer and negotiations)**

Page-199-218

इकाई–12– धारक एवं सम्यक अनुक्रम धारक **(Holder and holder in due course.)** **Page-219-236**

इकाई–13– प्रस्तुतीकरण एवं भुगतान **(Presentment and payment.)** **Page- 237-253**

इकाई–13– पक्षों का दायित्व एवं चैक का अनादरण **(Liabilities of Parties and Dishonor of cheque)**

Page- 254-270

एल–एल.एम. प्रथम वर्ष

बैंकिंग विधि

खण्ड–1. परिचय एवं बैंकिग पर सामाजिक नियंत्रण(**Introduction & Social control over banking**)

इकाई –1. बैंकिंग कानून का विकास एवं प्रकृति

(**Nature and development of banking**)

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 विषय

1.3.1बैंकिंग की प्रकृति एवं विकास

1.3.2 बैंकों का राष्ट्रीयकरण

1.3.3राष्ट्रीयकरण के विरूद्ध विचार

1.3.4 बैंकिंग के कार्य

1.3.5 बैंकिंग के कारोबार

1.3.6 बैंकिंग के विविध कार्य

1.3.7 बैंकिंग खाते के प्रकार

1.4 सारांश

1.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

1.6 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

आज के व्यवसायिक युग में, आप बिना बैंकिंग व्यवसाय के नहीं रह सकते हैं। उद्योगों के पीछे असली शक्ति धन है जो व्यापार एवं वाणिज्य का आधार है। जब आप अपने धन को खोना नहीं चाहते हैं और आप उसको प्रयोग में भी नहीं ला रहे हैं तब इस धन को बचाने का साधन है बैंक। बैंक में पैसा जमा करना करना भी एक व्यापार है जहां आपके जमा धन पर भी पैसा मिलता है अर्थात पैसे से पैसा बढ़ाने का साधन बैंक है। लोकप्रिय बैंक उधार बांटने एवं चैकों के लेन–देन के लिए आज बाजार पर राज कर रहे हें। आज भारतीय बैंकिंग ने अंग्रेजी एजेंसी हाउस से लेकर मुम्बई एवं कलकत्ता तक का सफर तय किया है। O.W. Homes के शब्दों में– व्यक्ति पैसों के मामलों में किसी पर विश्वास नहीं करता है लेकिन वह पैसे बैंक में जमा कर बैंक पर विश्वास कर सकते हैं अर्थात भारतीय जनता भारत के बैंकों पर विश्वास कर सकती है। भारत में बैंकिंग व्यवस्था नई नहीं है इसने अपने अस्तित्व के विकास के लिए लगभग 200 वर्षों तक लम्बा सफर तय किया है। इस अवधि के दौरान प्रशासन के नियम एवं बैंकिग कार्य प्रणाली कुछ बदल गया है। प्रौद्योगिकी के विकास की सदी में मानव जाति ने 30–35 वर्षों में समग्र रूप से विकास को धारण किया है। इसके अतिरिक्त प्रौद्योगिकी विकास के साथ जुड़ी हुई आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं को ग्राहकों की आवश्यकता के साथ ध्यान में रखते हुए हुई बैंकिंग व्यवसायीकरण की आवश्यकता व अपेक्षाओं में भी वृद्धि हुई है। इस दृष्टि के साथ अगर हम भारत में बैंकिंग का इतिहास देखे तो यह एक बहुत दिलचस्प घटनाओं में से एक घटना है। इस बैंकिंग व्यवस्था में और नियमों की आवश्यकता के फलस्वरूप मौजूदा बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 अस्तित्व में आया।

1.2 उद्देश्य

भारतीय बैंकिंग व्यवस्था के क्षेत्र में, बैंकिंग की अनिवार्य सुविधाओं का अध्ययन किया जाता है। बैंकिंग की राष्ट्रीयकरण की अवधारणाओं में, बैंकर एवं ग्राहक, बैंकिंग व्यवसाय, बैकरों का ग्रहणाधिकार, खातों के प्रकार एवं ग्राहक एवं बैंक में सम्बन्ध की विस्तार से चर्चा की जा रही है। इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को बैंक और बैंकिंग व्यवसाय के बारे में पूर्ण रूप से अवगत कराना है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद, बैंकिंग व्यवसाय की अवधारणा का पूर्ण परिदृश्य बदल गया है।

1.3.1 बैंकिंग का विकास एवं प्रकृति

तीन प्रेसीडेंसी शहरों अर्थात कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में बैंक आफ बंगाल 1809, बैंक आफ मुम्बई 1840 एवं बैंक आफ मद्रास 1867 में अस्तित्व में आये। बैंक आफ बंगाल ने तीनों बैंकों के एकीकरण हेतु सरकार को एक प्रस्ताव दिया। सरकार ने दो कारणों से इस प्रस्ताव का अनुमोदन नहीं किया, प्रथम तो यह एकल संस्था अधिक शक्तिशाली हो जायेगी द्वितीयतः इतनी बड़ी संस्था देश के लिए आवश्यकता के अनुरूप प्रबंधन नहीं कर पायेगी। लेकिन 1899 में सरकार ने स्वयं इन तीनों बैंकों के एकीकरण का प्रस्ताव पारित किया। इस समय चैम्बर्स आफ कामर्स (वाणिज्यिक मण्डलों) एवं तीनों प्रेसीडेसी बैंकों ने इसका विरोध किया। वर्ष 1919 में तीनों बैंकों ने अपने एकीकरण की सहमति दे दी और वर्ष 1921 में तीनों बैंक एक हो गये। फलस्वरूप भारत में इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया अस्तित्व में आया जो वर्तमान रूप में स्टेट बैंक आफ इण्डिया है।बैंकों के विनिमयों कार्यों जैसे करेंसी अर्थात नोट जारी करना आदि के लिए एक केन्द्रीय बैंक बनाने का विचार उत्पन्न हुआ जिसके फलस्वरूप अगस्त 1925 में हिल्टन यंग आयोग की स्थापना की गई जिसकी रिपोर्ट ''भारतीय विनिमय और मुद्रा प्रणाली'' के परिणामस्वरूप रिजर्व बैंक आफ इण्डिया स्थापित किया गया। केन्द्रीय बैंक के वाणिज्यिक कार्य इम्पीरियल बैंक से लिए गए। हालोकि ''रिजर्व बैंक आफ इण्डिया'' 1935 को अस्तित्व में आया। भारत में, बैंकिंग के प्रथम प्रयास में भारतीय कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1936 पारित किया गया। 15 जनवरी 1937 को बैंकिंग अधिनियम द्वारा बैंकिंग प्रावधानों के एक अलग का उदय हुआ। इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व, बैंकों के समस्त मामले कम्पनी अधिनियम 1913 के द्वारा संचालित किये जाते थे। सामान्यतः इसे बैंकिंग एवं गैर बैंकिंग कम्पनीज के मामलों में लागू किया जाता था। कम्पनी अधि0 में मात्र कुछ ही प्रावधान थे जो कि कम्पनी एवं बैंक में अंतर स्थापित करते थे। यथा धारा 4 के अनुसार, बैंकिंग व्यवसाय संचालन के लिए दस से अधिक साझेदारों की साझेदारी पर रोक लगाना, जब तक कि यह धारा 136 अधीन पंजीकृत न हो। कम्पनी यदि बैंकिंग व्यवसाय कर रही है तब उसे छः कथन (आर्थिक चिट्ठा) परिसम्पत्ति एवं दायित्वों के प्रस्तुत करने होंगे। धारा 138 सरकार को बैंकिंग व्यवसाय की जांच हेतु निरीक्षकों की नियुक्ति के लिए शक्ति प्रदान करती है— बैंकिंग कम्पनी की दशा में आवेदन करने वाले सदस्यों की संख्या 1/5 से कम और अन्य कम्पनी की दशा में 1/10 कम नहीं होनी चाहिए। धारा 145 के अनुसार आडिट संबंधी कुछ प्रावधान उन बैंकों पर लागू होंगे जिनकी शाखाएं भारत के बाहर स्थापित हैं। बैंकिंग कम्पनी अधि0 16 मार्च 1949 को अस्तित्व में आया। 1956 के संशोधन अधि0 23 के द्वारा इसका नाम बैंकिंग विनियमन अधि0 1949 किया गया। प्रारम्भ में यह अधि0 सहकारी बैंकों पर लागू नहीं होता था लेकिन

1965 से यह इन पर भी लागू होने लगा था। वास्तव में इस अधि0 का उद्देश्य भारतीय बैंकिंग को सुचारू रूप विनियमित करना था तब इसके क्षेत्र से सहकारी बैंक को क्यों अलग किया गया यह समझ से बाहर है।जिस समय अधि0 अस्तित्व में आया भारत में अधिक संख्या में सहकारी बैंकों की स्थापना की गई।तब से लेकर आज तक बैंकिंग नियमन अधिनियम 1949 में समय के साथ–साथ कई आवश्यक संशोधन हुये हैं, लेकिन सबसे महत्वूपर्ण कार्य रिजर्व बैंक आफ इण्डिया के हाथों में बैंकों के लिए प्रशासनिक विधि को देना था। यदि किसी विधि को चुनौतियों का सामना करना पड़े तो न्यायपालिका के समक्ष बैंकिंग प्रशासनिक विधि अपने निर्वचन में न्यायपालिका को योगदान प्रदान करती है। आप यह कह सकते हैं कि बैंकिंग नियमनअधिनियम, 1949 इसका अपवाद है। हालांकि संशोधन अधिनियम, 1984 द्वारा एक नई धारा 21–ए इसमें जोडी गई जो 15 फरवरी 1984 से प्रभाव में आई ।

बैंकिंग विनियमन अधिनियम,1949 का अनुसरण करते हुये ही रिजर्व बैंक आफ इण्डिया का 1948 को राष्ट्रीयकरण किया गया। क्रमशः बाद में 1969 एवं 1980 में 14 एवं 6 बड़े वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। 1993 में एक राष्ट्रीयकृत न्यू बैंक आफ इण्डिया का पंजाब नेशनल बैंक में विलय कर दिया गया। इस प्रकार राष्ट्रीयकृत वाणिज्यिक बैंकों की कुल संख्या 19 हो गयी। वर्तमान में प्रभावशाली बैंकों के पदानुक्रम में रिजर्व बैंक आफ इण्डिया सर्वोपरि है। भारतीय बैंकिंग उद्योग को मोटे तौर पर हम दो भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं – 1. वाणिज्यिक बैंक 2. सहकारी बैंक रिजर्व बैंक आफ इण्डिया अधि0 1934 में दूसरी अनुसूची में सूचीबद्ध बैंकों को वाणिज्यिक बैंकों की संज्ञा दी गई एवं अन्य को गैर–अनुचित बैंक घोषित किया गया। इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया से स्टेट बैंक आफ इण्डिया अधिनियम के अंतर्गत प्रथम जुलाई 1955 को स्टेट बैंक आफ इण्डिया का गठन किया गया। स्टेट बैंक आफ इण्डिया की 60 प्रतिशत अंश पूंजी रिजर्व बैंक आफ इण्डिया द्वारा धारण की गई। बैंकिंग पर्यावरण को बाजार की शक्तियों के अनुरूप ढलने के लिए स्वायत्ता दी गई। बैंक और वित्तीय संस्थाओं के मध्य विभाजित रेखा दिन प्रतिदिन कम होती चली गई। पूंजीगत परियोजना फण्ड के लिए बैंक के मानदण्ड आसान थे जबकि वित्तीय संस्थान अग्रिम में कार्यशील पूंजी कम समय के लिए देते थे। अब वह दिन दूर नहीं है कि भारतीय बैंकिग यूनीवर्सल बैंक की तरह दोनों क्षेत्रों पर राज करेगी। विश्व अर्थव्यवस्था में भारतीय बैंक अर्थव्यवस्था चौथे स्थान पर अपने पंखों का प्रसार कर रही है।

1.3.2 बैंकों का राष्ट्रीयकरण

इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया 1955 के राष्ट्रीयकरण के बाद भारत में वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण के प्रश्न पर बहस प्रारम्भ हो गई थी। 14 बड़े वाणिज्यिक

बैंक जिनकी जमा कुल पूंजी 84 प्रतिशत थी उनका 19 जुलाई 1969 को राष्ट्रीकरण कर दिया गया। 6 अन्य बैंक जिनकी जमा पूंजी 200 करोड़ रूपये थी, का राष्ट्रीयकरण 15 अप्रैल 1980 को कर दिया गया था। सार्वजनिक बैंकिंग क्षेत्रों में संख्या की वृद्धि के साथ ही इनमें राष्ट्रीयकरण की बहस का मुद्दा जुड़ गया। निजी क्षेत्रों के बैंक जिनकी कुल चुकता अंश पूंजी कम थी वहीं सर्वाधिक सार्वजनिक जमा धन पर नियन्त्रण कर शक्ति एवं धन का केन्द्रीयकरण कर रहे थे। फरवरी 1964 में महालनोबिस आयोग ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें देश के परिवारों का 1 प्रतिशत, 75 प्रतिशत पूंजी निजी क्षेत्र में धारण किए हुए है। एकाधिकार जांच आयोग ने दिसम्बर 1965 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसके अनुसाार बैंकों का प्रबंधन नियंत्रण स्वामित्व नियन्त्रण की तुलना में अधिक केन्द्रीय एवं उदार ऋण प्रदान प्रणाली केन्द्रीयकरण को मजबूत करने वाली थी। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के लिए तर्क दिया गया कि इससे इस सामाजिक बुराई का निराकरण किया जा सकता है।निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों परउद्योगपतियों का प्रभुत्व था जो जनता द्वारा जमा धन को उद्योगों के लिए उपलब्ध कराते थे। बड़े उद्योग घरानों ने बैंकों से अतिरिक्त उधार सुविधा प्राप्त की। कई बैंकों के प्रबंधक उद्योगपतियों के व्यक्तिगत मित्र बन गये जिससे व्यापार में सट्टेबाजी को प्रोत्साहन मिला। विवियन बोस आयोग ने समीक्षा की, जिसमें बैंकों को मुंद्रा डील में सामाजिक विरोधी और राष्ट्र के विरूद्ध गतिविधियों में, विनिमय नियन्त्रण प्रणाली का अतिक्रमण में और कई कपट पूर्ण गतिविधियों में लिप्त पाया। बैंकों के राष्ट्रीयकरण से इस कदाचार को रोका जा सकता था। बैंकों के राष्ट्रीयकरण से वाणिज्यिक बैंकों को अपनी नई शाखाएं शहरी एवं अर्द्धशहरी क्षेत्रों खोलने का मौका मिलेगा एवं वे जनता की जमाओ, बचतों को स्वीकार कर इस दर में तीव्र गति ला पाएंगें।बैंकोंका राष्ट्रीयकरण जमा की गई राशि पर जमाकर्ताओं को 100 प्रतिशत सुरक्षा प्रदान करेगा अतः जमा बीमा कारपोरेशन पर खर्च की आवश्यकता नहीं रह जाएगी।

राष्ट्रीयकरण से गैर जमा धनराशिकी बुराई पर अंशतः अंकुश लगेगा। इससे जमा धन से हमें अधिक राजस्व स्रोत एवं सुरक्षा के साधन, विकास की आवश्यकता की पूर्ति हो सकेगी। अंततःअगर हम विनिमय बैंकों की भूमिका पर विचार करें तो बैंकों के राष्ट्रीयकरण का पक्ष और मजबूत हो जाता है। वर्तमान में, विदेशी विनिमय बैंकों के पास भारत मेंबिना कुछ विनियोग किये 30 करोड़ रूपये की पूंजी है। यह बैंक भारतीय संयुक्त स्टाक बैंक को शक्तिशाली प्रतिस्पर्धा प्रदान करते हैं। अधिकतर बैंक भारत से उपर्जित आय विदेश में भेजते हैं जिससे भारतीय बैंकों पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ रहा है। भुगतान के संतुलन में भी सामंजस्य नहीं बैठ पा रहा है। निश्चित रूप से राष्ट्रीयकरण से हमें विदेशी विनिमय बैंकों की बुराई से मुक्ति मिल सकेगी।

1.3.3 राष्ट्रीयकरण के विरूद्ध विचार

राष्ट्रीयकरण सेव्यक्तिगत सेवा का अंत हो जाएगा जो निजी क्षेत्र के बैंक प्रदान करते हैं, विशेषकर विदेशी विनिमय बैंक। राष्ट्रीयकरण के पश्चात बैंकों में लाल–फीताशाही, अनावश्यक देरी, प्रभावशाली कदम उठाने में देरी, त्वरित निर्णय में कमी तथा बैंकों के कामकाज के प्रबंधन के चलोन में अमसर्थता सी आती प्रतीत होती है। सभी वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण की दलील इसलिए सही नहीं थी कि राष्ट्रीयकरण के फलस्वरूप स्टेट बैंक आफ इण्डिया एक दशक से सही व प्रभावी कार्य कर रहा है। यह प्रतीत होता है कि स्टेट बेंक आफ इण्डिया अधिक प्रभावशील कार्य कर रहा है क्योंकि सफल संगठित एवं प्रबन्धन से निजी क्षेत्र से इसे कड़ी चुनौती मिल रही थी। सभी बैंकों के राष्ट्रीकरण से जमाकर्ताओं के पास, उनकी सहूलतें न मिलने पर दूसरे बैंकों के पास जाने का विकल्प नहीं बचेगा । अतः इनपरिस्थितियों में बैंक की सुविधाओं एवं सेवाओं में निश्चित रूप से कमी आएगी। ग्रामीण एवं अर्द्धशहर क्षेत्रों में स्थित कृषि एवं लघु उद्योग कीनिजी क्षेत्रों के बैंकों द्वारा उपेक्षा का तर्क सही नहीं हो सकता क्योंकि वाणिज्यिक बैंको को व्यवसाय की तरलता के संबंध में कूछ सिद्धांतों का पालन करना पड़ता है। वास्तव में वाणिज्यिक बैंकों से यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि वे अपने धन को लम्बे समय तक अलाभकारी एवं जोखिम भरी योजनाओं में विनियोजित कर बॉध सकते हैं। यही अच्छा है कि इस प्रकारकी गतिवधियों में वित्त पोषणसरकार द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए जो कि रिजर्व बैंक आफ इण्डिया, स्टेट बैंक आफ इण्डिया और सहकारी तंत्र के द्वारा संचालित होना चाहिए।

राष्ट्रीयकरण के द्वारा जमाकर्ता को 100प्रतिशत सुरक्षा का प्रश्न इस मामले में उत्पन्न नही होना चाहिए क्योंकि भारतीय निक्षेप बीमा निगम कुशलता पूर्वक कार्य कर रहा हैं एवं भारतीय जमाकर्ताओं को मनोवैज्ञानिक रूप से अच्छी राहत प्रदान करने में सफल रहा है। जहॉ तक निजी बैंकों के विरूद्ध कदाचार के आरोप का संबंध हैं यह देखा जा सकता है कि पैकैज डील दृष्टिकोणअपनाकर, जिसमें मौद्रिक उपायों को राजकोषीय युक्तियों और कायिक नियंत्रण के साथ एकीकृत कर काफी हद तक सुधार किया जा सकता है, अगर इसे प्रभावपूर्ण तरीके से लागू किया जाए। इसके अलावा रिजर्व बैंक द्वारा समय–समय पर यदि जांच की जाती रहे तब इसकी कमियों को दूर कर इसमें सुधार लाया जा सकता है। राष्ट्रीयकरण के द्वारा एक भारीभरकमराजस्व की राशि को एकत्र नहीं कर सकती क्योंकि इसमें अंशधारकों के भुगतान एवं प्रतिपूर्ति का दायित्व रहता है। इसके अलावा राष्ट्रीयकरण के बाद लाभ का पर्याप्त हिस्सा आरक्षित निधि को मजबूत बनाने हेतु से अलग रखना चाहिए। इस मामले में, वाणिज्यिक बैंकों केराष्ट्रीयकरण को उपरोक्त से अलग में देखना गलत होगा। इसे समाजीकरण के कार्यक्रम का एक महतवपूर्ण तत्व बनाना

चाहिए जिसके लिए कुछ मात्रा में जमीनी तैयारी आवश्यक है। सरकार को प्रभावीजमीनी तैयारी के उचित उपायों को अपनाने के बजाय, बड़े वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण के निर्णय से पूर्व वाणिज्यिक बैंकों के सामाजिक नियंत्रण की स्कीम के साथ प्रयोग का निर्णय एक स्टॉपगेप उपाय की तरह करना चाहिए।

1.3.4 बैंकिंग के कार्य

बैंकिंग के प्राथमिक कार्य के अलावा बैंक अपने ग्राहकों को अन्य कई सेवाएं प्रदान करता है। बैंक एवं ग्राहक के मध्य लेनदार एवं देनदार का मुख्य सम्बन्ध है। बैंक अपने ग्राहकों के प्रति एक अभिकर्ता एवं न्यासी की भी भूमिका अदा करता है यदि ग्राहक बैंक के एजेंसी या न्यास कार्यों पर विश्वास करता हो। ऐसे मामले में बैंकर एकसाथ ऋणी,अभिकर्ता एवं न्यासी के रूप में, लेकिन विशिष्ट व्यवसाय के संबंध में कार्य करता है।

एक खाते के खुलने पर बैंक ऋणी की स्थिति की उपधारणा कर लेता है। वह ग्राहक के धन का न्यासी या निक्षेपग्राही नहीं होता क्योकि ग्राहक द्वारा बैंक को सौंपा गया धन उसके ऊपर ग्राहक का ऋण हो जाता है। एक निक्षेपागाार जमा धन पर सशर्त सुरक्षा प्रदान करता है कि इसे गुप्त रखा जाएगाा एवं समान वस्तु के बदले इसे बदला जाएगा। विधिक रूप में ग्राहक द्वारा जमा धन बैंक को दिया गया उधार होता है जिसका उपयोग वह अपनी इच्छानुसार करता है। एक बैंक अपने जमाकर्ताओं से इन शर्तों पर धन स्वीकार नहीं करता। बैंक देनदार के जमा राशि को उसकी मांग के अनुरूप भुगतान करने के लिए विधिक नियमों द्वारा बाध्यकारी है।लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि बैंक वही मुद्रा एवं सिक्कों का भुगतान करे। भुगतान हमेशा देश की विधिक मुद्रा के संदर्भ में ही किया जायेगा।

जमाकर्ता अपने एकाउण्ट में क्रेडिट होने तक सदा लेनदार के रूप में रहता है। लेकिन वह अपने बैंकर या देनदार पर उसकी सम्पत्ति पर कोई भार आरोपित नहीं कर सकता, वह सदा बैंक का असुरक्षित लेनदार होता है। सन् 1962 में निक्षेप बीमा लागू होने के साथ ही भारत में जमाकर्ता का खतरे का तत्व कम हो गया क्योंकि अब जमा बीमा और क्रेडिट गारण्टी कारपोरेशन एक निश्चित राशि तक जमा धन का बीमा करते हैं।

जैसे ही ग्राहकअपने खाते से दूसरी राशि निकालता है बैंक एवं खातेदार ग्राहक के सम्बन्ध विपरीत हो जाते हैं। बैंक ग्राहक का लेनदार हो जाता है जिसने बैंक से ऋण लिया होता है एवं ऋण के पुनः भुगतान तक इसी स्थिति में रहता है। बैंक अपने ऋणदाता को उसकी सम्पत्ति के आधार पर अग्रिम एवं ऋण प्रदान करता है, बैंक अपने ग्राहक को सुरक्षित लेनदार बन जाता है।जब से वाणिज्यिक ऋणी उत्पन्न हुये हैं, बैंक एवं ग्राहक का सम्बन्ध केवल देनदार और लेनदार का न

रहकर अलग सम्बन्ध हो गये हैं। यह लेनदार को मांग के अनुसार ऋण प्रदान करते हैं और लेनदार संविदा के नियम शर्तों के अधीन ऋण की वापसी करता है। लेकिन बैंक में जमा (डिपोजिट) के मामले में ऋणी बैंक को राशि का स्वेच्छा से पुनः भगतान आवश्यक नही होता। इसके लिए जमाकर्ता को उचित तरीके से जमा (डिपोजिट) के भुगतान की मॉग करनी आवश्यक होती है। यह अन्तर इसलिए है क्योंकि बैंक एक सामान्य देनदार नहीं है, वह अपने ग्राहकों के चैक के सम्मान हेतु अतिरिक्त दायित्व के साथ जमाए भी स्वीकार करता है। अगर वह खाता बंद कर स्वेच्छा से जमा राशि वापस कर देता है तो जमाकर्ता द्वारा जारी किये गये कुछ चैक आनादरित हो सकते हैं एवं उनकी प्रतिष्ठा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त बैंकिंग की सांविधिक परिभाषा के अनुसार जमा का भुगतान मॉग पर या अन्य तरीके से ही किया जा सकता है। लेनदार को मांग के अनुसार भुगतान करना बैंक का मुख्य तत्व है। इस प्रकार ग्राहक द्वारा बैंक में जमा एक साधारण ऋण से वस्तुतः भिन्न है।लेनदार द्वारा उचित समयएवं स्थान पर ही मांग करनी चाहिए। वाणिज्यिक बैंक जिसकी कई शाखाएं हैं, वह स्वयं में एक इकाई मानी जाती है; लेकिन ग्राहक के सम्बन्ध उसी शाखा से होते हैं, जहां उसने अपने नाम से खाता खोला है उसेभुगतान हेतु बैंक की उसी शाखा में करने मांग करनी चाहिए अन्यथा बैंक भुगतानके लिए बाध्य नहीं है। हालांकि बैंक कुछ विशिष्ट परिस्थिति में दूसरी शाखा में भुगतान की वैकल्पिक व्यवस्था कर सकती है जैसे बैंक ड्राफ्ट, यात्री चैक, भुगतान एवं धन जमा करना आदि। बैंकिंग की सांविधिक परिभाषा के अनुसार मांग उचित तरीके से पूर्ण करनी चाहिए जेसे चैक, ड्राफ्ट द्वारा जमा एवं आहरण करना। अर्थात जमा धन की वापसी की मांग चैक द्वारा या आदेश द्वारा, बैंकर के सामान्य प्रयोगानुसार करनी चाहिए। अन्य शब्दों में मांग मौखिक, फोन या अन्य संदेश द्वारा नहीं करनी चाहिए। सामान्यतः बैंकर अपने ग्राहक, देनदार का ऋणी होता है लेकिन वह कुछ परिस्थितियों में एक न्यासी की भूमिका भी अदा करता है। बैंक न्यासी के रूप में लाभार्थी (हितग्राही) के लिए धन, सम्पत्ति भी स्वीकार करता है और वह उसके लिए कुछ कार्य भी करता है। उदाहरण के लिए यदि ग्राहक प्रतिभूति या अन्य मूल्यवान वस्तुओं को सुरक्षा हेतु जमा करता है तोबैंकर न्यासी का कार्य करता है। ग्राहक सदा बैंक के पास मूल्यवान जमा का स्वामी रहता है। बेंक की विधिक स्थिति एक न्यासी की होती है, जो ग्राहक के देनदार से भिन्न है। पहले मामले में धन और दस्तावेज जो वह जमा करता है, को अपनी सम्पत्ति के रूप में प्रयोग नहीं कर सकता एवं तरलता या ऋणशोधन के समय वह उसके सामान्य लेनदारों में बॉटने हेतु उपलब्ध नहीं होती। एक बैंकर प्रत्येक मामले में परिस्थितियों के अनुसार एक न्यासी या एक देनदार की भूमिका अदा करता है। अगर वह अपने व्यवसाय के सामान्य अनुक्रम में बिना ग्राहक के निर्देश के कुछ करता है तो वह देनदार, (या लेनदार) की भूमिका

अदा करता है। धन या बिल के मामले में जो बैंक में विशेष उद्देश्य के लिएजमा की गई है, बैंकर की स्थिति इससे निर्धारित होती है कि वास्तव में यह राशि ग्राहक के खाते में जमा/निकाली गई है अथवा नहीं।उदाहरणार्थ,अन्य बैंक द्वारा एकत्रीकरण के लिए चैकों के भेजने के मामले में चैक की पहचान एवं उसके ग्राहक के खाते में राशि जमा होने तकबैंक न्यासी की भूमिका में एवं उसके बाद उसी राशि का देनदार होगा। यदि संग्रहणकर्ता बैंक चैक भुगतान करने में असफल हो जाता है तो असफलता के पश्चाात पहचानी गई राशि गाहक की होगी एवं बैंक के सामान्य लेनदारों के भुगतान हेतु उपलब्ध नहीं हागी।दूसरी ओर यदि ग्राहक उस जमा से बैंक को कुछ प्रपत्रों को क्रय करने का निर्देश देता है, लेकिन बैंक उन्हें क्रय करने में असफल हो जाता है तब बैंक अपने ग्राहक के प्रति उस राशि का देनदार होगा (न कि न्यासी)जो उस विषेश निर्देश के कारण खाते से आहरित या निकाली नहीं गई है। बैंक अपने ग्राहक को सुविधा प्रदान करने के लिए अभिकर्ता की भूमिका अदा करता है एवं अनेक अभिकरण–कार्य करता है। उदाहरणार्थ ग्राहकों की ओर से प्रतिभूतियों का क्रय–विक्रय, चैकों का एकत्रीकरण, ग्राहकों की विभिन्न देयतों का भुगतान जैसे बीमा प्रीमियम आदि। बैंकों केअभिकरण– कार्य क्षेत्र का बहुत व्यापक विस्तार हो चुका है। उदाहरण के लिए कुछ बैंक ने ग्राहकों की कर संबंधी समस्या हेतु कर सेवा स्थापित की कर है।

1.3.5 बैंकिंग के कारोबार/व्यवसाय

सामान्य सोच के अनुसार बैंक धन जमा हेतु एक भरोसेमंद संस्था है। बैंक आपकी मूल्यवान वस्तुएं, सुरक्षित जमाहेतु स्वीकार करते हैं एवं वापसी का विश्वास देते हैं, यह बैंकों का गौण कार्य है। सामान्यतः बैंक में गहने, मूल्यवान प्रतिभूति, वस्तुएं सुरक्षा के लिए बैंक में जमा की जाती है। लेकिन बैंकों द्वारा एक निक्षेपग्रहीता एवं ट्रस्टी के रूप में दी गई सेवा उसके द्वारा प्रदान अनेक सेवाओं में से कुछ है, आधुनिक वाणिज्यिक बैंक द्वारा प्रदान सेवाओं में से कुछ महत्वपूर्ण प्रकृति की है। सामान्य रूप से वाणिज्यिक बैंकों को मुख्य कार्यों को निम्न में वर्गीकृत किया जा सकता हैं–

यह शायद सभी आधुनिक बैंकोंका सबसे महत्वपूर्ण कार्य है ,जनता से जमा स्वीकार करना, जो बैंक की अन्य गतिविधियों का आधार हैं।एक बैंक की बड़ी शक्ति धन है, जिससे यह व्यापारी समुदाय की सहायता करता हैं, जो कि सावधि जमा, बचत खाता या चालू खाते के रूप मेंहो सकती हैं। यह समस्त खाते बैंक के स्रोतों में वृद्धि करते हैं जो धन सावधि जमा में स्वीकार किया जाता है वह देय तिथि तक बिना जोखिम के इस्तेमाल किया जा सकता है एवं बचत खाता की दशा में बैंक इसकी बड़ी मात्रा प्रयोग में ला सकते हैं, क्योंकि इस प्रकार के खातों में ग्राहकों

की मांग अपेक्षाकृत कम होती है एक सप्ताह में ऐसे खातों में निकासी की मात्रा एवं संख्यापर भी प्रतिबंध रहता है। चालू खाता खोलने पर बैंक पूंजी ही नहीं वरन् अपने ग्राहकों को जमा मुद्रा भी प्रदान करता है, जो अन्य किसी भी प्रकार की मुद्रा से अधिक सुविधाजनक एवं किफायती होती है। बैंक लोगों से धन स्वीकार कर उनके धन को सुरक्षा प्रदान करता है। लेकिन यह धन एक मजबूत (सुरक्षित) कमरे में नहीं रखा जाता है। यह धन बैंक पर ऋण के रूप में प्रतिस्थापित हो जाता हैं, जो जमाधन पर, जब तकवह उसके द्वारा जमा के रूप में रखा जाता है, ब्याज देता हैं। अनुबंध की शर्तों के अनुसार क्लेम करने पर मूलधन ब्याज सहित वापिस कर दिया जाता हैं। यह कार्य, जो एक समय में बैंकिग व्यवसाय का मुख्य भागमाना जाता था, आधुनिक समय में विश्व के प्रमुख देशों में केन्द्रीय बैकिंग संस्थाओं द्वारा निभाया जा रहा हैं। सामान्यतः बैंक के लिए यह महत्वपूर्ण है कि महत्वपूर्ण देशों में चैक–मुद्रा को बड़े पैमाने पर बैंक–पत्र में बदल देते हैं। उदाहरणार्थ– इंग्लैण्ड एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में बैंक नोट जो भूमिका अदा कर रहे थे वह अब कम महत्वपूर्ण होती जा रही है जबकि यूरोपियन देशों जैसे फ्रान्स,एवं जर्मनी मेंयह आज भी बहुत प्रचलित है, जहां चैकों द्वारा भुगतान के प्रचलन को बढ़ावा देने हेतु गम्भीर प्रयास किए जा रहे हैं। बैंकों का यह कार्य महत्वपूर्ण ही नहीं वरन् अधिकांश बैंकों के लिए लाभ का मुख्य स्रोत भी है। जब एक बैंक एक बिल पर छूट पर सहमत,या वचनपत्र के बदले में पूंजी देते हैं, यह अंतरण ऋण या छूट कहलाता हैं। अन्य मामले में बैंक भविष्यमें भुगतान के वादे के बदले ऋणी के निपटान को पूंजी देने पर सहमत होता है। यह उन व्यक्तियों एवं संस्थाओं को सक्षम बनाता है,जो बड़े पैमाने पर अपने व्यापार को चलाने में अपनी पूंजी अपर्याप्त पाते हैं, बैंक से उधार ली गई पूंजी की सहायता से वे ऐसा कर पाते हैं एवं वे इस प्रकार अपनी पूंजी का अधिक लाभयुक्त प्रयोग कर पाते है। इस प्रकार बैंक न केवल व्यापारियों की सहायता में सक्षम है वरन् अन्य की भी, जो बदले में , न केवल धन का अपने लाभ हेतु प्रयोग कर सकते हैं वरन समुदाय को भी लाभ पहुंचाते हैं। सामान्यतः आधुनिक बैंक अपने धन को उनकी शाखाओं पर आरहित ड्राफ्ट के माध्यम से या एजेण्ट द्वारा एक स्थान या देश से अन्य स्थान या देश में, बाहर भेजने की स्थिति में हैं। वे विनिमय पत्रों की खरीद द्वारा व्यापारियों एवं अन्य को दूसरे शहरों एवं देशों में उनके देनदारों से धन प्राप्त करने में सक्षम भी बना सकते हैं। ये सुविधाएं न केवल विभिन्न देशों के आंतरिक व्यापार में सहायक हैं वरन अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भी। यह स्पष्ट करना होगा कि महान प्रगति जो व्यापार और वाणिज्य ने की हैवह बदले बड़े पैमाने पर में विश्व के विभिन्न भागों में ओद्योगिक विकास के लिए उत्तरदायी है, असंभव सा है लेकिन बैंकों द्वारा प्रदान विनिमय की सुविधाओं के लिए।

1.3.6 बैंकिंग के विविध कार्य

उपराक्त दिए गए महत्वपूर्ण कार्यों के अलावा आधुनिक बैंक, विविध सेवाएं भी प्रदान करते हैं : जैसेः–

1. विभिन्न प्रकार के क्रेडिट जारी करना, जैसे–क्रेडिट पत्र, यात्री चैक, क्रेडिट कार्ड, और परिपत्र नोट;
2. पूंजी मुद्दों की अंडर–राइटिंग;
3. विनिमय पत्र की स्वीकृति, जिसके द्वारा बैंकर कमीशन के लिए बदले में अपने ग्राहक को अपना नाम उधार देते हैं;
4. मूल्यवान वस्तुओं की सुरक्षित जमा;
5. ग्राहकों के लिए निष्पादक एवं न्यासी का कार्य;
6. ग्राहकों के लिए आयकर रिटर्न तैयार करना;
7. ग्राहकों की ओर से गारण्टी प्रदान करना, आदि।

1.3.7 बैंकिंग खाते के प्रकार

चालू खाते के मामले में जिसे मांग जमा भी कहा जाता है बैंकर उसकेनिमित्त आरहित सभी चैकोंके भुगतान उसके का दायित्व लेता है जब तक कि वहां ग्राहक के क्रेडिट हेतु पर्याप्त धन रहता हैं। दूसरी ओर ग्राहक धन का भुगतान नगद, चैक, ड्राफ्ट, पोस्टल आर्डर, मनीआर्डर के रूप में चालू खाते में करता है। यह भुगतान पर्ची (paying in slip) भरकर किया जाता हैं जिसे बैंक में या तो खुले रूप में या गैंकर द्वारा पुस्तक के रूप में दिया जाता हैं। ये भुगतान पर्ची (slip) ग्राहकद्वारा हस्ताक्षरित होती हैं, या इसके अभिकर्ता द्वाराजो उसी राशि का भुगतान इसमें करता है। जब ये पर्चियां पुस्तक के रूप मेंहोती हैं उनमें काउंटरफॉइल होती है जिनमें बैंक का कैशियर नगद राशि प्राप्त करने के पश्चात रबर की मोहर लगाता है। इस मुद्रांकन का विधिक प्रभाव केवल रसीद है इस बात को प्रभाव देने के लिए कि पर्ची क्रम में है एवं राशि ग्राहक के खाते में जमा कर दी गई हैं। यह एक प्राप्ति रसीद नहीं है जिसे रिवेन्यू स्टाम्प की आवश्यकता होती है अगर राशि स्टाम्प अधिनियम द्वारा निर्धारित सीमा से अधिक होती है।

हालांकि चालू खाते मुख्यतः व्यापारी वर्ग के लिए हैं, बचत बैंक खाते व्यक्तियों के लिए धन एकत्र करने, उसे बढ़ाने के लिए हैं। हालांकि चालू खातों कोई ब्याज लागू नहीं है, ब्याज एस. बी. खातों पर अनुमत है एवं यह भारतीय रिजर्व बैंक आफ द्वारा प्रशासित होता है। पहली बार भारतीय रिजर्व बैंक आफ इण्डिया ने चैक सुविधा रहित बचत खातों और चैक सुविधा वाले बचत खातों में अंतर किया। चैक सुविधा रहित बचत खातों पर 5 प्रतिशत दर से बैंक ब्याज और चैक सुविधा वाले खातों पर 3 प्रतिशत दर से ब्याज दिया जायेगा। ये नई ब्याज की दरें 1 जून 1977 से अस्तित्व में आईं। पुनः 01 मार्च 1978 को रिजर्व बैंक ने यह अंतर समाप्त कर दिया

और एस. बी. खाते पर 4.5 प्रतिशत प्रति वर्षकी दर से ब्याज निर्धारित किया, बिना इस बात के कि चैक सुविधा बढ़ाई गई है या नहीं,ब्याज की गणना प्रत्येक केलेंडर माह के अन्तिम तिथि के पहले दस दिनों की अवधि के दौरान खाते में क्रेडिट न्यूनतम राशि पर की जाएगी। कोई ब्याज देय न होगा अगर एस. बी. खाते के अन्तर्गतजमाएं प्रत्येक छमाही न्यूनतम 50 पैसा कमानेमें असमर्थ रहती हैं। ब्याज का भुगतान केवल छमाही होगा सामान्यतः प्रत्येक वर्ष के मई एवं नवम्बर के माह में।

कुछ विशेष प्रकार के खाते होते हैं जो व्यक्तिगत या प्रोपराइटरी खातां से भिन्न होते हैं, जिन्हें न केवल खोलते समय कुछ देखभाल एवं ध्यान की आवश्यकता होती है वरन उसके बाद भी।जैसे व्यक्तिगत एवं मालिकाना हक के खाते। ये सावधानियां जानी मानी हैं जो विशेष प्रकार के खातों के लिए ली जाती हैं। यह विशेष प्रकार के खाते जमा या उधार खाते हो सकते हैं लेकिन किसी भी` मामले में विशेष प्रकार के खाते से संबंधित कुछ सिद्धांतों की जानकारी एक बैंकर को होनी चाहिए।

निम्नलिखित खातों को विशेष प्रकार के खाते माना जा सकता है :–

1.अव्यस्क / नावालिग का खाता
2.पागल व्यक्ति का खाता
3.नशा करने वाले का खाता
4.दिवालिया का खाता
5.संयुक्त खाता
6.पति–पत्नी का संयुक्त खाता
7.विवाहित स्त्री का खाता
8.अविभाजित / संयुक्त हिन्दू परिवारकी फर्म का खाता

1.4 सारांश

आज भारतीय बैंकिंग ने अंग्रेजी एजेंसी हाउस से लेकर मुम्बई एवं कलकत्ता तक का सफर तय किया है। O.W. Homes के शब्दों में– व्यक्ति पैसों के मामलों में किसी पर विश्वास नहीं करता है लेकिन वह पैसे बैंक में जमा कर बैंक पर विश्वास कर सकते हैं अर्थात भारतीय जनता भारत के बैंकों पर विश्वास कर सकती है।भारत में बैंकिंग व्यवस्था नई नहीं है इसने अपने अस्तित्व के विकास के लिए लगभग 200 वर्षों तक लम्बा सफर तय किया है। इस अवधि के दौरान प्रशासन के नियम एवं बैंकिग कार्य प्रणाली कुछ बदल गया है। प्रौद्योगिकी के विकास की सदी में मानव जाति ने 30–35 वर्षों में समग्र रूप से विकास को धारण किया है। इसके अतिरिक्त प्रौद्योगिकी विकास के साथ जुड़ी हुई आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं को ग्राहकों की आवश्यकता के साथ ध्यान में रखते हुए हुई बैंकिंग व्यवसायीकरण की

आवश्यकता व अपेक्षाओं में भी वृद्धि हुई है।तीन प्रेसीडेंसी शहरों अर्थात कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में बैंक आफ बंगाल 1809, बैंक आफ मुम्बई 1840 एवं बैंक आफ मद्रास 1867 में अस्तित्व में आये। बैंक आफ बंगाल ने तीनों बैंकों के एकीकरण हेतु सरकार को एक प्रस्ताव दिया। सरकार ने दो कारणों से इस प्रस्ताव का अनुमोदन नहीं किया, प्रथम तो यह एकल संस्था अधिक शक्तिशाली हो जायेगी द्वितीयतः इतनी बड़ी संस्था देश के लिए आवश्यकता के अनुरूप प्रबंधन नहीं कर पायेगी। लेकिन 1899 में सरकार ने स्वयं इन तीनों बैंकों के एकीकरण का प्रस्ताव पारित किया। इस समय चैम्बर्स आफ कामर्स (वाणिज्यिक मण्डलों) एवं तीनों प्रेसीडेसी बैंकों ने इसका विरोध किया। वर्ष 1919 में तीनों बैंकों ने अपने एकीकरण की सहमति दे दी और वर्ष 1921 में तीनों बैंक एक हो गये। फलस्वरूप भारत में इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया अस्तित्व में आया जो वर्तमान रूप में स्टेट बैंक आफ इण्डिया है।एक केन्द्रीय बैंक बनाने का विचार उत्पन्न हुआ जिसके फलस्वरूप अगस्त 1925 में हिल्टन यंग आयोग की स्थापना की गई जिसकी रिपोर्ट ''भारतीय विनिमय और मुद्रा प्रणाली'' के परिणामस्वरूप रिजर्व बैंक आफ इण्डिया स्थापित किया गया।भारत में, बैंकिंग के प्रथम प्रयास में भारतीय कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1936 पारित किया गया। 15 जनवरी 1937 को बैंकिंग अधिनियम द्वारा बैंकिंग प्रावधानों के एक अलग का उदय हुआ। इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व, बैंकों के समस्त मामले कम्पनी अधिनियम 1913 के द्वारा संचालित किये जाते थे।बैंकिंग कम्पनी अधि0 16 मार्च 1949 को अस्तित्व में आया। 1956 के संशोधन अधि0 23 के द्वारा इसका नाम बैंकिंग विनियमन अधि0 1949 किया गया।तब से लेकर आज तक बैंकिंग नियमन अधि0 1949 में समय के साथ–साथ कई आवश्यक संशोधन हुये हैं, लेकिन सबसे महत्वूपर्ण कार्य रिजर्व बैंक आफ इण्डिया के हाथों में बैंकों के लिए प्रशासनिक विधि को देना था।भारतीय बैंकिंग उद्योग को मौटे तौर पर हम दो भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं – 1. वाणिज्यिक बैंक 2. सहकारी बैंक रिजर्व बैंक आफ इण्डिया अधि0 1934 में दूसरी अनुसूची में सूचीबद्ध बैंकों को वाणिज्यिक बैंकों की संज्ञा दी गई एवं अन्य को गैर–अनुचित बैंक घोषित किया गया। इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया से स्टेट बैंक आफ इण्डिया अधिनियम के अंतर्गत प्रथम जुलाई 1955 को स्टेट बैंक आफ इण्डिया का गठन किया गया।बैंकों के राष्ट्रीयकरण के लिए तर्क दिया गया कि इससे इस सामाजिक बुराई का निराकरण किया जा सकता है।

बैंकिंग के प्राथमिक कार्य के अलावा बैंक अपने ग्राहकों को अन्य कई सेवाएं प्रदान करता है। बैंक एवं ग्राहक के मध्य लेनदार एवं देनदार का मुख्य सम्बन्ध है। बैंक अपने ग्राहकों के प्रति एक एजेण्ट एवं न्यासी की भी भूमिका अदा करता हैबैंकिंग के प्राथमिक कार्य के अलावा बैंक अपने ग्राहकों को अन्य कई सेवाएं प्रदान करता है। बैंक एवं ग्राहक के मध्य लेनदार एवं देनदार का मुख्य सम्बन्ध है। बैंक अपने

ग्राहकों के प्रति एक एजेण्ट एवं न्यासी की भी भूमिका अदा करता हैएक खाते के खुलने पर बैंक ऋणी की स्थिति की उपधारणा कर लेता है। वह ग्राहक के धन का न्यासी या निक्षेपग्राही नहीं होता क्योकि ग्राहक द्वारा बैंक को सौंपा गया धन उसके ऊपर ग्राहक का ऋण हो जाता है।सन् 1962 में निक्षेप बीमा लागू होने के साथ ही भारत में जमाकर्ता का खतरे का तत्व कम हो गया क्योंकि अब जमा बीमा और क्रेडिट गारण्टी कारपोरेशन एक निश्चित राशि तक जमा धन का बीमा करते हैं। जब से वाणिज्यिक ऋणी उत्पन्न हुये हैं, बैंक एवं ग्राहक का सम्बन्ध केवल देनदार और लेनदार का न रहकर अलग सम्बन्ध हो गये हैं। यह लेनदार को मांग के अनुसार ऋण प्रदान करते हैं और लेनदार संविदा के नियम शर्तों के अधीन ऋण की वापसी करता है।बैंक अपने ग्राहक को सुविधा प्रदान करने के लिए अभिकर्ता की भूमिका अदा करता है एवं अनेक अभिकरण – कार्य करता है। उदाहरणार्थ ग्राहकों की ओर से प्रतिभूतियों का क्रय–विक्रय, चैकों का एकत्रीकरण, ग्राहकों की विभिन्न देयतों का भुगतान जैसे बीमा प्रीमियम आदि। बैंकों के अभिकरण – कार्य क्षेत्र का बहुत व्यापक विस्तार हो चुका है। बैंक लोगों से धन स्वीकार कर उनके धन को सुरक्षा प्रदान करता है। लेकिन यह धन एक मजबूत (सुरक्षित) कमरे में नहीं रखा जाता है। यह धन बैंक पर ऋण के रूप में प्रतिस्थापित हो जाता हैं, जो जमाधन पर, जब तक वह उसके द्वारा जमा के रूप में रखा जाता है, ब्याज देता हैं। अनुबंध की शर्तों के अनुसार दावा करने पर मूलधन ब्याज सहित वापिस कर दिया जाता हैं।सामान्यतः आधुनिक बैंक अपने धन को उनकी शाखाओं पर आरहित ड्राफ्ट के माध्यम से या एजेण्ट द्वारा एक स्थान या देश से अन्य स्थान या देश में, बाहर भेजने की स्थिति में हैं। वे विनिमय पत्रों की खरीद द्वारा व्यापारियों एवं अन्य को दूसरे शहरों एवं देशों में उनके देनदारों से धन प्राप्त करने में सक्षम भी बना सकते हैं। ये सुविधाएं न केवल विभिन्न देशों के आंतरिक व्यापार में सहायक हैं वरन अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भी। यह स्पष्ट करना होगा कि महान प्रगति जो व्यापार और वाणिज्य ने की है वह बदले बड़े पैमाने पर में विश्व के विभिन्न भागों में ओद्योगिक विकास के लिए उत्तरदायी है, असंभव सा है लेकिन बैंकों द्वारा प्रदान विनिमय की सुविधाओं के लिए।

चालू खाते के मामले में जिसे मांग जमा भी कहा जाता है बैंकर उसके निमित्त आरहित सभी चैकों के भुगतान उसके का दायित्व लेता है जब तक कि वहां ग्राहक के क्रेडिट हेतु पर्याप्त धन रहता हैं। दूसरी ओर ग्राहक धन का भुगतान नगद, चैक, ड्राफ्ट, पोस्टल आर्डर, मनीआर्डर के रूप में चालू खाते में करता है। हालांकि चालू खाते मुख्यतः व्यापारी वर्ग के लिए हैं, बचत बैंक खाते व्यक्तियों के लिए धन एकत्र करने, उसे बढ़ाने के लिए हैं। हालांकि चालू खातों कोई ब्याज लागू नहीं है, ब्याज एस. बी. खातों पर अनुमत है एवं यह भारतीय रिजर्व बैंक आफ द्वारा प्रशासित होता है।ब्याज की गणना प्रत्येक केलेंडर माह के अन्तिम तिथि के पहले दस दिनों की

अवधि के दौरान खाते में क्रेडिट न्यूनतम राशि पर की जाएगी। कोई ब्याज देय न होगा अगर एस. बी. खाते के अन्तर्गत जमाएं प्रत्येक छमाही न्यूनतम 50 पैसा कमाने में असमर्थ रहती हैं। ब्याज का भुगतान केवल छमाही होगा सामान्यतः प्रत्येक वर्ष के मई एवं नवम्बर के माह में।कुछ विशेष प्रकार के खाते होते हैं जो व्यक्तिगत या प्रोपराइटरी खातां से भिन्न होते हैं, जिन्हें न केवल खोलते समय कुछ देखभाल एवं ध्यान की आवश्यकता होती है वरन उसके बाद भी।जैसे व्यक्तिगत एवं मालिकाना हक के खाते। ये सावधानियां जानी मानी हैं जो विशेष प्रकार के खातों के लिए ली जाती हैं। यह विशेष प्रकार के खाते जमा या उधार खाते हो सकते हैं लेकिन किसी भी मामले में विशेष प्रकार के खाते से संबंधित कुछ सिद्धांतों की जानकारी एक बैंकर को होनी चाहिए।

निम्नलिखित खातों को विशेष प्रकार के खाते माना जा सकता है :–

1. अव्यस्क/नावालिग का खाता
2. पागल व्यक्ति का खाता
3. नशा करने वाले का खाता
4. दिवालिया का खाता
5. संयुक्त खाता
6. पति–पत्नी का संयुक्त खाता
7. विवाहित स्त्री का खाता
8. अविभाजित/संयुक्त हिन्दू परिवार की फर्म का खाता
9.

1.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

राष्ट्रीयकरण – सरकार द्वारा बैंकों का प्रबंधन नियंत्रण अपने हाथों में ले लेना।
एस. बी. खाते– सेविंग बैंक एकाउन्ट, बचत बैंक खाता

1.5 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मर्केन्टाइल विधि के सिद्वान्त –अवतार सिंह छठा संस्करण 1996
2. बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– पी0एन0वार्षनेय
3. भारत में बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– तन्नान
4. पेजेट्स बैंकिंग विधि आठवा संस्करण
5. चुतुर्वेदी,ममता., आधुनिक बैंकिग विधि, सेन्ट्रल लॉ पबिलकेशन

1.6 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. भारत में बैंकिंग विकास पर निबंध लिखे।
2. बैंकर एवं ग्राहकों के सम्बन्धों पर विवेचना करें।
3. बैंकों में कितने प्रकार के खाते होते हैं?
4. भारत में बैंकिंग व्यवसाय पर निबन्ध लिखो।

एल–एल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–1. परिचय एवं बैंकिग पर सामाजिक नियंत्रण(**Introduction & Social control over banking**)

इकाई –2. राष्ट्रीकरण; मूल्यांकनः निजी स्वामित्व, राष्ट्रीकरण एवं विनिवेश (**Nationalization; Evaluation: private ownership, nationalization and disinvestment**)

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 विषय
- 2.3.1 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण के लिए तर्क
- 2.3.2 राष्ट्रीयकरण के विरूद्ध तर्क
- 2.3.3 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण लिए अपनाया गया विधिक स्वरूप
- 2.3.4 राष्ट्रीयकरण अधिनियम के मुख्य प्रावधान
- 2.3.5 राष्ट्रीयकृत बैंकों के सार्वजनिक मुद्दे
- 2.3.6 राष्ट्रीयकृत बैंकों के निदेशकों के बोर्ड का गठन के लिए केन्द्र सरकार की योजना
- 2.3.7 नये बैंकों के लिए बैंकिंग विनियमन अधिनियम, की सीमित उपयोगिता
- 2.3.8 राष्ट्रीयकृत बैंकों के लिए विनियम

2.4 सारांश
2.5 महत्वपूर्ण शब्दावली
2.6 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.7 आत्मा मूल्यांकन हेतु प्रश्न

2.1. प्रस्तावना

भारत ने स्वतंत्रता के बाद अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समाजवादी स्वरूप को लक्ष्य के रूप में अपनाया। इसका अर्थ गैर तकनीकी–भाषा में, देश को बिना अधिनायकवादी राज्य बनाए जहां तक सम्भव हो सके समाज में आर्थिक समानता को लागू करना था। इस लक्ष्य को लोकतांत्रिक प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करना तथाकथित किया गया। बैंकिंग संस्थाएं निजी बचत की संरक्षक एवं उधार प्रदान करने वाली सशक्त संस्थाए हैं। यह संस्थाएं जमा स्वीकार कर उन्हें देश और उद्योगों की उन्नति के लिए अग्रिम के रूप में प्रदान कर देश के संसाधनों को गतिमान करती हैं। 1955 ऑफ इडिया का राष्ट्रीयकरण किया गया एवं स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा इसके व्यवसाय का अधिग्रहण किया गया। जहां तक अनुसूचित बैंकों का संबंध है उनके विरूद्ध शिकायतें थीं, कि भारतीय वाणिज्यिक बैंक बड़े एवं मध्य श्रेणी के उद्योगों को, एवं बड़े व्यापारिक घरानों को व्यापार हेतु अग्रिम ऋण उपलब्ध करा रहे थे, लेकिन प्राथमिक मांग वाले क्षेत्रों जैसे कृषि, लघु उद्योग एवं निर्यात को उनका निर्धारित अंश प्राप्त नहीं हो रहा था। 19 जुलाई 1969 को 14 मुख्य बैंकों अर्थात सेंट्रल बैंक आफ इण्डिया लि0, बैंक आफ इण्डिया लि0, पंजाब नेशनल बैंक लि0, बैंक आफ बड़ौदा लि0, यूनाइटेड कामर्शियल बैंक लि0, केनरा बैंक लि0, यूनाइटेड बैंक आफ इण्डिया लि0, देना बैंक लि0, सिंडिकेट बैंक लि0, यूनियन बैंक आफ इण्डिया लि0, इलाहाबाद बैंक लि0, इण्डियन बैंक लि0, बैंक आफ महाराष्ट्र लि0, इण्डियन ओवरसीज बैंक लि0, इन बैंकों की जमाए 50 करोड़ रूपये से अधिक और उन सबके मध्य सम्मिलित जमाएं 2630 करोड़, 4130 शाखाओं के साथ थीं, को राष्ट्रीयकृत एवं अधिगृहीत किया गया। वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण भारतीय बैंकिंग प्रणाली में एक नयी क्रांति थी। यह क्रान्ति केवल बैंक के स्वामित्व में बदलाव को ही नहीं दर्शाती थी वरन् यह देश के आर्थिक विकास हेतु वित्तीय तंत्र के महत्वपूर्ण भाग के प्रयोग हेतु समन्वयित प्रयास का शुरूआत थी।राष्ट्रीयकृत बैंको से अपेक्षा की गई कि उपेक्षित क्षेत्रों एवं निर्यात की याजनाओं को प्राथमिकता देंगें, सार्वजनिक क्षेत्र के उपकमों की मांगों के अनुरूप कार्य करेंगे एवं उपलब्ध संसाधनों के संतुलन का प्रयोग संगठित उद्योगों के लिए इस आधार पर करेंगे कि नए उद्योगों एवं जो पिछड़े क्षेत्रों में हैं वे बड़े व्यवसायिक घरानों के लिए प्राथमिकता पर होंगे। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कमजोर एवं पिछड़े क्षेत्रों एवं निर्यात क्षेत्र में, व्यवसाय स्थापित करने में आरोपित ब्याज की अपेक्षा कम ब्याज दरें आरोपित की गई इस तरह इन क्षेत्रों को अनुदान उपलब्ध कराया गया। कमजोर क्षेत्र को ऋण देने में निहित जोखिम से सुरक्षा के लिए समुदाय के मजबूत

भाग द्वारा देय ''ऋण गारन्टी बीमा'' के रूप में एक और कदम बढ़ाया गया। 15 अप्रैल 1980 को 6 और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के तर्कों की एवं राष्ट्रीयकरण के विरूद्ध तर्कों की विस्तार से व्याख्या की गई है। इसके अतिरिक्त बैंकों के राष्ट्रीयकरण, विनियम, सार्वजनिक मुद्दों हेतु विधिक रूपों की व्याख्या की गई है।

2.3.1 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण के लिए तर्क

अचानक उठाये गये कदम के लिए जो कारण अधिकारिक रूप से कहे गए वे थे, कि प्रमुख बैंकों का सार्वजनिक स्वामित्व राष्ट्रीय संसाधनों के अधिक प्रभावशील गतिशीलता एवं विकास में सहायक होगा एवं उत्पादन उद्देश्यों के लिए इनका उपयोग योजनाओं एवं प्राथमिकता के आधार पर होगा। 19 जुलाई 1969 को प्रख्यापित आध्यादेश के लम्बे शीर्षक में वर्णित किया गया था कि सरकार द्वारा बैंकों का अधिग्रहण राष्ट्रीय नीतियों एवं उद्देश्यों के अनुपालन में आर्थिक विकास की जरूरतों की बेहतर पूर्ति के क्रम में किया गया है। सामाजिक नियंत्रण का उद्देश्य भी यही था, लेकिन सरकार ने सोचा कि यह सफल नहीं हुआ। 29 जुलाई 1970 को 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बिल पर वाद–विवाद के दौरान प्रधानमंत्री ने, यह प्रश्न कि ''सामाजिक नियंत्रण को लम्बी अवधि के लिए क्यों नहीं आजमाया गया?'' के उत्तर में सरकार की ओर से उत्तर दिया, –सामाजिक नियंत्रण का कमजोर पहलू था कि कई बैंकों में, जो लोग भूतकाल में बैंकों की नीतियों को नियंत्रित करते थे उनका प्रभाव आज भी किसी न किसी रूप लगाातार बना हुआ था, कभी–कभी बोर्ड के पुराने अध्यक्ष या उपाध्यक्ष की लगाातार उपस्थिति के द्वारा। उनके द्वारा दिये गये दिशा–निर्देशों का बैंक कभी–कभी आदर भी किया करते थे। लेकिन संसार में, वे व्यक्ति जो कि पूरे दिल एवं उत्साह से इन नीतियों को लेकर चलते हैं एवं उन व्यक्तियों के मध्य अंतर हैं जो केवल कुछ निर्देशों के कारण इनका पालन करते हैं।यह भी तर्क दिया गया था कि सामाजिक नियंत्रण उपायों द्वारा जो प्रतिबंध लगाये गये थे वे विचारधारा में अवहेलना में सक्षम थे हालांकि उन्हें शिष्टाचार में देखा गया। जैसे कि हालांकि प्रबंधकों और उनके संबंधित हितैषियों को अग्रिम पर गतिरोध को बैंकर्स के मध्य आपसी सहमति से इस प्रकार समायोजित किया जा सका जिससे कि इस प्रकार के गतिरोध के उद्देश्यों को पराजित किया जाए। यह कहा गया था कि बैंकों के लिए उनका पारम्परिक दृष्टिकोण को दूर करना लम्बा समय ले लेगा; अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप, विधि चाहे कितनी

ही कठोर क्यों न हो, उद्देश्य प्राप्त नहीं कर सकेगा; प्रत्यक्ष हस्तक्षेप अधिक प्रभावी होगा; समय की आवश्यकता दवाब डाल रही थी; देश गलत विधि एवं परीक्षण को नहीं झेल सकता था एवं हमारे विकास की प्रक्रिया में जोश एवं गतिशीलता का तत्व होना आवश्यक था।एक ओर तर्क यह भी था कि प्रमुख बैंक और लोगों के धन के साथ संचालन कर रहे थे। अंश धारकों का आर्थिक दांव लगभग उपेक्षित था। दिसम्बर के अंत तक 2750 करोड़ रूपये की कुल जमा के विरूद्ध चुकता पूंजी केवल 28.5 करोड़ रूपये थी या 1 प्रतिशत के जरा ही ऊपर थी। बैंकिंग के इस पहलू ने यहां तक कि प्रमुखता से पूंजीवादी देशों को उनके राष्ट्रीयकरण हेतु या उन पर तीक्ष्ण दृष्टि रखने को प्रेरित किया। फ्रांस ने अपने छः प्रमुख बैंकों में से चार का एवं इटली ने पांच में से चार बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया। यह कहा गया कि 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण में सरकार ने केवल अपने लम्बे समय से निर्णीत कार्यक्रमों को प्रभावी किया या समाज का समाजवादी ढांचा प्राप्त किया।आशा एवं जोश ने उदारतापूर्वक दिखाया, कि राष्ट्रीयकरण के बाद हम प्रभावी ढंग से कृषि, निर्यात, छोटे उद्योगों, ग्रामीण क्षेत्रों का विकास आदि सुविधाएं के लिए उधार प्राप्त कर सकते हैं; कि बैंकों की ईकाईयां अब ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तारित होंगी एवं लोगों के विश्वास में बहुत इजाफा होगा। कर्मचारियों ने इस कदम का स्वागत किया कि दक्षता एवं सेवा प्रभावित नहीं होगी।

2.3.2 राष्ट्रीयकरण के विरूद्ध तर्क

कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने इसका विरोध किया। उन्होंने तर्क दिया कि 1 फरवरी 1969, वह दिन जब सामाजिक नियंत्रण लागू किया गया, से 19 जुलाई 1969, राष्ट्रीयकरण का दिन, के मध्य 168 दिन सामाजिक नियंत्रण के परिणाम का आकलन करने के लिए बहुत कम अवधि थी एवं यह निर्णय करने का कोई कारण नहीं था कि यह बुरी तरह असफल रहा। इसके विपरीत वहां प्रचुर संकेत थे कि बैंकों ने सामाजिक नियंत्रण की भावना का स्वागत किया। उन्होंने दर्शाया कि वे मजबूरी में कुछ नहीं कर रहे थे वरन् सहयोग एवं स्वेच्छा की भावना से कर रहे थे। उदाहरण के लिए जून 1968 से मार्च 1969 से 20 बड़े बैंकों द्वारा कृषि के लिए ऋण 30 करोड़ से बढ़ाकर 97 करोड़ रूपये और लघु उद्योगों के लिए 167 करोड़ से 222 करोड़ रूपये कर दिया। अनुसूचित बैंकों द्वारा कृषि वित्त निगम की चल–पूंजी बहुत महत्वपूर्ण थी।विरोधियों का यह भी तर्क था कि वहां ऐसी कोई तत्काल आवश्यकता नहीं थी जैसा कि सरकार द्वारा दिखाया गया। इस कदम का समय राजनीतिक उलझाव द्वारा निर्धारित किया गया था एवं यह दल के भीतर शक्ति के संघर्ष का परिणाम था। उनका तर्क था कि सार्वजनिक क्षेत्र को अंतरण निजी क्षेत्र में व्याप्त बुराईयों के लिए अकेला उपचार नहीं है; इस प्रक्रिया का केवल

परिणाम बुराई का एक समुह से दूसरे में प्रतिस्थापन है। सरकार का आंतरिक नियंत्रण समान और शायद अधिक हानिकारक बुराइयों द्वारा सहगत है; सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाएं अपनी गतिहीनता के लिए जानी जाती हैं।

विदेशी देशों के संदर्भ में विरोधियों ने तर्क दिया कि सभी सामाजवादी देशों में बैंकों का राष्ट्रीकरण नहीं किया गया है। नार्वे, स्वीडन, फिनलैण्ड एवं डेनमार्क के वाणिज्यिक बैंक प्राइवेट हाथों में है एवं प्रत्येक रूसी बैंकर्स बैंकर्स की भांति व्यवहार करते हैं।विरोधियों ने यह भी तर्क दिया कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के अनुभव खुशनुमा नहीं है। सार्वजनिक नियंत्रण भ्रष्टाचार और पक्षपात के लिए दरवाजे खुले छोड़ता है। इनका प्रदर्शन हमेशा सराहनीय नहीं रहा है। इनका घाटा/हानि भारी है। आम आदमी का न्यायोचित विश्वास है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम एक व्यक्ति का सम्मान नहीं करते हैं एवं कार्य में देरी एवं सुस्त होते हैं एवं इन उपक्रमों की सेवाएं परेशान करने वाली हैं। विशेषकर व्यक्तिगत सेवाओं में जैसे बैंकिग में ये बुराईयां अधिक अनियंत्रित है।राष्ट्रीयकरण से प्राप्त उपलब्धियों के विरूद्ध यह सुझाव दिया गया कि बैंकों के मध्य प्रतिस्पर्धा की कमी के कारण एवं यह तथ्य कि कर्मचारीयों में सार्वजनिक क्षेत्र वाली प्रवृत्ति आ गई, जहां एक ओर उनके द्वारा प्रदान सेवाओं की गुणवत्ता में कमी आई वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा शुल्कों में उत्तरोत्तर वृद्धि की गई। यह भी तर्क दिया गया कि नियन्त्रण के प्रभाव द्वारा जो राष्ट्रीयकरण के पश्चात रिजर्व बैंक एवं सरकारी प्राधिकारियों द्वारा इस्तेमाल किया गया, बैंक के प्रशासनिक एवं अन्य अधिकारी निर्णय लेने में डरने लगे जिसने स्वभाविक रूप से राष्ट्रीयकृत बैंको के ग्राहकों के प्रति सेवाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डाला एवं उन्हें धीमा किया।

2.3.3 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण लिए अपनाया गया विधिक स्वरूप

भारत के उपराष्ट्रपति (राष्ट्रपति के रूप में कार्यरत) ने संविधान के अनु0 123(1) की शक्ति के तहत 19 जुलाई 1969 शनिवार की दोपहर को 1969 का अध्यादेश संख्या 8 जारी किया। जिसे बैंकिंग कम्पनी (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अध्यादेश, 1969 कहा गया। 14 बैंकिंग कम्पनियों के उपक्रमों जिनमें प्रत्येक की जमाएं 50 करोड़ या इससे अधिक थी, का अंतरण 14 नए निकाय निगमों में किया गया –जिन्हें तद्नुसार नए बैंक (corresponding new bank) कहा गया। अध्यादेश द्वारा 14 नये बैंकों के लिए नई प्रबंधन मशीनरी एवं संबंधित बैंकिंग कम्पनियों जिनका कि अधिग्रहण हुआ था, के अंशधारकों को मुआवजे का भुगतान प्रदान किया गया। 21 जुलाई 1969 को इस अध्यादेश के सामर्थ्य को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई। परन्तु सुनवाई से पूर्व ही संसद ने इसे पास कर बैंकिंग कम्पनीयां (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अधिनियम, 1969 (1969 का

अधिनियम 22) को पारित कर दिया। 1969 का अध्यादेश 8 इस अधिनियम द्वारा समाप्त कर दिया गया। इस अधिनियम को भी सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई। इस अधिनियम के संचालन के विरूद्ध सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एक अंतरिम निषेधाज्ञा जारी की गई।

सर्वोच्च न्यायालय की 11 न्यायाधीशों की पीठ ने 10 फरवरी, 1970 को 10:1 के बहुमत से याचिका पर निर्णय दिया कि हालांकि 1969 का अधिनियम 22 संसद की विधायी सामर्थ्य में था, परन्तु यह सम्पूर्ण रूप में शून्य था, और जिसके निम्नलिखित कारण दिये—

1.अधिनियम 14 बैंकिंग कम्पनीज को बैंकिंग व्यवसाय से रोकता था जबकि अन्य बैंकों को व्यवसाय करने की अनुमति थी, यह प्रतिकूल भेदभाव था।

2.हालांकि 14 बैंकिंग कम्पनियां कोई अन्य व्यवसाय कर सकती थीं चुंकि उनको सम्पत्तियों, स्टाफ, परिसर एवं यहां तक कि नामों पर भी रोक लगा दी गई थी, उनके लिए काई अन्य व्यवसाय करना असम्भव था; अतः यह अयुक्तियुक्त रोक थी।

3.14 बैंकिंग कम्पनीयों के मुआवजे का निर्धारण करने के लिए आप्रासांगिक एवं भ्रामक सिद्धान्तों को अपनाया गया था (रूस्तम कोवासजी कूपर बनाम भारत संघ AIR 1970, SC 564)

राष्ट्रपति ने दूसरे अध्यादेश (1970 dk la[;k 3) 14.02.1970 को प्रख्यापित किया। जिसका दूसरे अधिनियम द्वारा अनुगमन किया गया।इस अधिनियम पर 31 मार्च 1970 को राष्ट्रपति ने सहमति दी। इसकी धारा 1(2) के तहत इसके अधिकांश प्रावधान 19 जुलाई 1969 से ही अस्तित्व में माने गये जिस दिन अध्यादेश संख्या 8, 1969 प्रख्यापित हुआ था। इस अधिनियम में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इंगित संवैधानिक कमियों को दूर करने का प्रयास किया गया था।

2.3.4 राष्ट्रीयकरण अधिनियम के मुख्य प्रावधान

इस अधिनियम का लम्बा शीर्षक इस प्रकार हैः

यह अधिनियम विशेष बैंकिंग कम्पनियों के उपक्रमों के उनके आकार, स्रोत, कार्यक्षेत्र एवं संगठन के संबंध में अधिग्रहण एवं अंतरण, का उपबंध करता है, अर्थव्यवस्था की ऊचाईयों के नियन्त्रण के क्रम में एवं राष्ट्र की नीतियों एवं उद्देश्यों के अनुपालन में अर्थव्यवस्था के विकास की आवश्यकताओं को उत्तरोत्तर एवं बेहतर ढंग से पूर्ण करने एवं उनसे संबंधित एवं प्रासंगिक मामलों के लिए प्रावधान करता है।लम्बा शीर्षक बैंकों के राष्ट्रीयकरण को न्यायोचित ठहराने के कारणों एवं तर्कों के गुबंज प्रदान करता हुआ प्रतीत होता है। केवल विधिक दृष्टिकोण से देखें तो यह शीर्षक केवल सजावटी है एवं अधिनियम के निर्वचन में यह मुश्किल से ही

उपयोगी है। सर्वोच्च न्यायालय ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण के वाद में यह अनुभव किया, चाहे वे नीतियां हों जिनका सरकार द्वारा कार्यालय में अनुगमन किया जाए या विरोधियों द्वारा प्रचारित नीतियां, संभवतः प्राकृतिक उद्देश्यों को यथोचित प्राप्त कर सकती है, महत्व उन्हीं का है जिनका उपायों की वैधता के निर्धारण में थोड़ी प्रासंगिकता है।

अधिनियम तीन मुख्य विषयों से संबंधित हैं:–

1. 14 मौजुदा बैंकिग कंपनियों के उपक्रमों के अंतरण का तरीका एवं प्रक्रिया;
2. 14 बैंकिग कंपनियों को मुआवजे का भुगतान, जिनके उपक्रमों का अधिग्रहण किया गया था;
3. 14 नए राष्ट्रीयकृत बैंकों का प्रबंध;

2.3.5 राष्ट्रीयकरण बैंकों का सरकारी निर्गम

वित्तीय प्रणाली पर नरसिम्हन आयोग ने सुझाव दिया कि भारतीय स्टेट बैंक आफ इण्डिया एवं अन्य सार्वजनिक बैंकों को जनता में अंश निर्गमन द्वारा अपनी पूंजी में वृद्धि करनी चाहिए, आयोग का सुझाव उन बैंकों के संबंध में था जिनका संचालन लाभकारी है एवं जिनकी बाजार में अच्छी प्रतिष्ठा है। वे सीधे पूंजी वृद्धि करने के लिए पूंजी बाजार से सम्पर्क कर सकते हैं। ऐसे बैंकों को जनता से पूंजी एकत्र करने के लिए पूंजी बाजार द्वारा निर्गम के लिए अनुमति दी जानी चाहिए। इस तरह के निर्गम के अभिदाताओं में सामान्य जनता के अलावा म्यूचल फण्ड, लाभदायक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों एवं संस्थानों के कर्मचारी शामिल हो सकते हैं। इसलिए बैंकिग कम्पनी (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) संशोधन अधि0, 1994 को बैंकिंग कम्पनी(अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अधि0 1970 एवं 1980 में संशोधन हेतु पारित किया गया। राष्ट्रीयकृत बैंकों का सरकारी निर्गम प्रदान करने के लिए एवं यह प्रदान करने के लिए कि बैंकों की सम्पूर्ण चुकता पूंजी, सरकारी निर्गम द्वारा बड़ी पूंजी को छोड़कर, केन्द्र सरकार में निहित होगी। हालांकि केन्द्र सरकार प्रत्येक बैंक की 51 प्रतिशत से कम अंश पूंजी धारण नहीं करेगी।नरसिम्हन आयोग द्वारा दिये गये सुझाव के अनुसार, कुछ सर्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों ने जनता से शेयर पूंजी प्राप्त करने हेतु सीधे पूंजी बाजार का दोहन किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्टेट बैंक आफ इण्डिया प्रावधान का क्षेत्र इसके विधान में आंशिक निजी शेयरधारिता के लिए, स्टेट बैंक आफ इण्डिया अधिनियम, 1955 में संशोधन के लिए, अक्टूबर 1993 में अध्यादेश जारी करके बढ़ाया गया। स्टेट बैंक आफ इण्डिया सार्वजनिक क्षेत्र की प्रथम बैंक था जिसने पूंजी बाजार में पहुंच बनाई एवं 2210 करोड़ रूपये अंश के रूप में और 1000 करोड़ रूपये बाण्ड के द्वारा एकत्रित

किये।बैंकिंग कम्पनीयां (अधिग्रहण और उपक्रमों का अंतरण) अधि0 1970/1980 में भी संशोधन किया गया, ताकि जनता राष्ट्रीयकृत बैंकों की कुल पूंजी के 49 प्रतिशत तक की पूंजी को अंश के रूप में प्राप्त करने के लिए आवेदन देने के लिए सक्षम हो। सरकार हालांकि राष्ट्रीयकृत बैंकों के 51 प्रतिशत अंश पर धारण बनाये रखेगी। राष्ट्रीयकृत बैंकों ने सीधे पूंजी बाजार से नहीं उठाई, लेकिन कुछ बैंकों ने शीघ्र ही पूंजी बाजार से सीधे पूंजी एकत्र करने का मन बना लिया।

<u>अधिनियम, यथायोग्य संशोधित रूप में राष्ट्रीयकृत बैंकों के लिए कई प्रावधान करता है जो निम्नलिखित हैः–</u>

<u>बैंकों की चुकता पूंजीः–</u>

संशोधन के बाद, प्रत्येक बैंक की अधिकृत पूंजी 1500 करोड़ रूपये होगी, जो 150 करोड़ पूर्णतः चुकता अंशों में विभाजित होगी जिनमें प्रत्येक का मूल्य 10 रूपये होगा। केन्द्र सरकार रिजर्व बैंक से सलाह मशविरे के बाद एवं सरकारी राजपत्र में सूचना द्वारा, जैसा वह ठीक समझे, अधिकृत पूंजी में कमी या वृद्धि कर सकती हैं, तथापि, ऐसी कमी या वृद्धि के बाद अधिकृत पूंजी 3000 करोड़ रूपयों से अधिक नहीं होगी एवं 1500 करोड़ रूपये से कम न होगी।

<u>प्रत्येक नये बैंक की चुकता पूंजी समय–समय पर निम्नलिखित द्वारा बढ़ाई जा सकती हैं–</u>

अ. यह राशि, संबंधित नए बैंक का निदेशक मण्डल रिर्जव बैंक के परामर्श के बाद एवं केन्द्र सरकार की पूर्व अनुमति से उस बैंक द्वारा स्थापित आरक्षित निधि से उस चुकता पूंजी को अंतरित कर सकेगा;

ब. यह राशि, केन्द्र सरकार रिजर्व बैंक से परामर्श के बाद उस चुकता पूंजी में योगदान कर सकेगी;

स. यह राशि, नये बैंक का निदेशक मण्डल रिजर्व बैंक के परामर्श एवं केन्द्र सरकार से पूर्व अनुमति प्राप्त कर विहित किए गए तरीके से लोक निर्गमन द्वारा बढ़ा सकता हैं, तथापि, केन्द्र सरकार हर समय पर, प्रत्येक नए बैंक की 51 प्रतिशत चुकता पूंजी से कम धारण नहीं करेगी। नये बैंक की सम्पूर्ण चुकता पूंजी, लोक निर्गम द्वारा बढ़ाई गई चुकता पूंजी को छोड़कर केन्द्र सरकार को आबंटित एवं निहित होगी।

केन्द्र सरकार द्वारा धारण नहीं किए गए प्रत्येक नये बैंक के अंश स्वतंत्र अंतरणीय होंगे, बशर्ते कि, कोई व्यक्ति या कंपनी जो भारत से बाहर का निवासी है या कोई कंपनी, ऐसी विधि के अंतर्गत निगमित जो भारत में लागू नहीं है, किसी भी समय नए बैंक के अंश अंतरण या अन्यथा द्वारा धारण या प्राप्त नहीं करेगी, इस तरह कि ऐसा निवेश कुल योग में, चुकता पूंजी के 20 प्रतिशत से अधिक न बढ़ जाए, जैसा कि केन्द्र सरकार ने सरकारी राजपत्र में सूचना द्वारा निर्धारित किया। इस

प्रावधान के उद्देश्य के लिए वाक्यांश कम्पनी का अर्थ किसी निगम और इसमें एक फर्म या व्यक्तियों की अन्य संस्थाएं शामिल हैं।

<u>नये बैंकों के अंश धारकों का मताधिकारः:–</u>

केन्द्र सरकार के अतिरिक्त तद्नुसार नये बैंक का अंशधारक, तद्नुसार नये बैंक के समस्त अंशधारकों के कुल मताधिकार के कुल 1 प्रतिशत की अधिकता में इसके द्वारा धारित किसी अंश के संबंध में मताधिकार क प्रयोग का अधिकारी नहीं होगा ।

तद्नुसार नये बैंक के प्रधान कार्यालय में अंशधारकों की पुस्तिका रखी जाएगी–

प्रत्येक तद्नुसार नया बैंक अपने प्रधान कार्यालय में एक रजिस्टर रखेगा, अंशधारकों की एक या अधिक पुस्तक में, एवं उनमें निम्नलिखित विवरण भरेगा–

1.अंशधारकों के नाम, पता एवं पेशा, धारित अंशों का विवरण, निर्दिश्ट संख्या द्वारा प्रत्येक अंश की पहचान करते हुए;

2.वह दिनांक जिसमें व्यक्ति ने अंश धारक के रूप में प्रवेश लिया है;

3.वह दिनांक जिसमें व्यक्ति ने अंशधारक के रूप का परित्याग किया है;

4.अन्य कोई भी निर्धारित ब्यौरे का विवरण;

तद्नुसार नया बैंक यह विवरण कम्प्यूटर फ्लापी या डिस्क जैसे किसी सुरक्षित रूप में रख सकता है जो भी निर्धारित हो।

अधिनियम के अनुसार, भारतीय साक्ष्य विधि 1872 (1 of 1872) में से किसी बात के होते हुए भी रजिस्टर की एक प्रति या निष्कर्ष, इस हेतु अधिकृत तद्नुसार बैंक के अधिकारी द्वारा प्रमाणित प्रति सभी विधिक कार्यवाहियों में साक्ष्य के रूप में स्वीकृत होगी।

न्यास की प्रविष्टि रजिस्टर में नहीं–

किसी न्यास की कोई सूचना, विवक्षित या प्रलक्षित एवं तर्कसाध्य, की प्रविष्टि रजिस्टर में नहीं एवं होगी तद्नुसार बैंक द्वारा प्राप्तियुक्त नहीं हागी।

राष्ट्रीयकृत बैंकों का प्रबंधन–

राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रबंधन से संबंधित योजना के लिए आवश्यक है कि बोर्ड कर्मचारीयों एवं जमाकर्ताओं के प्रतिनिधियों एवं उन अन्य व्यक्तियों जो किसानों, श्रमिकों एवं कारीगरों का प्रतिनिधित्व करते हैं, को शामिल करेगा। इन प्रतिनिधियों को निर्वाचित या नामित उस प्रकार किया जाएगा जैसा योजना में निर्दिष्ट किया है। (धारा–9)

इस योजना के निर्माण के तुरन्त बाद इसे संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखा जाना आवश्यक है। तद्नुसार नये बैंक का प्रत्येक निदेशक मण्डल निम्न को सम्मिलित करेगा–

अ.रिजर्व बैंक से सलाह के पश्चात, केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त दो पूर्णकालिक निदेशकों से अधिक नहीं;

ब.एक निदेशक, जो केन्द्र सरकार द्वारा नामित केन्द्र सरकार का अधिकारी है ;बशर्ते कि यह निदेशक किसी अन्य तद्नुसार नये बैंक का निदेशक नही होगा;

स.एक निदेशक जो रिजर्व बैंक की सिफारिश पर केन्द्र सरकार द्वारा एक नामित रिजर्व बैंक का अधिकारी है;

द.अधिकतम दो निदेशक, प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड ऑफ इण्डिया अधिनियम, 1992 (SEBI) की धारा 3 के अंतर्गत स्थापित प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड ऑफ इण्डिया, कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक अधिनियम, 1981 की धारा 3 के अंतर्गत स्थापित कृषि व ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक, कम्पनी अधि0 (1956) की धारा 4 ए की उपधारा (1) के तहत निर्दिश्ट एवं उपधारा (2) के तहत समय–समय पर अधिसूचित लोक वित्तीय संस्थाएं, एवं किसी केन्द्रीय अधिनियम या कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत निगमित और केन्द्र सरकार द्वारा नियन्त्रित कम से कम 51 प्रतिशत चुकता अंश पूंजी के साथ स्थापित या निर्मित संस्थाएं में से केन्द्र सरकार द्वारा नामित;

य.एक निदेशक, तद्नुसार नए बैंक के कर्मचारीयों में से जो औद्योगिक विवाद अधि0, 1947 की धारा 2(G) के तहत श्रमिक हैं, रिजर्व बैंक की सलाह के पश्चात केन्द्र सरकार द्वारा नामित;

र.एक निदेशक, तद्नुसार नए बैंक के कर्मचारीयों में से जो औद्योगिक विवाद अधि0, 1947 की धारा 2(G) के तहत श्रमिक नहीं हैं, रिजर्व बैंक की सलाह के पश्चात केन्द्र सरकार द्वारा नामित;

ल.एक निदेशक, जो कम से कम 15 वर्ष से लेखाकार है, रिजर्व बैंक की सलाह के पश्चात केन्द्र सरकार द्वारा नामित;

व.खण्ड (1) के प्रावधानों के अध्यधीन अधिकतम 6 निदेशक, केन्द्र सरकार द्वारा नामित;

1. जहां पूंजी धारा 3 की उपधारा 2(b) के खण्ड (c) के तहत जारी है ;
2. कुल चुकता पूंजी के 20प्रतिशत से अधिक नहीं दो निदेशकों से अधिा नहीं;
3. 20 प्रतिशत से अधिक, लेकिन कुल चुकता पूंजी से 14 प्रतिशत से अधिक, चार निदेशकों से अधिक नहीं ;
4. कुल चुकता पूंजी के 40 प्रतिशत से अधिक, छः निदेशकों से अधिक नहीं;

केन्द्र सरकार से अलग अंशधारकों द्वारा अपने मध्य से ही चुनाव किया जायेगा।अधिनियम के अनुसार इस खण्ड के अंतर्गत चुनाव के पश्चात निदेशकों के

भार ग्रहण पर, खण्ड (h) के अंतर्गत नामित समान संख्या के निदेशकों को योजना के अनुसार सेवा निवृत किया जायेगा।

उपधारा 3 के खण्ड (h) के अंतर्गत नामित या खण्ड (i) के अंतर्गत चुने गए निदेशकों के पास निम्न होगा–

अ.निम्नलिखित एक से अधिक विषयों में वयवहारिक अनुभव का विशेष ज्ञान–

1.कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था

2.बैंकिंग

3.सहकारिता

4.अर्थशास्त्र

5. वित्त

6. विधि

7. लघु उद्योग

8.किसी अन्य विषय में विशेष ज्ञान एवं व्यवहारिक अनुभव जो रिजर्व बैंक के विचार में तद्नुसार नए बैंक के लिए लाभदायक है।

ब.जमाकर्ताओं के हित का प्रतिनिधित्व, या

स. किसानों, श्रमिकों एवं कारीगरों के हित का प्रतिनिधित्व।

जहां रिजर्व बैंक की राय में कोई निदेशक उपधारा 3 के खण्ड (i) के तहत चुना गया, उपधारा 3–A के अंतर्गत आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करता, उस निदेशक एवं बैंक को सुने जाने का युक्तियुक्त अवसर देने के पश्चात, आदेश द्वारा उस निदेशक को हटाएगा एवं उस पदच्युति पर, निदेशक मण्डल उपधारा 3–A के अंतर्गत आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले किसी अन्य व्यक्ति को उसके स्थान पर निदेशक के रूप में सहयोगित करेगा, जब तक कि अगले आम अधिवेशन में तद्नुसार बैंक के अंशधारीयों द्वारा एक निदेशक को उचित रीति से न चुना जाए एवं वह व्यक्ति जो इस तरह सहयोगित किया गया है उसे तद्नुसार बैंक के अंशधारीयों द्वारा उचित रीति से चुना माना जाएगा।

2.3.6 राष्ट्रीयकृत बैंक के निदेशक बोर्ड का गठन की केन्द्र सरकार द्वारा योजना

अखिल भारतीय बैंक अधिकारी परिसंघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य (AIR 198 SC 2045) में यह निर्धारित किया गया कि बैंकिग कम्पनीयां (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अधि0, 1970 की धारा 9, जो केन्द्र सरकार को निदेशक मण्डलों के गठन के लिए योजना बनाने की शक्ति देती है वह मण्डलों को असल में प्रतिनिधिक चरित्र प्रदान करती है, अतः इस तरह विभिन्न लोगों का खरा हित प्रतिबिंबित होता है जो बैंक के साथ एक उद्योग या वाणिज्यिक उद्यम की भांति

व्यवहार करते हैं। विधायिका ने विशेष श्रेणीयों में से या तो चयन या नामांकन द्वारा मण्डलों में नियुक्ति के लिए योजना बनाना केन्द्र सरकार पर छोड़ दिया है। केन्द्र सरकार की विवेकशीलता, हालांकि अनियन्त्रित नहीं है, लेकिन एक विवेकशीलता जिसे युक्तियुक्त उपयोग में लाना चाहिए ताकि वह विधायिका के असल मकसद को प्रभाव दे। इस प्रकार चुनाव या नामांकन का जो आधार–तत्व है वही निदेशक मण्डल का रूख होगा। इसका खरा प्रतिनिधिक चरित्र, राष्ट्र की नीति एवं उद्देश्यों एवं आर्थिक विकास के संदर्भ में बैंकिग उद्योग की समर्पित, जरूरी एवं महत्वपुर्ण भूमिका के साथ सामंजस्य एवं सहयोग स्थापित करेगा। इसीलिए चुनाव एवं नामांकन का स्वरूप इस प्रकार का होना चाहिए जो बैंकिग उद्योग के लिए आदर्श एवं उपयुक्त हो। केन्द्र सरकार को इस सम्बन्ध में रिजर्व बैंक से परामर्श से कार्य करना चाहिए।अपने विवेक के प्रयोग में केन्द्र सरकार चुनाव को नजरन्दाज नहीं कर सकती जब भी जहां एक विशिष्ट श्रेणी के व्यक्तियों के संबंध में चुनाव सही एवं उपयुक्त हैं। कारीगरों एवं कर्मचारियों के अलावा निक्षेपण, कृषकों, कामगारों के प्रतिनिधियों की नियुक्ति में प्रतिनिधियों के चुनाव के स्वरूप का निर्णय पूरी तरह केन्द्र सरकार का है।कर्मचारियों के मामले में चुनाव अधिक तार्किक, अधिक उपयुक्त, अधिक लोकतान्त्रिक एवं निश्चित ही प्रतिनिधिक रूप का अधिक लाभकारी है। बैंकिंग उद्योग में वे अधिक संगठित, प्रमाणिक, अधिक प्रेरणायुक्त, हितबद्ध सहयोगी एवं सहभागी है।राष्ट्रीयकरण अधिनियम कर्मचारी के सच्चे एवं वैध हितों से बेपरवाह प्रबंधन का इादा नहीं करता, एक राष्ट्रीयकृत बैंक में प्रत्येक उतना ही कर्मचारी है जितना कि वह एक नियोक्ता है। वहां कर्मचारी एवं प्रबंधन में कोई प्रतिपक्ष नहीं है। राष्ट्रीकरण से पूर्व परम्परागत अस्तित्व में प्रबंधन संस्कृति की अब कोई उपयोगिता नहीं रही एवं खरी प्रबंधन संस्कृति वह संस्कृति है जो धारा के तहत सभी विशिष्ट व्यक्तियों के हितों के साथ अधिनियम की प्रस्तावना के आधार–तत्व राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बड़े एवं व्यापक हितों को भी प्रस्तुत करती है।

बहीखाता एवं लेखा परीक्षण :–

प्रत्येक बैंक खाते प्रत्येक वर्ष 31 मार्च को या जैसा कि केन्द्र सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट करे बंद एवं संतुलित किये जाते हैं। अकेंक्षण रिपोर्ट एवं प्रमाण पत्र की उसी तरह आवश्यक हैं जैसा कि बैंकिंग कंपनी के मामले में थी। अंकेक्षित रिपोर्ट की प्रतियां केन्द्र सरकार एवं रिजर्व बैंक को (धारा–10, उपधारा 3, 4, 5, 6) भेजी जाती हैं। बैंक वार्षिक तुलन पत्र, लाभ एवं हानि लेखा और अकेंक्षण रिपोर्ट एवं इसके निदेशक मण्डल द्वारा बैंक की क्रियाविधि एवं गतिविधियों पर एक रिपोर्ट केन्द्र सरकार को एवं रिजर्व बैंक को भेजेगा {धारा {10(7-A)}। सरकार द्वारा इसकी प्राप्ति के पश्चात रिपोर्ट संसद के सदनों में रखी जायेगी {धारा 10(8)}। केन्द्र सरकार किसी भी समय उतनी संख्या में अकेंक्षक

नियुक्त कर सकती है जितने कि उसके विचार में एक राष्ट्रीयकृत बैंक के लेखा पर रिपोर्ट एवं परीक्षा के लिए ठीक हैं।

सरकार को लाभ – धारा 10(7) के अनुसार,

अशोध्य और असंधिग्द ऋण, सम्पत्ति पर ह्रास, स्टाफ को योगदान एवं अधिवार्षिता निधि एवं अन्य सभी विषय जिनके लिए किसी विधि के अंतर्गत प्रावधान आवश्यक हैं, के लिए प्रावधान बनाने के पश्चात, या जो सामान्यतः बैंकिंग कम्पनीयों के लिए प्रदान किए जाते हैं एक नया बैंक अपने शुद्ध लाभ में से, लाभांश की घोषणा कर सकेगाा एवं अधिशेष यदि कोई हो तो रखेगा।

पुराने बैंकों में कर्मचारियों की सेवाओं का स्थानान्तरण–

अधि0 की धारा 12(2) के अंतर्गत वर्तमान बैंक का प्रत्येक अधिकारी या अन्य कर्मचारी 17 जुलाई 1969 को तद्नुसार नये बैंक का अधिकारी या कर्मचारी हो जाएगा एवं उस बैंक में समान शर्तों एवं पेंशन, आनुतोषिक एवं अन्य विषयों के अधिकारों के साथ अपना ऑफिस या सेवा धारण करेगा जैसा कि इसे तब स्वीकार्य होता अगर वर्तमान बैंक का उपक्रम तद्नुसार नए बैंक को अंतरित एवं में निहित नहीं हुआ होता एवं यदि वैसा ही बने रहता जब तक तद्नुसार नए बैंक में उसका नियोजन समाप्त न हो जाता या जब तक उसका पारिश्रामिक, शर्तें एवं हालात तद्नुसार नए बैंक द्वारा यथायोग्य बदल न दी जातीं।

बोनस/अतिरिक्त लाभ–

बैंकिग विधि (संशोधन) अधि0, 1984 (अधि0 64 of 1984) द्वारा धारा 12–ए स्थापित की गई जिसके अनुसार स्टेट बैंक आफ इण्डिया सहित सभी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक बोनस का भुगतान अधिनियम, 1965 के दायरे में आते हैं एवं बोनस का भुगतान अधिनियम, 1965 आवश्यक संदाय के अलावा कोई बोनस नहीं दिया जाएगा। इस प्रभाव हेतु धारा 43–ए स्टेट बैंक आफ इण्डिया अधिनियम,1955 में स्थापित की गई। यह अभिव्यक्त प्रावधान केन्द्र सरकार प्रशासनिक अधिकरण, मद्रास के एक निर्णय के मद्देनजर बनाया गया, 14 जनवरी 1984 को अधिसूचित, जिसमें यह निर्धारित किया गया था कि स्टेट बैंक आफ इण्डिया के कर्मचारियों को, जो इस निर्णय के तहत आते हैं प्रति माह की दर से बोनस का स्थायी भुगतान प्रत्येक छमाही में इस आधार पर किया जायेगा कि इसकी लंबे समय से प्रथा एवं परंपरा है। इस निर्णय के विरूद्ध एक रिट याचिका मद्रास उच्च न्यायालय में दायर की गई। स्थापित की गई धारा की उपधारा (3) के अनुसार, इसे धारा के प्रावधान किसी निर्णय, डिक्री, किसी न्यायालय, प्राधिकरण या अन्य प्राधिकारी के आदेश के होते हुए भी प्रभावी होंगे एवं इस अधिनियम या औद्योगिक विवाद अधि0, 1947 में निहित किसी अन्य प्रावधान या उस समय प्रभावी अन्य किसी विधि या कोई परंपरा, रूढ़ि या प्रथा या किसी संविदा, समझौता, निबटारा, पंचाट या अन्य उपकरण के होते हुए भी प्रभावी होंगे।

2.3.7 बैंकिग विनियमन अधिनियम, 1949 की नये बैंकों के लिए सीमित उपयोगिता

बैंकिग विनियमन अधिनियम उसी रूप में राष्ट्रीयकृत बैंकों पर लागू नहीं होता है। केवल कुछ ही प्रावधान नये बैंकों पर लागू बनाए गए हैं विशेष कर बेंकिंग कम्पनी (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अधि0, 1970/1980 की कुछ धाराओं के आधार पर।बैंकिंग विनियमन अधि0 की धारा 5(c) के अंतर्गत बैकिंग कम्पनी को, कोई कम्पनी जो भारत में बैंकिंग व्यवसाय चलाती है, के रूप में परिभाषित किया गया है। कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 3 के तहत जो कम्पनी कम्पनी अधिनियम में पंजीकृत है उसे कम्पनी की संज्ञा दी जाती है। 14 नए बैंकों ने निगम का चरित्र कम्पनी अधिनियम के अंतर्गत किसी पंजीकरण से नहीं प्राप्त किया है; वे राष्ट्रीयकरण अधिनियम के अंतर्गत स्थापित किये गये हैं। वे अतः बैंकिंग विनियमन अधिनियम या कम्पनी अधिनियम के अर्थे में कम्पनीयां नहीं हैं एवं इन अधिनियमों के प्रावधान उसी रूप में उन पर लागू नहीं किए जा सकते। राष्ट्रीयकरण अधिनियम हालांकि बैंकिंग विनियमन अधिनियम के कुछ प्रावधान उद्धृत करता है एवं उन्हें 14 नये बैंकों पर लागू बनाता है।

राष्ट्रीयकरण अधिनियम की धारा 3(5) के अनुसार, प्रत्येक नया बैंक बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 5(2) में परिभाषित के अनुरूप बैंकिग के व्यवसाय का कारोबार एवं संचाालन करेगा एवं उस अधिनियम की धारा 6(1) में निर्दिष्ट एक या अधिक प्रकार के व्यवसायों में संलग्न हो सकता है। राष्ट्रीयकरण अधिनियम की धारा 20, बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धाराओं 34–ए, 36–एडी एवं 51 को 14 नए बैंकों पर लागू बनाती है। धारा 34–ए के अंतर्गत एक बैंकिंग कम्पनी, IDBI, रिजर्व बैंक, SBI या कोई राष्ट्रीयकृत बैंक, आयात–निर्यात बैंक, पुनर्निर्माण बैंक, राष्ट्रीय आवास बैंक, राष्ट्रीय लघु उद्योग बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक एवं सहायक बैंक को अपने बहीखातों या अन्य दस्तावेजों को निरीक्षण हेतु दिखलाने या देने को मजबूर नहीं किया जा सकता जब वे उनका गोपनीय प्रकृति का होने का दावा कर रहे हैं।बैंकिंग विनियमन अधिनियम (1988 का अधिनियम 66 द्वारा संशोधित, 30.12. 1988 से प्रभावी) की धारा 51 बैंकिंग विनियमन अधिनियम की निम्नलिखित धाराओं को राष्ट्रीयकृत बैंक पर लागू बनाती है–

धारा 10, 13 से 15, 17, 19 से 21–ए, 23 से 28, 29 (उपधारा 3 छोड़कर), धारा 30 की उपधारा (1–बी), (1–सी) एवं (2), धारा 31, 34, 35, 35ए, 36 (उपधारा (1) के उपवर्ग डी को छोड़कर), 45–वाई से 45–जेडएफ, 46 से 48, 50, 52 एवं 53.

2.3.8 राष्ट्रीयकृत बैंकों के लिए विनियम

राष्ट्रीयकरण अधिनियम की धारा 19, तद्नुसार नये बैंकों के निदेशक मण्डलों को, रिजर्व बैंक की सहमति से एवं केन्द्र सरकार की पूर्व अनुमति सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के प्रावधानों या उसके अंतर्गत प्राप्त की गई किसी योजना से नए विनियम बनाने हेतु सशक्त करती है। विनियम निम्न से संबंधित हो सकते हैः–

1.स्थानीय बैंक और स्थानीय समितियों की शक्तियां, कार्य एवं कर्तव्य एवं व्यापार संचालन की प्रक्रिया ;

2.निदेशक मण्डल प्रबंधकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों की शक्तियों एवं कार्यों का प्रत्यायोजन;

3.तद्नुसार नये बैंक के सलाहकारों, अधिकारियों, अन्य कर्मचारियों की नियुक्ति की शर्तें एवं उनके कार्य एवं कर्तव्य;

4.कर्मचारियों एवं प्राधिकारियों को भविष्य निधि एवं अन्य लाभ एवं उन्हें प्रभाव में लाना;

5.तद्नुसार नये बैंकों द्वारा या विरूद्ध विधिक कार्यवाही का प्रवर्तन एवं प्रतिरक्षा एवं वकालत के करारनामे पर हस्ताक्षर का तरीका ;

6.तद्नुसार बैंक के लिए मोहर/मुद्रा/सील के सम्बन्ध में प्रावधान एवं इसके प्रयोग का तरीका और प्रभाव;

7.रूप एवं तरीका जिसमें नए तद्नुसार बैंक पर बाध्य संविदाएं निष्पाद्य की जा सकें ;8.ऋण एवं अग्रिम की शर्तें एवं बिलों का क्रय एवं छूट, ;

9.वित्त एवं गतिविधियों के कार्यक्रमों के कथनों को जमा करना;

10.अंशों की प्रकृति, तरीका जिसमें और शर्तें जिसके अध्यधीन अंश धारण एवं अंतरित किए जा सकते हैं एवं अंशधारकों के अधिकार एवं कर्तव्यों से संबंधित सामान्यतः सभी विषय;

11.रजिस्टर का रखरखाव एवं विवरणों की रजिस्टर में प्रविष्टि, रजिस्टर एवं कम्प्यूटर फ्लापी, डिस्क के रखरखाव में देखे गए रक्षोपाय एवं रजिस्टर का निरीक्षण एवं बंदी एवं उनसे संबंधित सभी अन्य विषय;

12.तरीका जिसमें सामान्य सभा आयोजित की जाएगी, वहां पर अपनाई जाने वाली प्रक्रिया एवं तरीका जिसमें मतदान के अधिकार का प्रयोग किया जा सकेगा;

13.अंशधारकों की सभा का धारण एवं वहां पर संचाालित व्यवसाय;

14.तरीका जिसमें तद्नुसार नये बैंक की ओर से अंशधारकों या अन्य व्यक्तियों को सूचनाएं पहुँचाई जाएंगी;

15.तरीका जिसमें धारा 9 (3) (h) में नामित निदेशक रिटायर होंगे।

जब तक विनियम बनाये जाते हैं, तब तक तद्नुसार वर्तमान नये बैंकों के संस्था के

अंर्तनियम एवं इसके सभी विनियम, नियम, उपनियम एवं आदेश नए बैंक के विनियम समझे जायेंगे। विनियम केन्द्र सरकार को भेजे जाएंगे एवं सरकार द्वारा इसकी एक प्रति संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जायेगी (धारा 19)।

<u>वार्षिक सामान्य बैठक</u>

प्रत्येक तद्नुसार नये बैंक, जिसने पूंजी जारी की है, की सामान्य बैठक, प्रत्येक वर्ष प्रधान कार्यालय के स्थान पर, ऐसे समय जिसे निदेशक मण्डल द्वारा समय–समय पर निर्दिष्ट किया जाए, आयोजित की जायेगी। वार्षिक सामान्य सभा उस तिथि से 6 सप्ताह की समाप्ति से पूर्व, जिस पर तुलन–पत्र, लाभ एवं हानि लेखा एवं अकेक्षक रिपोर्ट के साथ केन्द्र सरकार को या रिजर्व बैंक को भेजी जाती है, में जो तिथि सहज हो, आयोजित की जायेगी ।

वार्षिक सामान्य सभा में उपस्थित अंशधारक तद्नुसार नये बैंक के 31 मार्च से पूर्व बनाए गए तुलन–पत्र, लाभ एवं हानि लेखा, लेखाओं द्वारा आवृत अवधि के लिए तद्नुसार नये बैंक की कार्यप्रणाली एवं गतिविधियों पर निदेशक मण्डल की रिपोर्ट एवं तुलन–पत्र और लेखाओं पर अकेंक्षण रिपोर्ट पर चर्चा के अधिकारी होंगे।

<u>राष्ट्रीयकृत बैंक के निदेशक मण्डल की बैठक–</u>

राष्ट्रीयकृत बैंक के निदेशक मण्डल की बैठक सामान्यतः वर्ष भर से कम से कम 6 बार और प्रत्येक तिमाही में कम से कम एक बार होगी। ये राष्ट्रीयकृत बैंक के प्रधान कार्यालय पर सम्पन्न होगी या जहां मण्डल निर्णीत करे। बैठक के अध्यक्ष एवं उपस्थित निदेशकों के बहुमत की अनुमति के अलावा बैठक जिसके लिए बुलाई गई है उसके अलावा कोई अन्य प्रकरण/व्यवसाय का कारोबार नहीं होगाा जब तक उस व्यवसाय/प्रकरण की सूचना एक सप्ताह पूर्व लिखित में अध्यक्ष को न दे दी जाए। बैठक के लिए गणपूर्ति कुल निदेशक का 1/3 होगा या कम से कम 3 निदेशक होंगे। बैठक के अध्यक्ष के अभाव में, प्रबंध निदेशक बैठक की अध्यक्षता करता है और इन दोनों के अभाव में अन्य कोई उपस्थित निदेशक बैठक की अध्यक्षता के लिए निदेशकों द्वारा चुना जाएगा। सभी प्रश्नों का निर्धारण, उपस्थित निदेशकों के मतों के बहुमत द्वारा किया जायेगा एवं एक मतदान के मामले में बैठक के अध्यक्ष का निर्णायक मत होगा। कोई भी निदेशक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से किसी संविदा, ऋण, व्यवस्था या प्रस्ताव में प्रविष्ट या प्रविष्टि किया जाना प्रस्तावित होने का इच्छुक या संबद्ध हो, जब उस पर चर्चा की जाएगी, उपस्थित नहीं होगा जब तक जानकारी स्पष्ट करने के उद्देश्य के लिए उसकी उपस्थिति अन्य निदेशक द्वारा आवश्यक है। किसी भी दशा में वह निदेशक ऐसे किसी विषय पर अपने मत का प्रयोग करने का अधिकारी नहीं है। सामान्यतः 15 दिन से कम की सूचना पर बोर्ड की बैठक नहीं बुलाई जाएगी।

<u>मण्डल समिति की नियुक्ति</u>

राष्ट्रीयकृत बैंक (प्रबन्धन एवं प्रकीर्ण प्रावधान) योजना, 1970 एवं 1980 को 1986 में संशोधित किया गया। प्रबंधन समिति के गठन के लिए खण्ड 13 को स्थापित किया गया।मण्डल (बोर्ड) प्रबंध समिति, सलाहकारी समिति एवं क्षेत्रीय परामर्शदात्री समिति गठित कर सकता है। इनमें निदेशक या अन्य व्यक्ति होंगे या उनके पास भेजे गए विषयों पर बोर्ड को सलाह देने के लिए अंशतः निदेशक एवं अंशतः अन्य व्यक्ति होंगे।

क्षेत्रीय परामर्शदात्री समितियां

क्षेत्रीय मामलों के संचालन एवं उन पर सलाह देने के क्रम में योजना क्षेत्रीय परामर्शदात्री समिति की नियुक्ति के लिए व्यवस्था करती हैं। सरकार द्वारा निर्दिष्ट छः क्षेत्रों में प्रत्येक के लिए एक क्षेत्रीय परामर्शदात्री समिति होगी। इस समिति में अधिकमत 3 व्यक्ति केन्द्र सरकार द्वारा नामित एवं 2 प्रतिनिधि प्रत्येक राज्य से एवं 1 प्रत्येक संघ शासित राज्य से, संबंधित क्षेत्रों में शामिल राज्य सरकार या संघ शासित राज्य द्वारा नामित, जैसा कि मामला हो, एवं रिजर्व बैंक द्वारा निर्दिष्ट क्षेत्र में कार्यालय वाले राष्ट्रीयकृत बैंक द्वारा 1 प्रतिनिधि नामित किया जायेगा। इन समितियों की बैठकें, वित मंत्रालय द्वारा या केंद्रीय वित्त मंत्रालय के उस मंत्री या उप मंत्री द्वारा जिसे वित्त मंत्री नामित करें, संचालित की जायेगी। इस समिति का कार्य क्षेत्रों में बैंकिंग विकास की समीक्षा करना एवं ऐसे कदम जिन्हें वे इस दिशा में उपयुक्त मानते हैं रिजर्व बैंक एवं केन्द्र सरकार के विचार हेतु संस्तुति करना होगा। योजना में समान प्रावधान शामिल हैं जो निदेशकों की नियुक्ति के लिए एवं समिति की सदस्यता की अयोग्यता के लिए लागू होते हैं।

छः और बैंकों का राष्ट्रीकरण

15 अप्रैल 1980 को छः और निजी क्षेत्रों के बैंकों जिनकी मांग एवं सावधि देयताएं 200 करोड़ रूपयों से कम न थीं, प्रत्येक को राष्ट्रीयकृत किया गया; देश भर की बैंकिंग प्रणाली पर लोक नियन्त्रण का क्षेत्र फिर विस्तारित किया गया। इन छः बैंकों के उपक्रमों का अंतरण तद्नुसार नए बैंकों को, बैंकिंग कम्पनीयां (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अधिनियम, 1980 (1980 का अधिनियम 40) के तहत किया गया।यह बैंक हैं :– आन्ध्रा बैंक लिमिटेड, कारपोरेशन बैंक लिमि0, न्यू बैंक ऑफ इण्डिया लिमि0, ओरिन्टल बैंक आफ कामर्स लिमि0, पंजाब एण्ड सिन्ध बैंक लिमि0, और विजया बैंक लिमि0। प्रत्येक तद्नुसार नये बैंकों ने संबंधित पुराने बैंकों के समान नाम धारण किया, सिवाय शब्दों The एवं Limited के, जो मिटा दिए गए।

अधिनियम की प्रस्तावना :–

अधिनियम, निश्चित बैंकिंग कम्पनीयों के उपक्रमों के उनके आकार, स्रोत, कार्यक्षेत्र व्याप्ति एवं संगठन के संदर्भ में, अधिग्रहण एवं अंतरण के लिए, अर्थव्यवस्था की ऊंचाइयों पर आगे नियन्त्रण के क्रम में, अर्थव्यवस्था के विकास की आवश्यकताओं को उत्तरोत्तर पूरा करने एवं बेहतर कार्य करने के लिए एवं लोगों के कल्याण को

बढ़ाने के लिए, संविधान के अनुच्छेद 39 के खण्ड(**b**) एवं (**c**) में स्थापित किए गए सिद्धान्तों को निश्चित करने की ओर राज्य की नीतियों के अनुपालन में एवं उसके बाद संबंधित एवं उससे प्रासंगिक विषयों के लिए प्रावधान करता है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 39 के उपयुक्त खण्डों के अनुसार, राज्य अपनी नीति का विशिष्टतया, इस प्रकार संचालन करेगाा कि सुनिश्चित रूप से–

ब.समुदाय के भौतिक संसाधनों को स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बांटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;

ग.आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पादन–साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी सकेंद्रण न हो;

2.4 सारांश

भारत ने स्वतंत्रता के बाद अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समाजवादी स्वरूप को लक्ष्य के रूप में अपनाया। इसका अर्थ गैर तकनीकी–भाषा में, देश को बिना अधिनायकवादी राज्य बनाए जहां तक सम्भव हो सके समाज में आर्थिक समानता को लागू करना था। इस लक्ष्य को लोकतांत्रिक प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करना तथाकथित किया गया।

बैंकिंग संस्थाएं निजी बचत की संरक्षक एवं उधार प्रदान करने वाली सशक्त संस्थाए हैं। यह संस्थाएं जमा स्वीकार कर उन्हें देश और उद्योगों की उन्नति के लिए अग्रिम के रूप में प्रदान कर देश के संसाधनों को गतिमान करती हैं। 1955 ऑफ इडिया का राष्ट्रीयकरण किया गया एवं स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा इसके व्यवसाय का अधिग्रहण किया गया। जहां तक अनुसूचित बैंकों का संबंध है उनके विरूद्ध शिकायतें थीं, कि भारतीय वाणिज्यिक बैंक बड़े एवं मध्य श्रेणी के उद्योगों को, एवं बड़े व्यापारिक घरानों को व्यापार हेतु अग्रिम ऋण उपलब्ध करा रहे थे, लेकिन प्राथमिक मांग वाले क्षेत्रों जैसे कृषि, लघु उद्योग एवं निर्यात को उनका निर्धारित अंश प्राप्त नहीं हो रहा था।वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण भारतीय बैंकिंग प्रणाली में एक नयी क्रांति थी। अचानक उठाये गये कदम के लिए जो कारण अधिकारिक रूप से कहे गए वे थे, कि प्रमुख बैंकों का सार्वजनिक स्वामित्व राष्ट्रीय संसाधनों के अधिक प्रभावशील गतिशीलता एवं विकास में सहायक होगा एवं उत्पादन उद्देश्यों के लिए इनका उपयोग योजनाओं एवं प्राथमिकता के आधार पर होगा।सामाजिक नियंत्रण का उद्देश्य भी यही था, लेकिन सरकार ने सोचा कि यह सफल नहीं हुआ। 29 जुलाई 1970 को 14 बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बिल पर वाद–विवाद के दौरान प्रधानमंत्री ने, यह प्रश्न कि ''सामाजिक नियंत्रण को लम्बी अवधि के लिए क्यों नहीं आजमाया गया?'' के उत्तर में सरकार की ओर से उत्तर दिया, –सामाजिक नियंत्रण का कमजोर पहलू था कि कई बैंकों में, जो लोग

भूतकाल में बैंकों की नीतियों को नियंत्रित करते थे उनका प्रभाव आज भी किसी न किसी रूप लगाातार बना हुआ था, कभी–कभी बोर्ड के पुराने अध्यक्ष या उपाध्यक्ष की लगाातार उपस्थिति के द्वारा। उनके द्वारा दिये गये दिशा–निर्देशों का बैंक कभी–कभी आदर भी किया करते थे। लेकिन संसार में, वे व्यक्ति जो कि पूरे दिल एवं उत्साह से इन नीतियों को लेकर चलते हैं एवं उन व्यक्तियों के मध्य अंतर हैं जो केवल कुछ निर्देशों के कारण इनका पालन करते हैं।राष्ट्रीयकृत बैंको से अपेक्षा की गई कि उपेक्षित क्षेत्रों एवं निर्यात की याजनाओं को प्राथमिकता देंगें, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की मांगों के अनुरूप कार्य करेंगे एवं उपलब्ध संसाधनों के संतुलन का प्रयोग संगठित उद्योगों के लिए इस आधार पर करेंगे कि नए उद्योगों एवं जो पिछड़े क्षेत्रों में हैं वे बड़े व्यवसायिक घरानों के लिए प्राथमिकता पर होंगे। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कमजोर एवं पिछड़े क्षेत्रों एवं निर्यात क्षेत्र में, व्यवसाय स्थापित करने में आरोपित ब्याज की अपेक्षा कम ब्याज दरें आरोपित की गई इस तरह इन क्षेत्रों को अनुदान उपलब्ध कराया गया। कमजोर क्षेत्र को ऋण देने में निहित जोखिम से सुरक्षा के लिए समुदाय के मजबूत भाग द्वारा देय ''ऋण गारन्टी बीमा'' के रूप में एक और कदम बढ़ाया गया। 15 अप्रैल 1980 को 6 और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया।

आशा एवं जोश ने उदारतापूर्वक दिखाया, कि राष्ट्रीयकरण के बाद हम प्रभावी ढंग से कृषि, निर्यात, छोटे उद्योगों, ग्रामीण क्षेत्रों का विकास आदि सुविधाएं के लिए उधार प्राप्त कर सकते हैं; कि बैंकों की ईकाईयां अब ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तारित होंगी एवं लोगों के विश्वास में बहुत इजाफा होगा। कर्मचारियों ने इस कदम का स्वागत किया कि दक्षता एवं सेवा प्रभावित नहीं होगी। वित्तीय प्रणाली पर नरसिम्हन आयोग ने सुझाव दिया कि भारतीय स्टेट बैंक आफ इण्डिया एवं अन्य सार्वजनिक बैंकों को जनता में अंश निर्गमन द्वारा अपनी पूंजी में वृद्धि करनी चाहिए, आयोग का सुझाव उन बैंकों के संबंध में था जिनका संचालन लाभकारी है एवं जिनकी बाजार में अच्छी प्रतिष्ठा है। वे सीधे पूंजी वृद्धि करने के लिए पूंजी बाजार से सम्पर्क कर सकते हैं। ऐसे बैंकों को जनता से पूंजी एकत्र करने के लिए पूंजी बाजार द्वारा निर्गम के लिए अनुमति दी जानी चाहिए। इस तरह के निर्गम के अभिदाताओं में सामान्य जनता के अलावा म्यूचल फण्ड, लाभदायक सार्वजनिक क्षेत्र के उपकमों एवं संस्थानों के कर्मचारी शामिल हो सकते हैं। इसलिए बैंकिग कम्पनी (अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) संशोधन अधि0, 1994 को बैंकिंग कम्पनी(अधिग्रहण एवं उपक्रमों का अंतरण) अधि0 1970 एवं 1980 में संशोधन हेतु पारित किया गया। राष्ट्रीयकृत बैंकों का सरकारी निर्गम प्रदान करने के लिए एवं यह प्रदान करने के लिए कि बैंकों की सम्पूर्ण चुकता पूंजी, सरकारी निर्गम द्वारा बड़ी पूंजी को छोड़कर, केन्द्र सरकार में निहित होगी। हालांकि केन्द्र सरकार प्रत्येक बैंक की 51 प्रतिशत से कम अंश पूंजी धारण नहीं करेगी।नरसिम्हन आयोग द्वारा

दिये गये सुझाव के अनुसार, कुछ सर्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों ने जनता से शेयर पूंजी प्राप्त करने हेतु सीधे पूंजी बाजार का दोहन किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्टेट बैंक आफ इण्डिया प्रावधान का क्षेत्र इसके विधान में आंशिक निजी शेयरधारिता के लिए, स्टेट बैंक आफ इण्डिया अधिनियम, 1955 में संशोधन के लिए, अक्टूबर 1993 में अध्यादेश जारी करके बढ़ाया गया। स्टेट बैंक आफ इण्डिया सार्वजनिक क्षेत्र की प्रथम बैंक था जिसने पूंजी बाजार में पहुंच बनाई एवं 2210 करोड़ रूपये अंश के रूप में और 1000 करोड़ रूपये बाण्ड के द्वारा एकत्रित किये। बैंकिंग कम्पनीयां (अधिग्रहण और उपक्रमों का अंतरण) अधि0 1970/1980 में भी संशोधन किया गया, ताकि जनता राष्ट्रीयकृत बैंकों की कुल पूंजी के 49 प्रतिशत तक की पूंजी को अंश के रूप में प्राप्त करने के लिए आवेदन देने के लिए सक्षम हो। सरकार हालांकि राष्ट्रीयकृत बैंकों के 51 प्रतिशत अंश पर धारण बनाये रखेगी। राष्ट्रीयकृत बैंकों ने सीधे पूंजी बाजार से नहीं उठाई, लेकिन कुछ बैंकों ने शीघ्र ही पूंजी बाजार से सीधे पूंजी एकत्र करने का मन बना लिया।

अधिनियम, यथायोग्य संशोधित रूप में राष्ट्रीयकृत बैंकों के लिए कई प्रावधान करता है जो निम्नलिखित हैः—

बैंकों की चुकता पूंजीः—

संशोधन के बाद, प्रत्येक बैंक की अधिकृत पूंजी 1500 करोड़ रूपये होगी, जो 150 करोड़ पूर्णतः चुकता अंशों में विभाजित होगी जिनमें प्रत्येक का मूल्य 10 रूपये होगा। केन्द्र सरकार रिजर्व बैंक से सलाह मशविरे के बाद एवं सरकारी राजपत्र में सूचना द्वारा, जैसा वह ठीक समझे, अधिकृत पूंजी में कमी या वृद्धि कर सकती हैं, तथापि, ऐसी कमी या वृद्धि के बाद अधिकृत पूंजी 3000 करोड़ रूपयों से अधिक नहीं होगी एवं 1500 करोड़ रूपये से कम न होगी।

प्रत्येक नये बैंक की चुकता पूंजी समय—समय पर निम्नलिखित द्वारा बढ़ाई जा सकती हैं—

अ.यह राशि, संबंधित नए बैंक का निदेशक मण्डल रिर्जव बैंक के परामर्श के बाद एवं केन्द्र सरकार की पूर्व अनुमति से उस बैंक द्वारा स्थापित आरक्षित निधि से उस चुकता पूंजी को अंतरित कर सकेगा;

ब.यह राशि, केन्द्र सरकार रिजर्व बैंक से परामर्श के बाद उस चुकता पूंजी में योगदान कर सकेगी;

स.यह राशि, नये बैंक का निदेशक मण्डल रिजर्व बैंक के परामर्श एवं केन्द्र सरकार से पूर्व अनुमति प्राप्त कर विहित किए गए तरीके से लोक निर्गमन द्वारा बढ़ा सकता हैं, तथापि, केन्द्र सरकार हर समय पर, प्रत्येक नए बैंक की 51 प्रतिशत चुकता पूंजी से कम धारण नहीं करेगी। नये बैंक की सम्पूर्ण चुकता पूंजी, लोक निर्गम द्वारा बढ़ाई गई चुकता पूंजी को छोड़कर केन्द्र सरकार को आबंटित एवं निहित होगी।

केन्द्र सरकार द्वारा धारण नहीं किए गए प्रत्येक नये बैंक के अंश स्वतंत्र अंतरणीय होंगे, बशर्ते कि, कोई व्यक्ति या कंपनी जो भारत से बाहर का निवासी है या कोई कंपनी, ऐसी विधि के अंतर्गत निगमित जो भारत में लागू नहीं है, किसी भी समय नए बैंक के अंश अंतरण या अन्यथा द्वारा धारण या प्राप्त नहीं करेगी, इस तरह कि ऐसा निवेश कुल योग में, चुकता पूंजी के 20 प्रतिशत से अधिक न बढ़ जाए, जैसा कि केन्द्र सरकार ने सरकारी राजपत्र में सूचना द्वारा निर्धारित किया। इस प्रावधान के उद्देश्य के लिए वाक्यांश कम्पनी का अर्थ किसी निगम और इसमें एक फर्म या व्यक्तियों की अन्य संस्थाएं शामिल हैं।

नये बैंकों के अंश धारकों का मताधिकारः:–

केन्द्र सरकार के अतिरिक्त तद्नुसार नये बैंक का अंशधारक, तद्नुसार नये बैंक के समस्त अंशधारकों के कुल मताधिकार के कुल 1 प्रतिशत की अधिकता में इसके द्वारा धारित किसी अंश के संबंध में मताधिकार क प्रयोग का अधिकारी नहीं होगा ।

तद्नुसार नये बैंक के प्रधान कार्यालय में अंशधारकों की पुस्तिका रखी जाएगी–

प्रत्येक तद्नुसार नया बैंक अपने प्रधान कार्यालय में एक रजिस्टर रखेगा, अंशधारकों की एक या अधिक पुस्तक में, एवं उनमें निम्नलिखित विवरण भरेगा–

1.अंशधारकों के नाम, पता एवं पेशा, धारित अंशों का विवरण, निर्दिश्ट संख्या द्वारा प्रत्येक अंश की पहचान करते हुए;

2.वह दिनांक जिसमें व्यक्ति ने अंश धारक के रूप में प्रवेश लिया है;

3.वह दिनांक जिसमें व्यक्ति ने अंशधारक के रूप का परित्याग किया है;

4.अन्य कोई भी निर्धारित ब्यौरे का विवरण;

तद्नुसार नया बैंक यह विवरण कम्प्यूटर फ्लापी या डिस्क जैसे किसी सुरक्षित रूप में रख सकता है जो भी निर्धारित हो।

अधिनियम के अनुसार, भारतीय साक्ष्य विधि 1872 (1 of 1872) में से किसी बात के होते हुए भी रजिस्टर की एक प्रति या निष्कर्ष, इस हेतु अधिकृत तद्नुसार बैंक के अधिकारी द्वारा प्रमाणित प्रति सभी विधिक कार्यवाहियों में साक्ष्य के रूप में स्वीकृत होगी।

न्यास की प्रविष्टि रजिस्टर में नहीं–

कसी न्यास की कोई सूचना, विवक्षित या प्रलक्षित एवं तर्कसाध्य, की प्रविष्टि रजिस्टर में नहीं एवं होगी तद्नुसार बैंक द्वारा प्राप्तियुक्त नहीं हागी।

राष्ट्रीयकृत बैंकों का प्रबंधन–

राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रबंधन से संबंधित योजना के लिए आवश्यक है कि बोर्ड कर्मचारीयों एवं जमाकर्ताओं के प्रतिनिधियों एवं उन अन्य व्यक्तियों जो किसानों, श्रमिकों एवं कारीगरों का प्रतिनिधित्व करते हैं, को शामिल करेगा। इन प्रतिनिधियों को निर्वाचित या नामित उस प्रकार किया जाएगा जैसा योजना में निर्दिष्ट किया है। (धारा–9)

2.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

राष्ट्रीयकरण – सरकार द्वारा बैंकों का प्रबंधन नियंत्रण अपने हाथों में ले लेना।
अंशधारी– वह जो एक निगम के स्टाक में अंश (शेयर) धारण करता है।

2.6 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मर्केन्टाइल विधि के सिद्वान्त –अवतार सिंह छठा संस्करण 1996
2. बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– पी0एन0वार्षनेय
3. भारत में बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– तन्नान
4. चुतुर्वेदी,ममता., आधुनिक बैंकिग विधि, सेन्ट्रल लॉ पबिलकेशन
5. दत्त रूद्रा, इंडियन इकोनोमी

2.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.बैंकों के राष्ट्रीयकरण पर निबंध लिखिए।
2.बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में तर्क लिखिए।
3.राष्ट्रीयकरण अधिनियम के मुख्य प्रावधानों पर चर्चा कीजिए।

एल–एल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–1. परिचय एवं बैंकिग पर सामाजिक नियंत्रण (**Introduction & Social control over banking**)

इकाई –3. जमाकर्ताओं (निक्षेपी) की संरचना का संरक्षण (**Protection of depositors; Priority lending; Promotion of under privileged classes)**

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 विषय
    3.3.1 निक्षेपागार अधिनियम, 1996
    3.3.2 निक्षेपाार संबंधित विधि (संशोधन) अधिनियम, 1997
    3.3.3 प्रतिभूति विधि (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1999
    3.3.4 निवेशक संरक्षण
    3.3.5 अन्य अधिनियमों में संशोधन
        3.3.5.1 भारतीय स्टाम्प अधिनियम में संशोधन
        3.3.5.2 भारतीय आयकर अधिनियम में संशोधन
        3.3.5.3 कम्पनी अधिनियम में संशोधन
3.4 सारांश
3.5 महत्वपूर्ण शब्दावली
3.6 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रतिभूति बाजार सन् 1992 तक पूंजी मामले (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 (Capital issues (Control) Act, 1947) और प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 (SCRA) द्वारा नियन्त्रित होता था। सीका (CICA) की उत्पत्ति 1943 में युद्ध के दौरान हुई। इसका उद्देश्य उस समय युद्ध हेतु संसाधन का माध्यम बनना था, भारतीय रक्षा अधिनियम, 1943 के अधीन भारतीय रक्षा नियमावली के द्वारा भारतीय पूंजी मामलों पर नियन्त्रण मई 1943 में स्थापित हुआ। कम्पनियों द्वारा पूंजी वृद्धि पर नियन्त्रण एवं राष्ट्रीय संसाधनों का उचित माध्यम द्वारा उपयोग सुनिश्चित करने अर्थात उनके द्वारा सरकार अपनी प्राथमिकताओं एवं लक्ष्यों की प्राप्ति कर सके एवं निवेशकों के हितों के संरक्षण के उद्देश्य से इन नियन्त्रणों को युद्ध के पश्चात कुछ बदलावों के साथ जारी रखा गया। भारतीय रक्षा नियमावली में सम्बन्धित प्रावधानों को पूंजी मामले (नियन्त्रण का बना रहना) अधिनियम (Capital Issues (Continuance of Control) Act) द्वारा अप्रैल 1947 में प्रतिस्थापित किया गया। इस अधिनियम को 1956 में स्थाई कर दिया गया एवं पूंजी मामले (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 के रूप में अधिनियमित किया गया। हालांकि उदारीकरण प्रक्रिया के तहत 1992 में इसे समाप्त कर दिया गया।पिछले दशक (1992–2003) प्राधिकरण वर्ग प्रतिभूति बाजार के विकास की आवश्यकता के प्रति संवेदनशील रहा, इतना ही नहीं 9 विशेष विधायी हस्तक्षेप, दो नये अधिनियमों सहित अर्थात सेबी अधिनियम, 1992, निक्षेपागार अधिनियम, 1996 का आगमन हुआ। SCRA, SEBI एवं निक्षेपागार अधिनियमों के प्रावधानों में इस अवधि के दौरान क्रमशः 6, 5 एवं 3 बार संशोधन किया गया। उस समय विकास की आवश्यकता इतनी अधिक थी कि पिछले दशक में प्रतिभूति विधि से सम्बन्धित पांच अध्यादेश जारी किए गए, इसके अतिरिक्त अनेक विधायन (आयकर अधिनियम, कम्पनी अधि0, भारतीय स्टाम्प अधि0, बैंकर्स पुस्तक साक्ष्य अधि0, बेनामी संव्यवहार (निषेध) अधि0 आदि), जिनका अभिप्राय प्रतिभूति बाजार से था, को प्रतिभूति विधि में संशोधनों के समपूरक बनाने हेतु संशोधित किया गया।सेबी अधिनियम के अधिनियमन के साथ विधिक सुधार आरम्भ हुए। पूंजी मामले (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 को निरसति (1992) किया गया जिससे बाजार–निर्धारित संसाधनों के आवंटन का मार्ग प्रशस्त हुआ। तत्पश्चात् प्रतिभूति विधि (संशोधन) अधिनियम, 1995 आया। 1996 में निक्षेपागार अधिनियम ने प्रतिभूति में निक्षेपागार की स्थापना प्रदान की, जिसका उद्देश्य प्रतिभूति का तेज, सटीक एवं सुरक्षित स्थानान्तरण सुनिश्चित करना था। इसके पश्चात निक्षेपागार सम्बन्धित विधि (संशोधन) अधिनियम, 1997, प्रतिभूति विधि

(संशोधन) अधिनिमय, 1999, प्रतिभूति विधि (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1999 आए। 2002 में सेवी (संशोधन) अधिनियम आया जिसने सेवी को व्यापक शक्तियां प्रदान कीं। 9वां विधिक हस्तक्षेप प्रतिभूति विधि (संशोधन) बिल, 2003 था जिसका SCRA को संशोधित कर स्टॉक एक्चेंज को (demutulisation) प्रदान किया।

3.2 उद्देश्य

प्रतिभूति बाजार 1992 की शुरूआत तक दो व्यापक विधायनों, पूंजी मामले (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 (CICA) एवं प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 (SCRA) द्वारा संचालित था। इस ईकाई का उद्देश्य सार्वजनिक निक्षेपागार से सम्बन्धित विधि का विश्लेषण एवं छात्रों को इस सम्बन्ध में अद्यतन संशोधनों से अवगत कराना है।

3.3.1 निक्षेपागार अधिनियम 1996

मध्य 1990 तक प्रचलित प्रतिभूति के स्वामित्व की स्थानान्तरण प्रणाली अक्षम थी क्योंकि प्रत्येक स्थानान्तरण में प्रतिभूति पत्रों को पंजीकरण एवं स्वामित्व हेतु प्रतिभूमि प्रमाण पत्र पर अनुमोदन के साक्ष्य के साथ जारीकर्ता तक पहुँचाना पड़ता था। स्थानान्तरण की प्रक्रिया कई मामलों में कम्पनी अधिनियम, 1956 या SCRA में अपेक्षित 2 माह से भी अधिक का समय ले लेती थी। गलत कागजी कार्यवाही, स्थानान्तरण दस्तावेज पर जारीकर्ता के रिकार्ड के नमूने से हस्ताक्षर से न मिलने या अन्य प्रक्रियात्मक कारणों से स्थानान्तरण का एक बड़ा काम गलत अंतरण के रूप में सामने आता था। चोरी, धोखा, प्रमाण पत्रों में विकृति एवं अन्य अनियमितताएं आम थीं। कम्पनी अधिनियम, 1950 की धारा 108 के अन्तर्गत प्रतिभूति अंतरण के साथ जटिलताएं जुड़ी थीं साथ ही भारी–भरकर कागजी कार्यवाही, स्टेशरी की छपाई, प्रतिभूति का सुरक्षित संरक्षण, समायोजन में देरी एवं प्रतिभूति में प्रतिबंधित तरलता एवं निवेशकों की शिकायतों की सुनवाई में समय का लगना एवं अड़ियल रवैया भी था। इन सब समस्याओं से एक रात में नहीं निपटा जा सकता था परन्तु ये द्वितीयक बाजार में व्यापार की मात्रा में फैलाव से जुड़ गई थी एवं व्यापार एवं उद्योगों की वित्त हेतु प्रतिभूति बाजार पर निर्भरता बड़ा रहीं थीं। अधिनियम ने प्रतिभूति के स्थानान्तरण को गति, सटीकता एवं सुरक्षा के साथ निःशुल्क भी सुनिश्चित किया एवं प्रतिभूतियों में निक्षेपागार की स्थापना को विधिक आधार प्रदान किया। ऐसा निम्न परिवर्तन से संभव हुआ – अ. सार्वजनिक सीमित देयता कम्पनियों की प्रतिभूतियों को निःशुल्क अंतरणीय बनाया; ब. निक्षेपी रूप में प्रतिभूतियों को अभौतिकीकरण (dematerialization) किया; एवं स. पुस्तक

प्रविष्टि रूप में स्वामित्व के रिकार्ड का अनुरक्षण प्रदान किया। निक्षेपागार अधिनियम की धारा 10 के अन्तर्गत कल्पित किया गया कि निक्षेपी, प्रतिभूति से स्वामित्व के अंतरण को प्रभावी बनाने के सीमित उद्देश्य के साथ प्रतिभूति का पंजीकृत स्वामी माना जाएगा। निक्षेपागार में रखी प्रतिभूति के सम्बन्ध में निक्षेपी का नाम जारीकर्ता के अभिलेख में प्रतिभूति के पंजीकृत स्वामी के रूप में आएगा। निक्षेपी को प्रतिभूति के अंतरण को प्रभावी करने का अधिकार है एवं अन्य कोई सम्बन्धित अधिकार नहीं होगा। निक्षेपागार में रखी प्रतिभूति के सम्बन्ध में निक्षेपागार के अभिलेख में प्रतिभूति का स्वामी लाभकारी स्वामी होगा। लाभकारी या हितकारी स्वामी के पास प्रतिभूति के सम्बन्ध में सभी अधिकार एवं दायित्व होंगे। निक्षेपागार (प्रतिभूति रखने वाले) प्रत्येक सहभागी के नाम पर स्वामित्व अभिलेखों का संभरण करेंगे। ऐसा प्रत्येक सहभागी निक्षेपी के प्रतिनिधि के रूप में बदले में पुस्तक प्रविष्टि प्रपत्र में प्रत्येक लाभकारी स्वामी के स्वामित्व अभिलेखों का अभिकरण करेगा। निक्षेपी एवं सहभागी के मध्य मालिक–प्रतिनिधि का रिश्ता होगा एवं उनके सबंधि निक्षेपागार के उपनियमों एवं उनके मध्य संविदा द्वारा निर्धारित होंगे। सेवी अधिनियम, 1992 की धारा 12 के अन्तर्गत निक्षेपी एवं सहभागी दोनों का सेबी के साथ पंजीकरण आवश्यक होगा एवं सेबी द्वारा नियन्त्रित किया जाएगा। केवल वही कम्पनी जो कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत पंजीकृत है, निक्षेपी के रूप में पंजीकृत हो सकती है। हालांकि व्यवसाय आरम्भ करने से पहले, सेबी के पास पंजीकृत निक्षेपी को, सेबी से व्यवसाय आरम्भ करने हेतु प्रमाण पत्र प्राप्त करना होता है। सेबी, युक्तियुक्त सुनवाई का अवसर देने के बाद एक निक्षेपी एवं सहभागियों के पंजीकरण को समाप्त या निलम्बन हेतु सक्षम है। निक्षेपियों/सहभागियों द्वारा संभारित प्रतिभूतियों के स्वामित्व के अभिलेख, चाहे वे पुस्तक के रूप में हों या पढ़ने योग्य मशीनकृत हों, विधिक कार्यवाही में वे प्रथम दृष्टया साक्ष्य के रूप में माने जाएंगे। बैंकर्स बुक्स ऑफ एवीडेंस अधिनियम, 1819 (Banker's Books of Evidence Act, 1819) के तहत निक्षेपागार को एक बैंक ही माना जाएगा।

<u>प्रतिभूतियों का स्वतन्त्र अंतरणः–</u>

सभी पब्लिक कम्पनियों की प्रतिभूतियों को स्वतन्त्र अंतरित बनाया गया है। SCRA से धारा 22ए निरस्त कर एवं कम्पनी अधिनियम, 1956 में नई धारा 111A स्थापित कर अधिनियम द्वारा प्रतिभूतियों के अन्तरण या स्थानान्तरण के सम्बन्ध में कम्पनियों के निर्णय के अधिकार को ले लिया गया है। इस प्रावधान को निक्षेपागार अधिनियम की धारा 7 के साथ पढ़ने पर निजी या डीम्ड पब्लिक कम्पनी को छोड़कर, प्रत्येक कम्पनी चाहे सूचीबद्ध हो या नहीं, की प्रतिभूतियों के अंतरण को स्वतन्त्र एवं स्वतः (Automatic) बनाया गया है। अर्थात एक बार सहमत प्रतिफल चुका दिया गया, एवं क्रय लेनदेन नियत हो गया, तब क्रेता प्रतिभूति से

संबंधित प्रत्येक अधिकार का अधिकारी हो जाता है। जैसे ही नकद भुगतान के बदले प्रतिभूति के अंतरण से सम्बन्धित सूचना (अंतरण vs भुगतान) प्राप्त होती है, निक्षेपी या कम्पनी द्वारा अंतरण प्रभावी होगा एवं अंतरिती तुरन्त प्रतिभूति से सम्बन्धित सभी अधिकारों का अधिकारी होगा। अगर प्रतिभूति निक्षेपी रूप में है, निक्षेपी, सहभागियों द्वारा विलेख (संविदा नोट्स या अन्य उपयुक्त प्रमाण) के आधार पर अंतरण को प्रभाव देगा। अगर प्रतिभूतियां निक्षेपी रूप से बाहर हैं, कम्पनी अंतरण विलेख के प्राप्त होने के पश्चात अंतरण को प्रभाव देगी। निक्षेपी रूप की प्रतिभूतियों हेतु अंतरण विलेख की आवश्यकता नहीं है एवं कम्पनी अधिनियम की धारा 108 के अन्तर्गत अन्य प्रक्रियात्मक आवश्यकताएं निभायी जाती हैं। दोनों ही रूपों में अन्तरिती मताधिकार एवं प्रतिभूति से सम्बन्धित दायित्वों सहित सभी अधिकारों का हकदार होगा। हालांकि यह महसूस होने पर कि प्रतिभूति के अंतरण में सेवी अधिनियम, 1992 या उसके अन्तर्गत किसी नियम या बीमार औद्योगिक कम्पनियां (विशेष प्रावधान) अधिनियम (SICA), 1985 के किसी प्रावधान के उल्लंघन हुआ है, तो कम्पनी, निक्षेपी, सहभागी निवेशक या सेबी, कम्पनी विधिक बोर्ड (Company Law Boad, CLB) को; सम्बन्धित उल्लंघन के बारे में आवेदन पत्र भेज सकते हैं। जांच के पश्चात अगर सी0एल0बी0 उल्लंघन के बारे में निश्चित हो जाती है तो यह कम्पनी/निक्षेपी को स्वामित्व अभिलेखों में सुधार हेतु निर्देशित कर सकती है। जांच लम्बित होने तक सीएलबी, प्रतिभूतियों जो कि अंतरित की गई है, उनके सम्बन्ध में मताधिकार निलम्बित कर सकती है। अंतरिती आर्थिक अधिकारों (बोनस, डिविडेंड आदि) का अधिकारी होगा जिन्हें किसी भी परिस्थिति में निलम्बित नहीं किया जा सकता। सीएलबी के पास आवेदनपत्र के लम्बित होने के दौरान अंतरिती प्रतिभूतियों का अंतरण कर सकता है एवं ऐसा पुनः अंतरण अंतरिति को मताधिकार का भी हकदार बनाता है, जब तक अंतरिति के सम्बन्ध में मताधिकार का भी निलम्बन नहीं किया जाता।

<u>प्रतिभूतियों का आंशिक अभौतिकीकरणः–</u>

निक्षेपागार अधिनियम की धारा 9 के अन्तर्गत एक निक्षेपी द्वारा धारित प्रतिभूतियों का अभौतिकीकरण होगा एवं प्रतिमोच्य (fungible) होगा। प्रतिभूतियों की अचलता (immobilization) के विरूद्ध अधिनियम निक्षेपी रूप में प्रतिभूतियों के अभौतिकीकरण (dematinalisation) का प्रबन्ध करताहै। बाद की स्थिति से संदर्भित है, जब निक्षेपागार स्वामित्व अभिलेख के साथ–साथ प्रतिभूतियों को भौतिक रूप में भी धारण करता है। इस प्रकार के मामले में प्रतिभूतियों का भौतिक संचरण अंतरण को पूर्ण नहीं करता वरन, प्रतिभूतियां निक्षेपागार की संरक्षा में रहती हैं। अधिनियम के अनुसार, प्रतिभूतियों का स्वामित्व पुस्तक प्रविष्टि प्रणाली द्वारा दर्शित होगा एवं इसे प्रतिभूति प्रमाणपत्र की उपस्थिति की आवश्यकता नहीं होगी। हालांकि

निक्षेपागार से बाहर की प्रतिभूतियां भौतिक प्रतिभूति प्रमाणपत्र द्वारा प्रस्तुत की जाएंगी। अतः निक्षेपी रूप अनुमान में एक प्रकार का आंशिक अभौतिकीकरण है, अर्थात प्रतिभूतियों का एक भाग अभौतिक एवं शेष भाग सदा भौतिक रूप में रहता है।

<u>निवेशक का वर्चस्वः–</u>

निवेशक को यह विकल्प दिया गया है, वह प्रतिभूतियों को भौतिक रूप में या स्वामित्व अभिलेख आधारित निक्षेपी रूप में धारण कर सकता है। नये इशू के समय जारीकर्ता (issuer) का यह दायित्व है कि वह निवेशक को विकल्प प्रदान करे कि वह पत्र आधारित प्रणाली के अन्तर्गत भौतिक प्रतिभूति चाहता है या स्वामित्व अभिलेख (निक्षेपी रूप) की पुस्तक प्रविष्टि प्रणाली का विकल्प चुनता है। अगर निक्षेपी रूप चुना जाता है तो कौन सा निक्षेपी या सहभागी, पूर्ण रूप से निवेशक के साथ होगा। इस स्वतन्त्रता का उपयोग या तो प्रारम्भिक प्रस्ताव के समय, आवेदन प्रपत्र में इंगित कर या किसी भी बाद के समय प्रयोग की जा सकती है। निवेशक के पास यह भी स्वतन्त्रता होगी कि वह निक्षेपी रूप से अनिक्षेपी रूप या अनिक्षेपी रूप से निक्षेपी रूप में बदलाव कर सकता है।प्रारम्भिक प्रस्ताव के समय अगर निवेशक प्रतिभूति को निक्षेपी रूप में धारण करने का विकल्प चुनता है, तो जारीकर्ता सम्बन्धित निक्षेपागार/निक्षेपी को प्रतिभूति के आवंटन का विवरण प्रेक्षित करेगा एवं निक्षेपी को प्रतिभूति के पंजीकृत स्वामी के रूप में अभिलेखित (record) करेगा। इस प्रकार की सूचना प्राप्ति के पश्चात निक्षेपी अपने अभिलेखों में आवंटिती (Allottee) का नाम लाभकारी स्वामी के रूप में दर्ज करेगा। एक निवेशक जो भौतिक (कागजी) प्रतिभूति धारण करता है एवं निक्षेपी की सेवा पाना चाहता है, प्रमाण पत्र को जारीकर्ता को समर्पित करेगा। जारीकर्ता प्रमाण पत्र की प्राप्ति पर उसे रद्द करेगा एवं अपने अभिलेखों में निक्षेपी का नाम उस प्रतिभूति के संदर्भ में पंजीकृत स्वामी के रूप में प्रतिस्थापित करेगा एवं उसी अनुरूप निक्षेपी को सूचित करेगा। निक्षेपी तत्पश्चात निवेशक का नाम अपने अभिलेख में लाभकारी स्वामी (benificial owner) के रूप में दर्ज करेगा।

अगर एक लाभकारी स्वामी या प्रतिभूति का अंतरिती किसी प्रतिभूति के संदर्भ में एक निक्षेपी को चुनता है, वह निक्षेपी को अपने आशय की सूचना देगा। निक्षेपी बदले में अपने अभिलेखों में उचित प्रविष्टियाँ करेगा एवं जारीकर्ता को सूचित करेगा। जारीकर्ता निवेशक को प्रतिभूति का प्रमाणपत्र जारी करने हेतु व्यवस्था करेगा। निक्षेपी, एक सहभागी से संदेश की प्राप्ति पर, निक्षेपी रूप में सभी अंतरणों को अभिलेखित करेगा। संदेश का प्रकार सेबी के विनियमों के अनुसार होगा। एक निवेशक निक्षेपी की सेवा प्राप्ति से पूर्व सहभागी के द्वारा निक्षेपी के साथ संविदा करेगा। सहभागी को भी निवेशक के प्रतिनिधि के रूप में भाग अदा करने हेतु

निक्षेपी के साथ संविदा करनी आवश्यक है। निक्षेपी एवं प्रतिभूतियों के जारीकर्ता के मध्य भी संविदा होगी। सहभागी, जारीकर्ता, निवेशक एवं निक्षेपी के अधिकार एवं दायित्व उनके मध्य संविदा, निक्षेपागार के उपनियमों एवं सेबी के विनियमनों के द्वारा निर्धारित होंगे। निक्षेपागार अधिनियम, 1996 ने एक निक्षेपगार में प्रतिभूतियों के पुस्तक प्रविष्टि अंतरण एवं अभौतिकरण को सुविधाजनक बनाने हेतु विधायी ढांचा तैयार किया है। अधिनियम निम्न हेतु प्रावधान करता है–

1.एक निक्षेपगार/निक्षेपी का सेबी के साथ पंजीकरण, जो एक कम्पनी होने के लिए कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत आवश्यक है एवं निक्षेपी सहभागी का पंजीकरण, (सेबी के साथ) जो निक्षेपी का प्रतिनिधि है;

2.निक्षेपी द्वारा, हितकारी/लाभकारी स्वामी के अभिलेख के साथ निक्षेपागार में प्रतिभूतियों का अभौतिकीकरण अभिलेखित किया जाएगा;

3.सहभागी की उपेक्षा के लिए, प्रथम दृष्टान्त में निक्षेपी द्वारा लाभकारी स्वामी को क्षतिपूर्ति;

4.निक्षेपी, सहभागियों, जारीकर्ता एवं लाभकारी स्वामी के मध्य इंटरफेसेज (interfaces), इनमें से अनेक उन उपनियमों के अन्तर्गत आवश्यक है, जिन्हें एक निक्षेपी सेबी की मंजूरी से बनाता है;

5.निवेशक को प्रतिभूति, भौतिक या अभौतिक रूप में रखने का विकल्प, या पूर्व में अभौतिक रूप में रखी प्रतिभूतियों को भौतिक रूप में बदलना;

6.धोखे के मामले में पूछताछ, जांच एवं दंड;

7.निक्षेपागारों की स्थापना एवं कार्यप्रणाली को सुविधाजनक बनाने हेतु अधिनियम द्वारा अन्य विधायनों में संशोधन किए गए एवं प्रतिभूतियों का स्वतन्त्र अंतरण स्थापित किया गया।

3.3.2 निक्षेपागार संबंधित विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1997

निक्षेपागार अधिनियम, 1996 में संशोधन के समय, इस संशोधन अधिनियम द्वारा, कम्पनी अधिनियम, 1956, निक्षेपागार, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, अधिनियम, 1955, स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया (सहायक बैंक) अधनियम 1959, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक अधिनियम, 1964,बैकिंग कम्पनीज, (उपक्रमों का अधिग्रहण एवं अंतरण) अधिनियम, 1970, को प्रतिभूतियों के अभौतिकीकरण को सुविधाजनक बनाने हेतु संशोधित किया गया। अधिनियम द्वारा निर्धारित किया गया कि न्यास में धारण प्रतिभूतियों से सम्बन्धित, कम्पनी अधिनियम के प्रावधान, इन प्रतिभूतियों के संदर्भ में निक्षेपागार पर लागू नहीं होंगे, तब भी जब निक्षेपागार/ निक्षेपी प्रतिभूतियों का पंजीकृत स्वामी होगा। प्रतिभूतियों हेतु विशिष्ट संख्या के सम्बन्ध में धारा 83 को कम्पनी अधिनियम में बहाल रखा गया। हालांकि निक्षेपागार

में धारित प्रतिभूतियों के पास विशिष्ट संख्याएं नहीं हो सकतीं। इसने निक्षेपागार अधिनियम, 1996 के तहत मूल रूप में निर्धारित प्रतिभूतियों के स्वतन्त्र अंतरण को सीमित करने हेतु धारा 111A को संशोधित किया। यह निर्धारित करता है कि अगर एक कम्पनी प्रतिभूतियों को 2 माह के अन्दर पंजीकरण से इंकार करती है, अंतरिती अपने पक्ष में प्रतिभूतियों के पंजीकरण हेतु CLB के सामने अपील कर सकता है। यह भी निर्धारित करता है कि अगर अंतरण उस समय प्रभावी किसी विधि के उल्लंघन में किया गया है, निक्षेपी, निक्षेपी सहभागी, कम्पनी, सेबी या निवेशक 2 माह के भीतर पंजीकरण या अभिलेखों के शोधन हेतु सीएलबी के समक्ष आवेदन कर सकता है। एक निक्षेपी द्वारा सम्बन्धित म्यूचुअल फंड की यूनिटों के लाभकारी स्वामित्व के अंतरण पर स्टाम्प शुल्क से छूट प्रदान करने हेतु भारतीय स्टाम्प अधिनियम को संशोधित किया गया। (तत्पश्चात, ऋण प्रतिभूतियों (debt securities) के लाभकारी स्वामित्व के अंतरण पर स्टाम्प ड्यूटी की छूट दी गयी)।

3.3.3 प्रतिभूति विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1999

इस अधिनियम द्वारा व्युत्पन्न (डेरिवेटिव्ज), की आई एस की ईकाईयों एवं SCRA के तहत RBI (रिजर्व बैंक) को शक्तियों प्रत्यायोजन (delegation) से सम्बन्धित प्रावधानों को सम्मिलित किया गया।

<u>संजात या व्युत्पन्न (Derivatives) :–</u>

प्रतिभूति विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1995 द्वारा संजातों के निष्कासन पर प्रतिबंध के बावजूद डेरिवेरिव्ज का बाजार नहीं रूका, क्योंकि इनके व्यापार से सम्बन्धित विनियमित ढांचा नहीं था। सेबी ने 18 नवम्बर 1996 को भारत में डेरिवेटिव्ज के व्यापार हेतु उपयुक्त नियामक ढांचे के विकास हेतु डा0 एल0सी0 गुप्ता की अध्यक्षता में एक 24 सदस्यीय समिति की स्थापना की। समिति ने 17 मार्च 1998 को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। जिसमें अन्य के अलावा यह सिफारिश की गई कि एससीआरए (SCRA) की धारा 2(h) (ii) (a) के अन्तर्गत संजातों (Derivatives) को प्रतिभूति घोषित किया जा सकता है, अतः विनियामक ढांचा जो प्रतिभूतियों के व्यापार पर लागू होता है, संजातों का व्यापार भी निर्धारित कर सकता है। धारा 2 (h) जो प्रतिभूति की विस्तृत परिभाषा प्रदान करती है, केन्द्रीय सरकार को इस प्रकार के अन्य प्रपत्रों या यंत्रों को प्रतिभूति घोषित करने की शक्ति प्रदान करती है। हालांकि सरकार ने संजातों को प्रतिभूति घोषित नहीं किया, बजाय इसके एससीआरए को संशोधित करते हुए प्रतिभूति की परिभाषा में संजातों को स्पष्ट रूप से शामिल किया, शायद इसलिए कि किसी भी उपकरण या प्रपत्र को प्रतिभूति घोषित करने की इसकी शक्ति शब्दों द्वारा सीमित थी।

प्रतिभूति संविदा (विनियमन) संशोधन बिल, 1998 लोकसभा में 4 जुलाई 1998 को प्रतिभूति की परिभाषा का विस्तार करने के प्रस्ताव के साथ पेश किया गया कि इसके अन्तर्गत संजातों को शामिल किया जा सके ताकि इनका व्यापार शामिल हो सके एवं एससीआरए के अन्तर्गत विनियमित हो। बिल वित्त पर स्थाई समिति (SCF) को 10 जुलाई 1998 को परीक्ष एवं प्रतिवेदन हेतु संदर्भित किया गया। समिति द्वारा 17 मार्च 1999 को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया। समिति की राय में संजातों का समावेशन, यदि उचित सुरक्षा एवं जोखिम नियन्त्रक उपायों के साथ लागू किया गया तो निश्चित ही शिथिल बाजार को प्रोत्साहन देगा, परिणामस्वरूप निवेश क्रियाएं बढ़ेंगी एवं निवेशक/ सहभागियों के मन में अधिक विश्वास पैदा करेंगी। बिल की परीक्षा के पश्चात समिति द्वारा कुछ संशोधनों के साथ बिल को मंजूरी दी गई। हालांकि 12वीं लोकसभा के विघटन के फलस्वरूप बिल व्यपगत (Lapsed) हो गया। एक नया बिल प्रतिभूति विधियां (संशोधन) बिल, 1999 लोकसभा में 28 अक्टूबर 1999 को पेश किया गया जिसमें प्रतिभूति संविदा विनियामक (संशोधन) बिल, 1998 में प्रस्तावित संशोधनों के साथ एससीएफ (SCF) द्वारा सुझाए गए बदलाव भी शामिल थे। 16 दिसम्बर 1999 को बिल अधिनियम में परिवर्तित हो गया। अधिनियम में संजातों (derivatives) को परिभाषित करती धारा 2 में खंड (aa) सम्मिलित किया गया – (A) ऋण, लिखत, शेयर, लोन चाहे सुरक्षित हो या असुरक्षित, जोखिम दस्तावेज या संविदा अन्तर के लिए या प्रतिभूति का कोई अन्य रूप से ली गई प्रतिभूति, एवं (B) एक संविदा जो अपना मूल्य, अन्तर्निहित प्रतिभूतियों की कीमतों या कीमतों की सूची से प्राप्त करती है। धारा 2(h) में एक उपखंड (ia) भी स्थापित किया गया जिससे प्रतिभूतियों के दायरे में संजात भी शामिल हुए। चूंकि संजात संविदाएं सामान्यतः नकद निर्धारित होती है, इन्हें दांव/बाजी के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। चूँकि भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 30 के अन्तर्गत दांव या बाजी पर व्यापार शून्य एवं अमान्य है, संजात संविदाओं को लागू करना कठिन हो सकता है। इस प्रकार की विधिक अनिश्चितताओं को दूर करने के लिए एक नयी धारा 18ए स्थापित की गई इसके अनुसार उस समय लागू किसी अन्य विधि के शामिल होते हुए भी संजातों से संबंधित संविदा वैध एवं मान्य होगी, अगर ये संविदाएं, एक मान्यता प्राप्त शेयर बाजार कारोबार करती हैं एवं उस शेयर बाजार के नियमों एवं उप विधियों के अनुसार उसके समाशोधन गृह में निर्धारित की जाती है। धारा 23 को संशोधित किया गया कि किसी व्यक्ति द्वारा संविदा में धारा 18ए के उल्लंघन में प्रवेश दण्डनीय होगा। 1 मार्च 2000 को एक अधिसूचना द्वारा सरकार ने 1969 की अधिसूचना को निरस्त करते हुए प्रतिभूतियों में अग्र–व्यापार पर तीन दशक पुराने निषेध को हटा दिया। इस प्रतिबंध को सरकार द्वारा एस सी आर ए की धारा 16

के अन्तर्गत शक्ति के प्रयोग में, 27 जून 1969 को एक अधिसूचना के जरिए, कुछ अस्वस्थ प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण हेतु जो उस समय प्रतिभूति बाजार में विकसित हो गई थीं एवं अनचाही अटकलबाजियों को रोकने के लिए, लागू किया गया था। परिवर्तित वित्तीय माहौल में इस प्रतिबंध की प्रासंगिकता बहुत कम हो गयी थी। स्टाक एक्सचेंज की उपविधियों में उपयुक्त संशोधनों के द्वारा, प्रतिभूतियों में अग्र–अंतरण की अनुमति दी गई। इसी प्रकार उपरोक्त अधिसूचना में अंतराल पर संशोधनों द्वारा अधिकृत बिचौलियों द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों के रेपों अंतरणों की अनुमति दी गई। हालांकि 1969 की अधिसूचना जब लागू थी, समय के साथ अपवाद निकाले गए, जैसे–जैसे बाजार की आवश्यकता बदली एवं अग्र–व्यापार (carry forward/ready farword) के कुछ रूप प्रचलित थे। प्रतिभूतियों में काराबार को निर्धारित करने वाले, एससीआरए (SCRA) में प्रावधान एवं विनियामक ढांचा विकसित हुआ। एससीआरए में प्रतिभूतियों के दायरे में संजातों को शामिल करने वाले संशोधनों ने इस अधिनियम के तहत संजातों के कारोबार को संभव बनाया।

<u>सामूहिक निवेश योजना :–</u>

1990 के दशक के मध्य कई कम्पनियां विशेषकर बागान कम्पनियां निवेशकों से स्कीमों के माध्यम से पूंजी जुटाने लगीं, जो CIS के रूप में था। हालांकि सेबी अधिनियम, 1992 के तहत सेबी सीआईएस को नियन्त्रित एवं पंजीकृत करने हेतु प्राधिकृत है, वहां कोई उपयुक्त नियामक ढांचा नहीं था। जो ईकाईयों/उपकरणों (Units/instruments) के लिए उनके द्वारा बाजार के सुव्यवस्थित विकास को अनुमति देता, चूँकि सेबी का क्षेत्राधिकार प्रतिभूतियों के निवेशकों के हितों की रक्षा तक सीमित था। यह CIS ईकाईयों के निवेशकों के हितों की रक्षा हेतु कोई कदम नहीं उठा सकता था, जो कि प्रतिभूतियां नहीं थीं। इसके लिए अनुमति देने एवं बागान कम्पनियों में निवेशकों के हितों को रक्षा हेतु सेबी के हाथ मजबूत करने के लिए अधिनियम में प्रतिभूति की परिभाषा संशोधित की गई, ताकि इसके दायरे में ईकाईयों या अन्य किसी भी उपकरण /दस्तावेजों को जो किसी सीआईएस द्वारा ऐसी योजनाओं में निवेशकों को जारी किए जाएं, शामिल किया जा सके। अधिनियम केन्द्रीय सरकार को आवश्यकता हेतु नियम बनाने हेतु सशक्त करता है, जिनका पालन, सीआईएस द्वारा अपनी ईकाईयों को किसी स्टाक एक्सचेंज पर सूचीबद्ध करने के उद्देश्य से किया जाएगा। इन नियमों को प्रतिभूति संविदा (विनियमन) नियमों के अन्तर्गत शामिल किया गया। इसका उद्देश्य इन ईकाईयों हेतु बाजार का सुव्यवस्थित विकास था, जिसके तहत निवेशकों के हितों की रक्षा की जाएगी। अधिनियम ने सेबी अधिनियम, 1993 में सीआईएस की परिभाषा भी स्थापित की। सीआईएस से तात्पर्य ऐसी योजना या व्यवस्था है जो किसी कम्पनी द्वारा बनाई या

प्रस्तावित की जाती है जिसके अन्तर्गत (a) निवेशकों द्वारा किया गया भुगतान या योगदान, चाहे किसी भी नाम से हो, जिसे पूर्णतः एकत्रित एवं प्रयोग, योजना या व्यवस्था के उद्देश्य हेतु किया जाए; (b) इस योजना या व्यवस्था में निवेशकों द्वारा योगदान या भुगतान, इस योजना और व्यवस्था से लाभ, आय, उपज या सम्पत्ति चाहे चल हो या अचल पाने की दृष्टि से किया जाए; (c) सम्पत्ति, योगदान या निवेश योजना या व्यवस्था का हिस्सा बने, चाहे अभिज्ञेय हो या नहीं, निवेशक के निमित्त प्रबंधित हो; एवं (d) निवेशक का प्रतिदिन योजना या व्यवस्था के प्रबंधन एवं संचालन पर नियन्त्रण नहीं होता। हालांकि सीआईएस ऐसी योजना या व्यवस्था सम्मिलित नहीं करती– (i) एक सहकारी संस्था द्वारा निर्मित या प्रस्तावित; (ii) जिसके तहत जमा गैर बैकिंग वित्तीय कम्पनियों द्वारा स्वीकार किया जाए, (iii) बीमें का अनुबंध हो, (ix) कोई योजना, पेंशन योजना या बीमा योजना प्रदान की जाए जो एम्प्लायज प्रोविडेन्ट फंड एण्ड मिसेलेनिअस प्रोविजन एक्ट, 1952 के अन्तर्गत बनी हो। (Emiployees Provident fund and miscellaneous Provision Act, 1952), (x) जिसके तहत जमा कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 58ए के अन्तर्गत स्वीकृत की जाए, (xi) जिसके तहत एक कम्पनी द्वारा जमा स्वीकृत की जाए जो कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 620ए के अन्तर्गत निधि या म्युचुअल बेनिफिट संस्था के रूप में घोषित की गई हो, (xii) चिट फण्ड अधि0, 1982 की धारा 2 के खण्ड (d) में परिभाषित चिट फण्ड व्यापार के अर्थ के अन्दर आती है, एवं (xiii) जिसके अन्तर्गत किया गया योगदान म्युचुअल फण्ड के सब्स्क्रिप्शन (Subscription) की प्रकृति का हो।

आर बी आई के लिए शक्तियों का प्रत्यायोजनः–

सरकार के पास नियन्त्रण प्राधिकार को सेबी को प्रत्यायोजित करने की शक्ति है। अतिरिक्त लचीलापन प्रदान करने हेतु अधिनियम द्वारा एससीआरए की धारा 29ए इस तरह संशोधित की गई जो केन्द्रीय सरकार को सेबी के साथ आरबीआई को शक्तियों के प्रत्यायोजन हेतु समर्थ बनाती है, ताकि अगर आवश्यक हो तो एससीआरए के अन्तर्गत अंतरण को आरबीआई द्वारा नियन्त्रित करने हेतु सक्षम बनाया जा सके। अब केन्द्रीय सरकार, सेबी एवं आरबीआई अपने क्षेत्राधिकार हेतु निर्भर है आपसी समझौते के अनुसार जिससे वह अधिनियम के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकती है। सन् 2000 में 1969 की अधिसूचना के निरस्तीकरण के साथ उस समय प्रचलित नियामक ढांचा जो रेपों अन्तरणों को निर्धारित करता था, समाप्त हो गया। अतः ऐसी व्यवस्था को तैयार करना आवश्यक हो गया जहां नियन्त्रण ऐसे अंतरणों को नियन्त्रित कर सकें। इसके अनुसरण में एवं नई प्राप्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, केन्द्र सरकार ने 2 मार्च, 2000 को एक

अधिसूचना जारी की जिसमें आरबीआई एवं सेबी के मध्य जिम्मेदारियों के क्षेत्रों का निरूपण किया। अधिसूचना के अनुसार, एससीआरए की धारा 16 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रयोग की गई शक्ति, सरकारी प्रतिभूतियों, स्वर्ण सम्बन्धित प्रतिभूतियों, वित्त बाजार प्रतिभूतियों एवं इन प्रतिभूतियों से उत्पन्न प्रतिभूतियों के अनुबंध के सम्बन्ध में एवं बाण्ड, डिबेंचर, डिबेंचर स्टाक, प्रतिभूतित ऋण एवं अन्य ऋण प्रतिभूतियों में तैयार अग्र अनुबंध के सम्बन्ध में आरबीआई द्वारा भी प्रयोग की जाएगी। ये अनुबन्ध अगर स्टाक एक्सचेंज में निष्पादित किए गए, तथापि नियन्त्रित किए जाऐंगे– (i) नियम एवं नियमावली या उप–नियमों द्वारा जो SCRA या सेबी अधिनियम द्वारा बने हों या इन अधिनियमों के अन्तर्गत सेबी द्वारा जारी दिशानिर्देश के द्वारा, (ii) अधिसूचना में निहित प्रावधानों द्वारा जो आरबीआई द्वारा एससीआरए के तहत जारी किए जाएं, एवं (iii) नियम या विनियमन या दिशानिर्देशों के द्वारा जो आरबीआई द्वारा आरबीआई अधिनियम, 1934, बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 या विदेशी विनिमय विनियमन अधिनियम, 1973 के तहत जारी किए जाएं।

आरबीआई एवं सेबी ने भी 2 मार्च 2000 को आनुषांगिक अधिसूचनाएं जारी की जिसमें उनके सम्बन्धित क्षेत्रों में नियामक ढांचे को स्पष्ट किया गया। आरबीआई अधिसूचना के अनुसार कोई व्यक्ति प्रवेश नहीं कर सकता– (a) ऐसे अनुबंध में जो सरकारी प्रतिभूतियों, स्वर्ण सम्बन्धित प्रतिभूतियों एवं वित्त बाजार प्रतिभूतियों की खरीद–फोख्त करता हो, स्पाट डिलीवरी अनुबंधों के अलावा या ऐसे अन्य अनुबन्ध जो मान्यता प्राप्त स्टाक एक्चेंज व्यापार करते हैं जैसे कि एससीआरए, ऐसे स्टाक एक्सचेंज के नियमों एवं उपनियमों के अन्तर्गत अनुमति प्राप्त हो, एवं (b) बाण्ड, डिवेंचर, डिबेंचर स्टाक, प्रतिभूति ऋण एवं अन्य ऋण प्रतिभूतियों में तैयार अग्र अनुबंध (ready forward contracts)। हालांकि अनुमति प्राप्त व्यक्तियों द्वारा, आरबीआई द्वारा निर्दिष्ट शर्तों एवं नियमों के साथ, आरबीआई द्वारा धारित आनुषांगिक सामान्य लेजर खाता के माध्यम से सभी सरकारी प्रतिभूतियों में, तैयार अग्र अनुबंध किया जा सकता है। ऐसे स्पाट डिलीवरी अनुबंध या नकद के लिए अनुबंध या हस्त डिलीवरी या विशेष डिलीवरी या व्युत्पन्न (derivatives) में अनुबंध जो कि एससीआरए या सेबी अधिनियम एवं उसके अन्तर्गत बनाए गए नियम एवं विनियम, एक मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज के विनिमय एवं उप–नियम के अन्तर्गत अनुमति प्राप्त, के अलावा प्रतिभूतियों में सभी अनुबंध सेबी द्वारा अधिसूचना के जरिए प्रतिबंधित किए गए।

3.3.4 प्रतिभूति विधि (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1999

किसी पब्लिक कम्पनी की प्रतिभूतियों को स्टाक एक्सचेंज द्वारा सूचीबद्ध करने से अस्वीकृति, विलोपन या असफल होने पर उसके विरूद्ध केन्द्र सरकार के समक्ष अपील का अधिकार एससीआरए प्रदान करता है। सेबी अधिनियम, 1992 दो प्रकार की अपील प्रदान करता है। अधिनियम की धारा 20 के अन्तर्गत, कोई व्यक्ति जो सेबी के किसी आदेश से पीड़ित है, जो उसने अधिनियम के अन्तर्गत या उसके अन्तर्गत बनाए गए नियमों या विनियमों के तहत दिए हैं, केन्द्र सरकार के समक्ष अपील कर सकता है।, तदनुसार केन्द्र सरकार सेबी (केन्द्र सरकार को अपील) नियमावली, 1993 को अधिसूचित करेगी एवं अपीलों के निस्तारण हेतु एक अपीलीय प्राधिकरण का गठन करेगी। अधिनियम की धारा 15K, केन्द्र सरकार द्वारा बनाए नियमों के अनुसार मौद्रिक जुर्माना अधिरोपित करने के सेबी के न्यायिक प्राधिकारी के आदेश से अपील सुनने हेतु एक या अधिक SAT की स्थापना का निर्धारण करती है। सरकार द्वारा तद्नुसार, न्यायिक प्राधिकारी के आदेश से अपीलों को सुनने के लिए मुम्बई में एक SAT की स्थापना की गई है। निक्षेपागार अधिनियम, 1996 की धारा 23 के तहत कोई भी व्यक्ति जो निक्षेपागार अधिनियम, 1996 या उसके अन्तर्गत बनाए गए नियम एवं विनियमों के अन्तर्गत सेबी के आदेश से पीड़ित हो वह केन्द्रीय सरकार के समक्ष अपील कर सकता है। तद्नुसार केन्द्र सरकार ने निक्षेपागार (केन्द्र सरकार को अपील) नियमावली, 1998 अधिसूचित किया एवं अपीलों के निस्तारण हेतु एक अपीलीय प्राधिकरण की स्थापना की। अतः तीनों अधिनियमों के तहत केन्द्र सरकार को सभी मामलों (सेबी अधिनियम, 1992 के तहत न्यायिक प्राधिकारी के आदेश के विरूद्ध अपीलों के निस्तारण को छोड़कर) के सम्बन्ध में अपीलों के निस्तारण की शक्ति प्रदान की गई है। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार को सेबी को दिशानिर्देश जारी करने एवं इन अधिनियमों के तहत नियम बनाने की भी शक्ति प्राप्त थी। इसे स्टाक एक्सचेंज के अनुमोदन/संशोधन/नियम बनाने/उप–नियमों/ विनियमन की शक्ति दी गई। इसके अलावा केन्द्र सरकार का सेबी के साथ–साथ स्टाक एक्सचेंज के प्रबन्धन पर भी प्रतिनिधित्व था। केन्द्र सरकार की दिशानिर्देश जारी करने एवं नियम बनाने और सेबी के सदस्य नियुक्त करने के साथ–साथ शेयर बाजार की सभी शासी निकायों के सदस्य नियुक्त करने की शक्ति, इसकी अपीलीय शक्ति पर समझौता के रूप में माना गया। निक्षेपागार एवं सेबी अधिनियमों के तहत सरकार द्वारा नियुक्त अपीलीय प्राधिकरण नियमों के अनुसार अपीलों को लेते एवं निस्तारित करते थे। हालांकि जबसे सरकार द्वारा इन्हें स्थापित किया गया, इनके आदेश, उस समय सरकार के आदेश माने गए। जब सेबी के आदेश को नीचे माना गया, (गुण के आधार पर भी) यह महसूस किया गया कि नियन्त्रक के रूप में सेबी की स्वायत्ता के साथ समझौता हुआ। इन गलतफहमियों को दूर करने और अपीलों के निस्तारण प्रक्रिया में पारदर्शिता एवं निष्पक्षता लाने एवं नियन्त्रकों द्वारा प्रतिभूति विधियों में दाण्डिक प्रावधानों के

प्रशासन को अधिक जवाबदेह और निष्पक्ष बनाने हेतु, प्रतिभूति विधियां (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1999 द्वारा, केन्द्र सरकार से अपीलीय कार्यों का एक, स्वतन्त्र निकाय, SAT को अन्तरण हेतु सभी तीनों अधिनियम संशोधित किए गए। संशोधन अधिनियम ने एससीआरए की धारा 22 को निस्तेज किया एवं एक नयी धारा 22ए स्थापित की। जिसके तहत, शेयर बाजार द्वारा किसी पब्लिक कम्पनी की प्रतिभूतियों को सूचित करने में, अस्वीकृति, विलोपन एवं असफलता के विरूद्ध, ऐसी अस्वीकृति, विलोपन एवं असफलता के 15 दिनों के अन्दर SAT से समक्ष अपील का अधिकार प्रदान किया गया। SAT को दायित्वाधीन किया गया कि वह अपीलों का निस्तारण जितनी शीघ्रता से हो सके करे, एवं अधिकतम समय सीमा 6 माह निर्धारित की गई। SAT के आदेश के अनुपालन में असफलता हेतु दण्ड प्रदान करने के लिए धारा 23 को संशोधित किया गया। समान संशोधन सेबी अधिनियम, 1992 एवं निक्षेपागार अधिनियम, 1996 में प्रभावी हुए। किसी भी अन्य विधि के तहत अपील से निपटने के लिए SAT के अधिकार क्षेत्र को बढ़ाने हेतु सेबी अधिनियम की धारा 15K को संशोधित किया गया, सेबी के एवं सेबी अधिनियम के तहत न्यायिक प्राधिकारी के आदेश से पीड़ित व्यक्ति की अपील के निपटान हेतु SAT को शक्ति प्रदान करने के लिए धारा 15T को संशोधित किया गया। सेबी अधिनियम की धारा 20 जो केन्द्र सरकार को अपील का प्रावधान करती है, को निस्तेज किया गया। निक्षेपागार अधिनियम, 1996 की धारा 23 जो केन्द्र सरकार को अपील का प्रावधान करती है, को भी निस्तेज किया गया। एक नयी धारा 23A, SAT को अपील का प्रावधान करने हेतु अधिनियम में स्थापित की गई। अतः, सेबी अधिनियम के तहत सेबी के आदेश एवं निक्षेपागार अधिनियम के विरूद्ध अपील, सेबी अधिनियम के तहत न्यायिक प्राधिकारी के आदेश के विरूद्ध अपील, प्रतिभूतियों को सूचीबद्ध करने की स्टाक एक्सचेंज की अस्वीकृति के विरूद्ध अपीलों को SAT के समक्ष अनुमति दी गई। आगे यह भी प्रावधान किया गया कि SAT के आदेश से पीड़ित कोई व्यक्ति 60 दिनों के अन्दर उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है। तीनों अधिनियमों में प्रावधान किए गए कि, व्यक्ति स्वयं, या एक या अधिक लेखाकार या कम्पनी सेक्रेटरी या लागत लेखाकार या विधिक सलाहकारों या उसके किसी अधिकारी के माध्यम से SAT के समक्ष अपील करने वाला उपस्थिति दे सकता है। केन्द्र सरकार को, प्रपत्र के लिए नियम बनाने की शक्ति थी जिसमें SAT के समक्ष अपील दायर की जा सकती है एवं इन अपीलों से सम्बन्धित शुल्क नियत की शक्ति भी केन्द्र सरकार के पास थी। परिणाम स्वरूप सेबी (केन्द्र सरकार को अपील) नियमावली, 1993 एवं निक्षेपागार (केन्द्र सरकार को अपील) नियमावली, 1998 को निरस्त किया गया। सरकार ने 18 फरवरी, 2000 को तीन अपीलीय नियमावली

अधिसूचित की; अर्थात (a) प्रतिभूति अपीलीय प्राधिकरण (प्रक्रिया) नियमावली, 2000 सेबी अधिनियम, 1992 के तहत, (b) निक्षेपागार (प्रतिभूति अपीलीय प्राधिकरण को अपील) नियमावली, 2000, निक्षेपागार अधिनियम 1996 के तहत एवं (c) प्रतिभूति संविदा (विनियमन) (प्रतिभूति अपीलीय प्राधिकरण की अपील) नियमावली, SCRA के तहत। ये नियम, शुल्क, प्रपत्र, अपील दायर करने की प्रक्रिया एवं SAT द्वारा उनके निस्तारण की प्रक्रिया का निर्धारण करते हैं। तीनों अधिनियमों के अन्तर्गत अपीलों (सेबी अधिनियम के तहत न्यायिक आदेशों के विरूद्ध अपीलों को छोड़कर) हेतु शुल्क केवल रू0 5,000 है। अगर लगाया गया जुर्माना रू0 10,000 से कम है तो न्यायिक आदेशों के विरूद्ध अपीलों पर शुल्क रू0 500, अगर जुर्माना रू0 10,000 से अधिक एवं रू0 1,00,000 से कम है तो शुल्क 1,200 एवं जुर्माने की प्रत्येक 1 लाख अतिरिक्त राशि पर या उसके किसी अंश हेतु, अतिरिक्त रू0 1,000 शुल्क देना होगा।

3.3.5 निवेशकों का संरक्षण

निवेशक प्रतिभूति बाजार की रीढ़ है। प्रतिभूति में उनकी रूचि बनाए रखने के लिये उनके हितों का संरक्षण आवश्यक है एवं साथ ही बाजार के विकास के लिए भी। उपभोक्ता फोरम उपभोक्ताओं को, उनके द्वारा खरीदी गई वस्तुएं/सेवाओं में कमी के कारण होने वाली हानि से राहत प्रदान करती है। बीमा एवं बैकिंग के क्षेत्र में लोकपाल प्रणाली अच्छा कार्य कर रही है। ऐसी ही समान व्यवस्था निवेशकों की शिकायतों के निवारण हेतु की गई है।निवेशक फोरम एवं अन्य संस्थाओं को, प्राप्त मामलों के निस्तारण की शक्ति होनी चाहिए एवं निवेशक को मुआवजा प्रदान करना चाहिए। केवल दोषी को सजा देना पर्याप्त नहीं है। दोषी को अनुकरणीय ढंग से सजा देने की आवश्यकता है, जबकि निवेशक को दोषी के कारण हानि का पूर्ण मुआवजा मिलना चाहिए। विधि द्वारा संस्थाओं को सशक्त करना चाहिए कि वे न केवल दण्ड आरोपित करें बल्कि निवेशक को मुआवजा भी प्रदान करें। बैंक के समापन/दिवालिया की स्थिति में जमाकर्ता को 1 लाख रूपयों तक का संरक्षण प्राप्त है। यह निर्दोष जमाकर्ता को संरक्षित करता है एवं इस तरह वित्तीय प्रणाली के स्थायित्व में सहयोग करता है। एक समान व्यवस्था निवेशकों को 5 लाख तक का मुआवजा दिलाने हेतु स्थापित करनी चाहिए अगर वह (निवेशक) किसी बाजार प्रतिभागी की गलती या प्रणाली की असफलता के कारण हानि उठाता है। एक संस्था, प्रतिभूति निवेशक संरक्षण निगम नामक, यूएसए में निवेशकों को समान संरक्षण प्रदान करती है।एक बड़ी संख्या में शेयर धारकों के हाथ में बड़ी मात्रा में शेयरों का होना सूचीबद्ध प्रतिभूतियों के लिए लगातार बाजार की जीविका के लिए आवश्यक है जो निवेशकों को तरलता एवं उचित मूल्य प्रदान करता है। यह

सुनिश्चित करने के लिए एक पब्लिक कम्पनी जो स्टाक एक्सचेंज में अपनी प्रतिभूतियों को सूचीबद्ध कराना चाहती है, को कम से कम प्रतिभूतियों का 10 प्रतिशत जनता को प्रस्तावित करना आवश्यक है। इस संरचना की सीमाएं निम्नलिखित हैंः– 1. जनता को 10 प्रतिशत का प्रस्ताव कीमतों में हेराफेरी रोकने के लिए बहुत कम है। 2. जनता को प्रस्ताव का कोई परिणाम नहीं है जब तक वास्तव में जनता को शेयर का आवंटन न हो। यहां तक कि आवंटन का कोई अर्थ नहीं है, जब तक शेयरों की खासी मात्रा, एक लगातार बाजार उपलब्ध कराने हेतु जनता के हाथों में न हो। विधि को जनता को आवंटन एवं पब्लिक होल्डिंग की शब्दावली में बोलना चाहिए। 3. सीआईएस की ईकाई प्रतिभूति हैं। परन्तु सीआईएस की ईकाईयों की सूचीबद्धता के लिए भिन्न स्तर है। समान आवश्यकता (10 प्रतिशत+20 लाख+रू0 100 करोड़ या 25प्रतिशत, जैसा भी मामलो हो) जो प्रतिभूतियों की सूचीबद्धता पर लागू है, सीआईएस की ईकाईयों की सूचीबद्धता पर भी लागू होनी चाहिए। MF (म्यूचुअल फण्ड) की ईकाईयां प्रतिभूतिया मानी जाती हैं एवं एक्सचेंज पर उनका कारोबार भी उसी भांति किया जाता है। पब्लिक होल्डिंग की आवश्यकता एमएफ की ईकाईयों पर भी लागू हो सकती है। शेयरों, सीआईएस की ईकाईयों या एमएफ की ईकाईयों– प्रतिभूतियों में निवेशक को समान स्तर पर संरक्षण की जरूरत है एवं सभी प्रकार की प्रतिभूतियों की सूचीबद्धता की शर्तें भी एक समान होनी चाहिए। 4. एक सरकारी कम्पनी एवं एक गैर सरकारी कम्पनी के मध्य कोई भेदभाव नहीं होनी चाहिए। एक सरकारी कम्पनी के सम्बन्ध में इस आवश्यकता में ढील देने की स्टाक एक्सचेंज की शक्ति को वापस लेने की जरूरत है। सूचीबद्धता की आवश्यकता के लिए, ढील या सख्त प्रवर्तन को माफ करने सेबी की शक्ति को भी वापस लेना चाहिए। 5. सार्वजनिक या जनता को प्रस्ताव शब्दों को परिभाषित नहीं किया गया है। 10 प्रतिशत जनता को प्रस्ताव की अनुमति प्रदान करने वाले नियम के साथ शर्त यह है कि ईशु का 60 प्रतिशत QIB को आवंटित होगा। चूंकि QIB जनता का भाग है, QIB को आवंटित 60 प्रतिशत स्वतः ही 60 प्रतिशत को सार्वजनिक प्रस्ताव का हिस्सा बनाते हैं एवं खुदरा जनता एक भी शेयर प्राप्त नहीं करेगी या अगर 10 प्रतिशत, सार्वजनिक प्रस्ताव का 60 प्रतिशत QIB को आवंटित होता है, खुदरा जनता का हिस्सा केवल 4 प्रतिशत ही बचेगा। अतः यह आवश्यक है कि सार्वजनिक एवं अन्य शब्दों को परिभाषित किया जाए एवं QIB के आवंटन को सार्वजनिक प्रस्ताव से स्पष्ट रूप से अलग किया जाए। सतत आधार पर उचित फ्लोटिंग (floating) स्टाक की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु सूचीबद्धता समझौता को, एक कम्पनी की आवश्यकता है जो गैर–प्रमोटर होल्डिंग के न्यूनतम स्तर को सार्वजनिक हिस्सेदारी के स्तर, जो कि सूचीबद्धता के समय आवश्यक है, पर बनाए रखे। अगर हालांकि, अप्रैल 1, 2001

को सूचीबद्ध कंपनी की गैर प्रमोटर हिस्सेदारी, प्रारम्भिक सूचीबद्धता के समय आवश्यकता से कम थी तो कंपनी को एक वर्ष के अंदर गैर सार्वजनिक हिस्सेदारी कम से कम 10 प्रतिशत तक बढ़ाने की जरूरत थी। यह व्यवस्था अप्रैल 2001 से पहले सूचीबद्ध कंपनियों एवं बाद में सूचीबद्ध कंपनियों के लिए सतत सूचीबद्धता हेतु भिन्न मानकों का प्रावधान करती है। एक कंपनी जो अप्रैल 2001 से पहले सूचीबद्ध हुई, कम से कम 10 प्रतिशत गैर प्रमोटर हिस्सेदारी रख सकती है, अगर अप्रैल 1, 2001 को, प्रारम्भिक सूचीबद्धता के समय आवश्यक गैर प्रमोटर हिस्सेदारी से कम है। अन्यथा इसके पास प्रारम्भिक सूचीबद्धता के समय आवश्यक गैर प्रमोटर हिस्सेदारी होगी, जो 60 प्रतिशत हो सकती है, अगर यह 1993 से पहले सूचीबद्ध हुई थी। अप्रैल 2001 के पश्चात सूचीबद्ध कंपनी को आवश्यक गैर प्रमोटर हिस्सेदारी के न्यूनतम स्तर को सार्वजनिक होल्डिंग के स्तर, जो कि सूचीबद्धता के समय आवश्यक है, पर बनाए रखना होगा, अर्थात 10 प्रतिशत + 20 लाख प्रतिभूतियां + रू100 करोड़ या 25 प्रतिशत पर, जैसा भी मामला हो। अतः पहले से सूचीबद्ध एवं होने वाली सूचीबद्ध कंपनियां एवं इन कंपनियों में परिणामस्वरूप निवेशकों के साथ व्यवहार भिन्न भिन्न हैं। गैर प्रमोटर हिस्सेदारी, जो कि सूचीबद्धता के समय आवश्यक है, काफी अनिश्चित है, क्योंकि यह समय के साथ बदलती है। अगर हम सूचीबद्धता समझौते का अनुसरण करें तो 1993 से पूर्व सूचीबद्ध कम्पनियों को गैर प्रमोटर होल्डिंग को 60 प्रतिशत बनाए रखना होगा, 1993 एवं 2001 के मध्यम सूचीबद्ध कम्पनियों को 25 प्रतिशत पर बनाए रखना होगा एवं 2001 के बाद सूचीबद्ध कम्पनियों को 10 प्रतिशत + 20 लाख + रू100 करोड़ या 25 प्रतिशत के स्तर पर, जैसा कि मामला हो बनाए रखना होगा। अगर न्यूनतम गैर प्रमोटर होल्डिंग निवेशकों के हितों में निर्धारित की जाती है एवं सभी कम्पनियों के निवेशकों के साथ समान व्यवहार किया जाता है, विनियमन समान होगा एवं सभी कम्पनियों के लिए गैर प्रमोटर होल्डिंग को 10 प्रतिशत+ 20 लाख + रू100 करोड़ या 25 प्रतिशत, जैसा कि मामला हो, बनाए रखना आवश्यक होना चाहिए। निवेशकों का विश्वास बनाए रखा जा सकेगा एवं पेशेवर मध्यस्थ/मध्यवर्ती सेवाओं के लिए प्रावधान बनाकर बढ़ाया जा सकेगा। उद्योगों/SRO/नियन्त्रकों ने एक नम्र शुरूआत की, परन्तु बाजार के आयाम को पर्याप्तता नहीं दी गई। एक औपचारिक एवं पर्याप्त व्यवस्था चाहिए जो प्रतिभूति बाजार में संचालन के लिए आवश्यक कौशल के साथ, बिचौलियों के साथ कार्य कर रहे कर्मियों से लैस हो। संभवतः ICSI या ICAI जैसी एक संस्था प्रतिभूति बाजार के लिए आवश्यक है। एक निवेशक सामान्यतः एक बिचौलिए के माध्यम से प्रतिभूति में व्यापार करता है, जिसका विलोपन का कार्य एवं कमीशन, उसकी (निवेशक) हानि का कारण हो सकता है। निवेशक हेतु सही माध्यम या बिचौलिए का चयन करने के लिए जिसके माध्यम से वह व्यापार का चलन कर सके, उपलब्ध मध्यस्थों का विवरण उसे सूचित

कर उसके निर्णय लेने में मदद करने के लिए उपयोगी हो सकता है यहां तक कि माध्यस्थों का मूल्यांकन कर उन्हें प्रचारित किया जा सकता है। प्रतिभूति बाजार में निवेशकों का हित एवं विश्वास का बना रहना कारपोरेट शासन पर महत्वपूर्ण रूप से निर्भर करता है। एक निवेशक, हालांकि एक कम्पनी में कारपोरेट शासन के स्तर के बारे में एक विचार बनाने में सामान्यतः सक्षम नहीं होता है। चूँकि ऋण लिखतों में अपने निवेश के सम्बन्ध में क्रेडिट रेटिंग द्वारा वह मदद लेता है, एक सारांश आंकड़ों द्वारा उसकी मदद करने की जरूरत है। उदाहरणार्थ, सम्बन्धित कम्पनी में उसके निवेश के सम्बन्ध में कारपोरेट शासन सूचकांक।

3.3.6 अन्य अधिनियमों में संशोधन

निक्षेपागारों को मृदु संचालन प्रदान करने हेतु, निक्षेपागार अधिनियम द्वारा कुछ अन्य अधिनियमों जैसे कि, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1989, कंपनी अधिनियम, 1956, प्रतिभूति संविदा (विनियम) अधिनियम, 1956, आयकर अधिनियम, 1961, बेनामी अंतरण (निषेध) अधिनियम, 1988 एवं भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड अधिनियम, 1993 को संशोधित किया गया। इन अधिनियमों में मुख्य संशोधनों का विवरण निम्नवत् है–

- भारतीय स्टाम्प अधिनियम में संशोधनः– धारा 8ए स्थापित की गई जो निम्न का प्रावधान करती है–

1. प्रतिभूति, शेयर या अन्यथा जारी करते समय, जारीकर्ता को उसके द्वारा जारी प्रतिभूतियों की कुछ मात्रा पर स्टाम्प शुल्क का भुगतान करना होगा, चाहे, निक्षेपागार के माध्यम से या निवेशक को निर्देशित, वहां पर भी जहां भौतिक प्रतिभूति (लिखत) नहीं होगी, जिसे स्टाम्प लगाया जा सके (निष्पादित)।
2. निक्षेपागार में प्रविष्टि में पंजीकृत स्वामित्व में बदलाव शामिल है, क्योंकि प्रतिभूति के सम्बन्ध में निवेशक लाभकारी स्वामी बन जाता है एवं निक्षेपी पंजीकृत स्वामी बन जाता है, चूंकि इसमें पंजीकृत स्वामित्व में परिवर्तन शामिल है, मौजूदा प्रावधानों के अन्तर्गत इसमें स्टाम्प शुल्क लगता है। नई धारा 8ए हालांकि, इस प्रकार के परिवर्तन, शेयर के पंजीकृत स्वामित्व का एक निवेशक से निक्षेपी को स्टाम्प शुल्क से छूट प्रदान करती है।
3. प्रतिभूतियों के सभी अंतरणों, जिनमें निक्षेपागार रूप के साथ शेयरों के लाभकारी स्वामित्व और/या पंजीकृत स्वामित्व में परिवर्तन शामिल है, को कोई स्टाम्प शुल्क नहीं देना होगा।
4. अगर एक निवेशक एक निक्षेपी से बाहर आने का विकल्प चुनता है एवं जारीकर्ता से प्रतिभूति के भौतिक प्रमाण पत्र को जारी करवाना चाहता है,

तो इस प्रकार के प्रमाणपत्र के जारी होने पर स्टाम्प शुल्क देना होगा, क्योंकि प्रतिलिपि (duplicate) प्रमाण पत्र के जारी होने पर यह देय है।

5. वर्तमान की तरह ही निक्षेपी रूप से बाहर सभी अंतरणों पर स्टाम्प शुल्क देना होगा।

- आयकर अधिनियम में संशोधनः— धारा 45 में उप—धारा 2ए स्थापित की गई जो यह प्रावधान करती है— निक्षेपी एवं सहभागी, लाभ के सम्बन्ध में कोई पूंजी लाभ कर या निक्षेपागार में रखी प्रतिभूतियों के अंतरण से उत्पन्न लाभ एवं समय—समय पर होने वाले अंतरणों, से होने वाले लाभ पर किसी भुगतान के लिए दायित्वाधीन नहीं होगे, चूंकि इन प्रतिभूतियों को लाभकारी सवामी की ओर से धारण किया गया है। दूसरे शब्दों में, एक निक्षेपागार की पुस्तक में सहभागियों के मध्य प्रतिभूतियों का आपस में अंतरण, इसी तरह जारीकर्ता के अभिलेखों में निक्षेपियों के मध्य, को अंतरण नहीं माना जाएगा, जब तक कि इसमें लाभकारी स्वामित्व में परिवर्तन शामिल नहीं है। अगर इसमें लाभकारी स्वामित्व में कोई परिवर्तन शामिल होता है, केवल लाभकारी स्वामी को पूंजी लाभ कर का भुगतान करना होगा, न कि पंजीकृत स्वामी को।

प्रतिभूतियों की प्रतिमोच्य (fungible) विशेषता के कारण पूंजी लाभ कर की गणना करते समय, विशिष्ट पहचान योग्य प्रतिभूतियों के अधिग्रहण के मूल के संदर्भ के साथ प्रतिभूति के अधिग्रहण के मूल्य का निर्धारण नहीं होगा, लेकिन प्रथम बार (first out) में प्रथम के सिद्धान्त (Principal of first) पर निश्चित ही होगा, अर्थात लाभकारी स्वामी द्वारा प्रथम अधिग्रहीत प्रतिभूति, निवेशक के इरादे से इतर प्रथम अंतरित समझी जाएगी। यह सिद्धान्त केवल निक्षेपागार में रखी प्रतिभूतियों के सम्बन्ध में ही लागू होगा। कंपनी अधिनियम में संशोधनः— धारा 83 को निरस्त किया गया। प्रतिमोच्यता (fungibility) की अवधारणा को शामिल करने के लिए, शेयरों द्वारा सीमित प्रत्येक कम्पनी को विशिष्ट संख्या द्वारा शेयरों से अन्तर करने की अनिवार्य आवश्यकता को, इससे दूर किया गया। धारा 83 का उन्मूलन, हालांकि एक कम्पनी के पास विशिष्ट संख्या होने से निषेध नहीं करता, जबकि इस प्रभाव हेतु कोई अनिवार्य आवश्यकता नहीं थी।

धारा 108 संशोधित की गई, जिसमें प्रावधान किया गया कि धारा 111 के प्रावधान, एक निजी कम्पनी एवं एक डीम्ड सार्वजनिक कम्पनी पर लागू होंगे। एक नयी धारा 111ए, एक सार्वजनिक सीमित कम्पनी की प्रतिभूतियों के अंतरण के निर्धारण हेतु स्थापित की गई। एक कम्पनी के शेयर या डिबेंचर एवं उनमें कोई हित को स्वतन्त्र अंतरण योग्य बनाया गया एवं उनसे सम्बन्धित सभी अधिकारों एवं दायित्वों को तुरत अंतरिती से सम्बद्ध किया गया, यदि अंतरण सेबी अधिनियम, 1992 या SICA, 1985, के किसी प्रावधान का उल्लंघन करता है, निक्षेपी, कम्पनी, सहभागी,

निवेशक या सेबी CLB को आवेदन कर सकते हैं। CLB जांच पूरा होने हेतु लम्बित होने तक एक अंतरिम आदेश, प्रतिभूति के सम्बन्ध में मताधिकार निलम्बित करने हेतु दे सकती है एवं जांच पूरी होने पर कम्पनी या निक्षेपी को अभिलेखों में सुधार हेतु निर्देश दे सकती है, अगर अंतरण उपरोक्त प्रावधानों के उल्लंघन में है। CLB के समक्ष आवेदन लम्बित होने के दौरान, आर्थिक अधिकार अंतरिती से सम्बद्ध होंगे एवं अंतरिती के पास प्रतिभूति को आगे अंतरण का अधिकार होगा एवं इस प्रकार आगे अंतरिती मताधिकार का भी अधिकार होगा।

3.4 सारांश

प्रतिभूति बाजार सन् 1992 तक पूंजी मामले (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 (Capital issues (Control) Act, 1947) और प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 (SCRA) द्वारा नियन्त्रित होता था। सीका (CICA) की उत्पत्ति 1943 में युद्ध के दौरान हुई। इसका उद्देश्य उस समय युद्ध हेतु संसाधन का माध्यम बनना था, भारतीय रक्षा अधिनियम, 1943 के अधीन भारतीय रक्षा नियमावली के द्वारा भारतीय पूंजी मामलों पर नियन्त्रण मई 1943 में स्थापित हुआ। कम्पनियों द्वारा पूंजी वृद्धि पर नियन्त्रण एवं राष्ट्रीय संसाधनों का उचित माध्यम द्वारा उपयोग सुनिश्चित करने अर्थात उनके द्वारा सरकार अपनी प्राथमिकताओं एवं लक्ष्यों की प्राप्ति कर सके एवं निवेशकों के हितों के संरक्षण के उद्देश्य से इन नियन्त्रणों को युद्ध के पश्चात कुछ बदलावों के साथ जारी रखा गया। भारतीय रक्षा नियमावली में सम्बन्धित प्रावधानों को पूंजी मामले (नियन्त्रण का बना रहना) अधिनियम (Capital Issues (Continuance of Control) Act) द्वारा अप्रैल 1947 में प्रतिस्थापित किया गया। इस अधिनियम को 1956 में स्थाई कर दिया गया एवं पूंजी मामले (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 के रूप में अधिनियमित किया गया। हालांकि उदारीकरण प्रक्रिया के तहत 1992 में इसे समाप्त कर दिया गया। पिछले दशक (1992–2003) प्राधिकरण वर्ग प्रतिभूति बाजार के विकास की आवश्यकता के प्रति संवेदनशील रहा, इतना ही नहीं 9 विशेष विधायी हस्तक्षेप, दो नये अधिनियमों सहित अर्थात सेबी अधिनियम, 1992, निक्षेपागार अधिनियम, 1996 का आगमन हुआ। SCRA, SEBI एवं निक्षेपागार अधिनियमों के प्रावधानों में इस अवधि के दौरान क्रमशः 6, 5 एवं 3 बार संशोधन किया गया। उस समय विकास की आवश्यकता इतनी अधिक थी कि पिछले दशक में प्रतिभूति विधि से सम्बन्धित पांच अध्यादेश जारी किए गए, इसके अतिरिक्त अनेक विधायन (आयकर अधिनियम, कम्पनी अधि0, भारतीय स्टाम्प अधि0, बैंकर्स पुस्तक साक्ष्य अधि0, बेनामी संव्यवहार (निषेध) अधि0 आदि), जिनका अभिप्राय प्रतिभूति बाजार से था, को प्रतिभूति विधि में संशोधनों के

समपूरक बनाने हेतु संशोधित किया गया। सेबी अधिनियम के अधिनियमन के साथ विधिक सुधार आरम्भ हुए। मध्य 1990 तक प्रचलित प्रतिभूति के स्वामित्व की स्थानान्तरण प्रणाली अक्षम थी क्योंकि प्रत्येक स्थानान्तरण में प्रतिभूति पत्रों को पंजीकरण एवं स्वामित्व हेतु प्रतिभूमि प्रमाण पत्र पर अनुमोदन के साक्ष्य के साथ जारीकर्ता तक पहुँचाना पड़ता था। स्थानान्तरण की प्रक्रिया कई मामलों में कम्पनी अधिनियम, 1956 या SCRA में अपेक्षित 2 माह से भी अधिक का समय ले लेती थी। चोरी, धोखा, प्रमाण पत्रों में विकृति एवं अन्य अनियमितताएं आम थीं। कम्पनी अधिनियम, 1950 की धारा 108 के अन्तर्गत प्रतिभूति अंतरण के साथ जटिलताएं जुड़ी थीं साथ ही भारी—भरकर कागजी कार्यवाही, स्टेशरी की छपाई, प्रतिभूति का सुरक्षित संरक्षण, समायोजन में देरी एवं प्रतिभूति में प्रतिबंधित तरलता एवं निवेशकों की शिकायतों की सुनवाई में समय का लगना एवं अड़ियल रवैया भी था।

निक्षेपागार अधिनियम 1996 ने प्रतिभूति के स्थानान्तरण को गति, सटीकता एवं सुरक्षा के साथ निःशुल्क भी सुनिश्चित किया एवं प्रतिभूतियों में निक्षेपागार की स्थापना को विधिक आधार प्रदान किया। ऐसा निम्न परिवर्तन से संभव हुआ — अ. सार्वजनिक सीमित देयता कम्पनियों की प्रतिभूतियों को निःशुल्क अंतरणीय बनाया; ब. निक्षेपी रूप में प्रतिभूतियों को अभौतिकीकरण (dematerialization) किया; एवं स. पुस्तक प्रविष्टि रूप में स्वामित्व के रिकार्ड का अनुरक्षण प्रदान किया। अधिनियम निम्न हेतु प्रावधान करता है—

1. एक निक्षेपगार/निक्षेपी का सेबी के साथ पंजीकरण, जो एक कम्पनी होने के लिए कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत आवश्यक है एवं निक्षेपी सहभागी का पंजीकरण, (सेबी के साथ) जो निक्षेपी का प्रतिनिधि है;
2. निक्षेपी द्वारा, हितकारी/लाभकारी स्वामी के अभिलेख के साथ निक्षेपागार में प्रतिभूतियों का अभौतिकीकरण अभिलेखित किया जाएगा;
3. सहभागी की उपेक्षा के लिए, प्रथम दृष्टान्त में निक्षेपी द्वारा लाभकारी स्वामी को क्षतिपूर्ति;
4. निक्षेपी, सहभागियों, जारीकर्ता एवं लाभकारी स्वामी के मध्य इंटरफेसेज (interfaces), इनमें से अनेक उन उपनियमों के अन्तर्गत आवश्यक है, जिन्हें एक निक्षेपी सेबी की मंजूरी से बनाता है;
5. निवेशक को प्रतिभूति, भौतिक या अभौतिक रूप में रखने का विकल्प, या पूर्व में अभौतिक रूप में रखी प्रतिभूतियों को भौतिक रूप में बदलना;
6. धोखे के मामले में पूछताछ, जांच एवं दंड;
7. निक्षेपागारों की स्थापना एवं कार्यप्रणाली को सुविधाजनक बनाने हेतु अधिनियम द्वारा अन्य विधायनों में संशोधन किए गए एवं प्रतिभूतियों का स्वतन्त्र अंतरण स्थापित किया गया।

निक्षेपागार अधिनियम, 1996 में संशोधन के समय, निक्षेपागार संबंधित विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1997–इस संशोधन अधिनियम द्वारा, कम्पनी अधिनियम, 1956, निक्षेपागार, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, अधिनियम, 1955, स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया (सहायक बैंक) अधनियम 1959, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक अधिनियम, 1964,बैकिंग कम्पनीज, (उपक्रमों का अधिग्रहण एवं अंतरण) अधिनियम, 1970, को प्रतिभूतियों के अभौतिकीकरण को सुविधाजनक बनाने हेतु संशोधित किया गया।

प्रतिभूति विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1995 द्वारा संजातों के निष्कासन पर प्रतिबंध के बावजूद डेरिवेरिव्ज का बाजार नहीं रूका, क्योंकि इनके व्यापार से सम्बन्धित विनियमित ढांचा नहीं था। सेबी ने 18 नवम्बर 1996 को भारत में डेरिवेटिव्ज के व्यापार हेतु उपयुक्त नियामक ढांचे के विकास हेतु डा0 एल0सी0 गुप्ता की अध्यक्षता में एक 24 सदस्यीय समिति की स्थापना की। समिति ने 17 मार्च 1998 को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। जिसमें अन्य के अलावा यह सिफारिश की गई कि एससीआरए (SCRA) की धारा 2(h) (ii) (a) के अन्तर्गत संजातों (Derivatives) को प्रतिभूति घोषित किया जा सकता है, अतः विनियामक ढांचा जो प्रतिभूतियों के व्यापार पर लागू होता है, संजातों का व्यापार भी निर्धारित कर सकता है। प्रतिभूति विधियां (संशोधन) बिल, 1999 लोकसभा में 28 अक्टूबर 1999 को पेश किया गया जिसमें प्रतिभूति संविदा विनियामक (संशोधन) बिल, 1998 में प्रस्तावित संशोधनों के साथ एससीएफ (SCF) द्वारा सुझाए गए बदलाव भी शामिल थे। 16 दिसम्बर 1999 को बिल अधिनियम में परिवर्तित हो गया।

अधिनियम में संजातों (derivatives) को परिभाषित करती धारा 2 में खंड (aa) सम्मिलित किया गया – (A) ऋण, लिखत, शेयर, लोन चाहे सुरक्षित हो या असुरक्षित, जोखिम दस्तावेज या संविदा अन्तर के लिए या प्रतिभूति का कोई अन्य रूप से ली गई प्रतिभूति, एवं (B) एक संविदा जो अपना मूल्य, अन्तर्निहित प्रतिभूतियों की कीमतों या कीमतों की सूची से प्राप्त करती है। धारा 2(h) में एक उपखंड (ia) भी स्थापित किया गया जिससे प्रतिभूतियों के दायरे में संजात भी शामिल हुए। चूंकि संजात संविदाएं सामान्यतः नकद निर्धारित होती है, इन्हें दांव/बाजी के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। चूँकि भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 30 के अन्तर्गत दांव या बाजी पर व्यापार शून्य एवं अमान्य है, संजात संविदाओं को लागू करना कठिन हो सकता है। इस प्रकार की विधिक अनिश्चितताओं को दूर करने के लिए एक नयी धारा 18ए स्थापित की गई इसके अनुसार उस समय लागू किसी अन्य विधि के शामिल होते हुए भी संजातों से संबंधित संविदा वैध एवं मान्य होगी, अगर ये संविदाएं, एक मान्यता प्राप्त शेयर बाजार कारोबार करती हैं एवं उस शेयर बाजार के नियमों एवं उप विधियों के

अनुसार उसके समाशोधन गृह में निर्धारित की जाती है। धारा 23 को संशोधित किया गया कि किसी व्यक्ति द्वारा संविदा में धारा 18ए के उल्लंघन में प्रवेश दण्डनीय होगा।

1 मार्च 2000 को एक अधिसूचना द्वारा सरकार ने 1969 की अधिसूचना को निरस्त करते हुए प्रतिभूतियों में अग्र–व्यापार पर तीन दशक पुराने निषेध को हटा दिया।

अधिनियम ने सेबी अधिनियम, 1993 में सीआईएस की परिभाषा भी स्थापित की। सीआईएस से तात्पर्य ऐसी योजना या व्यवस्था है जो किसी कम्पनी द्वारा बनाई या प्रस्तावित की जाती है। सरकार के पास नियन्त्रण प्राधिकार को सेबी को प्रत्यायोजित करने की शक्ति है। अतिरिक्त लचीलापन प्रदान करने हेतु अधिनियम द्वारा एससीआरए की धारा 29ए इस तरह संशोधित की गई जो केन्द्रीय सरकार को सेबी के साथ आरबीआई को शक्तियों के प्रत्यायोजन हेतु समर्थ बनाती है, ताकि अगर आवश्यक हो तो एससीआरए के अन्तर्गत अंतरण को आरबीआई द्वारा नियन्त्रित करने हेतु सक्षम बनाया जा सके। अब केन्द्रीय सरकार, सेबी एवं आरबीआई अपने क्षेत्राधिकार हेतु निर्भर है आपसी समझौते के अनुसार जिससे वह अधिनियम के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकती है। सन् 2000 में 1969 की अधिसूचना के निरस्तीकरण के साथ उस समय प्रचलित नियामक ढांचा जो रेपों अन्तरणों को निर्धारित करता था, समाप्त हो गया। अतः ऐसी व्यवस्था को तैयार करना आवश्यक हो गया जहां नियन्त्रण ऐसे अंतरणों को नियन्त्रित कर सकें। इसके अनुसरण में एवं नई प्राप्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, केन्द्र सरकार ने 2 मार्च, 2000 को एक अधिसूचना जारी की जिसमें आरबीआई एवं सेबी के मध्य जिम्मेदारियों के क्षेत्रों का निरूपण किया।

आरबीआई एवं सेबी ने भी 2 मार्च 2000 को आनुषांगिक अधिसूचनाएं जारी की जिसमें उनके सम्बन्धित क्षेत्रों में नियामक ढांचे को स्पष्ट किया गया। अपीलों के निस्तारण प्रक्रिया में पारदर्शिता एवं निष्पक्षता लाने एवं नियन्त्रकों द्वारा प्रतिभूति विधियों में दाण्डिक प्रावधानों के प्रशासन को अधिक जवाबदेह और निष्पक्ष बनाने हेतु, प्रतिभूति विधियां (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1999 द्वारा, केन्द्र सरकार से अपीलीय कार्यों का एक, स्वतन्त्र निकाय, SAT को अन्तरण हेतु सभी तीनों अधिनियम संशोधित किए गए। संशोधन अधिनियम ने एससीआरए की धारा 22 को निस्तेज किया एवं एक नयी धारा 22ए स्थापित की। जिसके तहत, शेयर बाजार द्वारा किसी पब्लिक कम्पनी की प्रतिभूतियों को सूचित करने में, अस्वीकृति, विलोपन एवं असफलता के विरूद्ध, ऐसी अस्वीकृति, विलोपन एवं असफलता के 15 दिनों के अन्दर SAT से समक्ष अपील का अधिकार प्रदान किया गया। SAT को दायित्वाधीन किया गया कि वह अपीलों का निस्तारण जितनी शीघ्रता से हो सके करे, एवं अधिकतम समय सीमा 6 माह निर्धारित की गई। SAT के आदेश के अनुपालन में असफलता हेतु दण्ड प्रदान करने के लिए धारा 23 को संशोधित किया

गया। समान संशोधन सेबी अधिनियम, 1992 एवं निक्षेपागार अधिनियम, 1996 में प्रभावी हुए। किसी भी अन्य विधि के तहत अपील से निपटने के लिए SAT के अधिकार क्षेत्र को बढ़ाने हेतु सेबी अधिनियम की धारा 15K को संशोधित किया गया, सेबी के एवं सेबी अधिनियम के तहत न्यायिक प्राधिकारी के आदेश से पीड़ित व्यक्ति की अपील के निपटान हेतु SAT को शक्ति प्रदान करने के लिए धारा 15T को संशोधित किया गया। सेबी अधिनियम की धारा 20 जो केन्द्र सरकार को अपील का प्रावधान करती है, को निस्तेज किया गया। निक्षेपागार अधिनियम, 1996 की धारा 23 जो केन्द्र सरकार को अपील का प्रावधान करती है, को भी निस्तेज किया गया। एक नयी धारा 23A, SAT को अपील का प्रावधान करने हेतु अधिनियम में स्थापित की गई। अतः, सेबी अधिनियम के तहत सेबी के आदेश एवं निक्षेपागार अधिनियम के विरूद्ध अपील, सेबी अधिनियम के तहत न्यायिक प्राधिकारी के आदेश के विरूद्ध अपील, प्रतिभूतियों को सूचीबद्ध करने की स्टाक एक्सचेंज की अस्वीकृति के विरूद्ध अपीलों को SAT के समक्ष अनुमति दी गई। आगे यह भी प्रावधान किया गया कि SAT के आदेश से पीड़ित कोई व्यक्ति 60 दिनों के अन्दर उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है।

सरकार ने 18 फरवरी, 2000 को तीन अपीलीय नियमावली अधिसूचित की; अर्थात (a) प्रतिभूति अपीलीय प्राधिकरण (प्रक्रिया) नियमावली, 2000 सेबी अधिनियम, 1992 के तहत, (b) निक्षेपागार (प्रतिभूति अपीलीय प्राधिकरण को अपील) नियमावली, 2000, निक्षेपागार अधिनियम 1996 के तहत एवं (c) प्रतिभूति संविदा (विनियमन) (प्रतिभूति अपीलीय प्राधिकरण की अपील) नियमावली, SCRA के तहत। ये नियम, शुल्क, प्रपत्र, अपील दायर करने की प्रक्रिया एवं SAT द्वारा उनके निस्तारण की प्रक्रिया का निर्धारण करते हैं।

निवेशक प्रतिभूति बाजार की रीढ़ है। प्रतिभूति में उनकी रूचि बनाए रखने के लिये उनके हितों का संरक्षण आवश्यक है एवं साथ ही बाजार के विकास के लिए भी। बीमा एवं बैकिंग के क्षेत्र में लोकपाल प्रणाली अच्छा कार्य कर रही है। ऐसी ही समान व्यवस्था निवेशकों की शिकायतों के निवारण हेतु की गई है।

निक्षेपागारों को मृदु संचालन प्रदान करने हेतु, निक्षेपागार अधिनियम द्वारा कुछ अन्य अधिनियमों जैसे कि, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1989, कंपनी अधिनियम, 1956, प्रतिभूति संविदा (विनियम) अधिनियम, 1956, आयकर अधिनियम, 1961, बेनामी अंतरण (निषेध) अधिनियम, 1988 एवं भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड अधिनियम, 1993 को संशोधित किया गया।

3.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

निवेशक– वह जो आर्थिक लाभ प्राप्ति के क्रम में पूंजी लगाता है।
प्रतिभूति– एक निवेशक का उपकरण/दस्तावेज, जो एक बीमा पॉलिसी या स्थिर वार्षिक भत्ते/वृत्ति से अलग है, जो एक निगम, सरकार या संगठन द्वारा जारी किया जाता है, जो एक शेयर या ऋण का साक्ष्य प्रदान करता है।

3.5 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1 एम एस साहू, प्रतिभूति विधि के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
2. निक्षेपागार अधिनियम, 1996
3. निक्षेपागार सम्बन्धित विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1997
4. प्रतिभूति विधियां (संशोधन) अधिनियम, 1994
5. प्रतिभूति विधियां (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1999

3.6 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.सार्वजनिक निक्षेपागार पर एक निबंध लिखिए।
2.सार्वजनिक निक्षेपागार अधिनियम, 1996 के सार्वजनिक निक्षेपागार के संरक्षण के लिए प्रासंगिक प्रावधानों की चर्चा कीजिए।
3.निवेशकों के हित कैसे संरक्षित हैं?

एल–एल.एम. प्रथम वर्ष

बैंकिंग विधि

खण्ड–2. केन्द्रीय बैंक (The Central Bank)

इकाई –4. केन्द्रीय बैंक का उद्भव; विशेषतायें; सामाजिक एवं आर्थिक संरचना

(Evolution of Central Bank; Characteristics; Economic and social objectives)

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उददेश्य

4.3 विषय

4.3.1 भारतीय रिजर्व बैंक– एक केन्द्रीय बैंक की तरह इसके कार्य

4.3.2 वाणिज्यिक बैंकों का नियामन

4.3.3 सहकारी बैकों का नियमन

4.4 सारांश

4.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक एवं उपयोगी सामग्री

4.7 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

स्वतंत्रता के पश्चात भारतवर्ष ने भारतीय समाज को समाजवाद के सिद्वान्तो पर आधारित करने का लक्ष्य रखा। यदि गैर तकनीकी भाषा में कहें तो राष्ट्र को अधिनायकवादी बनाये बगैर पूँजी का समाज में समान रूप से वितरण। इस उददेश्य को लोकतांत्रिक प्रक्रिया से प्राप्त करने का दावा किया गया। इसी उददेश्य को घ्यान में रखते हुये एक मिश्रित योजना का विकास हुआ। सरकारी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों को स्वतंत्र कार्य करने का मौका दिया गया। सार्वजनिक क्षेत्र का पूर्ण स्वामित्व एवं नियन्त्रण सरकार का होता है। सार्वजनिक क्षेत्रों को नियमों, अनुज्ञप्तियों, नियंत्रण एव विधायी नियमों के एक तंत्र द्वारा नियंत्रित किया जाता है जिसमें नवीनतम है एकाधिकार एवं प्रतिबंधित व्यापार अधिनियम, 1969। सार्वजनिक क्षेत्र को उद्योगों एवं संस्थानों के राष्ट्रीयकरण द्वारा विकसित किया गया है। बैंकिग संस्थान निजी बचत के संरक्षक होने के साथ ऋण प्रदान करने हेतु एक शक्तिशाली उपकरण का कार्य भी करते है। यह राष्ट्र के संसाधनों को जुटाकर औद्योगिक एवं राष्ट्रीय विकास को गतिशील बनाने के लिये अग्रिम वितरित करने का कार्य करते है। 1955 में इंपीरियील बैंक ऑफ इंडिया का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया एवं इसको भारतीय स्टेट बैंक का नाम दिया गया। जहॉ तक अनुसूचित बैंको की बात है, इनके बारे में यह शिकायत थी कि वे मात्र बड़े औद्योगिक घरानों, बड़े एवं मध्यम उद्योगों को ही ऋण एवं अग्रिम प्रदान कर रहे थे, परन्तु वे क्षेत्र, जैसे कृषि,लघु उद्योग एवं निर्यात जिनको प्राथमिकता के आधार पर वित्तीय सहायता मिलनी चाहिये थी, उनको अपना अंश प्राप्त नहीं हो पा रहा था।यद्यपि 1969 में भारतीय बैकिंग अधिनियम में संशोधन करके भारतीय बैंकिग व्यवस्था की बुनियादी कमजोरी को दूर करने के लिये एवं बैंकिग से जुड़े बडे व्यवसायिक घरानों के साथ समाज के सबसे कमजोर एवं उपेक्षित वर्गों की जरूरतों को पूरा करने के लिये सामाजिक नियन्त्रण लगाने का कार्य किया गया है। किन्तु सामाजिक नियंत्रण लगाने के बाद भी परिस्थितियों में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ एवं बैकों द्वारा बड़े औद्योगिक घरानों, बड़े एवं मध्यम उद्योगों को ही ऋण एवं अग्रिम प्रदान किया जा रहा था एवं कृषि,लघु उद्योग एवं निर्यात जिनको प्राथमिकता के आधार पर वित्तीय सहायता मिलनी चाहिये थी उनको अपना अंश प्राप्त नहीं हुआ।

वित्तीय प्रणाली के अभिन्न अंग हमारे वित्तीय संस्थान के सुचारू रूप से कार्य करने को सुनिश्चित करने एवं बचतकर्ताओं तथा जमाकर्ताओं की बड़ी संख्याओं के हितों की रक्षा के लिये वित्तीय प्रणाली के लिये एक नियामक ढ़ांचे की आवश्यकता सार्वभैमिक रूप में की गई। भारत में मुख्यतः दो नियामक निकाय हैं, एक भारतीय रिजर्व बैंक एवं दूसरा भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड। इन्हे मुद्रा बाजार एवं

वित्तीय बाजार के विकास एवं नियमन की जिम्मेदारी दी गई है।ये नियामक विधायी कानूनों से अपनी शक्तियॉं प्राप्त करते हैं एवं अपने विवेकानुसार भी कार्य करते हैं। इस प्रकार वित्तीय प्रणाली नियामक ढ़ाचे के अन्तर्गत कार्य करती है। इस इकाई एवं आने वाली इकाइयों का उददेश्य नियामक ढ़ांचे जैसे एल0एन0जी0 तंत्र एवं वाई बाजार नियामक जैसे नियामक ढ़ांचों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करना है।

4.2 उददेश्य

इस इकाई में केन्द्रीय बैंकों के उदभव, वाणिज्यिक एवं सहकारी बैंको के नियमन एवं एवं कार्यप्रणाली पर चर्चा करने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही सभी प्रासंगिक तथ्यों एवं पहलुओं का भी विश्लेषण किया गया है।

4.3.1 भारतीय रिजर्व बैंक

किसी भी राष्ट्र की बैंकिंग व्यवस्था में केन्द्रीय बैंक का एक विशिष्ट स्थान होता है। भारतीय रिजर्व बैंक राष्ट्र का केन्द्रीय बैंक होने के साथ साथ भारतीय मुद्रा बाजार का प्रमुख नियामक प्राधिकर्ता भी है। यह दो प्रमुख अधिनियमों से अपनी शक्तियॉं प्राप्त करता है एक भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 एवं दूसरा बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949।भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 भारतीय रिजर्व बैंक के गठन,कार्य एवं प्रबन्धन परिभाषित करने के साथ साथ इसे वाणिज्यिक बैंकों एवं गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनियों तथा वित्तीय संस्थानों को नियंत्रित एवं नियमित करने की शक्तियॉं भी प्रदान करता है।बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 में वाणिज्यिक बैंकों का संचालन के बहुत से प्रावधान भी हैं।इनमें से बहुत से प्रावधान सहकारी बैंको पर भी लागू होते हैं।भारतीय स्टेट बैंक इसके सहायक बैंक एवं अन्य राष्ट्रीयकृत बैंक भी इसी नियामक ढ़ांचे का एक हिस्सा है एवं इन्हीं नियमों द्वारा संचालित होते हैं।भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना 1 अप्रैल 1935 को भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के अन्तर्गत एक केन्द्रीय बैंक के रूप में हुई थी। एक केन्द्रीय बैंक की तरह यह निम्न कार्य करती है–

<u>i) पत्र मुद्रा (करेन्सी नोट) जारी करनाः–</u>

भारतीय रिजर्व बैंक राष्ट्र का एकमात्र प्राधिकर्ता है जो एक रूपये के नोट या इससे कम नामांकन के सिक्कों के अलावा समस्त प्रकार की पत्र मुद्रा (करेन्सी नोट)जारी करता है। भारतीय रिजर्व बैंक के अन्दर पत्र मुद्रा जारी करने से सम्बन्धित समस्त कार्य मुद्रा विभाग द्वारा किये जाते हैं जिसके लिये समान मूल्य की पात्र सम्पत्ति का अनुरक्षण किया जाता है।

ii) सरकार के लिये बैंकर का कार्यः–

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के निर्देशानुसार भारतीय रिजर्व बैंक केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों के लिये (अनुबन्ध के अनुसार) बैंकर का कार्य करता है। एक बैंकर की तरह भारतीय रिजर्व बैंक सरकार की ओर से पूँजी जमा करने, निकालने, रसीद देने के साथ धन के अन्तरण एवं सार्वजनिक ऋण के प्रबन्धन का कार्य करने की सेवायें प्रदान करता है ।

iii) बैंकों का बैंक :–

भारतीय रिजर्व बैंक ऋण नियन्त्रण के विभिन्न उपायों के माध्यम से वाणिज्यिक बैंकों के पास उपलब्ध विभिन्न संसाधनों की मात्रा को भी नियन्त्रित करता है जिससे ये उद्योग,व्यापार एवं वाणिज्य के लिये उपलब्ध बैकों की ऋण क्षमता को भी प्रभावित करता है।

iv)पर्यवेक्षी अधिकारीः–

भारतीय रिजर्व बैंक विभिन्न उपायों के द्वारा वाणिज्यिक बैंकों पर निगरानी एवं नियन्त्रण करने की शक्ति रखता है। यह नये बैंक एवं उनकी नई शाखाओं को खोलने के लिये लाइसेंस प्रदान करता है। यह आरक्षित अनुपात को परिवर्तित करने,बैंको का निरीक्षण करने एवं बैंको के अध्यक्ष एवं मुख्य कार्यकारी अधिकारियों की नियुक्ति करने की अनुमति प्रदान करने की शक्तियॉ रखता हैं।

v)मुद्रा नियन्त्रण प्राधिकारीः–

भारतीय रूपये के बाह्य मूल्य को बनाये रखने के साथ साथ विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम की शर्तों के आधार पर यह विदेशी मुद्रा की मांग को नियमित करता है।

vi)ऋण का विनियमनः–

उद्योगों के लिये ऋण के प्रवाह को नियन्त्रित करना भारतीय रिजर्व बैंक के सबसे महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है। इसे करने के लिये बैंक दर पर नियन्त्रण, आरक्षित अनुपात को परिवर्तित करना, मुक्त बाजार परिचालन, चयनित ऋण नियऩ्त्रण एवं नैतिक दबाब बनाने जैसे उपाय किये जाते हैं।

4.3.2 वाणिज्यिक बैंकों का नियमन

बैंकिग नियमन अधिनियम 1949 के अनुसार वाणिज्यिक बैंकों को चलाने के लिये मुख्य प्रावधान निम्नानुसार है–

(1)स्थापनाः–

प्रत्येक स्वदेशी या विदेशी बैंकिंग कंपनी को भारत में अपना व्यापार आरम्भ करने से पूर्व भारतीय रिजर्व बैंक से लाइसेंस प्राप्त करना आवश्यक है। भारतीय रिजर्व बैंक निम्नलिखित शर्तों को पूरा करने पर लाइसेंस जारी करता हैः–

i)कंपनी अपने वर्तमान या भविष्य के जमाकर्ताओं के दावों को पूर्णरूपेण भुगतान करने में सक्षम है/या होगी।

ii)कंपनी ऐसे कारोबार में नहीं है जिससे वर्तमान या भविष्य में अपने जमाकर्त्ताओं की पूँजी को का कोई क्षय न हो।

iii)कंपनी का प्रस्तावित प्रबन्धन संमान्यतः सार्वजनिक हित एवं जमाकर्त्ताओ के हितों के प्रतिकूल न हों

iv)कंपनी के पास पर्याप्त पूँजी हो एवं आय की पर्याप्त संभावनायें हों।

v)कंपनी को कारोबार का लाइसेंस दिया जाना सार्वजनिक हित में होगा।

vi)कंपनी को लाइसेंस दिया जाना बैंकिंग तंत्र के परिचालन एवं स्थिरता के प्रासांगिक होगा एवं मौद्रिक स्थिरता तथा आर्थिक विकास के प्रतिकूल नहीं होगा।

vii)या रिजर्व बैंक की दृष्टि में अन्य कोई कारण जिससे सार्वजनिक हित एवं जमाकर्ताओ के हितों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

इसके अलावा विदेशी बैंकों को निम्न शर्तों कोभी पूरा करना होता है—

i)यह ऐसी कंपनी होनी चाहिये जिसका भारत में कारोबार करना सार्वजनिक हित में हो।

ii)जिस सरकार या राष्ट्र के विधान के अन्तर्गत इसका गठन किया गया हो वह भारतीय बैंकिंग कम्पनियों के साथ कोई भेदभाव न रखती हों।

iii)कम्पनी ऐसी सभी कम्पनियों के लिये लागू कम्पनी अधिनियम के सभी प्रावधानों का अनुपालन करती हों।

(2)शाखाओं का खोला जानाः—

भारत में या भारत के बाहर कारोबार का नया स्थान खोलने के लिये या कारोबार का स्थान परिवर्तित करने के लिये प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी(भारतीय या विदेशी) को भारतीय रिजर्व बैंक की पूर्व अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है। भारतीय रिजर्व बैंक इसकी अनुमति देने से पूर्व निम्न बातों को विश्लेषण करता हैः—

i) कंपनी की वित्तीय स्थिति एवं इतिहास।

ii) कंपनी के प्रबन्धन की सामान्य विशिष्टियॉ।

iii) कंपनी की पूँजी संरचना एवं आय की संभावनाओं की पर्याप्तता, और

iv)यह कि नई शाखाओं को खोलने/व्यापार का स्थान परिवर्तित करना सार्वजनिक हित में होगा।

(3)व्यापार की अनुमति और निषिद्धिः—

एक बैंकिंग कम्पनी द्वारा किये जा सकने वाले व्यापारों की सूची धारा 6 में दी गई है। “O” खण्ड के अन्तर्गत अन्य व्यवसाय को भी केन्द्र सरकार द्वारा अपनी संतुष्टि पर बैंकिंग कम्पनी को व्यवसाय करने हेतु मान्यता दी जा सकती है। किन्तु एक बैंकिंग कम्पनी को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जोखिमपरक व्यापारिक गतिविधियों(ऋण की वसूली या संग्रह/अक्रमणीय देयकों की वसूली को छोड़कर) जैसे उपक्रमों के लिये निषिद्ध किया गया है।

(4)सहायक कंपनीः–

यदि भारतीय रिजर्व बैंक यह मानती है कि बैंकिग कम्पनी द्वारा भारत से बाहर व्यवसाय करने से भारत में बैंकिंग को बढ़ावा मिलेगा या यह सार्वजनिक हित में है तब धारा 6 के अन्तर्गत इसकी सहायक कम्पनी खोलने की अनुमति दी जा सकती है।

(5)प्रदत्त पूँजीः–

बैंकिग अधिनियम द्वारा 1964 से पहले स्थापित किये गये बैंकों की न्यूनतम कुल प्रदत्त पूँजी एवं आरक्षित पूँजी को अनुमानित किया गया है। 1964 के बाद स्थापित किये गये बैंकों के लिये प्रदत्त पूँजी को न्यूनतम 5 लाख रूपये निर्धारित किया गया। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा संशोधित दिशा निर्देशों के अनुसार नये निजी क्षेत्रों के बैंकों की स्थापना के लिये कुल न्यूनतम प्रदत्त पूँजी 200 करोड़ रूपये निर्धारित की गई जिसको अगले तीन साल में बढ़ाकर 300 करोड़ रूपये तक बढ़ाने का प्रावधान किया गया। जिसमें प्रवर्तको की हिस्सेदारी 25 प्रतिशत (या कुल प्रदत्त पूँजी 100 करोड़ से अधिक होने पर 20 प्रतिशत)।अनिवासी भारतीयों के लिये नये बैंकों में 40 प्रतिशत तक की हिस्सेदारी की सीमा रखी गई।राष्ट्रीयकृत बैंको की अधिकृत पूँजी 1580 करोड़ है जो कि 3000 करोड़ तक बढ़ाया जा सकती है।ये बैंक अपनी पूँजी को 1500 करोड़ तक कम भी कर सकते हैं इन बैकों का सार्वजनिक शेयर भी निर्गत करने का अधिकार है किन्तु इससे केन्द्र सरकार की हिस्सेदारी किसी भी तरह कुल प्रदत्त पूंजी के 51 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिये। प्रदत्त पूंजी को 1995 का प्रदत्त पूंजी के 25 प्रतिशत कम तक किसी भी समय कम किया जा सकता है।

(6)तरल सम्पत्ति का रखरखावः–

धारा 24 के अनुसार प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को किसी भी कारोबारी दिवस के अन्त में अपनी कुल शुद्ध मांग एवं सामयिक देनदारियों के कम से कम 25 प्रतिशत राशि के बराबर नकद सोना या अभारग्रस्त प्रतिभूतियों के रूप में बनाये रखना आवश्यक है।भारतीय रिजर्व बैंक इस अनुपात को सांविधिक तरल अनुपात(एस0एल0आर0) की संज्ञा देता है और इसे कुल शुद्ध मांग एवं सामयिक देनदारियों के 40प्रतिशत तक बढ़ाने की शक्ति रखता है। जब इस अनुपात को बढ़ाया जाता है तब बैंकों को

अपनी जमा राशि के बड़े हिस्से को इस अनुपात को बढ़ाने के लिये जमा करने के लिये निर्देशित किया जाता हैं। इस अनुपात को दैनिक आधार पर बनाये रखने के निर्देश होते हैं। एस0एल0आर0 की गणना द्वितीय पूर्ववर्ती पखवाड़े के अंतिम शुक्रवार के शुद्ध मांग एवं सामयिक देनदारियों के आाधार पर की जाती हैं। बैंको द्वारा धारित प्रतिभूतियों के मूल्यांकन के मानदण्ड बनाने के आधार, जैसे वह रोकड़ मूल्य पर आधारित होगा या अंकित मूल्य पर, को सुनिश्चित करने की शक्ति भी भारतीय रिजर्व बैंक के पास होती है।अनुमोदित प्रतिभूतियों का अर्थ है वे प्रतिभूतियॉ जिनमें भारतीय ट्रस्ट अधिनियम, 1884 की धारा 20 के अनुसार ट्रस्ट के न्यासियों(ट्रस्टीज)द्वारा निवेश किया जा सकता है। प्रतिभूतियॉ भारग्रस्त न हो अर्थात प्रतिभूतियॉ किसी लेनदार के पक्ष में बंधक न रखी गई हों।बैंको द्वारा तरल सम्पत्ति का स्तर बनाये न रखने पर अधिनियम की धारा 24 के अन्तर्गत शास्ति(दण्ड) का भी प्राविधान हैं।वर्तमाान में एस0एल0आर0 को शुद्व मांग एवं सामयिक देनदारियों (शुद्ध अंतर बैंकिंग देनदारियों को छोड़कर)का 25 प्रतिशत होना चाहिये।

(7)भारत में तरल सम्पत्ति का रखरखावः–

अधिनियम की धारा 25 के अनुसार प्रत्येक तिमाही के अंतिम शुक्रवार को प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी की कुल सम्पत्ति शुद्ध मांग एवं सामयिक देनदारियों के 75 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिये।

(8)रिजर्व बैंक द्वारा निरीक्षणः–

बैंकिग अधिनियम की धारा 35 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक या तो स्वंय अपनी पहल पर या केन्द्र सरकार के निर्देशों पर किसी भी बैंकिग कम्पनी के बही खातों का निरीक्षण करने के लिये एक या अधिक अधिकारियों को नियुक्त कर सकती है। यदि रिजर्व बैंक की निरीक्षण आख्या पर केन्द्र सरकार यह विचार करती है कि कम्पनी की कार्यप्रणाली उसके जमाकर्ताओं के हितों के विपरीत है,तब यह कम्पनी को नई जमाराशियों को लेने से निषिद्ध कर सकती है या रिजर्व बैंक को कम्पनी का व्यापार समेटने के लिये निर्देशित कर सकती है।

(9) रिजर्व बैंक की निर्देश देने की शक्तिः–

भारतीय रिजर्व बैंक को अधिनियम की धारा 35 के अन्तर्गत बैंक्रिंग कम्पनी के लिये दिशा निर्देश जारी करने की व्यापक शक्तियॉ प्रदान की गई है विशेष तौर पर–

(i) जनता या बैंकिंग नीति के हित में।

(ii)किसी बैंकिंग कम्पनी को ऐसी कार्यप्रणाली से रोकने के लिये जो इसके जमाकर्ताओं या बैंकिंग कम्पनी के हितों के विपरीत है।

(iii) किसी भी बैंकिंग कम्पनी के प्रबन्धन को सुरक्षित करने के लिये।

बैंकिंग कम्पनी को इन सभी निर्देशों का पालन करने के लिये बाध्य किया जायेगा। रिजर्व बैंक किसी बैंकिंग कम्पनी को किसी विशेष लेनदेन या किसी वर्ग विशेष के

लेनदेन में भाग लेने से रोक सकती है यदि यह समझती है कि इस लेन देन से सार्वजनिक हितों की हानि हो सकती है। रिजर्व बैंक के पास बोर्ड के निदेशकों की बैठक बुलाने, अधिकारियों को नियुक्त करने या निदेशक बोर्ड की बैठकों की कार्यवाही को देखने के लिये अपने अधिकारियों को नियुक्त करने की शक्तियॉ प्राप्त हैं।

(10)बैंको का प्रबन्धनः—

निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों के निदेशक बोर्ड का संगठन बैंकिंग अधिनियम, 1949 के प्रावधानों के अनुसार होना चाहिये।धारा 10 के अनुसार बैंकों के निदेशक बोर्ड का संगठन इस प्रकार होना चाहिये कि कुल सदस्यों की संख्या के 51 प्रतिशतसदस्य निम्नलिखित शर्तों को पूरा करते हों—

(i) सदस्यों को लेखा,कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था,बैंकिंग, सहकारिता, वित्त, अर्थशास्त्र कानून,लघु उद्योग या इससे सम्बन्धित किसी अन्य क्षेत्र में विशिष्ट एवं व्यावाहरिक अनुभव हो।

(ii)उनकी किसी भी ऐसी कम्पनी में न तो मुख्यतः कोई रूचि हो न ही ऐसी किसी कम्पनी से कोई सम्बन्ध हो जो किसी प्रकार के व्यापार,वाणिज्य या उद्योग से सम्बन्धित हो(इनमें लघु उद्योग तथा कंपनी अधिनियम की धारा 25 के अन्तर्गत गठित की गई कम्पनियॉ शामिल नहीं है)। यदि उपरोक्त दिशा निर्देशों के अनुसार निदेशक बोर्ड का गठन नहीं किया है तो भारतीय रिजर्व बैंक उस बोर्ड का पुनर्गठन करा सकता है।यह एक या एक से अधिक निदेशकों को हटा कर उनके स्थान पर उपयुक्त निदेशकों की नियुक्ति भी कर सकता है।एक व्यक्ति दो बैंकिंग कम्पनियों का निदेशक नहीं हो सकता है। नही ऐसा व्यक्ति किसी बैंकिंग कम्पनी का निदेशक हो सकता है जो पहले से ही किसी बैंकिंग कम्पनी के कुल शेयरधारकों के मताधिकार के 25 प्रतिशत से ज्यादा मतों का अधिकार रखता हो। अधिनियम के अनुसार बैंकिंग कम्पनी का अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति हो जिसे बैंकिंग या वित्तीय संस्थान की कार्यप्रणाली या वित्तीय, अर्थ या व्यापार प्रबन्धन का विशिष्ट एवं व्यावहारिक ज्ञान हो। परन्तु यदि ऐसे व्यक्ति की किसी कम्पनी में निदेशक है, या हिस्सेदारी है या उसमें काई विशेष रूचि है तब उसे अध्यक्ष के पद से हटाया जा सकता है। साथ ही यदि भारतीय रिजर्व बैंक किसी व्यक्ति को अध्यक्ष पद के लिये उपयुक्त नहीं समझता तो वह बैंक को किसी दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करने के लिये कह सकता है। यदि बैंक ऐसा करने में असमर्थ रहता है तब भारतीय रिजर्व बैंक उक्त व्यक्ति को पद से हटाकर अन्य किसी योग्य व्यक्ति को पदस्थापित करने के लिये अधिकृत है।किसी बैंकिंग कम्पनी के अध्यक्ष,निदेशक या मुख्य कार्यकारी अधिकारी को नियुक्त या पुर्ननियुक्त करने या पदच्युत करने के लिये बैंकिग कम्पनी को भारतीय रिजर्व बैंक से अनुमोदन लेना अति आवश्यक होता है। सार्वजनिक हितों

की रक्षा के लिये एवं कम्पनी की कार्यप्रणाली से यदि ऐसा प्रतीत होता है कि यह कम्पनी के जमाकताओं के हितों के विपरीत है,तब भारतीय रिजर्व बैंक को बैंकिंग कम्पनी के शीर्ष प्रबन्धन से जुड़े लोगों को पद से हटाने की शक्तियॉं प्राप्त हैं। भारतीय रिजर्व बैंक इनके स्थान पर सुयोग्य व्यक्तियों को पदस्थापित कर सकता है।इसके साथ भारतीय रिजर्व बैंक किसी बैंकिंग कम्पनी के कुल निदेशकों का संख्या के एक तिहाई जो कि कुल पॉच से ज्यादा न हों की नियुक्ति करने का अधिकार रखता है। राष्ट्रीयकृत बैंकों के निदेशक बोर्ड का गठन बैंकिंग कम्पनी (उपक्रमों का अधिग्रहण एवं अंतरण)अधिनियम, 1970 एवं 1980 के खण्ड 9 में दिये गये प्रावधानों के अनुसार किया जाना चाहिये। इस अधिनियम के अनुसार रिजर्व बैंक, केन्द्र सरकार या अन्य वित्तीय संस्थानों के अधिकारियों या सम्बन्धित बैंक के अधिकारियों या कर्मचारियों में से निदेशकों की नियुक्ति की जा सकती है। इसके अलावा छः निदेशकों को केन्द्र सरकार द्वारा नामित किया जाता है एवं दो से छः निदेशक ऐसे चुने जाते है जो केन्द्र सरकार को छोड़कर अन्य शेयरधारकों में से होंगे। निजी बैंकों के सन्दर्भ में इन निदेशकों को उपरोक्त विषयगत क्षेत्रों का विशिष्ट एवं व्यावयहरिक ज्ञान होना चाहिये। यदि रिजर्व बैंक की राय में शेयरधारकों (सरकारी शेयरधारकों को छोड़कर) द्वारा चुने गये निदेशक उपरोक्त योग्ताओं को पूर्ण नहीं करते, तब रिजर्व बैंक उनको हटा सकता है साथ ही निदेशक बोर्ड द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को पदस्थापित करने का सुझाव भी दिया जा सकता है। राष्ट्रीयकृत बैंक केन्द्र सरकार द्वारा दिये गये दिशा निर्देश का पालन करने के लिये बाध्य होते हैं। राष्ट्रीयकरण अधिनियम की धारा 8 के अनुसार सार्वजनिक हितों से सम्बन्धित विषयों पर रिजर्व बैंक के साथ परामर्श के उपरान्त केन्द्र सरकार द्वारा निर्गत दिशा निर्देशों के आधार पर ही सभी राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया जायेगा।

(11) अग्रिमों पर नियन्त्रणः–

धारा 21 के द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक को सभी बैंकिंग कम्पनियों या किसी या किसी विशेष कम्पनी द्वारा अग्रिम दिये जाने के सम्बन्ध में निर्देश जारी करने के लिये व्यापक शक्तियॉं प्रदान की गई हैं। निर्देश निम्न में से किसी एक के लिये या सभी के लिये हो सकते हैं:–

(i)प्रयोजन जिसके लिये अग्रिमो को स्वीकृत या अस्वीकृत किया जा सकता है।

(ii)सुरक्षित अग्रिमों के लिये मार्जिन के सम्बन्ध में।

(iii) अधिकतम धनराशि के सम्बन्ध में जो किसी कम्पनी, फर्म या व्यक्तियों के समूह को दी जा सकती हैएवं अधिकतम धनराशि के सम्बन्ध में जिसके लिये किसी बैंकिंग कम्पनी द्वारा किसी कम्पनी का तरफ से गारंटी दी जा सकती है।

(iv)ब्याज की दरें जिन पर उक्त अग्रिम या गारंटी दी जा सकती है।

(V)इस धारा के अन्तर्गत दिये गये निर्देशों को चयनात्मक ऋण नियन्त्रण निर्देश कहा जाता है, यदि ये चयनित वस्तुओं पर अग्रिम की सुरक्षा से सम्बन्धित हैं। सभी बैंक इन निर्देशों के अनुपालन हेतु बाध्य होते है।

(12) ऋण एवं अग्रिमों पर अंकुश लगानाः–

सभी बैंकिंग कम्पनियों को अपने शेयरों की प्रतिभूतियों पर ऋण एवं अग्रिम स्वीकृत करने के लिये निषिद्ध किया गया है। घारा 20 के अन्तर्गत ऐसे व्यक्तियों को ऋण एवं अग्रिम स्वीकृत करने के लिये भी निषिद्ध किया गया है जो किसी बैंकिंग कम्पनी के प्रबन्धन में रूचि ले रहे हों।

(13) रिजर्व बैंक के साथ नकद आरक्षित का रखरखावः–

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 के अनुसार प्रत्येक अनुसूचित बैंक को रिजर्व बैंक के साथ अपने दैनिक औसत अवशेष को बनाये रखना होता है जो कि उसकी शुद्व मांग एवं सामयिक देनदारियों के 3 प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिये। रिजर्व बैंक को इस सीमा को 20 प्रतिशत तक बढ़ाने की शक्तियॉ प्राप्त है। यदि कोई बैंक इस अवशेष को बनाये रखने में असमर्थ रहता है तब अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार बैंक पर शास्ति (दण्ड) आरोपित की जा सकती हैं। ये प्रावधान सभी अनुसूचित बैंकों,वाणिज्यिक बैकों, राजकीय सहकारी बैकों एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर लागू होते हैं। 29 दिसम्बर 2001 से सभी वाणिज्यिक बैंको को दूसरे पूर्ववर्ती पखवाड़े की अपनी शुद्ध मांग एवं सामयिक देनदारियों के 5.5 प्रतिशत की दर से नकद आरक्षित अनुपात को बनाये रखना होता है। इसे पूर्व में लागू 7.5 प्रतिशत से घटाकर 5.5 प्रतिशत किया गया था जिसे 1 जून 2004 से और घटाकर 5 प्रतिशत कर दिया गया है। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा इस नकद आरक्षित धनराशि पर 6.5 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज दिया जाता है।

4.3.3 सहकारी बैंको पर नियन्त्रण

इस श्रेणी में सभी राजकीय सहकारी एवं शहरी सहकारी बैक शामिल हैं। ये संगठित सहकारी समितियॉ होती है जिनको सम्बन्धित सहकारी समिति अधिनियमों के अन्तर्गत राज्य सरकारों द्वारा पंजीकृत एवं शासित किया जाता है।इस प्रकार इनके पंजीकरण,प्रशासन, भर्ती, परिमापन एवं समामेलन का समस्त कार्य राज्य सरकारों द्वारा ही किया जाता है। चूंकि ये बैक का कार्य भी करते हैं अतः इन पर बैंकिग अधिनियम, 1949 के प्रावधान भी लागू होते हैं।इस प्रकार बैंकिंग से सम्बन्धित मामलों में रिजर्व बैंक द्वारा नियन्त्रित होते है।शहरी सहकारी बैंकों पर रिजर्व बैंक का पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण काफी हद तक कमजोर है।वे एक दोहरे नियन्त्रण के अधीन हैं जो कि एक बड़ी समस्या बनी हुई है। तथापि रिजर्व बैंक

द्वारा आय– निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण, प्रावधानीकरण एक्सपोजर से सम्बन्धित मामलों के लिये विवेकपूर्ण मानदंड निर्धारित किये गये हैं।

4.4 सारांश

वित्तीय प्रणाली के अभिन्न अंग हमारे वित्तीय संस्थान के सुचारू रूप से कार्य करने को सुनिश्चित करने एवं बचतकर्ताओं तथा जमाकर्ताओं की बड़ी संख्याओं के हितों की रक्षा के लिये वित्तीय प्रणाली के लिये एक नियामक ढ़ांचे की आवश्यकता सार्वभौमिक रूप में की गई। भारत में मुख्यतः दो नियामक निकाय हैं, एक भारतीय रिजर्व बैंक एवं दूसरा भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड। इन्हे मुद्रा बाजार एवं वित्तीय बाजार के विकास एवं नियमन की जिम्मेदारी दी गई है। ये नियामक विधायी कानूनों से अपनी शक्तियॉ प्राप्त करते हैं एवं अपने विवेकानुसार भी कार्य करते हैं। इस प्रकार वित्तीय प्रणाली नियामक ढ़ाचे के अन्तर्गत कार्य करती है।

भारतीय रिजर्व बैंक राष्ट्र का केन्द्रीय बैंक होने के साथ साथ भारतीय मुद्रा बाजार का प्रमुख नियामक प्राधिकर्ता भी है। यह दो प्रमुख अधिनियमों से अपनी शक्तियॉ प्राप्त करता है एक भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 एवं दूसरा बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949।भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 भारतीय रिजर्व बैंक के गठन,कार्य एवं प्रबन्धन परिभाषित करने के साथ साथ इसे वाणिज्यिक बैंकों एवं गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनियों तथा वित्तीय संस्थानों को नियंत्रित एवं नियमित करने की शकितयॉ भी प्रदान करता है।बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 में वाणिज्यिक बैकों का संचालन के बहुत से प्रावधान भी हैं। इनमें से बहुत से प्रावधान सहकारी बैंको पर भी लागू होते हैं।भारतीय स्टेट बैंक इसके सहायक बैंक एवं अन्य राष्ट्रीयकृत बैंक भी इसी नियामक ढ़ांचे का एक हिस्सा है एवं इन्हीं नियमों द्वारा संचालित होते हैं।भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना 1 अप्रैल 1935 को भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के अन्तर्गत एक केन्द्रीय बैंक के स्वरूप में हुई थी। एक केन्द्रीय बैंक की तरह यह निम्न कार्य करती है–

<u>i) पत्र मुद्रा (करेन्सी नोट) जारी करनाः–</u>

भारतीय रिजर्व बैंक राष्ट्र का एकमात्र प्राधिकर्ता है जो एक रूपये के नोट या इससे कम नामांकन के सिक्कों के अलावा समस्त प्रकार की पत्र मुद्रा (करेन्सी नोट)जारी करता है। भारतीय रिजर्व बैंक के अन्दर पत्र मुद्रा जारी करने से सम्बन्धित समस्त कार्य मुद्रा विभाग द्वारा किये जाते हैं जिसके लिये समान मूल्य का पात्र सम्पत्ति का अनुरक्षण किया जाता है।

<u>ii) सरकार के लिये बैंकर का कार्यः–</u>

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के निर्देशानुसार भारतीय रिजर्व बैंक केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों के लिये (अनुबन्ध के अनुसार) बैंकर का कार्य करता है। एक बैंकर की तरह भारतीय रिजर्व बैंक सरकार की ओर से पूँजी जमा करने, निकालने, रसीद देने के साथ धन के अन्तरण एवं सार्वजनिक ऋण के प्रबन्धन का कार्य करने की सेवायें प्रदान करता है ।

iii) बैंकों का बैंक :–

भारतीय रिजर्व बैंक ऋण नियन्त्रण के विभिन्न उपायों के माध्यम से वाणिज्यिक बैंकों के पास उपलब्ध विभिन्न संसाधनों की मात्रा को भी नियन्त्रित करता है जिससे ये उद्योग,व्यापार एवं वाणिज्य के लिये उपलब्ध बैकों की ऋण क्षमता को भी प्रभावित करता है।

iv)पर्यवेक्षी अधिकारीः–

भारतीय रिजर्व बैंक विभिन्न उपायों के द्वारा वाणिज्यिक बैंकों पर निगरानी एवं नियन्त्रण करने की शक्ति रखता है। यह नये बैंक एवं उनकी नई शाखाओं को खोलने के लिये लाइसेंस प्रदान करता है। यह आरक्षित अनुपात को परिवर्तित करने,बैंको का निरीक्षण करने एवं बैंको के अध्यक्ष एवं मुख्य कार्यकारी अधिकारियों की नियुक्ति करने की अनुमति प्रदान करने की शक्तियॉ रखता हैं।

v)मुद्रा नियन्त्रण प्राधिकारीः–

भारतीय रूपये के बाह्य मूल्य को बनाये रखने के साथ साथ विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम की शर्तों के आधार पर यह विदेशी मुद्रा की मांग को नियमित करता है।

vi)ऋण का विनियमनः–

उद्योगों के लिये ऋण के प्रवाह को नियन्त्रित करना भारतीय रिजर्व बैंक के सबसे महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है। इसे करने के लिये बैंक दर पर नियन्त्रण, आरक्षित अनुपात को परिवर्तित करना, मुक्त बाजार परिचालन, चयनित ऋण नियऩ्त्रण एवं नैतिक दबाब बनाने जैसे उपाय किये जाते हैं।

बैंकिंग अधिनियम, 1949 के मुख्य प्राविधान जिनके अन्तर्गत वाणिज्यिक बैंकों का गठन किया गया है निम्नप्रकार हैः–

(1)स्थापनाः– प्रत्येक स्वदेशी या विदेशी बैंकिंग कंपनी को भारत में अपना व्यापार आरम्भ करने से पूर्व भारतीय रिजर्व बैंक से लाइसेंस प्राप्त करना आवश्यक है। भारतीय रिजर्व बैंक निम्नलिखित शर्तों को पूरा करने पर लाइसेंस जारी करता हैः–

i) कंपनी अपने वर्तमान या भविष्य के जमाकर्ताओं के दावों को पूर्णरूपेण भुगतान करने में सक्षम है/या होगी।

ii)कंपनी ऐसे कारोबार में नहीं है जिससे वर्तमान या भविष्य में अपने जमाकर्ताओं की पूँजी का कोई क्षय न हो।

iii) कंपनी का प्रस्तावित प्रबन्धन संमान्यतः सार्वजनिक हित एवं जमाकर्ताओ के हितों के प्रतिकूल न हों

iv)कंपनी के पास पर्याप्त पूॅजी हो एवं आय की पर्याप्त संभावनायें हों।

v) कंपनी को कारोबार का लाइसेंस दिया जाना सार्वजनिक हित में होगा।

vi) कंपनी को लाइसेंस दिया जाना बैंकिंग तंत्र के परिचालन एवं स्थिरता के प्रासांगिक होगा एवं मौद्रिक स्थिरता तथा आर्थिक विकास के प्रतिकूल नहीं होगा।

vii) या रिजर्व बैंक की दृष्टि में अन्य कोई कारण जिससे सार्वजनिक हित एवं जमाकर्ताओ के हितो पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

इसके अलावा विदेशी बैंकों को निम्न शर्तों को भी पूरा करना होता है–

i) यह ऐसी कंपनी होनी चाहिये जिसका भारत में कारेबार करना सार्वजनिक हित में हो।

ii) जिस सरकार या राष्ट्र के विधान के अन्तर्गत इसका गठन किया गया हो वह भारतीय बैंकिंग कम्पनियों के साथ कोई भेदभाव न रखती हों।

iii) कम्पनी ऐसी सभी कम्पनियों के लिये लागू कम्पनी अधिनियम के सभी प्रावधानों का अनुपालन करती हों।

1. शाखाओं का खोला जाना
2. व्यवसाय को स्वीकृति देना एवं व्यवसाय से रोकना
3. नियंत्रित कंपनी
4. प्रदत्त पूंजी
5. नकद पूंजी का अनुरक्षण
6. भारत में पूंजी का अनुरक्षण
7. रिजर्व बैंक द्वारा निरीक्षण
8. रिजर्व बैंक की निर्देश देने का शक्तियॉ
9. बैकों का प्रबन्धन
10. अग्रिमों पर नियंत्रण
11. अग्रिम एवं ऋण पर नियन्त्रण

इस श्रेणी में सभी राजकीय सहकारी एवं शहरी सहकारी बैक शामिल हैं। ये संगठित सहकारी समितियॉ होती है जिनको सम्बन्धित सहकारी समिति अधिनियमों के अन्तर्गत राज्य सरकारों द्वारा पंजीकृत एवं शासित किया जाता है।इस प्रकार इनके पंजीकरण,प्रशासन, भर्ती, परिमापन एवं समामेलन का समस्त कार्य राज्य सरकारों द्वारा ही किया जाता है। चूंकि ये बैक का कार्य भी करते हैं अतः इन पर बैंकिग अधिनियम, 1949 के प्राविधान भी लागू होते हैं।इस प्रकार बैंकिंग से

सम्बन्धित मामलों में रिजर्व बैंक द्वारा नियन्त्रित होते है।शहरी सहकारी बैंकों पर रिजर्व बैंक का पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण काफी हद तक कमजोर हैं।

4.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

केन्द्रीय बैंक – देश का प्रमुख बैंक। (मुद्रा निर्गमित करना, राजकीय बैंकर की तरह कार्य करना, राष्ट्र में बैंकिंग तंत्र का विनियमन, विदंशी मुद्रा नियन्त्रण एवं ऋण नियन्त्रण, सरकार को मौद्रिक नीति के विकास पर सलाह देना आदि ।)
सांविधिक तरलता अनुपात (एस0एल0आर0)– यह वह राशि है जो वाणिज्यिक बैंक सोने के रूप में रखते हैं या ग्राहकों को ऋण उपलब्ध कराने से पूर्व सरकार द्वारा मंजूर प्रतिभूति को दर्शाता है।

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मर्केन्टाइल विधि के सिद्वान्त –अवतार सिंह छठा संस्करण 1996
2. बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– पी0एन0वार्षनेय
3. भारत में बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– तन्नान
4. भारतीय अर्थशाष्त्र– डा0 रूद्र दत्त
5. पेजेट्स बैंकिंग विधि आठवा संस्करण

4.7निबन्धात्मक प्रश्न

1. सहकारी बैंकों पर नियन्त्रण में भारतीय रिजर्व बैंक की भूमिका पर पर चर्चा करिये।
2. वाणिज्यि बैंकों पर नियन्त्रण में भारतीय रिजर्व बैंक की भूमिका पर पर चर्चा करिय।
3. भारतीय रिजर्व बैंक की कार्यप्रणाली पर एक लेख लिखिए।

एलएल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–2. केन्द्रीय बैंक (The Central Bank)

इकाई –5. भारतीय रिजर्व बैंक का संगठनात्मक ढ़ांचा एवं कार्य

(Organizational structure; functions of RBI)

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उददेश्य
5.3 विषय
    5.3.1 भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934
    5.3.2 भारतीय रिजर्व बैंक का संगठन
    5.3.3 भारतीय रिजर्व बैंक के कार्य
    5.3.4 भारतीय रिजर्व बैंक के संवर्धक एवं विकासात्मक कार्य
    5.3.5 भारतीय रिजर्व बैंक के निषेधात्मक कार्य
    5.3.6 भारतीय रिजर्व बैंक के केन्द्रीय बैंकिंग कार्य
    5.3.7 भारतीय रिजर्व बैंक के सामान्य बैंकिंग कार्य
    5.3.8 निगमित निकायों के धन के जमा को अस्वीकार करना
    5.3.9 भारतीय रिजर्व बैंक एवं इसके संवर्धक रूप
5.4 सारांश
5.5 महत्वपूर्ण शब्दावली
5.6 अध्ययन के लिये सुझाव
5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

किसी भी देश की वित्तीय प्रणाली विशिष्ट एवं साधारण,संगठित एवं असंगठित वित्तीय बाजारों से मिलकर बनती है जो धन के हस्तांतरण की सुविधा देते हैं। एक वर्गीकरण के अनुसार वित्तीय संस्थानों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है बैंकिंग संस्थान एवं गैर बैंकिंग संस्थान। बैंकिंग संस्थान अर्थव्यवस्था की भुगतान प्रणाली में हिस्सेदार होते हैं अर्थात वे अन्तरण की सुविधा देते हैं इनके जमा धन एवं देनदारियॉ राष्ट्रीय मुद्रा आपूर्ति का एक वृहद भाग हैं। बैंक विधिक आवश्यकताओं के अधीन अपने विरूद्व दावों के द्वारा ऋण अग्रिम कर सकते हैं। इस प्रकार बैंक ऋणों के निर्माता हैं।

5.2 उददेश्य

भारत में वित्तीय संस्थानों का अध्ययन भारतीय रिजर्व बैंक की संक्षिप्त भूमिका,कार्यप्रणाली एवं नीतियों का चर्चा से होता है।केन्द्रीय बैंक के रूप में भारतीय रिजर्व बैंक भारतीय मुद्रा प्रणाली के स्नायु केन्द्र की तरह होता है।इस अध्याय का उददेश्य भारतीय रिजर्व बैंक की कार्यप्रणाली को समझना हैं।

5.3.1 भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934

किसी देश के मौद्रिक एवं बैंकिंग तत्र में केन्द्रीय बैंक का एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है।भारतीय रिजर्व बैंक हमारे देश का केन्द्रीय बैंक है। रिजर्व बैंक केन्द्रीय बैंक के सारे कर्तव्यों जैसे मुद्रा निर्गमित करना,राजकीय बैंकर की तरह कार्य करना,राष्ट्र में बैंकिंग तंत्र का विनियमन,विदंशी मुद्रा नियन्त्रण एवं ऋण नियन्त्रण आदि कार्य करता है।यह सरकार को मौद्रिक नीति के विकास पर सलाह देता है।देश के आर्थिक विकास के लिये व्यापार,परिवहन,कृषि एवं लघु उद्योग आदि की वित्तीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने के साथ निर्धनता,क्षेत्रीय असमानताओं,एवं बेराजगारी को मिटाने का कार्य भी करता हैं। इस प्रकारसंक्षेप में यह बैंकिंग एवं विकास दोनों का कार्य करता है।

5.3.2 भारतीय रिजर्व बैंक का संगठन

भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यो का प्रबन्धन केन्द्रीय निदेशक बोर्ड द्वारा किया जाता है। केन्द्रीय निदेशक बोर्ड में निम्न व्यक्ति होते हैं:–

1. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 की धारा 8(1)(a) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा एक गवर्नर एवं अधिक से अधिक चार डिप्टी गवर्नर की नियुक्ति की जाती है।
2. धारा 8(1)(b) के अन्तर्गत प्रत्येक स्थानीय बोर्ड से एक एक कर चार निदेशकों को नामित किया जाता है ।
3. धारा 8(1)(c) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा दस निदेशकों को नामित किया जाता है।
4. धारा 8(1)(d) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा एक सरकारी अधिकारीं को नामित किया जाता है ।

भारतीय रिजर्व बैंक के चार स्थानीय बोर्ड है जिनके मुख्यालय दिल्ली,मुम्बई,कलकत्ता एवं मद्रास में हैं। प्रत्येक स्थानीय बोर्ड के पॉच पॉच सदस्य हैं जिनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है और क्षेत्रीय एवं आर्थिक मामलों के साथ स्वदेशी एवं सहकारी बैंकों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं।

रिजर्व बैंक के केन्द्रीय बोर्ड के निदेशकों के अध्यक्ष को मुख्य अधिशासी अधिकारी कहा जाता है एवं वह गवर्नर के रूप में जाना जाता है। गवर्नर को सामान्य अधीक्षण की एवं बैंक द्वारा उपयोग की जाने वाली समस्त शक्तियॉ प्राप्त हैं। गवर्नर की अनुपस्थिति में उसके द्वारा मनोनीत किये गये गवर्नर द्वारा इन शक्तियों का प्रयोग किया जाता है। संगठनात्मक रूप से रिजर्व बैंक द्वारा विभिन्न विभाग संचालित किये जाते हैं जो निम्न प्रकार हैं।

(1) निर्गम विभागः— इस विभाग का मुख्य कार्य करेन्सी नोट(कागजी मुद्रा) को जारी एवं वितरित करना है

(2) बैंकिंग विभागः— इस विभाग का कार्य

(अ) सरकारी लेनदेन,सार्वजनिक ऋण का प्रबन्धन व सरकारी धन के हस्तांतरण की व्यवस्था करना।

(ब)अनुसूचित बैंकों के नकदी भण्डार को बनाये रखना, बैंकों के संचय को बनाये रखना एवं एक समाशोधन ग्रह के रूप में कार्य करना है।

(3)बैंकिंग विकास विभागः— इस विभाग का कार्य बैंकिंग सुविधाओं से रहित क्षेत्रों में एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विकास करना है।

(4) बैंकिंग परिचालन विभागः— इस विभाग का कार्य राष्ट्र के बैंकिंग संस्थानों के कार्यों पर निगरानी करना, उन्हें विनियमित करना, उनकी निगरानी करना एवं आवश्यकतानुसार उनके कार्यों में परिवर्तन करना है। यह वर्तमान में कार्यरत बैंकों को नई शाखाओं को खोलने के लिये लाइसेंस प्रदान करना है।

(5)कृषि ऋण विभाग :—यह कृषि ऋण की सुविधाओं को देखता है और राज्य सरकारों व राज्य सहकारी समितियों को ग्रामीण ऋण सुविधा उपलब्ध कराता है।

(6) औद्योगिक वित्त विभागः– इसका मुख्य उददेश्य छोटे एवं मध्यम स्तर के उद्योगों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है।

(7) गैर बैंकिंग कम्पनी विभागः–यह राष्ट्र के गैर बैंकिंग कम्पनियों एवं वित्तीय संस्थानों की गतिविधियों का पर्यवेक्षण करता है।

(8)विदेशी मुद्रा नियन्त्रण विभागः– यह विदेशी मुद्रा की खरीद एवं बिक्री के व्यापार को आयोजित करता है।

(9) न्यायिक विभागः– यह विभिन्न विभागों को कानूनी मुददों पर सलाह देता है।यह देश के बैंकिंग कानूनों के कार्यान्वयन पर कानूनी सलाह देता है।

(10) अनुसंधान एवं सांख्यिकी विभागः–इस विभाग का उददेश्य

(क) वित,ऋण,पूॅंजी एवं उत्पादन से सम्बन्धितसमस्याओं पर अनुसंधान करना है

(ख) राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित आंकड़ो को एकत्रित करना एवं

(ग) इन आंकडों को प्रकाशित करना।

(11) योजना एवं पुर्नगठन विभागः–यह वर्तमान नीतियों कोअधिक प्रभावी बनाने के लिये उनके पुर्नगठन एवं नई योजनाओं के निर्माण से सम्बन्धित है।

(12) आर्थिक विभागः– यह विभाग सरकार की बैंकिंग व आर्थिक नीतियों के क्रियान्वन से सम्बन्धित है।

(13) निरीक्षण विभागः–इस विभाग का कार्यवाणिज्यिक बैंकों के विभिन्न कार्यालयों का निरीक्षण करना है।

(14) लेखा एवं व्यय विभागः– यह रिजर्व बैंक के सभीप्राप्तियों एवं व्यय के रिकार्ड रखता हैं।

(15) भारतीय रिजर्व बैंक सेवा बोर्डः– यह विभाग भारतीय रिजर्व बैंक के विभिन्न विभागों के विभिन्न पदो के लिये कर्मचारियों का चयन करता है।

(16) पर्यवेक्षण विभागः– यह एक नया विभाग है जिसे 23 दिसम्बर 1993 में वाणिज्यिक बैंकों के पर्यवेक्षण के लिये स्थापित किया गया है।

रिजर्व बैंक के कार्यः–

भारतीय रिजर्व बैंक विभिन्न, पारंपरिक केन्द्रीय बैंकिंग के रूप में कार्य करने के साथ देश की गतिशील आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये प्रचार एवं विकास का कार्य भी करता है। इस प्रकार रिजर्व बैंक के व्यापक उददेश्य (क) भारत में मुद्रा का विनियमन (ख)देश की विदेशी मुद्रा के भण्डार का आरक्षण(ग)देश में मौद्रिक स्थिरता की स्थापना (घ) देश की वित्तीयसरंचना का विकास। रिजर्व बैंक के मुख्य कार्य निम्न प्रकार हैं–

(1) पत्र मुद्रा (करेन्सी नोट) जारी करनाः–

रिजर्व बैंक को देश की करेन्सी जारी करने का एकाधिकार प्राप्त है। एक रूपये के नोट को छोड़कर सभी करेन्सी नोट जारी करने का अधिकार मात्र भारतीय रिजर्व बैंक के पास है।एक रूपये का करेन्सी नोट सरकार के वित मंत्रालय द्वारा जारी किया जाता है। रिजर्व बैंक का एक अलग विभाग है जिसका कार्य ही मात्र करेन्सी नोट जारी करना है। करेन्सी नोट जारी करने के लिये रिजर्व बैंक द्वारा न्यूनतम आरक्षण प्रणाली को अपनाया गया है 1957 से भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सोने एवं विदेशी मुद्रा के रूप में 200 करोड रूपये का भण्डार आरक्षित किया गया है जिसमें से कम से कम 115 करोंड़ रूपये सोने के रूप में होना चाहिये ।

सरकार के लिये बैंकरः–

रिजर्व बैंक भारत सरकार के लिये बैंकर, एजेंट एवं सलाहकार का कार्य निम्न प्रकार से करता है

(क) सरकारी जमा को रखना एवं संचालित करना

(ख) सरकारी धन को प्राप्त एवं भुगतान करना

(ग) नये ऋण व सार्वजनिक ऋण के प्रबन्धन में सरकार की मदद करना

(घ) केन्द्र सरकार द्वारा जारी 91 दिनों की अवधि के ट्रेजरी बिलों को बेचना।

(ड) केन्द्र एवं राज्य सरकारों को संसाधन जुटाने के लिये ऐसे अग्रिम प्रदान करना जिनकी अवधि तीन माह से अधिक न हो।

(च) पंचवर्षीय योजनाओ को लागू करने के लिये सरकार को विकास निधि उपलब्ध कराना

(छ)केन्द्र सरकार की ओर से विदेशी मुद्रा का लेन देन करना।

(ज) यह अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष,विश्व बैंक एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों के साथ लेन–देन के लिये भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है।

(झ) वित्तीय मामलों जैसे ऋण प्रक्रियाओं,निवेश,कृषि एवं औद्योगिक ऋण, योजना,एवं आर्थिक विकास पर सरकार को सलाह देता है।

बैंकौं का बैंकः–

भारतीय रिजर्व बैंक बैंकों के बैंक की तरह निम्न प्रकार से कार्य करता है–

(क) प्रत्येक बैंक का राजकीय दायित्व है कि वह एक निश्चित धनराशि न्यूनतम आरक्षित नकद के रूप में रिजर्व बैंक के पास रखे। इस भण्डार को रखने का उददेशय रिजर्व बैंक को आपातकालीन स्थिति में अनुसूचित बैंकों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के योग्य बनाना जिससे वह इस प्रकार अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य कर सके।बैंकर विनियमन अधिनियम 1949 के अनुसार सभी अनुसूचित बैंकों को अपने कुल मांग देनदारियों का कम से कम 5 प्रतिशत एवं सामयिक देनदारियों का कम से कम 2 प्रतिशत नकद आरक्षित रिजर्व बैंक के पास जमा

रखना होता है। रिजर्व बैंक अधिनियम संशोधन 1956 के अनुसार रिजर्व बेंक द्वारा इस सीमा को मांग जमा के सम्बन्ध में 20 प्रतिशत एवं सामयिक जमा के सम्बन्ध में 8 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है। मांग एवं सामयिक श्रेणियों में वर्गीकृत करने में कठिनाई होने के कारण नबम्बर 1972 में अधिनियम में संशोधन किया गया। रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों के बिल, ऋण एवं अनुमोदित प्रतिभूतियों पर वित्तीय सहायता प्रदान करता है।बैंकिंग अधिनियम, 1949 एवं इसके अन्य संशोधनों के द्वारा बैंकिंग तंत्र को नियन्त्रितं एवं पर्यवेक्षण करने के लिये रिजर्व बैंक को व्यापक शक्तियॉ दी गई हैं। ये विनियामक शक्तियॉ बैंकों को लाइसेंस प्रदान करने, उनकी शाखाओं के विस्तार, बैंकों की सम्पत्तियों की तरलता,प्रबन्धन, बैंकों के समामेलन,पुनर्निर्माण,परिसमापन,निरीक्षण एवं कार्यप्रणाली से सम्बन्धित है।

मुद्रा भण्डार अभिरक्षकः–

रिजर्व बेंक भारत की विदेशी मुद्रा के भण्डार का संरक्षक है। यह रूपये के बाहय मूल्य में स्थिरता बनाने , सरकार द्वारा लगाये गये विनिमय नियन्त्रण एवं अन्य निषिद्धियों को लागू कराने एवं विदेशी मुद्रा के भण्डार के प्रबन्धन का कार्य करता है। प्रारम्भ में स्टर्लिंग की नियत मूल्य बिक्री एवं खरीद द्वारा मुद्रा की विनिमय दर की स्थिरता को बनाये रखा जाता था। किन्तु 1947 में भारत के अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के सदस्य बनने के पश्चात स्टर्लिंग की तुलना में भारतीय रूपये का मूल्य गिर गया और यह एक बहुपरिवर्तनीय मुद्रा बन गई। इसीलिये अब रिजर्व बैंक परिवर्तन एवं स्थिरता के उददेश्य से स्टर्लिंग के स्थान पर विदेशी मुद्रा की बिक्री एवं खरीद करती है। भारतीय रिजर्व बैंक सभी विदेशी मुद्रा के विनिमय के दर को निर्धारित करती है।सभी भारतीय विप्रेषण रिजर्व बैंक के माध्यम से किया जाता है।

ऋण नियन्त्रकः–

राष्ट्र के केन्द्रीय बैंक के रूप में आंतरिक मूल्य की स्थिरता को बनाये रखने के लिये एवं आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिये रिजर्व बैंक ऋण पर नियन्त्रण की जिम्मेदारी उठाती है। इसके द्वारा रिजर्व बैंक आंतरिक मूल्य की स्थिरता बनाने का कार्य करती है। आर्थिक विकास के लिये आंतरिक मूल्य की स्थिरता आवश्यक है। ऋण को नियन्त्रण एवं विनियमित करने के लिये भारतीय रिजर्व बैंक बहुत से संख्यात्मक एवं गुणात्मक तकनीकों का व्यापक उपयोग करती है।

साधारण बैंकिंग कार्यः–

रिजर्व बैंक साधारण बैंकिंग का कार्य भी निम्न प्रकार से करता है–

(क) केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों यहां तक साधारण व्यक्तियों की जमा राशियॉ भी बिना ब्याज के स्वीकार करना।

(ख)अनुसूचित बैंकों के विनिमय देयकों एवं वचन पत्रों को खरीदने,बेचने एवं उन पर रियायत देने का कार्य बिना किसी रोक के करना ।

(ग) केन्द्र सरकार,राज्य सरकारों, स्थानीय निकाय, अनुसूचित बैंकों, राजकीय सहकारी बैंकों को ऐसे ऋण एवं अग्रिम देने का कार्य करना जिनकी वापसी 90 दिनों में करनी होती है।

(घ)भारत सरकार एवं विदेशी प्रतिभूतियों की खरीद एवं बिक्री करना ।

(ड) न्यूनतम एक लाख रूपये की विदेशी मुद्रा को अनुसूचित बैंकों से खरीदना एवं उनको बेचना।

(च)अनुसूचित बैंकों एवं विदेशी बैंकों से ऋण लेना।

(छ)विश्व बैंक या किसी अन्य विदेशी बैंक में खाता खोलना

(ज)बहुमूल्य वस्तुओं एवं प्रतिभूतियों को सुरक्षित रखने के लिये स्वीकार करना।

(झ) सोने एवं चॉदी को खरीदना एवं बेचना।

अन्य विविध कार्यः–

केन्द्रीय बैंकिंग और साधारण बैंकिंग के अलावा,रिजर्व बैंक निम्न कार्य भी करता हैः–

(क)वाणिज्यिक बैंकों के पर्यवेक्षण कार्मिकों को प्रशिक्षण सुविधायें देने के लिये बैंकर प्रशिक्षण कालेज की स्थापना की गई हैं। सहकारी बैंकों के कार्मिकों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था भी की गई है।

(ख)बैंकिंग, वित, ऋण, मुद्रा ,कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन से सम्बन्धित आंकड़ों को एकत्र एवं प्रकाशित करता है।अपनी मासिक पत्रिका एवं बुलेटिन में देश की आर्थिक समीक्षा एवं विभिन्न अध्ययनों को प्रकाशित करता है।

5.3.4 संवर्धक एवं विकास कार्य

पारंपरिक केन्द्रीय बैंकिंग कार्यों के साथ ही रिजर्व बैंक अन्य बहुत से व्यवसायिक एवं विकास से सम्बन्धित कार्य भी करता है।

(क)वाणिज्यिक बैकों को अर्धशहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी शाखाओं के विस्तार को बढ़ावा देकर यहॉ की जनता की स्वदेशी बैंकरों एवं महाजनों के दोषपूर्ण संगठित क्षेत्र पर निर्भरता को कम करता है।रिजर्व बैंक द्वारा बीमा निगम की स्थापना करके राष्ट्र के बैंकिंग तत्र को बढ़ावा दिया है, राष्ट्र की आर्थिक स्थिति से निपटने के लिये सही मुद्रा नीति बना कर आत्मविश्वास पैदा करने की चेष्टा की गई है। रिजर्व बैंक वित्तीय एवं बैंकिंग संस्थानों के कार्मिकों को प्रशिक्षण की सुविधा भी देता है। रिजर्व बैंक फटे एवं पुराने नोटों को जो बाजार में स्वीकार नहीं किये जा रहे, बदल कर नये नोट निर्गत करने का कार्य भी करता है।

इस प्रकार रिजर्व बैंक विकास एवं परिवर्द्धन से सम्बन्धित निम्न कार्य करता है–

1. कृषि एवं व्यापार ऋण को बढ़ावा देना

2. वाणिज्यिक बैंकिंग को बढ़ावा देना
3. सहकारी बैंकिंग को बढ़ावा देना
4. निर्यात बैंकिंग को बढ़ावा देना
5. औद्योगिक बैंकिंग को बढ़ावा देना
6. कार्मिकों को प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध कराना
7. उपयुक्त मौद्रिक नीति

5.3.5 भारतीय रिजर्व बैंक के निषेधात्मक कार्य

भारतीय रिजर्व बैंक को निम्न कार्यो को करने से निषिद्व किया गया हैः–

(क) भारतीय रिजर्व बैंक किसी प्रकार की उद्योग,एवं व्यापार की गतिविधियों से निषिद्व किया गया है।

(ख) भारतीय रिजर्व बैंक स्वयं अपने शेयर को खरीद नहीं कर सकता।

(ग) भारतीय रिजर्व बैंक शेयर एवं अचल सम्पत्ति की प्रतिभूति पर ऋण प्रदान नहीं कर सकता है।

(घ) भारतीय रिजर्व बैंक अपने कार्यालय स्थापित करने के अलावा किसी और प्रयोजन से अचल सम्पत्ति की खरीद नहीं कर सकता है।

(ड) भारतीय रिजर्व बैंक अपने पास जमा रखी गई धनराशियों पर ब्याज नहीं दे सकता।

5.3.6 केन्द्रीय बैंक की तरह कार्य

भारतीय रिजर्व बैंक भारत का एक केन्द्रीय बैंक है, एक केन्द्रीय बैंक की तरह इसके कार्य निम्नवत हैंः–

1. कागजी मुद्रा जारी करना
2. ऋण का विनियमन करना
3. बैंकों के बैंक की तरह कार्य करना
4. सरकार के लिये बैंक की तरह कार्य करना
5. विदेशी मुद्रा का विनिमय करना
6. अन्य कार्यः

   उपरोक्त विशिष्ट कार्यो के अलावा रिजर्व बैंक निम्न कार्य भी करता हैः

<u>**(क) निर्यात सहायताः–**</u>भारतीय रिजर्व बैंक निर्यातपरक इकाइयों को ऋण प्रदान करता है।ये ऋण परोक्ष रूप से या अपरोक्ष रूप से अन्य बैंकों द्वारा दिये गये ऋणों का पुनः वित्तपोषण करने के लिये करता है

(ख) समाशोधन गृह की तरह कार्यः–एक केन्द्रीय बैंक होने के कारण यह एक समाशोधन गृह के कार्य भी करता है जहॉ अंतर बैंकीय दायित्वों का निपटारा किया जाता है।

(ग)मुद्रा का परिवर्तनः–यह बड़े करेन्सी नाटों को छोटे एवे छोटे नोटों को सिक्कों में बदलने का कार्य भी करता है

(घ)मुद्रा का अन्तरणः– यह मुद्रा के हस्तांतरण की सुविधा के साथ अपनी शाखाओं पर मांग हुण्डी भी जारी करता है।

(ड़) आंकड़ो एवं अन्यसूचना का प्रकाशनः–यह यह बहुत से मापदण्डों जैसे धन,ऋण,वित, कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन पर आधारित आंकडों को प्रकाशित करता है।इन आंकड़ों पर आधारित आख्यायें(रिपोर्ट) निश्चित समयान्तराल पर प्रकाशित होती हैं।

(च)बैंकिंग में प्रशिक्षणः–रिजर्व बैंक द्वारा प्रतिभाशाली बैंकरों के लिये विभिन्न प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये हैं

(1)बैंकिंग प्रशिक्षण महाविद्यालय

(2)कृषि बैंकिंग कालेज पूना।

(3)रिजर्व बैंक कर्मचारी कालेज मद्रास

(4)नेशनल इंस्टीटयूट आफ बैंक प्रबन्धन

(5)क्षेत्रीय प्रशिक्षण केन्द्र

5.3.7 सामान्य बैंकिंग कार्य

रिजर्व बैंक एक वाणिज्यिक बैंक नहीं है, फिर भी केन्द्रीय बैंक के रूप में यह कुछ सामान्य कार्य करता है जो कि निम्न प्रकार हैं–

1. **जमा स्वीकार करनाः–** रिजर्व बैंक केन्द्र सरकार,राज्य सरकारों ,पोर्ट ट्रस्ट एवं निजी व्यक्तियों की जमा धनराशियॉ स्वीकार करता है किन्तु इन पर कोई ब्याज देय नहीं होता है।
2. **बिलों के सम्बन्ध में कार्यवाही करनाः–**रिजर्व बैंक विनिमय देयकों,हुण्डी एवं वचन पत्रों को खरीदने,बेचने एवं उन पर रियायत देने का कार्य करता है।तथापि ये देयक 90दिन से अधिक के देय नहीं होने चाहिये एवं इसी देश के अन्दर भुगतान देने योग्य होने चाहिये।
3. **ऋण देनाः–** एक केन्द्रीय बैंक के रूप भारतीय रिजर्व बैंक केन्द्र एवं राज्य सरकारों को ऋण प्रदान करते हैं। ये ऋण 90 दिन से अधिक के नहीं हो सकते हैं। ये ऋण प्रतिभूतियों, बैंकों के ऋण पत्रों एवं सोने व चॉदी के विरूद्व दिये जाते है।

4. **<u>कृषि देयकों के सम्बन्ध में कार्यवाही करनाः—</u>** भारतीयरिजर्व बैंक कृषि देयकों को खरीदने, बेचने एवं उन पर रियायत देने का कार्य करता है। तथापि ये देयक 15 माह से अधिक समयावधि के नहीं होने चाहिये एवं इसी देश के अन्दर भुगतान देने योग्य होने चाहिये।
5. **<u>विदेशी प्रतिभूतियों का सौदाः—</u>**भारतीय रिजर्व बैंक ऐसी विदेशी प्रतिभूतियों का सौदा भी करता है जिनका खरीद की तारीख के 10 वर्ष के अन्तर्गत भुगतान कराया जा सकता है।
6. **<u>बहुमूल्य धातुओं का सौदाः</u>**—भारतीय रिजर्व बैंक सोना चॉदी व इन धातुओं के सिक्कों की खरीद एवं बिक्री करता है।
7. **<u>विदेशी बैंकों के साथ व्यवहार करनाः—</u>**अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य होने के कारण भारतीय रिजर्व बैंक अन्य सदस्य देशों के बैंकों के साथ व्यापार सम्बन्ध स्थापित करता है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से सम्बन्धित समाधानों के लिये यह उन बैंकों के साथ खाते खोलता है जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं।

5.3.8 निगमित निकायों की जमा धनराशियों की स्वीकृति पर निषेध

बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949 भारतीय रिजर्व बैंक को यह अधिकार देता है कि वह वाणिज्यिक बैंकों को नई शाखाओं को खोलने के लिये लाइसेंस प्रदान करता है। किसी भी वाणिज्यिक बैंक को कारोबार करने के लिये भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी लाइसेंस की आवश्यकता होती है। बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अनुसार भारतीय रिजर्व बैंक को वाणिज्यिक बैंकों का निरीक्षण करने की शक्तियॉ प्राप्त हैं। अर्थात भारतीय रिजर्व बैंक किसी भी एक या एक से अधिक अधिकारियों के द्वारा वाणिज्यिक बैंकों के बही खातों का निरीक्षण करा सकती है एवं यदि कोई दोष पाया जाता है तब सम्बन्धित बैंक को उसे संशोधित करने के लिये कहा जाता है साथ ही भारतीय रिजर्व बैंक किसी भी वाणिज्यिक बैंक के निदेशक मण्डल के अतिरिक्त निदेशक की नियुक्ति करने के लिये सशक्त हैं।बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949 द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक को वाणिज्यिक बैंकों के सम्पूर्ण प्रबन्धन पर नियन्त्रण रखने की व्यापक शक्तियॉ प्राप्त हैं। इस अधिनियम की धारा 35(ख) के अन्तर्गत किसी वाणिज्यिक बैंक के लिये एक अध्यक्ष, प्रबन्धक या पूर्णकालिक निदेशक की नियुक्ति, पुनर्नियुक्ति या बर्खास्तगी के लिये भारतीय रिजर्व बैंक की सहमति लेना आवश्यक है। भारतीय रिजर्व बैंक वाणिज्यिक बैंक को कुछ प्रकार के लेन देन से रोक सकता है। धारा 21 के अन्तर्गत भारतीय रिजर्व बैंक को वाणिज्यिक बैंकों को दिये गए अनुदान पर नियन्त्रण रखने की शक्तियॉ प्राप्त हैं। इसे चयनात्मक ऋण नियन्त्रण कहा जाता है। इस धारा के अन्तर्गत भारतीय रिजर्व

बैंक वाणिज्यिक बैंकों के सुरक्षित अनुदान के सम्बन्ध में,ब्याज दर व अन्य नियमों व शर्तों को निर्धारित कर सकता है।चयनात्मक ऋण नियन्त्रण के साथ भारतीय रिजर्व बैंकवाणिज्यिक बैंकों के ऋण के परिमाण को संख्यात्मक रूप से इस प्रकार नियनत्रित करता है कि वह बैंक के सारे ऋण परिमाण को प्रभावित कर सके।

भारतीय रिजर्व बैंक इसको करने के लिये निम्न साधनों का उपयोग करता है–

1. बैंक दर के द्वारा
2. खुले बाजार के परिचालन द्वारा
3. परिवर्तनीय नकद आरक्षित आवश्यकताओं के द्वारा

5.3.9 भारतीय रिजर्व बैंक एवं इसका संवर्धक स्वरूपः–

भारतीय रूपये के बाहरी एवं आन्तरिक मूल्य की स्थिरता बनाये रखकर अर्थव्यवस्था में मूल्यों की स्थिरता को बनाने के लिये भारतीय रिजर्व बैंक न केवल ऋण एवं मुद्रा नियन्त्रण करने का नकारात्मक कार्य करता है अपितु वित्तीय संस्थानों के संवर्धक का कार्य भी करता है जिससे सरकार द्वारा दिये गये दिशा निर्देशों के अनुसार आर्थिक विकास के लिये बनायी गई आर्थिक नीतियों को भी बढ़ावा दिया जा सके।1935 में जब भारतीय रिजर्व बैंक स्थापित किया गया था तब हमारा देश पिछड़ा हुआ था व वाणिज्यिक बैंकिंग प्रणाली भी अविकसित थी, किन्तु 1949 के बाद रिजर्व बैंक बहुत सक्रिय हो गया जिसके कारण वित्तीय संस्थानों का विकास हुआ। इतना ही नहीं भारतीय रिजर्व बैंक ने देश के आर्थिक विकास के लिये उपयुक्त ऋण व मौद्रिक नीतियों का भी अनुपालन कराया।

स्वतन्त्रता के पश्चात भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यो की सीमा भी बढ़ती चली गई। अब भारतीय रिजर्व बैंक विभिन्न प्रकार के विकास एवं प्रचार कार्य भी करता है जो कि एक समय पर केन्द्रीय बैंकिंग के दायरे से बाहर माना जाता था। भारतीय रिजर्व बैंक बैंकिंग, ग्रामीण व अर्द्धनगरीय क्षेत्रों में बैंकिंग की सुविधा का बढ़ावा देने के लिये कहा गया व IFCIव SFC को स्थापित करने के लिये बैंकों की मदद ली गई।निक्षेप बीमा निगम(1962),औद्योगिक विकास बैंक(1964), भारतीय यूनिट ट्रस्ट(1964), भारतीय कृषि पुनर्वित्त निगम(1963)और भारतीय औद्यागिक निर्माण निगम(1975) की स्थापना की गई। इन संस्थानों की स्थापना प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा की गई जिससे औद्योगिक व कृषि के क्षेत्र में वित्तीय आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति की जा सके। 1935 में भारतीय रिजर्व बैंक ने कृषि ऋण प्रदान करने के लिये कृषि साख विभाग को स्थापित किया। लेकिन 1951 के बाद से इस क्षेत्र में भारतीय रिजर्व बैंक की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई। भारतीय रिजर्व बैंक ने सहकारी ऋण आंदोलन को विकसित एवं प्रोत्साहित किया जिसका उददेश्य ग्रामीण क्षेत्रों से महाजनों को खत्म करना व कृषि के लिये

कम अवधि के ऋण उपलब्ध कराना था। किसानों कों लंबी अवधि के वित्त उपलब्ध कराने के लिये कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम की स्थापना भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा की गई। इन कार्यो के अलावा भारतीय रिजर्व बैंक विकास या संवर्धन को बढ़ावा देता है जो देश की बैंकिंग और वित्तीय संरचना को मजबूत करता है। इससे बचत व ऋण प्रवाह को निर्देशित करता है साथ ही साथ आर्थिक विकास के उददेश्य को प्राप्त करने में मदद करता है। वित्तीय प्रणाली को बड़ा आकार देने में इसने प्रमुख भूमिका निभाई है।परिवर्धक के रूप में भूमिका निभाते हुये,बैंक कुछ क्षेत्रों को रियायती दरों पर ऋण उपलब्ध कराता है। मुद्रा बाजार में भारतीय रिजर्व बैंक ने अपने संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों के एकीकरण के लिये लगातार कार्य किया है व कोशिश करता है कि स्वदेशी बैंकरों को बैंकिंग कारोबार की मुख्य धारा में लाया जा सके।मुद्रा बाजार में वित्त की गुणवत्ता को सुधारने के लिये दो विधेयक लाये गये, एक बाजार योजनाएं, 1952 एवं दूसरा 1970 में।बैंकिंग प्रणाली को बेहतर बनाने के लिये, कमजोर बैंकों का विलय मजबूत बैंकों के साथ किया गया और समामेलन कार्यक्रम का आयोजन किया गया। 1968 में जब बैंको पर सामाजिक नियन्त्रण स्थापित किया गया तब भारतीय रिजर्व बैंक ने देश के उद्देश्यों को प्रशासित करने की जिम्मेदारी निभायी बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकिंग प्रणाली को विकसित करने की जिम्मेदारी और बढ़ गई। भारतीय रिजर्व बैंक अग्रणी बैंक योजनाओं को प्रायोजित करने एवं लागू कराने में अग्रणी भूमिका निभाता है।बैंकों की शाखाओं के विस्तार के लिये विधायी प्राविधानों के द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा बैंकों की शाखाओं के भौगोलिक विस्तार में मदद की है।बैंकों में जमा रखे धन की सुरक्षा के लिये भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 1962 में निक्षेप बीमा निगम की स्थापना की गई। भारतीय रिजर्व बैंक ने कृषि क्षेत्र के लिये ऋण को बढ़ावा देने के लिये एक जमींदार की तरह भूमिका निभायी है।भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1937 के द्वारा इसे कृषि क्षेत्रों में ऋण सुविधायें देने के लिये की जिम्मेदारी दी गई है। भारतीय रिजर्व बैंक के इस कार्य का महत्व इसी बात से पता चलता है कि 1955 में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा ग्रामीण ऋण के लिये एक डिप्टी गवर्नर नियुक्त किया है एवं एक प्रारम्भिक आंकड़े एवं सूचना एक्त्र की है। भारत में कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विकास को गति देने के लियेपहली बार 1968 में अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण पुनरीक्षण समिति का गठन किया गया एवं ग्रामीण एवं कृषि विकास के लिय संस्थागत ऋण की व्यवस्था के पुनरीक्षण के लिये समिति का गठन 1978 में किया गया एवं इसके पश्चात 1986में कृषि ऋण पुनरीक्षण समिति का गठन किया गया। कृषि ऋण की आपूर्ति को बढ़ाने के अपने प्रयासों को बढ़ाने में लिये भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सहकारी बैंकिंग तंत्र को वित्तीय सहायता,पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण के द्वारा मजबूत करने का प्रयास किया गया है। यह सहकारी बैंकों को (राज्य सहकारी बैंकों के द्वारा) ऋतुपरक कृषि कार्यो एवं एवं कृषि उपज के विपणन के लिये

रियायती दर पर लघु अवधि के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह भूमि विकास बैंकों के डिबेन्चर को भी खरीदता है। यह राष्ट्रीय कृषि ऋण(दीर्घावधि परिचालन)निधि एवं राष्ट्रीय कृषि ऋण(स्थायीकरण) निधि का संचालन करता है, जिसके द्वारा यह सहकारी संस्थानों को दीर्घावधि एवं मध्यम अवधि की वित्तीय सहायता प्रदान करता है। कृषि क्षेत्र मेंदीर्घावधि एवं मध्यम अवधि की वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लिये जुलाई 1963 में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा राष्ट्रीय कृषि पुनर्वित्त निगम (अब नाबार्ड) की स्थापना की गई। इसके द्वारा कृषि वित्त निगम की स्थापना में भी सहायता की गई।

औद्यागिक क्षेत्र को वित्तीय सहायता प्रदान करने लिये संस्थागत ढ़ॉचे को विविधतापूर्ण बनाने भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा दिया गया योगदान भी सराहनीय है।उदाहरण के लिये भारतीय यूनिट ट्रस्ट मूल रूप से भारतीय रिजर्व बैंक का ही एक सहायक संस्थान था। भारतीय रिजर्व बैंक के प्रयासों के कारण ऐसे बहुत सारे संस्थान अस्तित्व में आये है जो वित्तीय एवं अन्य सेवाएं प्रदान करते हैं जैसे गारण्टी लेना,तकनीकी सहायता देना आदि। इन संस्थानों के द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिये,लघु उद्योगों के लिये, मध्यम एवं वृहद उद्योगों तथा निर्यात परक उद्योगों के लिये वित्तीय यहायता प्रदान करता रहा है।भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा कृषि लघु उद्योग निर्यात एवं बीमार ईकाइयों की सहायता के लिये गारंटी सेवाओं के विकास में सहायता की है।यह बीमार ईकाइयों के पुनर्वास एवं पुनरोत्थान के लिये बैंको,वित्तीय संस्थानों एवं सरकारी संस्थानों द्वारा किये गये प्रयासों कों समन्वयित करता है। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा बैंको एवं अन्य वित्तीय संस्थानों के मध्य ऋण वितरण हेतु संघ,सहकारिता एवं भागीदारी के दृष्टिकोण को विकसित किया गया है एवं इसी का अभ्यास भी किया जा रहा है।इस प्रकार अंतर संस्थानिक भागीदारी, विशेषज्ञता की पूलिंग एवं भौगोलिक उपस्थिति के कारण वित्तीय प्रणाली के ऋण वितरण एवं सेवा क्षमता के उन्नयन में सहायता प्रदान की है। उधारकर्ताओ द्वारा ऋण खातों के हस्तांतरण के सम्बन्ध में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 1977 में उचित दिशा निर्देश जारी किये गये जिससे परस्पर स्वीकार्य प्रणाली विकसित की जा सके एवं गला काट प्रतियोगिता से बच कर बैंकिंग व्यापार को एक स्वस्थ रूप में विकसित किया जा सके।

5.4सारांश

किसी भी देश की वित्तीय प्रणाली विशिष्ट एवं साधारण,संगठित एवं असंगठित वित्तीय बाजारों से मिलकर बनती है जो धन के हस्तांतरण की सुविधा देते हैं। एक वर्गीकरण के अनुसार वित्तीय संस्थानों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है बैंकिंग संस्थान एवं गैर बैंकिंग संस्थान। बैंकिंग संस्थान अर्थव्यवस्था की

भुगतान प्रणाली में हिस्सेदार होते हैं अर्थात वे अन्तरण की सुविधा देते हैं इनके जमा धन एवं देनदारियॉ राष्ट्रीय मुद्रा आपूर्ति का एक वृहद भाग हैं। बैंक विधिक आवश्यकताओं के अधीन अपने विरूद्व दावों के द्वारा ऋण अग्रिम कर सकते हैं। इस प्रकार बैंक ऋणों के निर्माता हैं।

किसी देश के मौद्रिक एवं बैंकिंग तत्र में केन्द्रीय बैंक का एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है।भारतीय रिजर्व बैंक हमारे देश का केन्द्रीय बैंक है। रिजर्व बैंक केन्द्रीय बैंक के सारे कर्त्तव्यों जैसे मुद्रा निर्गमित करना,राजकीय बैंकर की तरह कार्य करना,राष्ट्र में बैंकिंग तंत्र का विनियमन,विदंशी मुद्रा नियन्त्रण एवं ऋण नियन्त्रण आदि कार्य करता है।यह सरकार को मौद्रिक नीति के विकास पर सलाह देता है।देश के आर्थिक विकास के लिये व्यापार,परिवहन,कृषि एवं लघु उद्योग आदि की वित्तीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने के साथ निर्धनता,क्षेत्रीय असमानताओं,एवं बेराजगारी को मिटाने का कार्य भी करता हैं। इस प्रकारसंक्षेप में यह बैंकिंग एवं विकास दोनों का कार्य करता है

<u>भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यो का प्रबन्धन केन्द्रीय निदेशक बोर्ड द्वारा किया जाता है। केन्द्रीय निदेशक बोर्ड में निम्न व्यक्ति होते हैं:—</u>

1. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 की धारा 8(1)(a) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा एक गवर्नर एवं अधिक से अधिक चार डिप्टी गवर्नर की नियुक्ति की जाती है।
2. धारा 8(1)(b) के अन्तर्गत प्रत्येक स्थानीय बोर्ड से चार निदेशकों (प्रत्येक में से एक) को नामित किया जाता है ।
3. धारा 8(1)(c) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा दस निदेशकों को नामित किया जाता है।
4. धारा 8(1)(d) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा एक सरकारी अधिकारीं को नामित किया जाता है ।

रिजर्व बैंक के मुख्य कार्य निम्न प्रकार हैं—

<u>(1) पत्र मुद्रा (करेन्सी नोट) जारी करना</u> :—रिजर्व बैंक को देश की करेन्सी जारी करने का एकाधिकार प्राप्त है। एक रूपये के नोट को छोड़कर सभी करेन्सी नोट जारी करने का अधिकार मात्र भारतीय रिजर्व बैंक के पास है।एक रूपये का करेन्सी नोट सरकार के वित मंत्रालय द्वारा जारी किया जाता है।

<u>(2)सरकार के लिये बैंकरः—</u>रिजर्व बेंक भारत सरकार के लिये बैंकर, एजेंट एवं सलाहकार का कार्य निम्न प्रकार से करता है

(क) सरकारी जमा को रखना एवं संचालित करना

(ख) सरकारी धन को प्राप्त एवं भुगतान करना

(ग) नये ऋण व सार्वजनिक ऋण के प्रबन्धन में सरकार की मदद करना

(घ) केन्द्र सरकार द्वारा जारी 90 दिनों की अवधि के ट्रेजरी बिलों को बेचना।

(ड) केन्द्र एवं राज्य सरकारों को संसाधन जुटाने के लिये ऐसे अग्रिम प्रदान करना जिनकी अवधि तीन माह से अधिक न हो।

(च) पंचवर्षीय योजनाओ को लागू करने के लिये सरकार को विकास निधि उपलब्ध कराना

(छ)केन्द्र सरकार की ओर से विदेशी मुद्रा का लेन देन करना।

(ज) यह अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष,विश्व बैंक एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों के साथ लेन–देन के लिये भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है।

(झ) वित्तीय मामलों जैसे ऋण प्रक्रियाओं, निवेश,कृषि एवं औद्योगिक ऋण, योजना,एवं आर्थिक विकास पर सरकार को सलाह देता है।

(3)**मुद्रा भण्डार अभिरक्षकः**–रिजर्व बैंक भारत की विदेशी मुद्रा के भण्डार का संरक्षक है।यह रूपये के वाहय मूल्य में स्थिरता बनाने , सरकार द्वारा लगाये गये विनिमय नियन्त्रण एवं अन्य निषिद्वियों को लागू कराने एवं विदेशी मुद्रा के भण्डार के प्रबन्धन का कार्य करता है।

(4)**ऋण नियन्त्रकः**–राष्ट्र के केन्द्रीय बैंक के रूप में आंतरिक मूल्य की स्थिरता को बनाये रखने के लिये एवे आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिये रिजर्व बैंक ऋण पर नियन्त्रण की जिम्मेदारी उठाती है।

(5)**साधारण बैंकिंग कार्यः**–रिजर्व बैंक साधारण बैंकिंग का कार्य भी निम्न प्रकार से करता है

(क)केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों यहॉ तक साधारण व्यक्तियों का जमा राशियॉ भी बिना ब्याज के स्वीकार करना।

(ख)अनुसूचित बैंकों के विनिमय देयकों एवं वचन पत्रों को खरीदने,बेचने एवं उन पर रियायत देने का कार्य बिना किसा रोक के करना ।

(ग)केन्द्र सरकार,राज्य सरकारों, स्थानीय निकाय, अनुसूचित बैंकों, राजकीय सहकारी बैंकों को ऐसे ऋण एवं अग्रिम देने का कार्य करना जिनकी वापसी 90 दिनों में करनी होती है।

(घ)भारत सरकार एवं विदेशी प्रतिभूतियों की खरीद एवं बिक्री करना ।

(ड)न्यूनतम एक लाख रूपये का विदेशी मुद्रा को अनुसूचित बैंकों से खरीदना एवं उनको बेचना।

(च)अनुसूचित बैंकों एवं विदेशी बैंकों से ऋण लेना।

(छ)विश्व बैंक या किसी अन्य विदेशी बैंक में खाता खोलना

(ज)बहुमूल्य वस्तुओं एवं प्रतिभूतियों को सुरक्षित रखने के लिये स्वीकार करना।

(झ) सोने एवं चॉदी को खरीदना एवं बेचना

भारतीय रिजर्व बैंक ने कृषि क्षेत्र के लिये ऋण को बढ़ावा देने के लिये एक जमींदार की तरह भूमिका निभायी है।भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1937 के द्वारा

इसे कृषि क्षेत्रों में ऋण सुविधायें देने के लिये की जिम्मेदारी दी गई है। भारतीय रिजर्व बैंक के इस कार्य का महत्व इसी बात से पता चलता है कि 1955 में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा ग्रामीण ऋण के लिये एक डिप्टी गवर्नर नियुक्त किया है एवं एक प्रारम्भिक आंकड़े एवं सूचना एक्त्र की है। भारत में कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विकास को गति देने के लिये पहली बार 1968 में अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण पुनरीक्षण समिति का गठन किया गया एवं ग्रामीण एवं कृषि विकास के लिए संस्थागत ऋण की व्यवस्था के पुनरीक्षण के लिये समिति का गठन 1978 में किया गया एवं इसके पश्चात 1986में कृषि ऋण पुनरीक्षण समिति का गठन किया गया।

कृषि ऋण की आपूर्ति को बढ़ाने के अपने प्रयासों को बढ़ाने में लिये भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सहकारी बैंकिंग तंत्र को वित्तीय सहायता,पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण के द्वारा मजबूत करने का प्रयास किया गया है। यह सहकारी बैंकों को (राज्य सहकारी बैंकों के द्वारा) ऋतुपरक कृषि कार्यो एवं एवं कृषि उपज के विपणन के लिये रियायती दर पर लघु अवधि के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह भूमि विकास बैंकों के डिबेन्चर को भी खरीदता है। यह राष्ट्रीय कृषि ऋण(दीर्घावधि परिचालन)निधि एवं राष्ट्रीय कृषि ऋण(स्थायीकरण) निधि का संचालन करता है, जिसके द्वारा यह सहकारी संस्थानों को दीर्घावधि एवं मध्यम अवधि की वित्तीय सहायता प्रदान करता है। कृषि क्षेत्र में दीर्घावधि एवं मध्यम अवधि की वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लिये जुलाई 1963 में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा राष्ट्रीय कृषि पुनर्वित्त निगम (अब नाबार्ड) की स्थापना की गई। इसके द्वारा कृषि वित्त निगम की स्थापना में भी सहायता की गई। औद्यागिक क्षेत्र को वित्तीय सहायता प्रदान करने लिये संस्थागत ढ़ॉचे को विविधतापूर्ण बनाने भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा दिया गया योगदान भी सराहनीय है।उदाहरण के लिये भारतीय यूनिट ट्रस्ट मूल रूप से भारतीय रिजर्व बैंक का ही एक सहायक संस्थान था। भारतीय रिजर्व बैंक के प्रयासों के कारण ऐसे बहुत सारे संस्थान अस्तित्व में आये है जो वित्तीय एवं अन्य सेवाये प्रदान करते हैं जैसे गारण्टी लेना,तकनीकी सहायता देना आदि। इन संस्थानों के द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिये,लघु उद्योगों के लिये, मध्यम एवं वृहद उद्योगों तथा निर्यात परक उद्योगों के लिये वित्तीय यहायता प्रदान करता रहा है।भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा कृषि लघु उद्योग निर्यात एवं बीमार इकाइयों की सहायता के लिये गारंटी सेवाओं के विकास में सहायता की है।यह बीमार इकाइयों के पुनर्वास एवं पुनरोत्थान के लिये बैंको,वित्तीय संस्थानों एवं सरकारी संस्थानों द्वारा किये गये प्रयासों कों समन्वयित करता है।

5.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

केन्द्रीय बैंक – देश का प्रमुख बैंक। (मुद्रा निर्गमित करना, राजकीय बैंकर की तरह कार्य करना, राष्ट्र में बैंकिंग तंत्र का विनियमन, विदंशी मुद्रा नियन्त्रण एवं ऋण नियन्त्रण, सरकार को मौद्रिक नीति के विकास पर सलाह देना आदि ।)

समाशोधन गृह– जहॉ अंतर बैंकीय दायित्वों का निपटारा किया जाता है।

5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ एवं सहायक उपयोगी साम्रग्री

1. मर्केन्टाइल विधि के सिद्वान्त –अवतार सिंह छठा संस्करण 1996
2. बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– पी0एन0वार्षनेय
3. भारत में बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– तन्नान
4. पेजेट्स बैंकिंग विधि आठवा संस्करण
5. चुतुर्वेदी,ममता., आधुनिक बैंकिग विधि, सेन्ट्रल लॉ पबिलकेशन

5.7निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय रिजर्व बैंक के संगठनात्मक ढ़ाचे पर भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 के विधायी प्रावधानों पर चर्चा करिये।
2. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 के कार्यो पर विस्तारपूर्वक चर्चा करिये।
3. भारतीय रिजर्व बैंक केसंगठन एवं कार्यप्रणाली पर एक लेख लिखिए।
4. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 में वर्णीत भारतीय रिजर्व बैंक के केप्द्रीय बैंकिंग कार्यो एवे संवर्धक कार्यों का विस्तारपूर्वक वर्णन करिये।

एलएल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–2. केन्द्रीय बैंक (The Central Bank)

इकाई –6. भारतीय रिजर्व बैंक के कार्य(Functions of the RBI)

इकाई की संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3. भारतीय रिजर्व बैंक (कार्य)

6.3.1 भारतीय रिजर्व बैंक एवं वाणिज्यिक बैंकों के मध्य सम्बन्ध

6.4 सारांश

6.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

6.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक पाठ्य सामग्री

6.7 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

एक केन्द्रीय बैंक के रूप में '' भारतीय रिजर्व बैंक'' पारम्परिक कार्यों के साथ विविध प्रकार के विकास एवं प्रचार के कार्य भी करता है। भारतीय रिजर्व बैंक, अधिनियम 1934, के अनुसार यह विविध कार्य करता है जैसे नोट जारी करने वाला प्राधिकारी, सरकार का बैंकर, बैंको का बैंकर, इत्यादि। हमारे देश की मुद्रा में एक रूपये के नोट व सिक्के (सहायक सिक्के सहित) आते है जिन्हे भारत सरकार जारी करती है व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 38 के अनुसर, एक रूपये के सिक्के व नोटो का प्रसार सरकार केवल भारतीय रिजर्व बैंक के माध्यम से करती है। नोट जारी करने का एकाधिकार रिजर्व बैंक को प्राप्त है। भारतीय रिजर्व बैंक नोट एवं सरकार एक रूपये के नोट व सिक्के जारी करती है जिसकी असीमित कानूनी निविदा सरकार द्वारा की जाती है। जनता की आवश्यकता के अनुसार बैंक नोट को बदलने व सिक्को को अन्य मूल्यवर्ग में बदलना भारतीय रिजर्व बैंक की जिम्मेदारी है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्वेश्य भारतीय रिजर्व बैंक के व्यापक कार्यो का विश्लेषण किया जाना है। साथ ही रिजर्व बैंक व वाणिज्यिक बैंक के बीच के संबंधों का विश्लेषण भी किया गया है।

6.3.1 भारतीय रिजर्व बैंक के कार्य

1–हमारे देश की मुद्रा में सम्मिलित एक रूपये के नोट व सिक्के (सहायक सिक्के सहित) आते है जिन्हे भारत सरकार जारी करती है व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 38 के अनुसार, एक रूपये के सिक्के व नोटो का प्रसार केवल भारतीय रिजर्व बैंक के माध्यम से होता है। नोट जारी करने का एकाधिकार रिजर्व बैंक को प्राप्त है। भारतीय रिजर्व बैंक नोट व सरकार एक रूपये के नोट व सिक्के जारी करता है जिसकी असीमित कानूनी निविदा की जाती है। जनता की आवश्यकता के अनुसार बैंक नोट को बदलने व सिक्को को अन्य मूल्यवर्ग में बदलना भारतीय रिजर्व बैंक की जिम्मेदारी है।

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के अनुसार नोटो को जारी करना और बैंक के सामान्य बैंकिंग कारोबार को दो अलग–अलग विभागों द्वारा किया जाता है। निर्गम विभाग की जिम्मेदारी नये नोटो को जारी करने की है। नये नोट जारी करने के लिए विभाग अपनी सम्पत्ति रखता है जो कि बैंकिग विभाग की संपत्ति से अलग

होती है। कारोबार बैंकिंग विभाग के अर्न्तगत आता है जो अपने पास मुद्रा का भण्डार रखती है। जरूरत पड़ने पर बैंक विभाग मुद्रा का भण्डार रखती है। जरूरत पड़ने पर , बैंक विभाग मुद्रा का भण्डार उपलब्ध कराता है, निर्गम विभाग से जिसके लिए समान मूल्य की आस्तियां का अन्तरण किया जाता है। इसी तरह से बैंकिग विभाग के पास मुद्रा का भण्डार यदि जरूरत से ज्यादा है तो निर्गत विभाग अतिरिक्त मुद्रा को समान मूल्य की आस्तियों से बदल लेता है। निर्गम विभाग की सम्पत्ति जिसके विरूद्ध नोट जारी किये जा सकते है, वह निम्नलिखित हैः–

अ–सोने के सिक्के और बहुमूल्य धातुऐं।

ब–विदेशी प्रतिभूतियॉ।

स–रूपये के सिक्के।

द–भारत सरकार की रूपया प्रतिभूतियां।

य–विनियमन के बिल व वचनपत्र भारत में देय हो जो कि बैंक द्वारा खरीदे जा सके।

भारतीय रिजर्व बैंक संशोधन अधिनियम, 1957 के अनुसार, बैंक अब रू 200 करोड़ सोने के सिक्को के लायक स्वर्ण बुलियन और विदेशी प्रतिभूतियों की जो सोने का सिक्का और बुलियन के मूल्य रू 115 करोड़ से कम नही होना चाहिए की एक न्यूनतम आरक्षित बनाये रखना चाहिए। रिजर्व बैंक सशक्त है केन्द्रीय सरकार की पूर्व मंजूरी से निर्गत विभाग द्वारा जमा की हुई विदेशी प्रतिभूतियों को कम कर सकता है।

करेंसी चेस्ट

मुद्रा नोटो और सिक्को के वितरण का कार्य रिजर्व बैंक द्वारा प्रशासित किया जाता है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये निर्गम विभाग द्वारा 10 बड़े शहरो में इसका कार्यालय खोला गया। करेंसी चेस्ट (अर्थात बाक्स या कंटेनर) है जिसमें नये या पुनःजारी सिक्के , रूपये के सिक्को के साथ जमा करता है। भारतीय रिजर्व बैंक, भारतीय स्टेट बैंक, भारतीय स्टेट बैंक के साहयक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको, सरकारी भण्डारों व उप भण्डारो के द्वारा करेंसी चेस्टों व कोषों का प्रबन्धन किया जाता है। नये नोटो का भण्डार देश भर में फैले हुये करेंसी चेस्ट में रखे जाते है जो अधिकांश मामलों में सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंको द्वारा संचालित किये जाते है। करेंसी चेस्ट को बनाये रखने में बैंक व सरकारी भण्डार (कोषागार) के कई लाभ है जो कि निम्नलिखित है :–

अ–यदि किसी दिन बैलेंस से अधिक भुगतान हो जाये, तो तुरन्त ही चेस्ट से धन निकाल लिया जाता है। इसी तरह अगर फंड जरूरत से ज्यादा अधिक हो तो, धन को तुरन्त ही जमा कर दिया जाता है। ऐसा करने से धन के भौतिक हस्तान्तरण से बचा जा सकता है। भण्डार व बैंक की शाखायें सापेक्षतयाः कम अन्तः शेष के साथ काम करते है।

ब–करेंसी चेस्ट रूपये व सिक्कों को नोटो से बदलने की सुविधा देती है और छोटे मूल्यवर्ग के नोटो की जगह बड़े मूल्यवर्ग के नोटो की आपूर्ति व निकासी का कार्य करती है साथ ही साथ पुराने व फटे हुये नोटो को बदल कर नये नोट निर्गत करती है।

स–करेंसी चेस्ट जनता व बैंको को प्रेषण सुविधा भी प्रदान करती है।

सरकार के बैंकर के रूप में रिजर्व बैंक

केन्द्रीय व राज्य सरकारों के लिये भारतीय रिजर्व बैंक बैंकर के रूप में कार्य करता है। धारा 20 के अनुसार, सरकारी लेनदेन करना एवं सार्वजनिक क्षेत्र के ऋण का प्रबन्धन करना भारतीय रिजर्व बैंक के लिये अनिवार्य है। धारा 21 के द्वारा केन्द्र सरकार को बाध्य किया गया है कि अपने समस्त नकद धन को एवं ब्याज मुक्त जमा राशियों को एवं धन, धन के प्रेषण, धन के अन्तरण एवं बैंकिंग लेन देन को वह बैंको को सौंप दे और विशेष रूप से धारा 21 ए के अनुसार भारतीय रिजर्व बैंक, केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारो की तरफ से भी उक्त सभी कार्य करता है। भारतीय रिजर्व बैंक ने इन कार्यो को करने के लिए केन्द्र व राज्य सरकारो के साथ अनुबन्ध किया है। सरकार के साधारण बैंकिंग व्यवसाय को करने के लिये बैंको को किसी प्रकार की पारिश्रमिक नही दी जायेगी। यह सरकार की नकदी ब्याजमुक्त रखती है। सार्वजनिक ऋण के प्रबंधन के लिए बैंक कमीशन प्राप्त करता है। सरकार द्वारा घोषित किये गये स्थानो पर निर्गम विभाग के करेंसी चेस्ट का अनुरक्षण करना और साथ ही साथ पर्याप्त नोट व सिक्के बनाये रखना भी भारतीय स्टेट की जिम्मेदारी है। धारा 45 के अनुसार, रिजर्व बैक के लिए अनिवार्य है कि वह अपने एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में भारतीय स्टेट बैंक की नियुक्ति सभी स्थानों पर करता है जहां भारतीय रिजर्व बैंक की कोई शाखा या कार्यालय नही है लकिन वहॉ स्टेट बैंक या उसके सहायक बैंक की शाखा हो। स्टेट बैंक ने अपने सहायक बैको के साथ अभिकरण व्यवस्था के लिये अनुबन्ध स्थापित किया है। एजेंसी और उप एजेंसी बैंको के द्वारा सरकार के सामान्य बैंकिग व्यापार का परिचालन करते हैं और उसी के लिए कमीशन प्राप्त करते है। रिजर्व बैंक केन्द्र व राज्य सरकारो को ऐसे माध्यम एवं प्रकीर्ण अग्रिम देने के लिये अधिकृत है जो कि अग्रिम प्रदान करने की तारीख से 3 महीने के भीतर वापसी योग्य हो। भारतीय रिजर्व बैंक महत्वपूर्ण आर्थिक और वित्तीय मामलो में सरकार के वित्तीय सलाहकार के रूप में भी कार्य करता है।

बैंकर्स बैंक के रूप में रिजर्व बैंक

भारतीय रिजर्व बैंक सभी वाणिज्यिक बैंको, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको और सहकारी के लिये एक बैंकर के रूप में कार्य करता है। इसका संबंध तभी स्थापित हो जाता है जैसे ही बैंक का नाम भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 की दूसरी अनुसूची में शामिल हो जाता है। ऐसे बैको को अनुसूचित बैंक कहा जाता है जो रिजर्व बैक से

पुनर्वित्त की सुविधा का लाभ उठा सकते है। 1935 में भारतीय रिजर्व बैंक के उदघाटन के समय वाणिज्यिक बैको का वर्गीकरण अनुसूचित व गैर अनूसूचित में किया गया । इसका उद्वेश्य रिजर्व बैक और वाणिज्यिक बैंक के बीच में सुदृढ़ वित्तीय सम्बन्ध स्थापित करना था। इस प्रकार इस अधिनियम के अर्न्तगत बैको को अनुसूचित बैको की सूची में शामिल करने के लिय कुछ शर्ते रखी गयीं । 1966 से राज्य सहकारी बैंको को भी अधिनियम के दूसरी अनूसूची में शामिल कर लिया गया है। 1975 से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की स्थापना अनुसूचित बैंको में की गयी। सार्वजनिक क्षेत्रों के बैको (स्टेट बैंक समूह सहित) को केन्द्र सरकार द्वारा अनुसूचित बैको के अंतर्गत अधिसूचित किया गया है केन्द्र सरकार के द्वारा अनुसूचित बैको की श्रेणी के अर्न्तगत सम्मिलित हैं–

(I) वाणिज्यिक बैंक–भारतीय और विदेशी

(II) राज्य सहकारी बैंक और

(III) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ।

अनुसूचित बैंक का मतलब है वह बैक जो भारतीय रिजर्व बैक अधिनियम 1934 की दूसरी अनुसूची के अर्न्तगत आते है। रिजर्व बैक दूसरी अनुसूची में उन बैको का नाम शामिल करनें के लिये सशक्त है जो भारत में बैंकिंग व्यापार का संचालन करते हो और धारा 42(6) में निर्धारित निम्नलिखित शर्तो को सन्तुष्ट करता हो :–

(I)चुकता पूंजी और भण्डार कुल मूल्य के 5 लाख से कम नही होना चाहिए ।

(II)इसे रिजर्व बैक को संतुष्ट करना होगा कि यह अपनी कार्यवाहियों को तरीके से अंजाम नहीं देगा जिससे जमाकर्ताओं के हितों को हानि पहुंचे।

(III) यह

(अ)एक राज्य सहकारी बैक;

(ब)कम्पनी अधिनियम 1956 के अर्न्तगत कंपनी के रूप में परिभाषित;

(स)केन्द्रिय सरकार द्वारा इस निमित्त अधिसूचित एक संस्था, या

(द)भारत से बाहर किसी भी जगह पर लागू कानून के तहत निगमित निगम या कम्पनी होनी चाहिए। दूसरी अनुसूची में बैंक का नाम शामिल करने से पहले, रिजर्व बैंक की संतुष्टि के लिये बैंक को निम्नलिखित दो शर्तो को पूरा करना होगा

(I)चुकता पूंजी और भण्डार की न्यूनतम मूल्य :–

अधिनियम के अनुसार बैंक के पास चुकता पूंजी और भण्डार का कुल मूल्य 5 लाख से कम नही होना चाहिए। इस उददेश्य के लिये मुल्य का अर्थ है वास्तविक या विनिमय मूल्य न कि अंकित मूल्य जो कि बैंक की पुस्तकों में दिखाया गया है। चुकता पूंजी और भण्डार के वास्तविक मूल्य को खोजने के लिए शेयर धारको की पूंजी (मुक्त भण्डार सहित) का अनुमान लगाया जाता है और बाहरी देनदारियो की राशि को घटाया जाता है। प्रत्येक परिसम्पत्ति का निरीक्षण एवं परिवीक्षण या छानबीन की जाती है ताकि वर्तमान मूल्य मिल सके। अगर बैंक की कुल

परिसम्पत्ति के मूल्य से बाहरी देनदारियों को घटा करके 5 लाख के बराबर या उससे अधिक आता है तभी बैंक को दूसरी अनुसूची मे शामिल किया जा सकता है। यदि कोई विवाद बैंक की कुल परिसम्पत्ति के अनुमानित मूल्य या भण्डार के मूल्य पर उठता है तो रिजर्व बैंक द्वारा मूल्य निर्धारण अंतिम होगा।

(ब)जमाकर्ताओ का हित :—

रिजर्व बैंक संतुष्ट होना चाहिये कि बैंक जमाकर्ताओं के हितो ंके विरूद्व किसी भी प्रकार का कार्य नहीं करेगा। बैंक के काम करने के सभी पहलुओं की पूरी तरह विस्तृत जॉच की आवश्यकता होती है और अंततः जमाकर्ताओं के हितो ं के लिये रिजर्व बैंक, बैंक के विभिन्न पहलुओं पर जैसे प्रबंधन की गुणवत्ता, निवेश एवं अग्रिमों की सुरक्षा वित्तीय सुदुढता आदि के संबंध में अपनी राय रखती है।

रिजर्व बैंक किसी भी बैंक के नाम को दूसरी अनुसूची से बाहर निकालने के लिये अधिकृत है यदि बैंक द्वारा उपर्युक्त शर्तो को पूरा नही किया जाये या बैंक के व्यापार का परिसमापन हो जाये या ऐसा देखा जा रहा है कि बैंक अपने बैंकिंग व्यापार को चला पाने में अक्षम है। फिर भी रिजर्व बैक उन अनुसूचित बैंको को चुकता पूंजी के मूल्य में वृद्वि करने एवं अपने व्यापार प्रणाली की कमियो को दूर करने के लिये एक अवसर दे सकता हैं।बैंको को अनुसूचित बैंक का दर्जा प्राप्त करने पर विशेषाधिकार प्रदान किये जाते हैं उदाहरण के लिये रिजर्व बैंक से लाभ उठाने के लिये पात्र हो जाते है। दूसरी तरफ अनुसूचित बैंकों के लिये रिजर्व बैक के साथ वैधानिक भण्डार बनाये रखने का दायित्व भी हो जाता है।

6.3.2 रिजर्व बैक और वाणिज्यिक बैंको के बीच सम्बंध

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 और बैंकिग विनियमन अधिनियम, 1949 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के आधार पर भारतीय रिजर्व बैक और अनुसूचित वाणिज्यिक बैको के बीच बहुत करीब और विविध प्रकृति का सम्बंध होता है।

बैंकों का पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण करने के प्राधिकारी के रूप में

बैंकिग विनियमन अधिनियम 1948 भारतीय रिजर्व बैक को बैंकिग कम्पनियों पर पर्यवेक्षण व नियंत्रण करने के लिये व्यापक अधिकार प्रदान करता है जो निम्नलिखित हैः—

(I)बैंकिंग कम्पनियों को लाईसेंस

धारा 22 के अनुसार भारत में बैकिंग कारोबार करने के लिये हर कम्पनी को भारतीय रिजर्व बैक से लाइसेंस प्राप्त करने की जरूरत है। इसके लिये रिजर्व बैक को बैंकिंग कम्पनियो की किताबों का निरीक्षण करने का अधिकार प्राप्त है और अगर वह संतुष्ट है तो लाइसेंस जारी कर सकती है, निम्नलिखित शर्तो पर :—

(।)कम्पनी वर्तमान या भविष्य में ऐसी परिस्थिति में हो कि वह वर्तमान या भविष्य जमाकर्ताओं के दावों को पूरी तरह अर्जित कर सके।

(।।)अपने वर्तमान या भविष्य जमाकर्ताओं के हितों के लिये हानिकारक तरीके में कार्य करने की कम्पनी को कोई सम्भावना न हो।

(।।।)कम्पनी के प्रस्तावित प्रबंधन का सामान्य चरित्र जनता के हित में या जमाकर्ताओं के हित में हानिकारक नही होगा।

(IV)कंपनी के लिये पर्याप्त पूंजी संरचना और कमाई की संभावनाएं हो।

(V)भारत में बैंकिग व्यापार करने के लिये कम्पनी को लाइसेंस जारी किया जाये जो कि सार्वजनिक हित में हो।

(VI)यह कि बैंकिंग कम्पनी को लाइसेस दिया जाना बैंकिंग तंत्र के संचालन एवं समग्रता के विरूद्व नहीं होगा।

इस प्रकार कम्पनी को लाइसेंस देने के लिये संतोषजनक वित्तीय स्थिति होनी चाहिए। विदेशी बैंक के मामले में रिजर्व बैक को संतुष्ट करने हेतु निम्नलिखित तथ्य पूर्ण होने चाहिये –

(अ) भारत में ऐसे बैको द्वारा बैंकिग व्यापार करने के लिये जनता के हित को ध्यान में रखा जाना चाहिये ।

(ब)जिस सरकार या राष्ट्र के विधान के अन्तर्गत इसका गठन किया गया हो वह भारतीय बैंकिंग कम्पनियों के साथ कोई भेदभाव न रखती हों।

(स)कम्पनी ऐसी सभी कम्पनियों के लिये लागू कम्पनी अधिनियम के सभी प्रावधानों का अनुपालन करती हों।

रिजर्व बैंक किसी भी बैंकिंग कम्पनी के लाइसेंस को रद्द करने के लिये एवं शाखाओं को खोलने के लिये अनुमति देने हेतु सशक्त है । धारा 23 के अनुसार भारत में नयी जगह पर व्यापार करना या वर्तमान स्थान को भारत के अन्दर या बाहर बदलने के लिये सभी बैकिंग कम्पनी को रिजर्व बैक की पूर्व अनुमति लेने की आवश्यकता है। रिजर्व बैक किसी भी बैंकिंग कम्पनी को लाइसेंस देने से पूर्व यह ध्यान रखती है कि बैंक की वित्तीय स्थिति, इतिहास , प्रबंधन का सामान्य चरित्र और पूंजी संरचना में पर्याप्तता और कमाई की संभावनाये और यह तथ्य कि क्या अनुमति देने से पहले सार्वजनिक हित में कार्य किया गया है या नही।

<u>बैंकिग कम्पनियों का निरीक्षण करने की शक्ति</u>

धारा 35 के तहत, रिजर्व बैंक या तो खुद से पहल करके या केन्द्रीय सरकार के कहने पर किसी भी बैकिंग कम्पनी व उसकी पुस्तको व खातों का भी निरीक्षण कर सकता है। यदि रिजर्व बैंक की निरीक्षण आख्या पर केन्द्र सरकार यह विचार करती है कि कम्पनी की कार्यप्रणाली उसके जमाकर्ताओं के हितों के विपरीत है,तब यह कम्पनी को नई जमाराशियों को लेने से निषिद्व कर सकती है या रिजर्व बैंक को कम्पनी का व्यापार समेटने के लिये लिखित रूप में निर्देशित कर सकती है।

निर्देश देने की शक्ति :–

धारा 35 ए रिजर्व बैंक को निर्देश देने की शक्तियॉ प्रदान करता है जिसके अनुसार बैंकिंग कम्पनी या कम्पनियॉ जनता के हित में या बैंकिंग नीतियों के हित में ही कार्य करें एवं भारतीय रिजर्व बैंक बैंकिंग कम्पनियों को जमाकर्ताओं के हितो के विरूद्व कार्य करने से रोकने या बैकिंग कम्पनी के हित के विपरीत कार्य करने से रोकने के लिये निर्देशित कर सकती है तथा बैंकिंग कम्पनी को सुनिश्चित ढंग से प्रबंधन करने के लिये भी निर्देशित कर सकती है। धारा 36 रिजर्व बैंक को शक्ति देता है कि वह बैकिंग कम्पनियों को किसी भी प्रकार के विशेष लेन–देन में प्रवेश करने पर चेतावनी दे सकती है या निषेध कर सकती है और सामान्यतः किसी भी बैंकिंग कम्पनी को सलाह दे सकता है। यह बैंको को सुचारू रूप से कार्य करने के लिये निर्देश देने का आदेश भी पारित कर सकता है।

शीर्ष प्रबंधन पर नियंत्रण :–

भारतीय रिजर्ब बैंक को बैंको के शीर्ष प्रबंधन पर सम्पूर्ण नियंत्रण रखने के लिये व्यापक शक्तियां प्राप्त है। बैंकिंग कम्पनी के अध्यक्ष, प्रबंध निदेशक, प्रबंधक या मुख्य कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति या पुनर्नियुक्ति या नियुक्ति के समापन के सम्बंध में रिजर्व बैक से पूर्व अनुमोदन लेना आवश्यक है। धारा 36 ए भारतीय रिजर्व बैंक को शक्ति प्रदान करता है कि वह किसी भी बैंक के कार्यालय से अध्यक्ष , निदेशक, मुख्य कार्यकारी अधिकारी या अन्य अधिकारी या बैक के कर्मचारी को आवश्यक या अवॉछनीय समझने पर हटा सकता है। एवं उस हटाये हुये व्यक्ति के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है। रिजर्व बैक बैंकिग नीति के हित में या सार्वजनिक हित में या बैंक और उसके जमाकर्ताओं के हित में आवश्यक समझे तो बैको के निदेशक मंडल में एक या अधिक अतिरिक्त निदेशक को नियुक्त कर सकता है,।

क्रेडिट के नियंत्रक के रूप मे :–

भारतीय रिजर्व बैक निम्न तरीको से वाणिज्यिक बैको द्वारा प्रदान क्रेडिट पर नियंत्रण रखता है :–

तरल सम्पत्ति के रखरखाव से संबंधित वैधानिक आवश्यकताओं को बदल कर क्रेडिट पर नियंत्रण रखता है । बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 24 के अनुसार, हर बैकिंग कम्पनी के लिये आवश्यक है कि वह भारत में नकद, सोना या भार रहित अनुमोदित प्रतिभूतियों को कारोबार के किसी भी दिन, 25 प्रतिशत की शुद्व मांग व समय देनदारियो से कम न हो। इसे वैधानिक चलनिधि अनुपात (एस0एल0आर0) कहा जाता है। रिजर्व बैक इसे 40 प्रतिशत तक बढाने के लिये सशक्त है । सांविधिक तरलता अनुपात को बढाकर , रिजर्व बैक अन्य बैंको को तरल सम्पत्ति के जमा देनदारियों के एक बडे अनुपात को विशेष रूप से सरकारी व अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में बनाये रखने के लिये मजबूर करता है, जिससे इस

प्रकार बैको के ऋण सक्षम संसाधनो को तदनुसार कम किया जा सके। वर्तमान में सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैको को 30 सितम्बर 1994 को बकाया जमा देनदारियों पर 31.8% दर से एवं इस तारीख के बाद जमा की गई धनराशियों पर 25 प्रतिशत की दर से एस0एल0आर0 बनाये रखना आवश्यक है जो कि वृद्विशील है। बैंकिग विनियमन अधिनियम, 1948 की धारा 21 के अन्तर्गत भारतीय रिजर्व बैंक बैकिंग कम्पनियों को निर्देश जारी करने के लिये सशक्त किया गया है एवं निर्देश जारी करता है कि रिजर्व बैंक सशक्त है कि उनके द्वारा पालन किये गये अग्रिम के सम्बंध में नीति का निर्धारण करें। इन निर्देशों निम्न से संबंधित हो सकते हैं–

(I)अग्रिम बनाने या न बनाये जाने का उद्वेश्य।

(II)सुरक्षित अग्रिम के सम्बंध में मार्जिन बनाये रखना।

(III)किसी भी उधारकर्ता को दी गयी अग्रिम की अधिकतम राशि ।

(IV)बैंकिग कम्पनी द्वारा किसी भी फर्म, कम्पनी इत्यादि के द्वारा ली गयी अधिकतम राशि की गारंटी, और

(V)अग्रिम देने के लिये ब्याज दर और अन्य शर्ते।

रिजर्ब बैंक ने अपने में निहित शक्तियों का काफी व्यापक प्रयोग किया है। बढ़ती कीमतों और अटकलो की जॉच करने के इरादे से निर्देश जारी करता है।

बैको के लिये बैंकर के रूप में:–

बैको के लिये बैकर के रूप में, रिजर्व बैक ऋणदाता के रूप में कार्य करता है और निम्न रूपों में अनुसूचित बैको को अनुदान दे सकता है।

(अ)योग्य बिलों को पुनः रियायत करना या खरीद करना।

(ब)निश्चित प्रतिभूतियों के विरूद्व ऋण व अग्रिम प्रदान करना

धारा 17(2) और 17(3) रिजर्व बैक को विभिन्न प्रकार के विनिर्दिष्ट बिलों को खरीद या फिर रियायत के माध्यम से अनुदान देने को अधिकृत करता है । धारा 17(4) रिजर्व बैक को कुछ निर्दिष्ट प्रतिभूतियों के विरूद्व ऋण व अग्रिम को प्रदान करने के लिये अधिकृत करता है।

(अ) बिलों पर पुनः छूट :–

धारा 17(2) के अनुसार निम्नलिखित बिलों की श्रेणियो पर रिजर्व बैक से पुनः छूट ली जा सकती है।

(I)वाणिज्यक बिलः–

वााज्यिक विल की उत्पत्ति वाणिज्यिक या व्यापार लेन–देन से होती है। यह भारत में देय होना चाहिए व खरीद या छूट की तारीख से 90 दिनो के भीतर परिपक्व हो जाना चाहिए। अगर भारत से वस्तुओं का निर्यात होता है तो परिपक्वता की अवधि को 180 दिनो की अवधि के अन्दर लेन–देन करना होता है। यह जरूरी है कि बिल पर दो या दो से अधिक हस्ताक्षर हो जिनमे एक अनुसूचित बैक या राज्य सहकारी बैक शामिल हो।

(।।)कृषि कार्यो के वित्त पोषण के लिये बिलः—

इस तरह के बिल तब जारी किये जाते है जब मौसमी कृषि संचालन के लिये वित्त या फसलो के विपणन खरीद या पुनः छूट की तारीख से 15 महीने के अन्दर परिपक्व होना हो। इन्हे भारत में दर्शाया व देय होना चाहिये व दो या दो से अधिक हस्ताक्षर जिनमे एक अनुसूचित बैक या राज्य सहकारी बैक सहित हो।

(।।।) लघु उघोगो को वित्त उपलब्ध कराने के लिये बिल

इस बिल को लाने का उद्वेश्य कुटीर एवं लघु उघोगो में उत्पादन व विपणन गतिविधियो के लिये वित्त उपलब्ध कराना है जो कि रिजर्व बैक द्वारा अनुमोदित हो व छूट की तारीख से 12 महीने के अन्दर परिपक्त हो। भारत मे देय हो व दो या दो से अधिक हस्ताक्षर हो जिनमे राज्य सहकारी बैक या राज्य वित्त निगम शामिल हो और बिल का मूलधन व उस व्याज के भुगतान की गारंटी राज्य सरकार देती है।

(।V) सरकारी प्रतिभूतियों में व्यापार करने के लिये विधेयक

इस तरह के बिल पर अनुसूचित बैक के हस्ताक्षर होने चाहिए व खरीद या पुनः छूट की तारीख से 90 दिन के भीतर परिपक्व होना चाहिए और भारत मे देय हो।

(V)विदेशी बिल

इस तरह के बिल तब बनते है जब भारत से वस्तुओं का निर्यात होता है और 180 दिनो के भीतर परिपक्त होता है। ऐसा बिल भारत से बाहर किसी ऐसे देश के नाम निर्गत होना चाहिये जो अर्न्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य हो। अगर बिल भारत से वस्तुओं के निर्यात से सम्बंधित नही है तो परिपक्वता की अवधि 90 दिन हो जायेगी। यह ध्यान रखना चाहिए कि वह बिल पुनः छूट के पात्र हो उनके निश्चित परिपक्वता हो। पुनः छूट के बिलो की प्रथा को प्रोत्साहित करने के लिये, रिजर्व बैक ने 1 नवम्बर 1971 से पुनः छूट योजना लागू की है। भारतीय रिजर्व बैक (संशोधन) अधिनियम, 1974 लागू होने के बाद, विनिमय पत्रों में निम्नलिखित श्रेणियां आती है उपरोक्त (i),(ii),(iii) और किसी भी वित्तीय संस्था के हस्ताक्षर जो कि मुख्य रूप से विनिमय पत्रों की छूट पर स्वीकृति और वचन पत्रों और इस सम्बंध में रिजर्व बैक से मंजूरी प्राप्त है जो कि पुनः छूट के लिये भी पात्र होगा।

(ब) ऋण व अग्रिमः—

धारा 17 (4) रिजर्व बैक को सक्षम बनाता है, अनुसूचित बैको को अग्रिम व ऋण देने के लिये, जो मॉग पर पुनःदेय या निर्धारित अवधि की समाप्ति पर जो कि निम्नलिखित सुरक्षाओं के 90 दिन से अतिरिक्त न हो देय, निम्नलिखित की प्रतिभूति के बदले में:—

(i)स्टाक , फंड या प्रतिभूतियों (अचल सम्पत्तियों के अलावा) जिसमे एक न्यासी अधिकृत है न्यास धन को निवेश करने के लिये।

(ii)समान स्वामित्व के सोने या चॉदी या दस्तावेज

(iii)इस तरह के विनिमय पत्र और वचन पत्र, रिजर्व बैक से खरीदने या पुनः छूट (ऊपर वर्णित) के लिये पात्र है और मूलधन व ब्याज के पुर्नभुगतान के लिये राज्य द्वारा गारंटी दी जाती है।

(iv)वस्तुओं के स्वामित्व के दस्तावेजो द्वारा समर्थित किसी भी अनुसूचित बैक या सहकारी राज्य बैक के वचन पत्र, (इस तरह के दस्तावेजो का स्थानान्तरण, सुपुर्दगी या किसी अन्य बैक को ऋण के लिये सुरक्षा का वचन देना या वाणिज्यिक या व्यापार के लिये वास्तविक अग्रिम उपलब्ध कराना या कृषि प्रयोजन के लिये वित्तपोषण या फसलो का विपणन)। धारा 17 (3—A) 1962 में सम्मिलित की गयी थी जो बैको को सक्षम बनाती है रिजर्व बैक से आसान शर्तो पर सुरक्षित समायोजन के लिए निर्यात वित्त के सम्बंध में जो भारतीय रिजर्व बैक प्रदान करता है। भारतीय रिजर्व बैक वचन पत्र के बदले ऋण और अग्रिम किसी भी अनूसुचित बैक को दे सकता है अगर मॉग पर वचन पत्र प्रतिदेय हो या 180 दिन की समय सीमा से अधिक न हो। उधार लेने वाला बैंक यह लिखित रूप में धोषणा प्रस्तुत करें :—

(i)यह इन विनिमय पत्रों को धारण करेगा जिनकी उत्पत्ति भारत से वस्तुओं के निर्यात से सम्बंधित लेन—देन से होती है, जो कि भारत में और भारत के बाहर देश के किसी भी स्थान से जो कि आई0एम0एफ0 का सदस्य होया रिजर्व बैक द्वारा अधिसूचित हो में लिखित हैं और ऋण व अग्रिम की तारीख से 180 दिनों में परिपक्व हों। उधार लेने वाला बैंक रिजर्व बैक से ली गयी ऋण राशि के बराबर मूल्य के बिल अपने पास रखेगा एवं उन्हें अपने पास तब तक बनाए रखेगा जब तक बकाया ऋण की राशि का कीमत तक का ऋण चुकता न कर दिया जाये।

(ii)यह भारत में निर्यातक या किसी अन्य व्यक्ति को भारत से वस्तुओं के निर्यात के लिये सक्षम बनाने के लिए पूर्व शिपमेन्ट ऋण या अग्रिम प्रदान करेगा। इस तरह के ऋण की राशि बैंक द्वारा रिजर्व बैक से उधार ली गयी राशि से कम नही होना चाहिये। इस प्रावधान को प्रभावी करने के लिये भारतीय रिजर्व बैक ने मार्च 1963 में निर्यात बिल केडिट योजना का शुभारम्भ किया। इस योजना और विदेशी बिल में छूट में मुख्य अन्तर यह है पूर्व के मामले में बैको को विदेशी बिल रिजर्व बैक से विवर (lodge) करने की आवश्यकता नही (जो कि पुनः छूट के तहत आवश्यक है)। उन्हे सिर्फ घोषणा कर देनी चाहिये कि वह ऋण की राशि के बराबर बिल धारण कर चुके है। एक नयी उप धारा 3 ब भारतीय रिजर्व बैक अधिनियम (संशोधन) 1974 द्वारा स्थापित की गई। इस उपधारा के तहत भारतीय रिजर्व बैक किसी भी अनुसूचित बैक या राज्य सहकारी बैक को ऋण या अग्रिम देता है ऐसे बैको के बचन पत्रो के विरूद्ध जो मॉग पर प्रतिदेय हो या तय अवधि के भीतर जो कि 180 दिनो से अधिक न हो। उधार लेने वाले बैक के लिये यह लिखित में

घोषणा करना आवश्यक है कि निम्नलिखित के लिए ऋण और अग्रिम किया गया है–

(i)सद्भावनापूर्ण व्यवसायिक या व्यापार लेन–देन या

(ii)वित्तपोषक कृषि संचालन या फसलो के विपणन या अन्य कृषि के उद्वेश्यो की उद्घोषणा के लिये । इस घोषणा के अर्न्तगत अन्य विवरण भी शामिल होगे जो रिजर्व बैक को आवश्यक हो।

<u>आपातकालीन अग्रिम</u>

धारा 18 के तहत रिजर्व बैक वाणिज्यिक बैको और सहकारी बैको को आपातकालीन अग्रिम दे सकता है विशेष अवसरो पर जब रिजर्व बैक संतुष्ट हो कि भारतीय व्यापार वाणिज्य , उघोग और कृषि के हित में क्रेडिट विनियमन के उद्देश्य के लिए यह आवश्यक है। धारा 17 में निहित सीमाओ के होते हुए भी आपातकालीन अग्रिम स्थिति दी गयी है। 1978 में संशोधन भारतीय रिजर्व बैक को अधिकृत करता है –

(i)किसी भी ऐसे विनिमय पत्र या वचनपत्र के खरीद, बेचने या रियायत करने की, जो कि धारा 17 के अर्न्तगत भारतीय रिजर्व बैक द्वारा खरीद या रियायत के लिये पात्र न हो ।

(ii)ऋण और अग्रिम प्रदान करने के लिये

(अ) राज्य सहकारी बैक को या

(ब) राज्य सहकारी बैक की सिफारिश पर पंजीकृत सहकारी समिति जो कि राज्य सहकारी बैक के क्षेत्र के भीतर हो या

(स) किसी अन्य व्यक्ति, मॉग पर प्रतिदेय या निर्धारित अवधि की समाप्ति पर जो 90 दिनो से अधिक न हो, इस तरह के नियम व शर्तो पर बैक विचार कर सकता है।

6.4 सारांश

देश का केन्द्रीय बैक '' भारतीय रिजर्व बैंक '' दो महत्वपूर्ण रूप में कार्यवहन करता है– पारम्परिक व विकास। भारतीय रिजर्व बैंक 1934 के अनुसार, यह विविध कार्य करता है जैसे नोट जारी करने वाला प्राधिकारी, सरकार का बैंकर, बैंको का बैंकर इत्यादि। हमारे देश की मुद्रा में एक रूपये के नोट व सिक्के (सहायक सिक्को सहित) आते है जिन्हे भारत सरकार जारी करती है व बैंक नोटो को भारतीय रिजर्व बैंक जारी करती है। भारतीय रिजर्व बैंक, 1934 की धारा 38 के अनुसार सरकार एक रूपये के सिक्के व नोटो का प्रसार केवल भारतीय रिजर्व बैंक के माध्यम से करता है। बैंक नोट जारी करने का एकाधिकार रिजर्व बैंक को प्राप्त है। भारतीय रिजर्व बैंक नोट, एवं सरकार द्वारा एक रूपये के नोट व सिक्के जारी किए जाते है

जिसकी असीमित कानूनी निविदा की जाती है। रिजर्व बैंक नोट व सिक्को को लोगों की जरूरत के अनुसार अन्य मूल्यवर्ग में बदलता है। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के अनुसार नोटो को जारी करना और बैंक के सामान्य बैंकिंग कारोबार को दो अलग–अलग विभागों द्वारा किया जाता है। निर्गम विभाग की जिम्मेदारी नये नोटो को जारी करने की है। नये नोट जारी करने के लिए विभाग अपनी सम्पत्ति रखता है जो कि बैंकिग विभाग की संपत्ति से अलग होती है। कारोबार बैंकिंग विभाग के अर्न्तगत आता है जो अपने पास मुद्रा का भण्डार रखती है। जरूरत पड़ने पर बैंक विभाग मुद्रा का भण्डार रखती है। जरूरत पड़ने पर , बैंक विभाग मुद्रा का भण्डार उपलब्ध कराता है, निर्गम विभाग से जिसके लिए समान मूल्य की आस्तियां का अन्तरण किया जाता है। इसी तरह से बैंकिग विभाग के पास मुद्रा का भण्डार यदि जरूरत से ज्यादा है तो निर्गत विभाग अतिरिक्त मुद्रा को समान मूल्य की आस्तियों से बदल लेता है। निर्गम विभाग की सम्पत्ति जिसके विरूद्व नोट जारी किये जा सकते है, वह निम्नलिखित हैः–

अ–सोने के सिक्के और बहुमूल्य धातुऐ।

ब–विदेशी प्रतिभूतियॉ।

स–रूपये के सिक्के।

द–भारत सरकार की रूपया प्रतिभूतियां।

य–विनिमय पत्र व वचनपत्र भारत में देय जो कि बैंक द्वारा खरीदे जा सके।

भारतीय रिजर्व बैंक संशोधन अधिनियम, 1957 के अनुसार, बैंकों को अब रू 200 करोड़ सोने के सिक्को के लायक स्वर्ण बुलियन और विदेशी प्रतिभूतियों की जो सोने का सिक्का और बुलियन के मूल्य रू 115 करोड़ से कम नही होना चाहिए की एक न्यूनतम आरक्षित बनाये रखना अनिवार्य है। रिजर्व बैंक सशक्त है केन्द्रीय सरकार की पूर्व मंजूरी से निर्गत विभाग द्वारा जमा की हुई विदेशी प्रतिभूतियों को कम कर सकता है। मुद्रा नोटो और सिक्को के वितरण का कार्य रिजर्व बैंक द्वारा प्रशासित किया जाता है। इस उद्वेश्य को पूरा करने के लिये निर्गम विभाग द्वारा 10 बड़े शहरो में इसका कार्यालय खोला गया। करेंसी चेस्ट (अर्थात बाक्स या कंटेनर) है जिसमें नये या पुर्नःजारी सिक्के , रूपये के सिक्को के साथ जमा करता है। भारतीय रिजर्व बैंक, भारतीय स्टेट बैंक, भारतीय स्टेट बैंक के सहायक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको, सरकारी भण्डारों व उप भण्डारो के द्वारा करेंसी चेस्टों व कोषों का प्रबन्धन किया जाता है। नये नोटो का भण्डार देश भर में फैले हुये करेंसी चेस्ट में रखे जाते है जो अधिकांश मामलों में सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंको द्वारा संचालित किये जाते है। करेंसी चेस्ट को बनाये रखने में बैंक व सरकारी भण्डार (कोषागार) के कई लाभ है केन्द्रीय व राज्य सरकारों के लिये भारतीय रिजर्व बैंक बैंकर के रूप में कार्य करता है। धारा 20 के अनुसार, सरकारी लेनदेन करना एवं सार्वजनिक क्षेत्र के ऋण का प्रबन्धन करना भारतीय रिजर्व बैंक के लिये अनिवार्य है। धारा 21 के

तहत केन्द्र सरकार के लिए आवश्यक है कि वह अपने समस्त नकद धन को एवं ब्याज मुक्त जमा राशियों को एवं धन, धन के प्रेषण, धन के अन्तरण एवं बैंकिंग लेन देन को वह बैंक को सौंप दे और विशेष रूप से धारा 21 ए के अनुसार भारतीय रिजर्व बैंक, राज्य सरकारो की तरफ से भी उक्त सभी कार्य करता है। भारतीय रिजर्व बैंक ने इन कार्यो को करने के लिए केन्द्र व राज्य सरकारो के साथ अनुबन्ध किया है। सरकार के साधारण बैंकिंग व्यवसाय को करने के लिये बैंक को किसी प्रकार की पारिश्रमिक नही दी जायेगी। यह सरकार की नकदी व्याजमुक्त रखती है। सार्वजनिक ऋण के प्रबंधन के लिए बैंक कमीशन लेने का हकदार है। सरकार द्वारा घोषित किये गये स्थानो पर निर्गम विभाग के करेंसी चेस्ट का अनुरक्षण करना और साथ ही साथ पर्याप्त नोट व सिक्के बनाये रखना भी भारतीय रिजर्व बैंक की जिम्मेदारी है। धारा 45 के अनुसार, रिजर्ब बैक के लिए अनिवार्य है कि वह अपने एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में भारतीय स्टेट बैंक की नियुक्ति सभी स्थानों पर करता है जहां भारतीय रिजर्व बैंक की कोई शाखा या कार्यालय नही है लकिन वहॉ स्टेट बैंक या उसके सहायक बैंक की शाखा हो। स्टेट बैंक द्वारा अपने सहायक बैको के साथ अभिकरण व्यवस्था के लिये अनुबन्ध स्थापित किया गया है। एजेंसी और उप एजेंसी बैंक सरकार के सामान्य बैंकिग व्यापार का परिचालन करते हैं और उसी के लिय कमीशन प्राप्त करते है।

बैको के लिये बैकर के रूप में, रिजर्व बैक ऋणदाता के रूप में कार्य करता है और निम्न रूपों में अनुसूचित बैको को अनुदान दे सकता है।

(अ) योग्य बिलों को पुनः रियायत करना या खरीद करना।

(ब) निश्चित प्रतिभूतियों के विरूद्व ऋण व अग्रिम प्रदान करना

धारा 17(2) और 17(3) रिजर्व बैक को विभिन्न प्रकार के विनिर्दिष्ट बिलों को खरीद या फिर रियायत के माध्यम से अनुदान देने को अधिकृत करता है । धारा 17(4) रिजर्व बैक को कुछ निर्दिष्ट प्रतिभूतियों के विरूद्व ऋण व अग्रिम को प्रदान करने के लिये ं अधिकृत करता है ं।

धारा 17 (3–A) 1962 में सम्मिलित की गयी थी जो बैको को सक्षम बनाती है रिजर्व बैक से आसान शर्तों पर सुरक्षित समायोजन के लिए निर्यात वित्त के सम्बंध में जो भारतीय रिजर्व बैक प्रदान करता है। भारतीय रिजर्व बैक वचन पत्र के बदले ऋण और अग्रिम किसी भी अनूसुचित बैक को दे सकता है अगर मॉग पर वचन पत्र प्रतिदेय हो या 180 दिन की समय सीमा से अधिक न हो। इस प्रावधान को प्रभावी करने के लिये भारतीय रिजर्व बैक ने मार्च 1963 में निर्यात बिल क्रेडिट योजना का शुभारम्भ किया। इस योजना और विदेशी बिल में छूट में मुख्य अन्तर यह है पूर्व के मामले में बैको को विदेशी बिल रिजर्व बैक से विवर (lodge) करने की आवश्यकता नही (जो कि पुनः छूट के तहत आवश्यक है)। उन्हे सिर्फ घोषणा कर देनी चाहिये कि वह ऋण की राशि के बराबर बिल धारण कर चुके है।

एक नयी उप धारा 3 ब भारतीय रिजर्व बैक अधिनियम (संशोधन) 1974 द्वारा स्थापित की गई। इस उपधारा के तहत भारतीय रिजर्व बैक किसी भी अनुसूचित बैक या राज्य सहकारी बैक को ऋण या अग्रिम देता है ऐसे बैको के बचन पत्रो के विरूद्व जो मॉग पर प्रतिदेय हो या तय अवधि के भीतर जो कि 180 दिनो से अधिक न हो। उधार लेने वाले बैक के लिये यह लिखित में घोषणा करना आवश्यक है कि निम्नलिखित के लिए ऋण और अग्रिम किया गया है–

(i)सद्भावनापूर्ण व्यवसायिक या व्यापार लेन–देन या

(ii)वित्तपोषक कृषि संचालन या फसलो के विपणन या अन्य कृषि के उद्वेश्यो की उद्घोषणा के लिये । इस घोषणा के अर्न्तगत अन्य विवरण भी शामिल होगे जो रिजर्व बैक को आवश्यक हो।

धारा 18 के तहत रिजर्व बैक वाणिज्यिक बैको और सहकारी बैको को आपातकालीन अग्रिम दे सकता है विशेष अवसरो पर जब रिजर्व बैक संतुष्ट हो कि भारतीय व्यापार वाणिज्य , उघोग और कृषि के हित में क्रेडिट विनियमन के उद्देश्य के लिए यह आवश्यक है। धारा 17 में निहित सीमाओ के होते हुए भी आपातकालीन अग्रिम स्थिति दी गयी है। 1978 में संशोधन भारतीय रिजर्व बैक को अधिकृत करता है –

(i)किसी भी ऐसे विनिमय पत्र या वचनपत्र के खरीद, बेचने या रियायत करने की, जो कि धारा 17 के अर्न्तगत भारतीय रिजर्व बैक द्वारा खरीद या रियायत के लिये पात्र न हो ।

(ii)ऋण और अग्रिम प्रदान करने के लिये

(अ) राज्य सहकारी बैक को या

(ब) राज्य सहकारी बैक की सिफारिश पर पंजीकृत सहकारी समिति जो कि राज्य सहकारी बैक के क्षेत्र के भीतर हो या

(स) किसी अन्य व्यक्ति, मॉग पर प्रतिदेय या निर्धारित अवधि की समाप्ति पर जो 90 दिनो से अधिक न हो, इस तरह के नियम व शर्तो पर बैक विचार कर सकता है।

6.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

करेंसी चेस्ट– मुद्रा पेटिका

बैंकर्स बैंक– जो बैंकों को ऋण प्रदान करता है

गैर अनूसूचित बैंक– वह बैक जो भारतीय रिजर्व बैक अधिनियम 1934 की दूसरी अनुसूची के अर्न्तगत नहीं आते है।

6.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक पाठ्य सामग्री

1. पी0एन0वार्ष्णेय, बैंकिग कानून और अभ्यास,
2. मर्केन्टाइल विधि के सिद्वान्त –अवतार सिंह छठा संस्करण 1996
3. बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– पी0एन0वार्षनेय
4. भारत में बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– तन्नान
5. पेजेट्स बैंकिंग विधि आठवा संस्करण
6. चुतुर्वेदी,ममता., आधुनिक बैंकिग विधि, सेन्ट्रल लॉ पबिलकेशन

6.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1–भारतीय रिजर्व बैक के कार्यो पर विस्तार में चर्चा कीजिए।

2–रिजर्व बैक और वाणिज्यि बैको के बीच के संबंधों पर चर्चा करें।

एलएल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–2. केन्द्रीय बैंक (**The Central Bank**)

इकाई –7. गैर बैंकिंग कम्पनियों पर आर0बी0आई0 का नियन्त्रण (**Control of RBI over non-banking companies**)

इकाई की संरचना

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्‌देश्य

7.3 विषय

- 7.3.1 गैर बैंकिंग वित्त कंपनियों पर विनियमन
- 7.3.2 एन बी एफ सी के सार्वजनिक जमा की स्वीकृति (रिजर्व बैंक)
- 7.3.3 सज्जा सामान पट्‌टे पर देना और किराया खरीद वित्त कंपनियां
- 7.3.4 ऋण और निवेश कंपनियां
- 7.3.5 एन बी एफ सी के लिये विवेकपूर्ण मानदण्ड

7.4 सारांश

7.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

7.6 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी पाठ्य समग्री

7.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

वित्तीय प्रणाली के लिये नियामक ढांचे की आवश्यकता सार्वभौमिक महसूस की गयी है। मुख्यतः बचतकर्ताओं/जमाकर्ताओं की बड़ी संख्या के हितों की रक्षा करने के लिये और साथ ही संस्थानों में कुशल कामकाज हो जो कि वित्तीय प्रणाली का हिस्सा है। इसके अलावा भारतीय रिजर्व बैंक, देश का केन्द्रीय बैंक होने के नाते, भारतीय मुद्रा बाजार में प्रमुख नियामक प्राधिकारी है। यह अपनी शक्तियां दो प्रमुख अधिनियमितियों से प्राप्त करता है, अर्थात भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 और बैंकिंग विनियम अधिनियम, 1949। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों व संविधान प्रबंधन के अलावा इसे वाणिज्यिक बैंकों, गैर—बैकिंग वित्तीय कंपनियों और वित्तीय संस्थानों पर नियंत्रण और विनियम की शक्ति भी प्रदान करता है । बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949, भारत में वाणिज्यिक बेंकों के विभिन्न प्रावधानों को शासित करता है। इनमें से कई प्रावधान सहकारी बैंकों पर भी लागू होते हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, इसके सहायक बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंक, इन सबको भी इसी दर्जे में शामिल किया गया है। इस यूनिट के अनुभागों में विनियामक ढांचे की चर्चा की जायेगी। मुख्यतः चर्चा भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों की, की जायेगी। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के तहत भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना 1 अप्रैल, 1935 को की गयी। भारत में दो प्रमुख नियामक अधिकारी संस्था है अर्थात् भारतीय रिजर्व बैंक और भारत की प्रतिभूति व विनिमय बोर्ड (SEBI)। इन्हें मुद्रा बाजार व पूंजी बाजार के लिये क्रमशः विकास व विनियमन की जिम्मेदारी सौंपी गयी है। इन नियामकों को विभिन्न विधायी कानून से शक्ति प्राप्त है और साथ ही साथ अपने विवेक से भी कार्य करते हैं। इस प्रकार वित्तीय प्रणाली विनियामक ढांचे के भीतर कार्य करता है। इस इकाई व अगली इकाई का उद्देश्य इनके विस्तृत प्रणाली और बाजार नियामक ढांचे को समझाना है। इस इकाई में, हम मुद्रा बाजार के विनियामक वातावरण और उसमें प्रतिभागियों के अर्थात सहकारी बैंकों, वित्तीय संस्थानों और गैर—बैकिंग वित्तीय कंपनियों के बारे में पढ़ेंगे। इसके अलावा भारतीय रिजर्व बैंक देश का केन्द्रीय बैंक होने के नाते, भारतीय मुद्रा बाजार में प्रमुख नियामक प्राधिकारी है। यह अपनी शक्तियां दो प्रमुख अधिनियमितियों से प्राप्त करता है, अर्थात भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 और बैंकिंग विनियम अधिनियम, 1949। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों व संविधान प्रबंधन के अलावा इसे वाणिज्यिक बैंकों, गैर—बैकिंग वित्तीय कंपनियों और वित्तीय संस्थानों पर नियंत्रण और विनियम की शक्ति भी प्रदान करता है । बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949, भारत में वाणिज्यिक बेंकों के विभिन्न प्रावधानों को शासित करता है। इनमें से कई प्रावधान

सहकारी बैंकों पर भी लागू होते हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, इसके सहायक बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंक, इन सबको भी इसी दर्जे में शामिल किया गया है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई में एन बी एफ सी कंपनियों पर केन्द्रीय बैंक के नियंत्रण और नियंत्रण कार्यप्रणाली पर चर्चा की गयी है। इसके अलावा सार्वजनिक जमाओं (रिजर्व बैंक) पर एन बी एफ सी की स्वीकृति और एन बी एफ सी के लिए विवेकपूर्ण मानदण्ड से संबंधित प्रासंगिक पहलुओं का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है ।

7.3.1 गैर बैंकिंग वित्त कंपनियों पर विनियमन

गैर बैकिंग वित्त कंपनियां भारत में वित्तीय मध्यस्थता कार्य करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है। यह बैंकिंग संस्थानों की भूमिका के पूरक के रूप में कार्य करती है जो कि बैकिंग के दायरे से बाहर उधारकर्ताओं की जरूरतों को पूरा करता है और जमाकर्ताओं से बचत भी जुटाता है। यह वित्त और पट्टा (leasing) कंपनियों, ऋण और निवेश कंपनियों तथा आवास वित्त कंपनियों जो कि गैर बैंकिग वित्त कंपनियों की महत्वपूर्ण श्रेणी में आते हैं, को खरीदता है। NBFC द्वारा निभाई गयी महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुये, जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करते हुये, विनियामक ढांचे को विशेष रूप से तैयार किया गया है। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 का अध्याय 111बी एनबीएफसी पर विनियामक रूपरेखा निर्धारित करता है। इस अध्याय में महत्वपूर्ण संशोधन जनवरी 1997 में किये गये जिससे कंपनियों की गतिविधियों को विनियमित करने के लिये भारतीय रिजर्व बैंक को और सशक्त बनाया गया। जो कि इस प्रकार हैः–

1.विवरणिका के मुद्दे को विनियमित या निषेध करना

जनता के हित में, भारतीय रिजर्व बैंक किसी भी कंपनी की विवरणिका को विनियमित या निषेध कर सकता है या लोगों से विज्ञापन याचना द्वारा जमा किये गये पैसे को विनियमित या निषेध कर सकता है बैंक कंपनियों को निर्देश भी दे सकता है विज्ञापन में विशेष विवरणों को शामिल करें। सार्वजनिक जमा बाहरी धन (Public'deporite exclude money) बढ़ाया जाता है।

2.दिशा–निर्देश व जमा से जुड़ी जानकारी उपलब्ध कराना

भारतीय रिजर्व बैंक सशक्त है किसी भी गैर–बैकिंग संस्था को निर्देश देने के लिये कि वह प्राप्त की गयी जमा राशि का विवरण या जानकारी प्रस्तुत करे। बैंक जनता के हित में उन संस्थाओं को (सामान्यतः, विशेष रूप से या समूह में) निर्देश जारी कर सकता है कि वह जमा से जुड़ी रसीदें प्रस्तुत करे। अगर कोई संस्था दिये गये

निर्देशों का पालन करने में असफल होती है तो बैंक ऐसी संस्थाओं के जमा की स्वीकृति को प्रतिबंधित कर सकती है।

3.निरीक्षण

भारतीय रिजर्व बैंक, किसी भी समय, किसी भी गैर–बैकिंग संस्था का निरीक्षण कर सकती है यह सत्यापित करने के लिये कि जो विवरण बैंक के समक्ष रखा गया है वह पूरा अथवा सही है या नहीं और अगर नहीं रखे गए हैं तो उनकी प्राप्ति हेतु।

भारतीय रिजर्व बैंक (संशोधन) अधिनियम, 1997 भारतीय रिजर्व बैंक को निम्नलिखित स्पष्ट शक्तियां प्रदत्त करता हैं–

अ.एक नयी NBFC तब तक कार्य नहीं कर सकती जब तक भारतीय रिजर्व बैंक के साथ पंजीकृत न हो जाये और न्यूनतम 25 लाख की स्वाधिकृत निधियां हो। रिवर्ज बैंक को शक्ति प्राप्त है कि वह न्यूनतम निबल स्वाधिकृत निधि (NOF) को 2 करोड़ तक बढ़ा दे उन कम्पनियों के मामले में जो 20 अप्रैल 1999 को या उसके बाद शामिल की गयी है और भारतीय रिवर्ज बैंक के साथ पंजीकृत होने की इच्छा रखती हैं।

ब.किसी भी लाभांश की घोषणा करने से पहले सभी NBFC के लिये जरूरी है रिजर्व फंड को बनाना और किसी डिविडेंड की घोषणा करने से पूर्व इस फंड में हर साल अपने शुद्ध लाभ का 20% से कम हस्तान्तरण नहीं करेंगे।

स.भारतीय रिवर्ज बैंक को जमा राशि के प्रतिशत के रूप में तरल सम्पत्ति के न्यूनतम स्तर के निर्धारण की शक्ति प्रदान की गई है, जिन्हें भार–रहित स्वीकृत प्रतिभूतियों में बनाये रखा जाता है (जैसे– सरकारी प्रतिभूतियां/गारंटीकृत बांड)।

द.अगर यह पता चलता है कि कम्पनी जमाकर्ताओं के पैसे चुकाने में असमर्थ या अनिच्छुक है तो कम्पनी लॉ बोर्ड NBFC को निर्देश देने के लिये सशक्त है कि वह परिपक्व हो चुकी जमा राशि को चुकाये।

य.भारतीय रिजर्व बैंक NBFC को विवेकपूर्ण मानदण्डों के लिये निर्देश दे सकता है और NBFC एवं उनके लेखा परीक्षकों को तुलन पत्र (balance sheet) से जुड़े मुद्दों पर एवं विशेष लेखा परीक्षा हेतु भी निर्देश दे सकता है साथ ही गलत लेखा परीक्षण होने पर जुर्माना भी लगा सकता है। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के उल्लंघन को रोकने के लिये NBFC को जमा राशि को लेने से रोक सकता है और NBFC को अपनी सम्पत्तियों को हस्तान्तरित (alienate) नहीं करने का निर्देश दे सकता है, भटकी हुई NBFC के विरूद्ध समापन याचिका दायर कर सकता है, भटकी हुई NBFC पर सीधे जुर्माना भी लगा सकता है।

7.3.2 एन बी एफ सी की सार्वजनिक जमा की स्वीकृति (रिजर्व बैंक)

अध्याय 111 में निहित शक्तियों का प्रयोग में भारतीय रिजर्व बैंक NBFC को जनता से स्वीकृति की गयी जमा राशि के संबंध में निर्देश जारी करता है। NBFC द्वारा अनुसरणीय विवेकपूर्ण मानदण्डों सहति इन दिशा निर्देशों को जनवरी 1998 में संशोधित किया गया। भारतीय रिजर्व बैंक के दिसम्बर 1998 में दोबारा संशोधित होने के बाद के दिशा निर्देशों की विशेषतायें इस प्रकार हैं :–

1.नियामक उद्देश्यों के लिये, NBFC को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया हैः–

अ. वे जो सार्वजनिक जमा स्वीकृत करते हैं,

ब.वह, जो सार्वजनिक जमा को स्वीकार नहीं करते, लेकिन वित्तीय कारोबार में लगे हुये हैं।

स.मुख्य (Core) निवेशक कंपनियां, जो अपनी 90 प्रतिशत सम्पत्ति का निवेश कंपनी की प्रतिभूतियों (समूह/होल्डिंग/सहायक) में करती है। भारतीय रिजर्व बैंक विनियमन का जोर (thrust) उन कंपनियों पर है जो सार्वजनिक जमा स्वीकृत करते हैं।

2. सार्वजनिक जमा को परिभाषित किया गया है कि वह क्षेत्र/आवर्ती जमा जो जनता रिश्तेदारों या दोस्तों से प्राप्त है, पब्लिक लिमिटेड कंपनी के शेयर धारकों द्वारा जमा और शेयरधारकों एवं जनता को जारी असुरक्षित डिबेंचर (debenture) और बाण्ड द्वारा बढ़ा धन। सुरक्षित डिबेंचर ओर बांड को जारी करने के द्वारा बढ़ा धन, बैंकों ओर वित्तीय संस्थानों से उधार (असुरक्षित ऋण पत्र के माध्यम से सहित), निर्देशकों द्वारा जमा, अंतर–कॉरपोरेट जमा राशि, विदेशी नागरिकों से की गयी जमा राशि, प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी के शेयरधारकों से प्राप्त जमाराशियां, कर्मचारियों से सुरक्षा जमा, पट्टे ने अग्रिम रसीद एवं किराये–खरीद किश्तें– ये सभी सार्वजनिक जमा में नहीं आते।

3. 25 लाख से कम शुद्ध स्वामित्व कोष (NOF) वाले एन एफ बी सी को सार्वजनिक जमा को स्वीकार करने की अनुमति (क्रेडिट रेटिंग के साथ या बिना) नहीं है।

4.25 लाख या उससे अधिक NOF के के साथ एनएफबीसी को सार्वजनिक जमा पर सीलिंग (Ceiling) को निम्न प्रकार निर्धारित किया गया है, दिसम्बर 1998 में इन सीलिंग सीमाओं को लागू किया गया, इससे पहले यह सीमायें क्रेडिट रेटिंग पर आधारित (जनवरी, 1998 से प्रभावी) थी–

7.3.3 सज्जा सामान पट्टे पर देना और किराया खरीद वित्त कंपनियां

अ.बिना श्रेणी निर्धारण और श्रेणी निर्धारण सहित (यानी न्यूनतम निवेश ग्रेड से नीचे श्रेणी निर्धारण) NBFC उनके NOF का 1.5 गुना या 10 करोड़ रूपये जो भी कम

हो (बशर्तें उनका CRAR 15% या उससे ज्यादा, अंतिम लेखापरीक्षित तुलन पत्र के अनुसार)

ब.NBFC के साथ न्यूनतम निवेश क्रेडिट रेटिंग के लिये – उनके NOF का चार गुना (बशर्तें 31.03.1998 को CRAR 10 प्रतिशत से कम न हो और 31.03.1999 को 12 प्रतिशत से कम न हो)। उन्हें शीघ्र अतिशीघ्र CRAR को बढ़ाकर 15 प्रतिशत करने की आावश्यकता है।

7.3.4 ऋण और निवेश कंपनियां

अ.गैर श्रेणी निर्धारण और श्रेणी निर्धारण दोनों ही सार्वजनिक जमाराशियों को स्वीकृत करने का हक नहीं रखते (उनके NOF और CRAR के निरपेक्ष);

ब. न्यूनतम निवेश ग्रेड क्रेडिट श्रेणी निर्धारण के साथ– NOF के 1.5 गुना (वे CRAR के 15% या इससे ऊपर प्रदान की गयी हो)। इसके अलावा, यह भी निर्धारित किया गया हो)। इसके अलावा, यह भी निर्धारित किया गया है कि ऋण और निवेश कम्पनियां जिनके पास 15% का न्यूनतम CRAR दी गयी तारीख पर न हो, लेकिन अन्य सभी विवेकपूर्ण मानदण्डों का अनुपालन करता है और

स. AAA स्तर की क्रेडिट रेटिंग हो तो 18 दिसम्बर 1998 के आधार पर उत्कृष्ट स्तर तक सार्वजनिक जमा स्वीकार या नवीनीकृत कर सकता है या NOF का 1.5 गुना जो भी ज्यादा हो, इस शर्त पर कि CRAR या 15% 31 मार्च 2000 तक प्राप्त हो और अगर कोई अतिरिक्त जमा हो तो 31 दिसम्बर 2000 तक नीचे ले जायेंगे। और

द. जिनकी रेटिंग AA/A है वह सार्वजनिक जमा को स्वीकृत या नवीनीकृत कर सकते हैं (अर्थात् उनके NOF का 0.5 या 1 गुना) लेकिन लेखापरीक्षित तुलन पत्र (Balance sheet) के अनुसार 3 मार्च 2000 को या उससे पहले 15% की न्यूनतम CRAR प्राप्त कर लिया हो, असफल होने पर पुनभुगतान करके अपनी स्थिति को नियमित कर लेना चाहिये या नहीं तो 31 दिसम्बर 2001 तक।

ऊपर बताये गये लाभ उन कम्पनियों को उपलब्ध नहीं होंगे, जिनका वर्तमान में CRAR 15% या उससे अधिक है लेकिन बाद में 15% के न्यूनतम स्तर पर फिसल गया।

य.सार्वजनिक जमा पर अधिकतम 16% प्रतिवर्ष की अनुमेय ब्याज दर निर्धारित की गयी है। 1 से 5 वर्ष की जमा राशियों पर 2% की अधिकतम दलाली का एक समान भुगतान NBFC कर सकती है। दलालों को अन्य खर्चों के लिये प्रतिपूर्ति की जा सकती है लेकिन जमा राशियों के 0.5 प्रतिशत से अधिक नहीं। NBFC

जो सार्वजनिक जमा स्वीकार करते हैं केवल उन्हें ही आवश्यकता है वार्षिक वैधानिक प्रतिलाभ और वित्तीय विवरण रिजर्व बैंक को प्रस्तुत करने की। अन्य NBFCs को इस आवश्यकता से छूट दी गयी है।

7.3.5 एन बी एफ सी के लिये विवेकपूर्ण मानदण्ड

भारतीय रिजर्व बैंक ने जून 1994 में NBFC के लिये विवेकपूर्ण मानदण्ड सम्बन्धी दिशा निर्देश जारी किये। कम्पनियां जो सार्वजनिक जमा स्वीकृत करती है उन्हें सभी दिशा निर्देशों का पालन करना होता है। पट्टे किराये–खरीद वित्त, ऋण और निवेश कम्पनियां जो सार्वजनिक जमा स्वीकार नहीं करती है उन्हें भी विवेकपूर्ण मानदण्डों का पालन करना चाहिये और अन्य मानदण्ड पूंजी पर्याप्तता और क्रेडिट निवेश मान्यता पर। इसी तरह, निवेश कम्पनियां जिन्होंने उनकी धारण/सहायक कम्पनियों की प्रतिभूतियों हेतु अपनी सम्पत्ति का 90% से कम धारण न किया हो एवं सार्वजनिक जमा स्वीकार न करने पर विवेकपूर्ण मानदण्डों से छूट मिल जाती है। ये दिशानिर्देश इस प्रकार हैंः–

1.आय मान्यता : NBFC के लिये आय को अपनी किताबों में लिखना आवश्यक नहीं है, जो देय है परन्तु छह महीने की अवधि में प्राप्त नहीं की, जब तक वास्तव में प्राप्त न की हो।

2.सम्पत्तियों का वर्गीकरण :– NBFC के लिये जरूरी है कि वह अपनी गैर निष्पादित सम्पत्ति को वर्गीकृत करे अगर मूलधन/किस्त भुगतान के लिये बाकी है लेकिन छह महीने के भीतर प्राप्त नहीं किया है। पट्टे पर देना, किराया–खरीद वित्त कम्पनियों के लिये ऐसी सम्पत्तियों को NPA के रूप में देखा जाता है अगर 12 महीने से पट्टा किराया और किराया खरीद की किश्तें देय हैं। सम्पत्तियों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में दिये गये दिशा–निर्देश चार श्रेणियों में है और वाणिज्यिक बैंकों के लिये जारी किये गये प्रावधानीकरण NBFC को भी लागू होंगे।

3.पूंजी पर्याप्तता मानदण्ड :– जनवरी 1998 में NBFC के लिये पूंजी पर्याप्तता आवश्यकता 25 लाख या उससे अधिक निवल स्वाधिकृत निधियों के साथ और सार्वजनिक जमा राशि 8% से 10% बढ़ायी गयी (03.01.1998 से प्रभावी) और बाद में (31.03.1999 से प्रभावी) अंश पूंजी की संरचना और सम्पत्ति से जुड़ा जोखिम भार और तुलन पत्र मदों का रूपातंरण यह सभी बैंकों में लागू होते हें।

4.क्रेडिट/निवेश एकाग्रता मानदण्ड :– पंजीकृत वित्त कम्पनियों का निवल स्वाधिकृत निधि के 15% से अधिक एकल उधारकर्ता को उधार देने की जरूरत नहीं है। और उनके स्वामित्व वाली निधि के 25% से अधिक उधारकर्ताओं के समूह को नहीं देगा। यह सीमायें एकल कम्पनी या कंपनियों के समूह में निवेश करने के

लिये भी लागू है। एकल कम्पनी या कम्पनियों के समूह में निवेश या ऋण के लिये अपनी स्वामित्व वाली धनराशि के 25% व 40% क्रमशः समग्र सीमा है। NBFC अपने खुद के शेयरों की प्रतिभूति पर ऋण की अनुमति नहीं दे सकता। समूह/सहायक कम्पनियों को छोड़कर गैर उद्धत शेयरों में निवेश करने की अधिकतम सीमा, उपकरण पट्टे और किराया खरीद वित्त कम्पनियों के लिये अपनी स्वामित्व वाली धनराशि के 10% पर तय किया गया है और स्वामित्व वाली धनराशि का 20% ऋण और निवेश कम्पनियों के लिये। अपने खुद के इसतेमाल के अतिरिक्त NBFC को सलाह दी जाती है कि भूमि और भवन पर अपनी निधि के 10 प्रतिशत से अधिक निवेश न करे। NBFC के लिये जरूरी है कि वह तीन साल के भीतर संकेतिक सीमा से अधिक सम्पत्ति को निपटा दे।

5.तरल सम्पत्ति :– जमाकर्ताओं के हितों व तरलता को बचाये रखने के लिये व NBFC के लिये जरूरी है कि वह जमा राशि का कुछ प्रतिशत तरल सम्पत्ति में बनाये रखे। सार्वजनिक जमा स्वीकार करने के लिये सभी NBFC के लिये एक समान तरल सम्पत्ति का अनुपात 2 जनवरी 1998 से 15 प्रतिशत निर्धारित कर दिया गया है। केवल सार्वजनिक जमा राशि के सम्बन्ध में तरल सम्पत्ति को बनाये रखना चाहिये। अनुसूचित बैंक के प्रधान कार्यालय की सुरक्षा में सरकारी प्रतिभूतियां और सरकार के गारंटी बाण्ड रखना NBFC के लिये आवश्यक है। जमाकर्ताओं को पुनर्भुगतान करने के लिये या उन्हें अन्य प्रतिभूतियों द्वारा बदलने हेतु या जमा में कमी के मामले में प्रतिभूतियों को वापस लिये जाने की अनुमति दी जाती है।

ऊपर कथित बातों से पता चलता है कि भारतीय रिजर्व बैंक ने NBFC के लिये एक व्यापक नियामक ढांचे का गठन किया है। 25 लाख के न्यूनतम निवल स्वाधिकृत निधि के आधार पर NBFC के लिए 8802 आवेदन पंजीकरण के लिये पात्र थे लेकिन उनमें से NBFC के लिये 7555 को पंजीकरण प्रदान किया गया। उनमें से भी 584 NBFC को सार्वजनिक जमा स्वीकार करने की अनुमति दी गयी। 1030 कम्पनियों के आवेदनों को अस्वीकार कर दिया गया । 25 लाख से कम NOF okyh 28676 कम्पनियों को 8 जनवरी 2000 तक का समय दिया गया ताकि वे 25 लाख की न्यूनतम NOF को प्राप्त कर ले। इस प्रकार गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनियों को मजबूत बनाने का एक नया युग शुरू हुआ और भविष्य में बेहतर परिणाम की उम्मीद है।

7.4 सारांश

वित्तीय प्रणाली के लिये नियामक ढांचे की आवश्यकता सार्वभौमिक महसूस की गयी है। मुख्यतः बचतकर्ताओं/जमाकर्ताओं की बड़ी संख्या के हितों की रक्षा करने के लिये और साथ ही संस्थानों में कुशल कामकाज हो जो कि वित्तीय प्रणाली का हिस्सा है। इसके अलावा भारतीय रिजर्व बैंक, देश का केन्द्रीय बैंक होने के नाते, भारतीय मुद्रा बाजार में प्रमुख नियामक प्राधिकारी है। यह अपनी शक्तियां दो प्रमुख अधिनियमितियों से प्राप्त करता है, अर्थात भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 और बैंकिंग विनियम अधिनियम, 1949। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों व संविधान प्रबंधन के अलावा इसे वाणिज्यिक बैंकों, गैर–बैंकिंग वित्तीय कंपनियों और वित्तीय संस्थानों पर नियंत्रण और विनियम की शक्ति भी प्रदान करता है । बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949, भारत में वाणिज्यिक बेंकों के विभिन्न प्रावधानों को शासित करता है। इनमें से कई प्रावधान सहकारी बैंकों पर भी लागू होते हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, इसके सहायक बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंक, इन सबको भी इसी दर्जे में शामिल किया गया है। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के तहत भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना 1 अप्रैल, 1935 को की गयी।

भारत में दो प्रमुख नियामक अधिकारी संस्था है अर्थात् भारतीय रिजर्व बैंक और भारत की प्रतिभूति व विनिमय बोर्ड (SEBI)। इन्हें मुद्रा बाजार व पूंजी बाजार के लिये क्रमशः विकास व विनियमन की जिम्मेदारी सौंपी गयी है। इन नियामकों को विभिन्न विधायी कानून से शक्ति प्राप्त है और साथ ही साथ अपने विवेक से भी कार्य करते हैं। इस प्रकार वित्तीय प्रणाली विनियामक ढांचे के भीतर कार्य करता है।इसके अलावा भारतीय रिजर्व बैंक देश का केन्द्रीय बैंक होने के नाते, भारतीय मुद्रा बाजार में प्रमुख नियामक प्राधिकारी है। यह अपनी शक्तियां दो प्रमुख अधिनियमितियों से प्राप्त करता है, अर्थात भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 और बैंकिंग विनियम अधिनियम, 1949। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों व संविधान प्रबंधन के अलावा इसे वाणिज्यिक बैंकों, गैर–बैंकिंग वित्तीय कंपनियों और वित्तीय संस्थानों पर नियंत्रण और विनियम की शक्ति भी प्रदान करता है । बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949, भारत में वाणिज्यिक बेंकों के विभिन्न प्रावधानों को शासित करता है। इनमें से कई प्रावधान सहकारी बैंकों पर भी लागू होते हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, इसके सहायक बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंक, इन सबको भी इसी दर्जे में शामिल किया गया है।

गैर बैकिंग वित्त कंपनियां भारत में वित्तीय मध्यस्थता कार्य करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है। यह बैंकिंग संस्थानों की भूमिका के पूरक के रूप में कार्य करती है जो कि बैकिंग के दायरे से बाहर उधारकर्ताओं की जरूरतों को पूरा करता है और

जमाकर्ताओं से बचत भी जुटाता है। यह वित्त और पट्टा (leasing) कंपनियों, ऋण और निवेश कंपनियों तथा आवास वित्त कंपनियों जो कि गैर बैंकिग वित्त कंपनियों की महत्वपूर्ण श्रेणी में आते हैं, को खरीदता है। NBFC द्वारा निभाई गयी महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुये, जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करते हुये, विनियामक ढांचे को विशेष रूप से तैयार किया गया है। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 का अध्याय 111बी एनबीएफसी पर विनियामक रूपरेखा निर्धारित करता है। इस अध्याय में महत्वपूर्ण संशोधन जनवरी 1997 में किये गये जिससे कंपनियों की गतिविधियों को विनियमित करने के लिये भारतीय रिजर्व बैंक को और सशक्त बनाया गया। जो कि इस प्रकार हैः–

1. विवरणिका के मुद्दे को विनियमित या निषेध करना
2. दिशा–निर्देश व जमा से जुड़ी जानकारी उपलब्ध कराना
3. निरीक्षण

अध्याय 111 में निहित शक्तियों का प्रयोग में भारतीय रिजर्व बैंक NBFC को जनता से स्वीकृति की गयी जमा राशि के संबंध में निर्देश जारी करता है। NBFC द्वारा अनुसरणीय विवेकपूर्ण मानदण्डों सहति इन दिशा निर्देशों को जनवरी 1998 में संशोधित किया गया। भारतीय रिजर्व बैंक के दिसम्बर 1998 में दोबारा संशोधित होने के बाद के दिशा निर्देशों की विशेषतायें इस प्रकार हैं :–

1.नियामक उद्देश्यों के लिये, NBFC को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया हैः–

अ.वे जो सार्वजनिक जमा स्वीकृत करते हैं,

ब.वह, जो सार्वजनिक जमा को स्वीकार नहीं करते, लेकिन वित्तीय कारोबार में लगे हुये हैं।

स.मुख्य (Core) निवेशक कंपनियां, जो अपनी 90 प्रतिशत सम्पत्ति का निवेश कंपनी की प्रतिभूतियों (समूह / होल्डिंग / सहायक) में करती है। भारतीय रिजर्व बैंक विनियमन का जोर (thrust) उन कंपनियों पर है जो सार्वजनिक जमा स्वीकृत करते हैं।

2.सार्वजनिक जमा को परिभाषित किया गया है कि वह क्षेत्र / आवर्ती जमा जो जनता रिश्तेदारों या दोस्तों से प्राप्त है, पब्लिक लिमिटेड कंपनी के शेयर धारकों द्वारा जमा और शेयरधारकों एवं जनता को जारी असुरक्षित डिबेंचर (debenture) और बाण्ड द्वारा बढ़ा धन। सुरक्षित डिबेंचर ओर बांड को जारी करने के द्वारा बढ़ा धन, बैंकों ओर वित्तीय संस्थानों से उधार (असुरक्षित ऋण पत्र के माध्यम से सहित), निर्देशकों द्वारा जमा, अंतर–कॉरपोरेट जमा राशि, विदेशी नागरिकों से की गयी जमा राशि, प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी के शेयरधारकों से प्राप्त जमाराशियां,

कर्मचारियों से सुरक्षा जमा, पट्टे ने अग्रिम रसीद एवं किराये–खरीद किश्तें– ये सभी सार्वजनिक जमा में नहीं आते।

3. 25 लाख से कम शुद्ध स्वामित्व कोष (NOF) वाले एन एफ बी सी को सार्वजनिक जमा को स्वीकार करने की अनुमति (क्रेडिट रेटिंग के साथ या बिना) नहीं है।

4. 25 लाख या उससे अधिक NOF के के साथ एनएफबीसी को सार्वजनिक जमा पर सीलिंग (Ceiling) को निर्धारित किया गया है, दिसम्बर 1998 में इन सीलिंग सीमाओं को लागू किया गया, इससे पहले यह सीमायें क्रेडिट रेटिंग पर आधारित (जनवरी, 1998 से प्रभावी) थी भारतीय रिजर्व बैंक ने जून 1994 में NBFC के लिये विवेकपूर्ण मानदण्ड सम्बन्धी दिशा निर्देश जारी किये। कम्पनियां जो सार्वजनिक जमा स्वीकृत करती है उन्हें सभी दिशा निर्देशों का पालन करना होता है। पट्टे किराये–खरीद वित्त, ऋण और निवेश कम्पनियां जो सार्वजनिक जमा स्वीकार नहीं करती है उन्हें भी विवेकपूर्ण मानदण्डों का पालन करना चाहिये और अन्य मानदण्ड पूंजी पर्याप्तता और क्रेडिट निवेश मान्यता पर। इसी तरह, निवेश कम्पनियां जिन्होंने उनकी धारण/सहायक कम्पनियों की प्रतिभूतियों हेतु अपनी सम्पत्ति का 90% से कम धारण न किया हो एवं सार्वजनिक जमा स्वीकार न करने पर विवेकपूर्ण मानदण्डों से छूट मिल जाती है। ये दिशानिर्देश इस प्रकार हैः–

1.आय मान्यता : NBFC के लिये आय को अपनी किताबों में लिखना आवश्यक नहीं है, जो देय है परन्तु छह महीने की अवधि में प्राप्त नहीं की, जब तक वास्तव में प्राप्त न की हो।

2.सम्पत्तियों का वर्गीकरण :– NBFC के लिये जरूरी है कि वह अपनी गैर निष्पादित सम्पत्ति को वर्गीकृत करे अगर मूलधन/किस्त भुगतान के लिये बाकी है लेकिन छह महीने के भीतर प्राप्त नहीं किया है। पट्टे पर देना, किराया–खरीद वित्त कम्पनियों के लिये ऐसी सम्पत्तियों को NPA के रूप में देखा जाता है अगर 12 महीने से पट्टा किराया और किराया खरीद की किश्तें देय हैं। सम्पत्तियों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में दिये गये दिशा–निर्देश चार श्रेणियों में है और वाणिज्यिक बैंकों के लिये जारी किये गये प्रावधानीकरण NBFC को भी लागू होंगे।

3.पूंजी पर्याप्तता मानदण्ड :– जनवरी 1998 में NBFC के लिये पूंजी पर्याप्तता आवश्यकता 25 लाख या उससे अधिक निवल स्वाधिकृत निधियों के साथ और सार्वजनिक जमा राशि 8% से 10% बढ़ायी गयी (03.01.1998 से प्रभावी) और बाद में (31.03.1999 से प्रभावी) अंश पूंजी की संरचना और सम्पत्ति से जुड़ा जोखिम भार और तुलन पत्र मदों का रूपातंरण यह सभी बैंकों में लागू होते हें।

4क्रेडिट/निवेश एकाग्रता मानदण्ड :– पंजीकृत वित्त कम्पनियों का निवल स्वाधिकृत निधि के 15% से अधिक एकल उधारकर्ता को उधार देने की जरूरत नहीं है। और उनके स्वामित्व वाली निधि के 25% से अधिक उधारकर्ताओं के समूह को नहीं देगा। यह सीमायें एकल कम्पनी या कंपनियों के समूह में निवेश करने के लिये भी लागू है। एकल कम्पनी या कम्पनियों के समूह में निवेश या ऋण के लिये अपनी स्वामित्व वाली धनराशि के 25% व 40% क्रमशः समग्र सीमा है। NBFC अपने खुद के शेयरों की प्रतिभूति पर ऋण की अनुमति नहीं दे सकता।

समूह/सहायक कम्पनियों को छोड़कर गैर उद्धत शेयरों में निवेश करने की अधिकतम सीमा, उपकरण पट्टे और किराया खरीद वित्त कम्पनियों के लिये अपनी स्वामित्व वाली धनराशि के 10% पर तय किया गया है और स्वामित्व वाली धनराशि का 20% ऋण और निवेश कम्पनियों के लिये। अपने खुद के इसतेमाल के अतिरिक्त NBFC को सलाह दी जाती है कि भूमि और भवन पर अपनी निधि के 10 प्रतिशत से अधिक निवेश न करे। NBFC के लिये जरूरी है कि वह तीन साल के भीतर संकेतिक सीमा से अधिक सम्पत्ति को निपटा दे।

5.तरल सम्पत्ति :– जमाकर्ताओं के हितों व तरलता को बचाये रखने के लिये व NBFC के लिये जरूरी है कि वह जमा राशि का कुछ प्रतिशत तरल सम्पत्ति में बनाये रखे। सार्वजनिक जमा स्वीकार करने के लिये सभी NBFC के लिये एक समान तरल सम्पत्ति का अनुपात 2 जनवरी 1998 से 15 प्रतिशत निर्धारित कर दिया गया है। केवल सार्वजनिक जमा राशि के सम्बन्ध में तरल सम्पत्ति को बनाये रखना चाहिये। अनुसूचित बैंक के प्रधान कार्यालय की सुरक्षा में सरकारी प्रतिभूतियां और सरकार के गारंटी बाण्ड रखना NBFC के लिये आवश्यक है। जमाकर्ताओं को पुनर्भुगतान करने के लिये या उन्हें अन्य प्रतिभूतियों द्वारा बदलने हेतु या जमा में कमी के मामले में प्रतिभूतियों को वापस लिये जाने की अनुमति दी जाती है।

ऊपर कथित बातों से पता चलता है कि भारतीय रिजर्व बैंक ने NBFC के लिये एक व्यापक नियामक ढांचे का गठन किया है। 25 लाख के न्यूनतम निवल स्वाधिकृत निधि के आधार पर NBFC के लिए 8802 आवेदन पंजीकरण के लिये पात्र थे लेकिन उनमें से NBFC के लिये 7555 को पंजीकरण प्रदान किया गया। उनमें से भी 584 NBFC को सार्वजनिक जमा स्वीकार करने की अनुमति दी गयी। 1030 कम्पनियों के आवेदनों को अस्वीकार कर दिया गया । 25 लाख से कम NOF okyh 28676 कम्पनियों को 8 जनवरी 2000 तक का समय दिया गया ताकि वे 25 लाख की न्यूनतम NOF को प्राप्त कर ले। इस प्रकार गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनियों को मजबूत बनाने का एक नया युग शुरू हुआ और भविष्य में बेहतर परिणाम की उम्मीद है।

7.5महत्वपूर्ण शब्दावली :

सीलिंग– उच्चतम सीमा या अन्तिम सीमा
CRAR- Capital to Risk (Weighted) Assets Ratio, bls Capital Adequacy Ratio भी कहा जाता है। अर्थात पूंजी प्र्याप्तता अनुपात।।
NBFC. –गैर बैंकिग वित्तीय कंपनियां

7.6 संदर्भ ग्रन्थ/उपयोगी सहायक पाठ्य सामग्री :

1.Bhole, L.M. (2000) - Financial Institutions and Markets, take MeGraw Hills, New Delhi.
2.Khan, M. (2000) - Financial Services, Chapter -1
3.Machirajer, H.R. (1998) - Indian Financial System, Vikas Publishing House, Delhi
4.Reserve Bank of India - Functions & Working (1983), RBI
5.Reserve Bank of India - Various Reports on Currency and Finance.
6.Varshney, P.N. (1999) - Indian Financial system and Commercial Bomking Sultan Chand & Sons, Delhi.
7.Varshney, P.N. Edition (2002) - Indian Financial system, Sultan Chand & Sons, Delhi.

7.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.गैर बैकिंग कम्पनियों पर नियंत्रण एवं देख–रेख सम्बन्धी भारतीय रिजर्व बैंक के प्रावधानों की चर्चा कीजिये।
2.सार्वजनिक जमाओं (fjtoZ cSad) को स्वीकार करने में NBFC की भूमिका का वर्णन कीजिये।
3.सामान पट्टे और किराया खरीद वित्तीय कम्पनियों पर संक्षेप में टिप्पणी कीजिये।
4. NBFC की कार्यप्रणाली पर टिप्पणी कीजिए

एलएल.एम. प्रथम वर्ष

बैंकिंग विधि

खण्ड–3. बैंकर एवं ग्राहक के सम्बन्ध एवं भारत में बैंकिंग प्रणाली में अ़द्यतन प्रवाह **(Relationship of Banker and Customer and Recent Trends of Banking System in India)**

इकाई –8. बैंकर एवं ग्राहक के मध्य विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध **(Various kinds of relationship between banker and customer)**

इकाई की संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 विषय

8.3.1 बैंकिंग की परिभाषा

8.3.2 अपने ग्राहक को जानिये : दिशा निर्देश और ग्राहक

8.3.3 बैंकर ग्राहक सम्बन्ध

8.3.4 सम्बन्धों का वर्गीकरण

8.3.5 सामान्य सम्बन्ध

8.3.6 ऋणदाता देनदार

8.3.7 बैंक न्यासी के रूप में

8.3.8 उपनिहिती – उपनिधाता

8.3.9 पट्टादाता – पट्टेदार

8.3.10 पट्टादाता, पट्टेदार, प्रीमियम और किराये की परिभाषा

8.3.11 अभिकर्ता एवं मालिक

8.3.12 बैंकर के कर्तव्य

8.3.13 गोपनीयता बनाये रखने का कर्तव्य

8.3.14 बैंकिग कार्य में घोषणायें

8.3.15 चैक भुनाने का कर्तव्य

8.3.16 बैंकर के अधिकार

8.3.17 धारणाधिकार

8.3.18 विशेष धारणाधिकार

8.3.19 समायोजन का अधिकार

8.3.20 विनियोजन का अधिकार

8.3.21 नामांकन सुविधा

8.3.22 बैंक जमा राशियों का बीमा

8.4 सारांश

8.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

8.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

8.7 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

अधिनियम में शब्द ग्राहक को परिभाषित नहीं किया गया है। शब्द ग्राहक की उत्पत्ति शब्द 'कस्टम' से हुई है जिसका अर्थ है कोई कार्य नियमित रूप या विशेष ढंग से करने की 'आदत या प्रवृत्ति'। **पराक्रम्य लिखत**अधिनियम की धारा 131 के अनुसार जब बैंकर विश्वास में, रेखांकित धनादेश का भुगतान प्राप्त करता है, ग्राहक के लिये और बिना लापरवाही किये हुये, तब बैंक पर भुगतान प्राप्त करने की वजह से वास्तविक मालिक के प्रति किसी प्रकार का दायित्व नहीं होता। यह बात स्पष्ट है कि ग्राहक बनने के लिये खाता सम्बन्ध होना जरूरी है। खाता सम्बन्ध एक संविदात्मक सम्बन्ध है।

8.2 उद्देश्य

आमतौर पर यह माना जाता है कि कोई भी व्यक्ति या संगठन, जो बैकिंग लेन–देन किसी भी बैंक के साथ करता है, वह बैंक का ग्राहक होता है। हालांकि, ऐसे बहुत से व्यक्ति है जो बैंक की सेवाओं का उपयोग तो करते हैं पर जिनका कोई खाता बैंक में नहीं होता। इस प्रकार बैंक ग्राहकों को चार व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है जो कि निम्नलिखित है अ. वह लोग जो बैंक के साथ खाता सम्बन्ध बनाये हुये हैं जैसे– मौजूदा ग्राहक।

ब.वह लोग जो बैंक के साथ खाता सम्बन्ध बनाये हुये थे यानी पूर्व ग्राहक।

स.वह लोग जिनका बैंक के साथ कोई खाता सम्बन्ध तो नहीं है लेकिन बैंक की सुविधाओं का लाभ उठाने के लिये अक्सर बैंक जाते हैं जैसे ड्राफ्ट खरीदने के लिये, चेक से पैसे निकलवाने के लिये इत्यादि। तकनीकी तौर पर, यह वह गैर ग्राहक होते हैं जिन्होंने बैंक शाखा में अपना कोई खाता नहीं खोल रखा होता है।

द.सम्भावित/क्षमता पूर्ण ग्राहक : यह वह ग्राहक होते हैं जो बैंक के साथ खाता सम्बन्ध रखना चाहते हैं। कोई भी व्यक्ति ग्राहक तब भी बन सकता है जब खाता खोलने के लिये फार्म विधिवत भरा और हस्ताक्षरित करके बैंक को जमा करदिया गया हो और खाता खोलने के लिए बैंक ने स्वीकार भी कर लिया हो। तब भी बैंक द्वारा अपनी पुस्तक या अभिलेख में कोई खाता वास्तव में नहीं खुला हो। पहले, बैंक में खाता खोलने के लिये न्यूनतम राशि जमा करनी होती है, पर अब ऐसा नहीं है। रिजर्व बैंक के निर्देशों के अनुसार भारत में बैंक द्वारा झंझटरहित खाता खोला जा सकता है। झंझटरहित खाता 'शून्य' या 'अल्प' राशि के साथ खोला जा सकता है। 'ग्राहक' शब्द शाखा के सम्बन्ध में ही प्रयोग किया जाता है जहां पर खाता खोला हुआ है। व्यक्ति को बैंक की अन्य शाखाओं में ग्राहक की तरह नहीं माना जाता।

हालांकि 'कोर बैंकिंग सोल्यूशन' के कार्यान्वयन होने से ग्राहक बैंक की किसी शाखा का ग्राहक न होकर, बैंक का ग्राहक बन गया है। जिसकी वजह से ग्राहक बैंक की किसी भी शाखा से खाते का संचालन कर सकता है। लेकिन अगर कोई परेशानी की स्थिति उत्पन्न होती है तो वह उसी शाखा के पास जायेगा। जहां उसका खाता खुला हुआ है न कि किसी अन्य शाखा के पास। बैंक और ग्राहक के बीच सम्बन्ध इन गतिविधियों पर निर्भर करते हैं बैंक द्वारा ग्राहकों को सेवायें उपलब्ध कराना या ग्राहकों द्वारा उन सेवाओं का लाभ उठाना। अतः बैंकर और ग्राहक के बीच का रिश्ता लेन–देन का होता है। बैंक का कारोबार ग्राहकों के साथ मजबूत सम्बन्धों पर निर्भर करता है। बैंकर और ग्राहक के बीच स्वस्थ सम्बन्धों के निर्माण के लिये 'विश्वास' बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस ईकाई का उद्देश्य बैंकर और ग्राहक के बीच संबंधों से विद्यार्थियों को अवगत कराना है।

8.3.1 बैंकिंग की परिभाषा

बैंकर शब्द का प्रयोग बैकिंग विनियम अधिनियम (**BRAct**) 1949 में परिभाषित नहीं किया है लेकिन बैकिंग क्या है, यह परिभाषित किया गया है। बैकिंग विनिमय अधिनियम की धारा 5 (b) के अनुसार बैकिंग का अर्थ उधार या निवेश के उद्देश्य के लिये जनता से ली गयी धनराशि है जो कि मांग पर प्रतिदेय या अन्यथा चेक, ड्राफ्ट, आदेश या अन्यथा द्वारा निकाली जा सके। **पराक्रम्य लिखत**अधिनियम, 1881 के अनुसार, बैंकर के अन्तर्गत बैकिंग का काम करने वाला प्रत्येक व्यक्ति तथा डाकघर बचत बैंक सम्मिलित है। विनिमय पत्र अधिनियम 1882 की धारा 2 के अनुसार बैंकर का अर्थ उन व्यक्तियों की एक संस्था से हैं जो बैंकिंग कारोबार करते हैं चाहे निगमित हो या न हो। बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 5(e) के अनुसार, बैंकिंग कम्पनी वह कम्पनी है जो भारत में बैकिंग का कार्य करती हो। बैंकर या बैकिंग कम्पनी ही बैकिंग सम्बन्धी गतिविधियां चलाती हैं। बैंकर या बैकिंग कम्पनी का अर्थ धारा 5 (b) से समझ सकते हैं जिसके अनुसार– यह एक निगमित निकाय के रूप में,

अ. जनता से जमा स्वीकार करती है
ब. उधार देना या
स. जमा राशि के माध्यम से एकत्रित धन निवेश करना
द. मांग पर या किसी अन्य माध्यम से जमा राशि की निकासी की अनुमति देना।

जनता से स्वीकार की हुई जमा राशि से मतलब है कि बैंक किसी से भी जमा स्वीकार करता है जो किसी उद्देश्य के लिये धन प्रस्तावित करता है। जब तक व्यक्ति का बैंक के पास खाता खुला हुआ न हो, तब तक वह जमा राशि स्वीकार

नहीं कर सकता। बैंक में जमा करने के लिये आवश्यक है बैंक से खाता सम्बन्ध होना। बैंक अवांछनीय व्यक्तियों के खाता खोलने से मना कर सकती है। खाता खोलने का अधिकार बैंक के पास है। भारतीय रिजर्व बैंक ने खाता खोलने के लिये कुछ मानदण्ड बनाये हैं ''अपने ग्राहक को जानिये'' (KYC) दिशानिर्देश तथा बैंकों को कठोरता से इसका पालन करना है। बी आर अधिनियम की धारा 5 (ख) में उल्लिखित गतिविधियों के अलावा अधिनियम की धारा 6 में वर्णित गतिविधियों का भी बैंक संचालन करता है।

8.3.2 अपने ग्राहक को जानिये : दिशा निर्देश और ग्राहक

रिजर्व बैंक द्वारा जारी किये गये दिशा निर्देशों के अनुसार 'अपने ग्राहक को जानिये'' में ग्राहक शब्द का अर्थ है—

1.कोई व्यक्ति या संस्था जो खाता और/ या व्यापार सम्बन्ध बैंक के साथ रखता हो,

2.एक जिसने किसी की ओर से खाता बनाया रखा हो (यानि लाभकारी मालिक)

3. किए गए अन्तरणों के लाभार्थी व्यवसायिक बिचौलियों द्वारा जैसे शेयर दलाल, चार्टेड अकाउटेन्ट, वकील इत्यादि जिन्हें विधि के अन्तर्गत इजाजत है।

4.कोई व्यक्ति या संस्था जो कि लेन—देन से जुड़ी हो, जिसकी महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा या अन्य जोखिमों को बैंक के लिये उत्पन्न कर सकती हो जैसे तार (wire) हस्तान्तरण या उच्च मूल्य डिमांड ड्राफ्ट एकल लेन—देन के रूप में।

8.3.3 बैंकर ग्राहक सम्बन्ध

बैंक विश्वास आधारित रिश्ता है। बैंक और ग्राहक के बीच रिश्ते कई तरह के होते हैं। बैंक और ग्राहक के बीच के सम्बन्ध कई प्रकार के लेन—देन पर निर्भर करते हैं। इस प्रकार इनके रिश्ते, अनुबन्ध और निश्चित अवधि व शर्तों पर आधारित होते हैं। इन सम्बन्धों में कुछ अधिकार और दायित्व बैंकर व ग्राहकों को प्रदान होते हैं। हालांकि बैंक और उसके ग्राहकों के बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध लम्बे समय तक चलने वाले रिश्ते होते हैं। कुछ बैंकों का यह कहना है कि उनका ग्राहकों के साथ पीढ़ी दर पीढ़ी बैकिंग रिश्ता है। बैंकर ग्राहक का सम्बन्ध विश्वास पर आधारित है। बैंकर द्वारा सम्बन्धित नियम व शर्ते तीसरी पार्टी को बतायी नहीं जा सकती।

8.3.4 सम्बन्धों का वर्गीकरण

बैंक व उसके ग्राहकों के बीच के सम्बन्धों को मोटे तौर पर सामान्य सम्बन्ध व विशेष सम्बन्ध में वर्गीकृत किया जा सकता है। बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 5 (ख) को देखे तो हम नोटिस करेंगे कि बैंक व्यापार उधार के उद्देश्य को पूरा करने के लिये जमा राशि स्वीकारता है। अर्थात दो मुख्य गतिविधियों से उत्पन्न सम्बन्ध, सामान्य सम्बन्ध कहलाते हैं। इन दो गतिविधियों के अलाला भी अन्य कार्यों का आयोजन करता है जो कि बैकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 6 में वर्णित है।

8.3.5 सामान्य सम्बन्ध

देनदार–लेनदार : जब ग्राहक को खाता खोलना होता है तो वह खाता खोलने का फार्म भरकर व हस्ताक्षर करके बैंक को देता है। फार्म पर हस्ताक्षर करके वह बैंक के साथ एक समझौते/अनुबन्ध में प्रवेश करता है। जब ग्राहक बैंक में अपने खाते में पैसे जमा करता है तो बैंक ग्राहक का ऋणी हो जाता है और ग्राहक लेनदार (creditor) हो जाता है। ग्राहक द्वारा जमा किया हुआ पैसा बैंक की सम्पत्ति बन जाती है और बैंक को अधिकार है कि वह अपनी पसन्द से धन का इस्तेमाल करे। बैंक बाध्य नहीं है जमाकर्ता को सूचित करने के लिये कि वह धनराशि का उपयोग किस तरीके से कर रहा है। बैंक पैसे उधार लेता है और जब जमाकर्ता की मांग हो तब बैंकर को भुगतान करना होता है। बैंक की स्थिति सामान्य देनदारों से काफी अलग है। बैंकर अपने आप से भुगतान नहीं करता क्योंकि बैंकर को स्वेच्छा से कर्ज चुकाना आवश्यक नहीं है। मांग उसी शाखा में जाकर की जा सकती है जहां उनका खाता खुला हुआ है या मौजूद हो व सही तरीके से कार्य दिवसों व कार्य के घण्टों (working hours) में ही किया जा सकता है।

खाता खोलने के समय फार्म पर नियम व शर्तें उल्लिखित होती है जिसका पालन ऋणी (debtor) को करना होता है। यद्यपि नियम व शर्तें खाता खोलने वाले फार्म पर नहीं होती, लेकिन खाता खोलने वाले फार्म पर घोषणा की जाती है कि नियम व शर्तें पढ़ व समझ ली गयी हैं। हालांकि नियम व शर्तों का उल्लेख पासबुक में किया गया है जो केवल खाता खोलने के पश्चात ग्राहक को प्राप्त होती है।

कुछ समय पहले, कुछ बैंकों में खाता खोलने समय हस्तलिखित पत्र होता था जिसमें खाता खोलने के फार्म के साथ नियम व शर्तें भी साथ में मिलती थीं। लेकिन कुछ समय बाद इस प्रथा को बंद कर दिया। सुविधा के लिये, कुछ बैंकों ने बेबसाइट के जरिये खाता खोलने का फार्म, नियम और शर्तें और विभिन्न सेवाओं से जुड़ी जानकारी अपलोड कर रखी हैं।डिमांड ड्राफ्ट, मेल/टेलीग्राफिक ट्रान्सफर जारी करते समय, बैंक अपने ही पैसे का ऋणी बन जाता है, भुगतानकर्ता/लाभार्थी के लिये।

8.3.6 ऋणदाता देनदार

पैसे उधार देना बैंक की सबसे महत्वपूर्ण गतिविधियों में से एक है। बैंक द्वारा जुटाये गये संसाधन ऋण देने के लिये उपयोग किये जाते हैं। जो ग्राहक बैंक से उधार लेता है वह बैंक के पैसे का मालिक होता है। किसी भी ऋण/अग्रिम खाते के मामले में, बैंकर लेनदार होता है और ग्राहक ऋणी। व्यक्ति बैंक से जमा किये हुये पैसे को ही उधार के रूप में बैंक से मांगता है। ऋण लेने के लिये दस्तावेजों को कार्यान्वित करना और बैंक को प्रतिभूति के रूप में कुछ रखवाना, ऋण लेने से पहले जरूरी है। जमा/ऋण खाता खोलने के साथ ही बैंक विविध सेवायें उपलब्ध कराता है जो रिश्तों को और अधिक व्यापक व जटिल बनाता है। उपलब्ध करायी गयी सेवाओं और लेन–देन की प्रकृति पर निर्भर करता है कि बैंक निक्षेपग्रहीता (bailee), ट्रस्टी, एजेंट, पट्टेदार, संरक्षक आदि में से किस रूप में कार्य करें।

8.3.7 बैंक न्यासी के रूप में

भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 की धारा 3 के अनुसार, "'न्यास' एक दायित्व होता है जो सम्पत्ति के स्वामित्व के साथ ही जुड़ा होता है। यह उस विश्वास से उत्पन्न होता है, जो सम्पत्ति के स्वामी में रखा जा जाता है और सम्पत्ति के स्वामी द्वारा ग्रहण किया जाता है या उसके द्वारा घोषित या ग्रहण किया जाता है और उसका उद्देश्य किसी अन्य व्यक्ति को या किसी अन्य व्यक्ति तथा सम्पत्ति के स्वामी को लाभ पहुँचाना होता है।" अर्थात् लाभार्थी की ओर से न्यासी सम्पत्ति का धारक होता है।भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 की धारा 15 के अनुसार, न्यासी बाध्य है कि वह न्यास– सम्पत्ति का सौदा करते समय ध्यान रखे कि व्यक्ति अपनी सामान्य समझ से इस तरह सम्पत्ति का सौदा करे जैसे कि वह स्वयं की है और इसके विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, न्यासी जिम्मेदार नहीं होगा, न्यास–सम्पत्ति में हुये किसी भी प्रकार की हानि, विनाश (destruction) या तबाही (deterioration) के लिये। न्यासी को अधिकार है कि वह व्यय की प्रतिपूर्ति करे (भारतीय न्यास अधिनियम की धारा 32)।विश्वास की नजर से देखें तो बैंक ग्राहक सम्बन्ध एक विशेष अनुबन्ध है। जब कोई व्यक्ति विश्वास रखते हुये अपनी मूल्यवान वस्तुयें किसी दूसरे व्यक्ति को सौंपता है इस इरादे से कि मांगने पर वस्तुयें उसे लौटा दी जायेंगी और इस तरह उन दोनों के बीच का सम्बन्ध न्यासी और न्यासकर्ता (trustier) का हो जाता है। ग्राहक कुछ कीमती चीजें या प्रतिभूतियां बैंक के पास सुरक्षित रखवाते हैं या किसी विशिष्ट उद्देश्य से बैंक में पैसे जमा कराते हैं तब ऐसे मामलों में बैंक न्यासी के रूप में कार्य करता है। बैंक सामान को सुरक्षित रखने के लिये शुल्क वसूल करता है।

8.3.8 उपनिहिती – उपनिधाता

भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 148 'उपनिधान', 'उपनिहिती' और 'उपनिधाता' को परिभाषित करता है। उपनिधान से तात्पर्य, किसी उद्देश्य को पूरा करने के लिये माल का परिदान (delivery of goods) एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को, अनुबन्ध के द्वारा जिसका उद्देश्य पूरा होने पर या तो वापिस कर दिया जायेगा अन्यथा देने वाले व्यक्ति के निर्देशों के अनुसार निपटा दिया जाये। माल पहुँचाने वाले व्यक्ति को 'उपनिधाता' (baitor) कहते हैं। जिस व्यक्ति के सुपुर्द किया जाता है, उसे 'उपनिहिती' (bailee) कहते हैं। बैंक अपने द्वारा दी गयी अग्रिम को सुरक्षित करने के लिये मूर्त प्रतिभूतियां रखते हैं। कुछ मामलों में प्रतिभूति माल का भौतिक कब्जा (गिरवी), कीमती सामान, बांड आदि रखे जाते हैं। प्रतिभूतियों का भौतिक कब्जा करते समय बैंक उपनिहिती हो जाता है और ग्राहक 'उपनिधाता'। बैंक ग्राहकों की वस्तु, कीमती सामान, प्रतिभूतियां इत्यादि सुरक्षित धरोहर में रखते हैं और उपनिहिती के रूप में कार्य करते हैं। एक उपनिहिती के रूप में बैंक को जमानती माल की सुरक्षा करनी चाहिये।

8.3.9 पट्टादाता – पट्टेदार

सम्पत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 105 के द्वारा पट्टादाता, पट्टेदार, प्रीमियम और किराये को परिभाषित किया गया है। धारा के अनुसार 'अचल सम्पत्ति का पट्टा अंतरण अधिकार है जिसके द्वारा ऐसी सम्पत्तियों का आनन्द लेने का जो कि कुछ समय के लिये बनायी गयी हो, व्यक्त या अव्यक्त या शाश्वत मूल्य का भुगतान या वादा के प्रतिफल में, या धन, फसलों में हिस्सा, सेवा या मूल्य की कोई वस्तु, आविधिक प्रदान की जाने वाली या निर्दिष्ट अवसरों पर अंतरिती द्वारा अंतरणकर्ता को हस्तांतरित किया गया हो, जो कि दी गयी शर्तों पर उसे स्वीकार्य हो।

8.3.10 पट्टादाता, पट्टेदार, प्रीमियम और किराये की परिभाषा

1.अंतरणकर्ता को पट्टादाता कहा जाता है।
2.अंतरिती को पट्टादाता कहा जाता है।
3.कीमत को प्रीमियम कहा जाता है।
4.धन, हिस्सा, सेवा या अन्य वस्तुएं जो कि प्रदान की गयीं को किराया कहा जाता है।

ग्राहकों को बैंकों द्वारा सुरक्षित जमा लॉकर उपलब्ध कराना सहायक सेवा (ancillary service) है। अपने ग्राहकों को सुरक्षित जमा प्रदान करने के साथ वाल्ट लॉकर सुविधा उपलब्ध कराने के लिये बैंक को सुरक्षित जमा प्रदान करने के साथ वाल्ट लॉकर सुविधा उपलब्ध कराने के लिये बैंक को अपने ग्राहकों के साथ अनुबंध (agreement) करना होता है। अनुबन्ध को 'बताने का ज्ञापन' (memorandum of letting) कहा जाता है और स्टाम्प शुल्क के साथ है। बैंक और ग्राहक के बीच सम्बन्ध पट्टादाता और पट्टेदार का होता है। बैंक अपनी अचल सम्पत्ति पट्टे पर (अपने ग्राहकों के लिये लॉकर किराये पर देना) ग्राहकों को देती है और उन्हें अधिकार देती है कि वह कुछ समय सीमा तक उसका उपयोग कर सकें जैसे– कार्यालय/बैंकिंग कार्यों के समय पर और इस सुविधा के लिये बैंक किराया चार्ज करती हैं। बैंक के पास अधिकार है लॉकर को तोड़ने व खोलने का, अगर लॉकर धारक किराये का भुगतान नहीं करता है। अगर लॉकर में रखी हुई सामग्री का कोई नुकसान होता है तब बैंक किसी प्रकार की देनदारी या जिम्मेदारी ग्रहण नहीं करता है। ग्राहकों द्वारा लॉकर में रखे गये सामान को बैंक बीमा नहीं करवाता है।

8.3.11 अभिकर्ता एवं मालिक

भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 182 'अभिकर्ता' को परिभाषित करते हुए कहती है जो किसी दूसरे के लिए कार्य करता है या तीसरे के साथ व्यवहार करते हुए दूसरे का प्रतिनिधित्व करता है। जिनके लिये व्यक्ति इस तरह का कृत्य या प्रतिनिधित्व करता है, उन्हें मालिक कहा जाता है। अर्थात अभिकर्ता वह व्यक्ति है जो मालिक की ओर से कार्य करता है और उत्तरार्द्ध के व्यक्त या अव्यक्त अधिकार के अन्तर्गत और ऐसे प्राधिकार के अन्तर्गत किये गये कार्यों के लिये मालिक बाध्य होगा। किसी पक्ष के लिये अभिकर्ता द्वारा किये गये कृत्य के लिये मालिक उत्तरदायी होता है। बैंक धनादेश बिल इत्यादि एकत्र करता है और ग्राहकों की ओर से विभिन्न प्राधिकारियों को भुगतान करता है जैसे किराया, टेलीफोन बिल, बीमा प्रीमियम इत्यादि। अपने ग्राहकों द्वारा दिये गये निर्देशों का पालन बैंक को भी करना होता है। ऐसे सभी मामलों में बैंक अभिकर्ता के रूप में कार्य करता है अपने ग्राहकों के लिये और सेवाओं के लिये शुल्क भी लेता है। भारतीय संविदा अधिनियम के अनुसार, अभिकर्ता शुल्क प्राप्त करने का अधिकार रखता है। किसी प्रकार का शुल्क स्थानीय धनादेशों की वसूली पर नहीं लगाया जायेगा। शुल्क तभी लगाया जायेगा जब समाशोधन गृह से धनादेश वापिस लौट आये।

अभिरक्षक के रूप में

अभिरक्षक वह व्यक्ति होता है जो किसी वस्तु के कार्यवाहक के रूप में कार्य करता है। बैंक कानूनी तौर पर ग्राहक की प्रतिभूतियों की जिम्मेदारी लेता है। डीमैट खाता खोलते समय बैंक संरक्षक बन जाता है।

गारन्टर के रूप में

बैंक अपने ग्राहकों की ओर से गारन्टी देते हैं। गारंटी एक आकस्मिक अनुबंध है। भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 31 के अनुसार, गारन्टी एक 'आकस्मिक अनुबन्ध' है। आकस्मिक अनुबंध एक अनुबन्ध है, कुछ करने या न करने के लिये, अगर कोई घटना, इस तरह के अनुबन्ध के लिये संपार्श्विक, होती या नहीं होती है। इस प्रकार यह देखा गया है कि बैंकर – ग्राहक सम्बन्ध एक लेनदेन का सम्बन्ध है।

बैंकर और ग्राहक के बीच रिश्तों का समापन

बैंकर और ग्राहक के बीच रिश्तों का समापन होता है–

1. ग्राहक की अगर मौत या वह दिवालिया या पागल हो गया हो,
2. ग्राहक सवेच्छा से खाता बंद कर रहा हो (यानी स्वैच्छिक समाप्ति)
3. कंपनी का परिसमापन
4. बैंक द्वारा खाते का समापन, नोटिस देने के पश्चात
5. विशिष्ट लेन–देन या अनुबन्ध का पूरा होना

बैंकर और ग्राहक के बीच सम्बन्धों को विकसित करने के लिये दोनों को कुछ कर्तव्य निभाना होता है।

8.3.12 बैंकर के कर्तव्य

ग्राहक के लिये बैंकर के कुछ कर्तव्य होते हैं जो कि निम्न प्रकार से हैंः–

क.ग्राहक के खाते की गोपनीयता बनाये रखना।

ख.ग्राहकों द्वारा अपने खातों से भुगतान हेतु चेक का आदर करने का कर्तव्य एवं उनके लिए चेक, बिल आदि एकत्र करना।

ग.बिलों का भुगतान करना इत्यादि का कर्तव्य, ग्राहकों के निर्देशानुसार।

घ.उचित सेवायें प्रदान करने का कर्तव्य।

ड़.ग्राहक द्वारा दिये गये निर्देशानुसार कार्य करने का कर्तव्य। अगर निर्देश नहीं दिये जाते तो बैंकर उसी तरह कार्य करें जिस तरह के कार्य की उम्मीद रखी जाती है।

च.आवधिक कथन (periodical statements) प्रस्तुत करने का कर्तव्य अर्थात ग्राहकों को उनके खातों की स्थिति की जानकारी देना।

छ.रखी गयी वस्तुओं को तीसरी पार्टी को जारी नहीं करना बिना ग्राहक की अनुमति से।

8.3.13 गोनीयता बनाये रखने का कर्तव्य

बैंक का कर्तव्य है कि वह ग्राहकों के खातों की गोपनीयता बनाये रखें। गोपनीयता बनाये रखना मात्र नैतिक कर्तव्य ही नहीं है बल्कि बैंक कानूनी तौर पर बाध्य है ग्राहकों के मामलों को गुप्त रखने के लिये। इस कर्तव्य के पीछे यह सिद्धान्त है कि अगर ग्राहक के लेन–देन के बारे में किसी अनाधिकृत व्यक्ति को पता चलता है तो ग्राहक की प्रतिष्ठा को नुकसान हो सकता है और बैंक को इसके लिये जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। गोपनीयता को बनाये रखने का कर्तव्य सिर्फ खाते को बन्द कराना या खाते धारक की मृत्यु पर समाप्त नहीं हो जाता।

बैंकिंग कम्पनियाँ (उपक्रमों का अर्जन तथा अन्तरण) अधिनियम, 1970 की धारा 13 के अनुसार हर नया बैंक निरीक्षण करेगा कानून, प्रथाओं और प्रथागत प्रयोगों जो कि बैंकरों के बीच हो, अन्यथा विधि द्वारा आवश्यक को छोड़कर और विशेष रूप से, किसी भी सम्बन्धित जानकारी का खुलासा नहीं करेगा या उसके घटकों के मामलों को छोड़कर व ऐसी परिस्थितियों को छोड़कर जो कि कानून के अनुसार या बैंकरों में प्रचलित व्यवहार और रीति के अनुरूप हो आवश्यक या संगत हो नये बैंकों की जानकारी प्रकट करने के लिये।ग्राहक की गोपनीयता बनाये रखना अनुबन्ध की शर्तों में निहित है जिसके लिये खाता खोलते समय बैंक ग्राहक के साथ एक रिश्ता बनाता है। बैंक सिर्फ लेन–देन की गोपनीयता नहीं बनाता, बल्कि एटीएम/डेबिट कार्ड द्वारा संचालन के सम्बन्ध में भी गोपनीयता बनाये रखता है। बैंक को 10 पिन की भी देखभाल करनी होती है ताकि वह किसी गलत हाथों में न चला जाये, यह भी गोपनीय रखना जरूरी है।

गोपनीय बनाये रखने में विफलता– धन और प्रतिष्ठा की रक्षा में विफल होने पर बैंक उत्तरदायी है, नुकसान का भुगतान करने के लिये। गोपनीयता बनाये रखने के कर्तव्य को पूरा करने में असफल हो जाये और ग्राहक से सम्बन्धित जानकारी का खुलासा हो जाये या खाते का संचालन किसी अनाधिकृत व्यक्ति द्वारा किया जाये तो बैंक पूर्णरूप से नुकसान की भरपायी करने के लिये उत्तरदायी है।

बैंक तीसरे पक्ष के लिये भी जिम्मेदार हो सकता है अगर गलत तरीके से प्रकटीकरण किया गया हो जिससे तीसरे पक्ष के हित को हानि हो। अगर बैंक जानबूझकर गलत जानकारी देता है तो इसका मतलब गलत प्रस्तुतीकरण से होगा। वह परिस्थितियां जब बैंकर ग्राहक के खाते की जानकारी का खुलासा कर सकता है, वह निम्न प्रकार से है–

अ.कानून की बाध्यता के तहत

ब.बैंकिंग प्रथाओं के तहत

स.राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिये

द.बैंक के खुद के हितों की रक्षा के लिये

य.ग्राहक की व्यक्त या अव्यक्त सहमति पर

कानून की बाध्यता के तहत प्रकटीकरण

बैंक विभिन्न अधिकारियों को जानकारी का खुलासा कर सकता है जिन्हें शक्तियां प्राप्त है अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के अन्तर्गत और बैंक जरूरत पड़ने पर ग्राहक के खाते की जानकारी उपलब्ध करा सकता है, जो कि निम्न है–

1.बैंकर्स बुक आफ एडवीडेन्स अधिनियम, 1891 की धारा 4
2.दिवानी प्रक्रिया संहिता अधिनियम, 1908 की धारा 94(3)
3.भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 45 (ब)
4.बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 26
5.उपहार कर अधिनियम 1958 की धारा 36
6.आयकर अधिनियम 1961 की धारा 131, 133
7.भारतीय उद्योग विकास बैंक अधिनियम, 1964 की धारा 29
8.विदेशी विनिमय प्रबंधन अधिनियम, 1999 की धारा 120f
9.प्रिवेन्शन ऑफ मनी लान्ड्रिंग एक्ट, 2002 की धारा 12

बैंक उतनी ही जानकारी दे सकता है जितनी (अतिरिक्त जानकारी उपलब्ध नहीं करायी जाती) किसी व्यक्ति के लिखित अनुरोध पर मांगी जाये जिसको ऊपर लिखे गये अधिनियमों के अनुसार शक्ति प्राप्त हो। ग्राहक को सूचित कर दिया जाता है कि उसके खाते की जानकारी किसी को दी जा रही है।

8.3.14 बैंकिग प्रथाओं के तहत प्रकटीकरण

व्यक्ति की वित्तीय स्थिति और ऋण पात्रता को जानने के लिये बैंक किसी, दूसरे बैंक से, जहां उसने खाता खोल रखा है, से जानकारी प्राप्त कर सकता है। यह बैंकों के बीच की प्रथा और मौजूदा ग्राहकों की प्रकल्पित सहमति है। क्रेडिट जानकारी कोडिड संदर्भ में दूसरे बैंकों को प्रस्तुत की जाती है, IBA प्रारूप में व बिना हस्ताक्षर के।

समुचित खातों को प्रदान करने का कर्तव्यः

बैंकों का कर्तव्य है कि वह ग्राहकों को उनके द्वारा खातों से किये गये लेन–देन की पूर्ण जानकारी दे। बैंक के लिये आवश्यक है कि वह खाते /पासबुक के कथनों की जानकारी ग्राहक को उपलब्ध कराये जिसमें खाते में किये गये डेबिट और क्रेडिट (लेनदेन) स्पष्ट किये गये हों।

8.3.15 धनादेश भुगतान करने का दायित्व

बैंकिंग का अर्थ है जमा राशियों को स्वीकार करना जिससे चैक, ड्राफ्ट, आदेश या अन्यथा के द्वारा पैसा निकाला जा सके, बैंकर ग्राहकों द्वारा दिये गये चैक भुगतान करने के लिये बाध्य है। **पराक्रम्य लिखत** अधनियम, 1881 की धारा 31 के

अनुसार– ''किसी चैक के आहार्थी (drawee) को जिसके पास आहरणकर्ता (drawer) की पर्याप्त निधि जमा है, उस समय चैक का भुगतान करना होगा, जब उससे ऐसा करने के लिये विधिवत कहा जाये और यदि वह भुगतान करने में चूक करे तो उसे ऐसी चूक के कारण आहरणकर्ता को हुई किसी हानि अथवा क्षति के लिये क्षतिपूर्ति करनी होगी।''

इसलिये बैंक का कर्तव्य है कि वह खाता धारक के दिये हुये चैकों का भुगतान करे यदि निम्नलिखित बतायी गयी बातें पूर्ण हों–

चैक ठीक तरीके से तैयार किया गया हो यानी तारीख, शब्दों व अंकों में लिखी गयी राशि ठीक तरह से लिखी हो और न ही पुराना हो, कटा–फटा न हो व उत्तर दिनांकित (Post docted) भी न हो और साथ ही साथ खाताधारक के हस्ताक्षर बैंक में दर्ज नमूने जैसे हों। चैक का भुगतान वहीं से होगा जहां पर खाता खुला हुआ है। (प्रौद्योगिकी और कोर बैंकिग समाधान के कार्यान्वयन की वजह से ग्राहक बैंक की दूसरी शाखाओं में चैक प्रस्तुत कर सकते हैं। आरबीआई ने बैंकों को सलाह देते हुये कहा कि खाता धारकों को मल्टीसिटी चैक जारी किये जायें)।

अ.खाते में पर्याप्त शेष राशि/धन (balance) हो और शेष राशि/धन इतना हो कि चैक के भुगतान ठीक से किये जा सकें।

ब.भुगतान के लिये चैक को कार्य दिवस व शाखा के कार्य समय में प्रस्तुत किया जाये।

स.चेक पर पृष्ठांकन नियमित और समुचित हो।

द.आहरणकर्ता के द्वारा भुगतान का चेक रद्द/प्रत्यादेशित (countermanded) न हो।

<u>चैक भुगतान निम्न परिस्थितियों में समाप्त हो जाता है–</u>

अ.जब खाता धारक ने चैक का भुगतान न करने के लिये बैंक को निर्देश दिया हो,

ब.आहरणकर्ता की मृत्यु की सूचना पाने पर,

स.(गार्निशी) अनुऋणी आदेश खाते में धन के साथ संलग्न हो या बैंकर के द्वारा आयकर संलग्न आदेश प्राप्त हुआ हो,

द.चैक के भुगतान के समय आहरणकर्ता पागल या दिवालिया हो गया हो।

<u>बैंक निम्न परिस्थितियों में चैक का भुगतान करने को मना कर सकता है–</u>

1.जब खाते में पर्याप्त धन न हो,

2.जब सम्बन्धित पक्ष की दावेदारी में त्रुटि हो,

3.जब चैक में कुछ कमी हो (भुगतान से आगे की तारीख, चुराया, शब्दों और अंकों में अलग–अलग लिखा होना, इत्यादि)

4.जब खाते में शेष राशि किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिये निर्धारित हो और बाकी शेष राशि धनादेश का भुगतान करने के लिये पर्याप्त नहीं हो।

8.3.16 बैंकर के अधिकार

ऐसा नहीं है कि बैंक के अपने ग्राहकों की तरफ सिर्फ कर्तव्य है बल्कि उसके पास कुछ अधिकार भी हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

1.सामान्य धारणाधिकार

2.समायोजन का अधिकार

3.विनियोजन का अधिकार

4.ग्राहक के आदेश के अनुसार कार्य करने का अधिकार

5.ब्याज लगाना, कमीशन, प्रासंगिक प्रभार या शुल्क इत्यादि का अधिकार

8.3.17 धारणाधिकार

धारणाधिकार लेनदार (Creditor) को यह अधिकार प्रदान करता है कि वह ऋण के पुर्नभुगतान के बदले संरक्षा में रखी वस्तुएं, प्रतिभूतियां आदि रोक ले जब तक इसके विपरीत कोई व्यक्त या अव्यक्त अनुबन्ध न हो। यह अधिकार है, विशेष वस्तुओं या प्रतिभूतियों या अन्य चल सम्पत्ति जिनका स्वामित्व किसी दूसरे व्यक्ति में निहित है, को अपने कब्जे में रखने का एवं कब्जा तब तक बनाया जा सकता है जब तक कि स्वामी ऋण उन्मुक्त न हो जाये या कब्जा करने वाले को दायित्व मुक्त न कर दे। लेनदार (बैंक) देनदार की प्रतिभूतियों को रख सकता है, पर उन्हें बेच नहीं कर सकता। धारणाधिकार दो प्रकार के होते हैं–

1. विशेष धारणाधिकार 2. सामान्य धारणाधिकार

8.3.18 विशेष धारणाधिकार

विशेष धारणाधिकार अधिकार देता है कि केवल उन वस्तुओं पर तब तक अपना कब्जा बनाए जा सकता है जब तक उनसे संबंधित राशि बकाया है। अगर बैंक ने किसी विशेष उधारी के लिए कोई विशेष प्रतिभूति प्राप्त की है तो बैंकर का अधिकार विशेष धारणाधिकार में बदल जाता है।

(b) सामान्य धारणाधिकार

बैंक के पास सामान्य धारणाधिकार का अधिकार उधार लेने वाले के लिये हैं। बैंक के सामान्य धारणाधिकार में निहित सभी देय राशि आती है न कि कोई विशेष देय राशि। यह बैंक का वैधानिक अधिकार है और संविदा (agreement) के अभाव में भी यह उपलब्ध है लेकिन गिरवी का अधिकार इसमें निहित नहीं है। सामान्य धारणाधिकार के अनुसार एक व्यक्ति अपने कब्जे में आयी हुई दूसरे की सम्पत्ति को तब तक रोक सकता है जब तक दूसरे व्यक्ति के ऊपर उसके सभी दावे सन्तुष्ट नहीं हो जाते। भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 171 के द्वारा बैंक को

सामान्य धारणाधिकार का अधिकार प्राप्त है। धारा के अनुसार '' बेंकर, फैक्टर, घाटवाले, उच्च न्यायालय के अटर्नी और बीमा दलाल अपने को उपनिहित किसी माल को, तत्प्रतिकूल संविदा के अभाव में, समस्त लेखाओं की बाकी के लिये, प्रतिभूति के रूप में रोके रख सकेंगे, किन्तु अन्य किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि वे अपने को उपनिहित माल ऐसी बकाया के लिये प्रतिभूति के रूप में रोके रख सके, जब तक कि कोई अभिव्यक्त संविदा उसे प्रभावित न करती हो''।
बैंक को धारणाधिकार का अधिकार तभी है, जब उसने लेनदार के रूप में वस्तुयें व प्रतिभूतियों को प्राप्त किया है। अग्रिम देते समय बैंक अपने पास दस्तावेजों को रख लेता है। यह दस्तावेज साधारण धारणाधिकार को विवक्षित गिरवी में परिवर्तित कर देते हैं। बैंकर धारणाधिकार सामान्य धारणाधिकार से अधिक है क्योंकि यह विवक्षित गिरवी है और उसे किसी व्यातिक्रम की स्थिति में (default) माल को बेचने का अधिकार भी है। धारणाधिकार के अन्तर्गत बैंक को माल की बिक्री का अधिकार है। सीमा की विधि से बैंकरों के धारणाधिकार के अधिकार वर्जित नहीं है (Law of Limitation)।

<u>धारणाधिकार के अधिकार का क्रियान्वयन</u>

1.बैंक को कानूनी रूप सौंपे गये माल व प्रतिभूतियों पर धारणाधिकार का अधिकार है एवं वह ऋण लेने वाले के नाम पर स्थायी है।

2. विशेष प्रतिभूति के विरूद्ध लिये गये ऋण के भुगतान कर देने के बाद भी बैंक को धारणाधिकार का अधिकार है कि उसी उधारकर्ता की बकाया राशि बैंक पर देय है।

3.धारणाधिकार का अधिकार वचन पत्र, धनादेश, शेयर सार्टिफिकेट, बांड डिबेचंर आदि पर प्रयोग कर सकता है।

<u>जहाँ धारणाधिकार के अधिकार का क्रियान्वयन नहीं हो सकता</u>

धारणाधिकार के अधिकार का क्रियान्वयन नहीं हो सकता अगर वस्तुयें सुरक्षित अभिरक्षा के लिये प्राप्त की गई हों, न्यासी के रूप में प्राप्त सम्पत्तियां या ग्राहक के अभिकर्ता के रूप में प्राप्ति या भूलवश बैंक के पास रह गयी हो।

8.3.19 समायोजन का अधिकार

बैंकर के पास अधिकार है कि वह अपने ग्राहकों के खातों को समायोजित कर सके। बैंक को प्राप्त यह एक वैधानिक अधिकार है कि यदि एक ही ग्राहक के कुछ खातों में ऋणात्मक अवशेष हो (यानी उतने धन के लिये बैंक का ऋणी हो) और कुछ अन्य खातों में ग्राहक का धनात्मक अवशेष हो (यानी उतने धन के लिये बैंक ग्राहक का ऋणी हो), तो बैंक को यह अधिकार होता है कि वह उन सब खातों की धनराशियों को समायोजित कर ले और अन्तिम रूप से पाये गये ऋणात्मक या

धनात्मक (जैसी स्थिति हो) अवशेषों को तदनुसार निपटाये अर्थात अन्तिम ऋणात्मक अवशेष को ग्राहक से वसूल कर ले या अन्तिम धनात्मक अवशेष को ग्राहक को वापस कर दें। यह अधिकार एक ही बैंक की अन्य शाखाओं में जमा राशियों पर भी उपलब्ध है। इस अधिकार का प्रयोग मृत्यु के बाद, कंपनी के दिवालिया और विघटित होने पर अनुऋणी/कुर्की आदेश पर प्रयोग किया जा सकता है। समय बाधित ऋण के लिये भी यह अधिकार उपलब्ध है। समायोजन के अधिकार का उपयोग तभी किया जा सकता है जब इसके विपरीत कोई व्यक्त या अव्यक्त अनुबंध न हो। इस अधिकार का प्रयोग उन देयों के सम्बन्ध में किया जाता है जो देय है या देय होने वाले हैं अर्थात् विशेष एवं अनिश्चित नहीं है। यह भविष्य के ऋणों पर उपलब्ध नहीं है। गारन्टर के नाम पर जमाओं को ऋणी के ऋण बैलेन्स से समायोजित नहीं किया जा सकता, जब तक गारन्टर से मांग न की हो एवं उसका दायित्व निश्चित हो गया हो।

समायोजन का स्वतः अधिकार

कुछ परिस्थितियों में यह अधिकार स्वतः रूप से लागू हो जाता है और इसमें ग्राहक की पूर्व आज्ञा की आवश्यकता नहीं होती। निम्न स्थितियां में समायोजन स्वतः ही हो जाता है यानि ग्राहक की आज्ञा के बिना–

अ.ग्राहक की मृत्यु होने पर,

ब.ग्राहक के दिवालिया हो जाने पर,

स.न्यायालय द्वारा ग्राहक के खाते के कुर्की के आदेश हो जाने पर,

द.ग्राहक के धनात्मक अवशेष के बारे में उसके समानुदेशन का नोटिस प्राप्त होने पर।

य.प्रतिभूतियों जिन्हें पहले ही बैंक द्वारा शुल्क लिया जा चुका है उस पर द्वितीय शुल्क के नोटिस की प्राप्ति पर।

समायोजन के अधिकार को लागू करने हेतु आवश्यक शर्तें

अ.खाते के धारक का स्वामित्व एक के ही नाम होना चाहिये।

ब.ऋण की राशि निश्चित व मापी या गणना योग्य (measurebale) हो।

स.इसके प्रतिकूल कोई समझौता नहीं होना चाहिये।

द.न्यास खातों में धनराशि (funds) नहीं होनी चाहिये।

य.भविष्य या अनिश्चित ऋणों के आधार पर अधिकार लागू नहीं किया जा सकता।

र.बैंकर को अधिकार है कि कुर्की के आदेश प्राप्त करने से पहले वह अपने इस अधिकार का प्रयोग करे।

8.3.20 विनियोजन का अधिकार

यह ग्राहक का अधिकार है कि वह बैंकर को निर्देशित करे कि उस ऋण (जब एक से अधिक ऋण बकाया हों) के विरूद्ध जो भुगतान उसके द्वारा किया गया है, विनियोजित कराना चाहिए अगर ऐसे कोई दिशा निर्देश नहीं दिये गये हैं, तो बैंक अपने विनियोजन के अधिकार को किसी भी ऋण के भुगतान के लिये प्रयोग कर सकता है। भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारायें 59, 60 और 61 विनियोजन के नियमों के बारे में बताती है।

धारा 59 : ऋणी द्वारा विनियोजन

यदि ऋणी यह स्पष्ट रूप से या निहित रूप से बैंक को यह सूचित करता है कि उसके द्वारा जमा धनराशि किस ऋण खाते में जमा की जाये। (जब एक से अधिक ऋण बकाया है)

धारा 60 : बैंक द्वारा विनियोजन

यदि ऋणी धन जमा करते समय यह न बताये कि वह धन किस ऋण खाते में जमा होना है और परिस्थितियों से भी उसका कोई आशय स्पष्ट न होता हो, तो भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 60 के अनुसार ऋणदाता अपने विवेकानुसार ऋणी के किसी भी ऋण खाते में उस धन को जमा कर सकता है। एक बार ऋणदाता द्वारा ऋणी को यह सूचित किये जाने पर, कि उसके द्वारा जमा धन का विनियोजन किस प्रकार कर दिया गया है, के बाद ऋणदाता उस प्रकार को बदल नहीं सकता है।

धारा 61 : कानून द्वारा विनियोजन

यदि ऋणी अथवा ऋणदाता जमा किये गये धन को किसी ऋण खाते में विनियोजित करने के लिये सुनिश्चित नहीं हो पाता, तो उस धन को सबसे पहले उस ऋण की अदायगी में विनियोजित किया जायेगा, जो सबसे पहले लिया गया था।जब तक कोई प्रतिकूल समझौता न हो, ऋणदाता के द्वारा किसी भुगतान को पहले ब्याज फिर मूलश राशि पर लागू किया जायेगा। अगर ग्राहक के पास एक ही खाता है और वह राशि जमा व निकालना उसी से नियमित तौर पर करता है। तो जिस क्रम में लेनदार प्रविष्टि (Credit entry) समायोजित की जाएगी। ऋण प्रविष्टि (debit entry) से वह कालानुक्रमिक होगी, इसे क्लाइटन के नियम (clagton'srule) से जाना जाता है।

क्लाइटन वाद में नियम– यह व्यवस्था देवायनिस बनाम नोबिल एण्ड कं0 के मामले में सामने आई। यकद किसी ग्राहक का चालू खाता हो और उसी में ऋणात्मक अवशेष हो जाने पर ग्राहक की स्थिति ऋणी की हो जाती हो और उसमें धन जमा करते और निकालते रहने पर ऋणात्मक अवशेष बदलता रहता हो, तो यह स्थिति होती है कि उस खाते में से धन निकालने पर नया ऋण उत्पन्न होता है और जमा करने पर इस तरह से उत्पन्न हुए ऋणों में कालानुसार विनियोजन होता है।बैंकर को अधिकार है ब्याज, कमीशन, आनुषांगिक प्रभार इत्यादि प्रभार लेने का।बैंकर का

यह गर्भित अधिकार है कि अपने द्वारा दी गई सेवाओं को चार्ज करे व ग्राहक को बेचे। बैंक प्रभारी है अग्रिम राशि पर ब्याज वसूलने, अग्रिम पर प्रभार लगाना, पारित की गई साख सुविधाओं के अनुपयोग पर प्रभार, कमीशन प्रभार इत्यादि को वसूलने के लिए जो कि अग्रिम बैंक द्वारा मासिक/चर्तुमासिक/अर्धवार्षिक या वार्षिक दी गई शर्तों पर निर्भर हो। बैंक चार्ज तब भी लेता है जब निर्देशित की हुई राशि का तुलन (balance) कम हो। अधिकतर बैंक विभिन्न तरीकों से इन प्रभारों के बारे में अपने ग्राहकों को सूचित करते हैं।

8.3.21 नामांकन सुविधा

व्यक्ति द्वारा की गयी इच्छा की अभिव्यक्ति नामांकन है कि उसकी मृत्यु के बाद नामांकित व्यक्ति को उसकी सम्पतित हस्तांतरित कर दी जाये। नामांकन वसीयत नहीं है लेकिन वसीयत जैसा कार्य करती है। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949, बैकिंग कम्पनियों (नामांकन) नियम 1985 की धारा 47जेड ए से 45जेड एफ इस संदर्भ में बनायी गयी है। नामांकन सुविधा एक सरल प्रक्रिया है जिसके द्वारा मृतक की जमा राशि और लाकर धारक के दावों को निपटाया जा सकता है एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना में जमाकर्ता की मौत बैंक को सक्षम बनाती है कि वह मृतक द्वारा नामांकित व्यक्ति को भुगतान कर सके, उस राशि का जो जमाकर्ता के खाते में शेष है एवं उसके द्वारा छोड़ा गया समान जो कि बैंक की सुरक्षित अभिरक्षा में है मृतक व्यक्ति द्वारा नामांकित व्यक्ति को दे दिया जाये बिना उत्तराधिकार प्रमाणपत्र या कानूनी वारिस की पुष्टि करे हुये।

नामांकन मृतक की सम्पत्ति के कानूनी वारिस का अधिकार नहीं लेता। नामांकित व्यक्ति बैंक से कानूनी वारिस के न्यासी के रूप में धन प्राप्त करता है। संयुक्त जमा खाते के मामले में नामांकन का अधिकार तभी मिलता है जब सभी जमाकर्ताओं की मौत हो गयी हो। नामांकन सुविधा व्यक्तियों और एकल मालिकाना संबंधित मामलों में ही मिलती है। अगर नामांकित व्यक्ति नाबालिग है तो नामांकन बनाने वाला जमाकर्ता, राशि को प्राप्त करने के लिये किसी व्यक्ति को नियुक्त कर देता है, जो उसकी मृत्यु होने की स्थिति में नामांकित व्यक्ति के नाबालिग होने के दौरान जमाराशि प्राप्त करेगा नावालिग की ओर से। एक व्यक्ति जो कानूनी तौर पर खाते को संचालित करने की शक्ति रखता है वह नाबालिग की ओर से नामांकन दर्ज करा सकता है। नामांकन, खाता खोलने के फार्म में ही या अलग से फार्म पर अपने नामांकित व्यक्ति का नाम व पता लिखकर भी किया जा सकता है। खाताधारक नामांकन किसी भी समय बदल सकते हैं। जमा खाते के लिये केवल एक ही नामांकन होगा चाहे वे एकल या संयुक्त रूप से आयोजित किया गया हो। संयुक्त लॉकर के लिये दो नामांकन किये जा सकते हैं।

नामांकन सुविधा की व्यवहार्यता

नामांकन सुविधा सभी प्रकार की जमा राशि, सुरक्षित जमा लॉकर और सुरक्षित अभिरक्षा वस्तुओं के लिये उपलब्ध है। यह उन जमाराशियों के लिये भी लागू है जिन पर संचालन सम्बन्धी निर्देश हों ''या तो या उत्तरजीवी''। नामांकन केवल एक व्यक्ति के पक्ष में किया जा सकता है। संयुक्त खाते के मामले में, नामांकन सभी जमाकर्ताओं द्वारा संयुक्त रूप से किया जाता है। नामांकन उन खातों पर नहीं किया जा सकता जहां जमा किसी प्रतिनिधित्व क्षमता का हो, जैसे न्यासी खाता, साझेदारी फर्म, कम्पनी, संगठन, क्लबों इत्यादि के खातों में। नामांकन एक नाबालिग के पक्ष में किया जा सकता है। हालांकिन नामांकन करते समय, नामांकित व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करता है जो कि नाबालिग न हो, ताकि वह नामांकित व्यक्ति की ओर से जमा राशि प्रापत कर सके, जमाकर्ता की मृत्यु की स्थिति में या नामांकित व्यक्ति के नाबालिग होने के दौरान। नाबालिग के जन्म की तारीख प्राप्त हो व नोट की जाये। नामांकन जारी रहेगा सावधि जमा के नवीनीकरण पर जब तक विशेष रूप से रद्द न कर दिया जाये या बदल न दिया जाये। बैंक प्रत्येक सावधि जमा खरीद पर अलग नामांकन फार्म लेते हैं। अनिवासी नामांकित व्यक्ति के मामले में वह मृतक की राशि का हकदार होगा। वह राशि उसके एन आर ओ खाते में जमा होगी। वह जमा राशि को भारत से बाहर प्रेषित नहीं कर सकता।

8.3.22 बैंक जमा राशियों का बीमा

भारतीय निक्षेप बीमा ओर प्रत्यय गारंटी निगम, एक सार्वजनिक लिमिटेड कम्पनी है जो कि भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रवर्तित है और इसका कार्य है बैंक जमाओं का बीमा करना। निगम की अधिकृत पूंजी 50 करोड़ रूपये है जो कि भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा पूर्ण जारी व समर्थित है। निगम का प्रबन्धन निदेशक मण्डल में निहित है जिसमें भारतीय रिजर्व बैंक के डिप्टी गवर्नर अध्यक्ष के रूप में हैं। निगम जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करता है और बैंक के असफल होने पर जमा राशि पर बीमा प्रदान करता है जिससे कि उनका आत्मविश्वास बना रहे। भारत में कार्यरत सभी विदेशी बैंकों की शाखाओं सहित सभी वाणिज्यिक बैंकों, स्थानीय क्षेत्रों के बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, सभी पात्र सहकारी बैंक निक्षेप बीमा योजना के अन्तर्गत आते हैं। 1,00,000 रूपये की अधिकतम राशि तक जो कि बैंक की सभी शाखाओं में से किसी की भी जमा राशि का पूर्ण या कोई हिस्सा हो, का बीमा करती है। यह बीमा सभी जमा राशियों को शामिल करता है जैसे बचत, सावधि, चालू, आवर्ती आदि। लेकिन कुछ इसके अन्तर्गत नहीं आते, जैसे,

1.विदेशी सरकारों की जमा राशियां

2.केन्द्र/राज्य सरकारों की जमाराशियां
3.अन्तर बैंक जमा राशियां
4.राज्य सहकारी बैंक के पास राज्य भूमि विकास बैंकों की जमा राशियां
5.भारत के बाहर से प्राप्त की गयी राशि या खातों पर देय राशि
6.ऐसी राशि जो कि भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व अनुमोदन से, निगम द्वारा विशेष रूप से छूट प्राप्त हो।

निगम बैंकों से प्रतिवर्ष प्रति रू0 100 के निर्धारणीय पर 10 पैसे की दर बीमा प्रीमियम के तौर पर वसूल करता है। यह प्रीमियम निर्धारणीय जमा पर साल में दो बार वसूला जाता है। प्रथमतः 31 मार्च व द्वितीय 30 सितम्बर को। हालांकि प्रीमियम जमाकर्ताओं द्वारा बैंक में जमा की पूर्ण राशि पर वसूला जाता है। बीमा अधिकतम 1,00,000 रूपये (मूल राशि व ब्याज दोनों के लिये) का किया जा सकता है।

परिसमापक से क्लेम की सूची के प्राप्त करने के दो माह के अन्दर परिसमापक के माध्यम से, निगम जमाकर्ता को उसकी दो लाख तक की जमा राशि का भुगतान करता है, यदि किसी बैंक को पुनः संरचित या विलय या संलयन किसी अन्य बैंक में किया जाता है तब जमा की गई पूर्ण राशि या उस समय प्रभावी बीमित राशि जो भी कम हो एवं वह राशि जो पुनसंरचना या संलयन योजना के तहत प्राप्त की है, के मध्य अन्तर (राशि) को अंतरिती बैंक/बीमित बैंक के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, जैसा कि मामले के अनुसार हो, से क्लेम सूची प्राप्त की तिथि से दो माह के भीतर सम्बन्धित बैंक को भुगतान करेगा। बैंकिंग क्षेत्र में सुधार के लिये बनायी गई, नरसिंहमन समिति (अप्रैल 1998) द्वारा दी गई द्वितीय रिपोर्ट के अनुसार यह सुझाव दिया गया है कि निक्षेप बीमा योजना के अन्तर्गत निश्चित दर पर भुगतान देने के स्थान पर परिवर्तित या जोखिम आधारित मूल्यांकन पर भुगतान करना चाहिये।

अपने ग्राहक को जानिएः मानदण्ड और नकद लेन–देन

केवाईसी (KYC) के दिशा निर्देशों का उद्देश्य है कि आपराधिक तत्वों द्वारा काले धन की वैध बनाने संबंधी गतिविधियों का जानबूझकर या अनजाने में हिस्सा बनने से बैंकों को रोका जा सके। केवाईसी प्रक्रियाओं से बैंकों को सक्षम बनाया जाता है जिससे कि वह अपने ग्राहकों को और उनके वित्तीय लेन–देन को बेहतर समझ सके। इससे जोखिमों को कम करने में सहायता मिलेगी। एक नया खाता खोलने से पहले जांच करवाना आवश्यक है कि ग्राहक की पहचान किसी आपराधिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्ति से तो नहीं मिलती या फिर किसी प्रतिबंधित तत्व जैसे व्यक्तिगत आतंकवादी या आतंकवादी संगठनों से तो जुड़ा हुआ नहीं है और कोई खाता गुमनाम या फर्जी/ बेनामी नामों से तो नहीं खोला जा रहा। बैंकों को खाता खोलते समय केवाईसी मानदण्डों को पूर्णरूप से ध्यान में रखना चाहिये। केवाईसी का उद्देश्य है कि ग्राहक की पहचान को सुनिश्चित करे और संदिग्ध प्रकृति के लेनदेन को निगरानी में रखें। नया खाता खोलते समय बैंक को कुछ महत्वपूर्ण

जानकारी इकट्ठी कर लेनी चाहिये जैसे मौजूदा खातेदार के माध्यम से परिचय होना या ग्राहक द्वारा प्रदान किये गये दस्तावेजों के आधार पर। यह दस्तावेज, पासपोर्ट, ड्राइविंग लाइसेंस इत्यादि हो सकते हैं। मौजूदा खातेदार के सम्बन्ध में बैंक को शीघ्र अतिशीघ्र ग्राहक की पहचान का कार्य पूरा कर लेना चाहिये।

नकद लेनदेन की उच्चतम सीमा और निगरानी

बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 35—ए के तहत जारी किये गये भारतीय रिजर्व बैंक के दिशा निर्देशों के अनुसार—

1. बैंक को रू 50,000 या उससे अधिक राशि के यात्रा चैक, डिमांड ड्राफ्ट, मेल ट्रांसफर, टेलिग्राफिक ट्रांसफर केवल ग्राहक के खाते के आधार पर या चैक के विपरीत जारी करने चाहिए नकद के विपरीत नहीं। ऐसी कोई भी खरीद पर खरीददार को अपना स्थायी आयकर खाता नम्बर (PAN) आवेदन पत्र पर जरूर लिखना चाहिए।

2. 10 लाख से अधिक की जमा या निकासी पर बैंक की कड़ी नजर होनी चाहिये, चाहे वह किसी भी रूप में हो नकद ऋण ओवर ड्राफ्ट खाता इत्यादि और साथ में ऐसे खातों का रिकार्ड एक अलग रजिस्टर में रखना चाहिये। सभी बैकों की शाखाओं द्वारा 10 लाख या अधिक की जमा या निकासी पर एवं संदिग्ध प्रकृति के लेन—देनों की पूर्ण रिपोर्ट प्रत्येक पाक्षिक कथनों के साथ उनके नियन्त्रण कार्यालयों को भेजनी चाहिए।

बैंकर्स उचित व्यवहार संहिता

भारतीय बैंक संघ ने एक कोड तैयार किया है वो बैंकों के उचित व्यवहार के लिये मानक प्रस्तुत करता है। इस दस्तावेज के द्वारा व्यापक रूपरेखा देखने को मिलती है। जिसके तहत आम जमाकर्ताओं के अधिकारों को मान्यता दी गयी है। यह एक स्वैच्छिक कोड है जो प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है और बाजार की ताकतों को प्रोत्साहित करता है ताकि उच्च परिचालन मानकों से ग्राहकों को लाभ मिल सके। यह कोड लागू होता है— चालू, बचत और अन्य सभी बचत खातों, बैंकों द्वारा संग्रह और प्रेषण सेवाएं, ऋण और ओवरड्राफ्ट, विदेशी मुद्रा सेवायें, बैंकों द्वारा कार्ड उत्पाद व तीसरे पक्ष उत्पाद इत्यादि के लिये।

8.4 सारांश

अधिनियम में शब्द ग्राहक को परिभाषित नहीं किया गया है। शब्द ग्राहक की उत्पत्ति शब्द 'कस्टम' से हुई है जिसका अर्थ है कोई कार्य नियमित रूप या विशेष ढंग से करने की 'आदत या प्रवृत्ति'। आमतौर पर यह माना जाता है कि कोई भी व्यक्ति या संगठन, जो बैकिंग लेन—देन किसी भी बैंक के साथ करता है, वह बैंक का ग्राहक होता है। हालांकि, ऐसे बहुत से व्यक्ति है जो बैंक की सेवाओं का

उपयोग तो करते हैं पर जिनका कोई खाता बैंक में नहीं होता। इस प्रकार बैंक ग्राहकों को चार व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है जो कि निम्नलिखित है–

अ.वह लोग जो बैंक के साथ खाता सम्बन्ध बनाये हुये हैं जैसे– मौजूदा ग्राहक।

ब.वह लोग जो बैंक के साथ खाता सम्बन्ध बनाये हुये थे यानी पूर्व ग्राहक।

स.वह लोग जिनका बैंक के साथ कोई खाता सम्बन्ध तो नहीं है लेकिन बैंक की सुविधाओं का लाभ उठाने के लिये अक्सर बैंक जाते हैं जैसे ड्राफ्ट खरीदने के लिये, चेक से पैसे निकलवाने के लिये इत्यादि। तकनीकी तौर पर, यह वह गैर ग्राहक होते हैं जिन्होंने बैंक शाखा में अपना कोई खाता नहीं खोल रखा होता है।

द.सम्भावित/क्षमता पूर्ण ग्राहक : यह वह ग्राहक होते हैं जो बैंक के साथ खाता सम्बन्ध रखना चाहते हैं।

बैंकर शब्द का प्रयोग बैकिंग विनियम अधिनियम (**BRAct**) 1949 में परिभाषित नहीं किया है लेकिन बैकिंग क्या है, यह परिभाषित किया गया है। बैकिंग विनिमय अधिनियम की धारा 5 (b) के अनुसार बैकिंग का अर्थ उधार या निवेश के उद्देश्य के लिये जनता से ली गयी धनराशि है जो कि मांग पर प्रतिदेय या अन्यथा चेक, ड्राफ्ट, आदेश या अन्यथा द्वारा निकाली जा सके। **पराक्रम्य लिखत**अधिनियम, 1881 के अनुसार, बैंकर के अन्तर्गत बैकिंग का काम करने वाला प्रत्येक व्यक्ति तथा डाकघर बचत बैंक सम्मिलित है। विनिमय पत्र अधिनियम 1882 की धारा 2 के अनुसार बैंकर का अर्थ उन व्यक्तियों की एक संस्था से हैं जो बैंकिंग कारोबार करते हैं चाहे निगमित हो या न हो। बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 5(e) के अनुसार, बैंकिंग कम्पनी वह कम्पनी है जो भारत में बैकिंग का कार्य करती हो। बैंकर या बैकिंग कम्पनी ही बैकिंग सम्बन्धी गतिविधियां चलाती हैं। बैंकर या बैकिंग कम्पनी का अर्थ धारा 5 (b) से समझ सकते हैं जिसके अनुसार– यह एक निगमित निकाय के रूप में,

अ.जनता से जमा स्वीकार करती है

ब.उधार देना या

स.जमा राशि के माध्यम से एकत्रित धन निवेश करना

द.मांग पर या किसी अन्य माध्यम से जमा राशि की निकासी की अनुमति देना।

रिजर्व बैंक द्वारा जारी किये गये दिशा निर्देशों के अनुसार 'अपने ग्राहक को जानिये'' में ग्राहक शब्द का अर्थ है–

1.कोई व्यक्ति या संस्था जो खाता और/ या व्यापार सम्बन्ध बैंक के साथ रखता हो,

2.एक जिसने किसी की ओर से खाता बनाया रखा हो (यानि लाभकारी मालिक)

3.किए गए अन्तरणों के लाभार्थी व्यवसायिक बिचौलियों द्वारा जैसे शेयर दलाल, चार्टेड अकाउटेन्ट, वकील इत्यादि जिन्हें विधि के अन्तर्गत इजाजत है।

4.कोई व्यक्ति या संस्था जो कि लेन–देन से जुड़ी हो, जिसकी महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा या अन्य जोखिमों को बैंक के लिये उत्पन्न कर सकती हो जैसे तार (wire) हस्तान्तरण या उच्च मूल्य डिमांड ड्राफ्ट एकल लेन–देन के रूप में।

बैंक विश्वास आधारित रिश्ता है। बैंक और ग्राहक के बीच रिश्ते कई तरह के होते हैं।बैंक व उसके ग्राहकों के बीच के सम्बन्धों को मोटे तौर पर सामान्य सम्बन्ध व विशेष सम्बन्ध में वर्गीकृत किया जा सकता है।

सामान्य सम्बन्ध

देनदार–लेनदार : जब ग्राहक को खाता खोलना होता है तो वह खाता खोलने का फार्म भरकर व हस्ताक्षर करके बैंक को देता है। फार्म पर हस्ताक्षर करके वह बैंक के साथ एक समझौते/अनुबन्ध में प्रवेश करता है। जब ग्राहक बैंक में अपने खाते में पैसे जमा करता है तो बैंक ग्राहक का ऋणी हो जाता है और ग्राहक लेनदार (creditor) हो जाता है। बैंक की स्थिति सामान्य देनदारों से काफी अलग है। बैंकर अपने आप से भुगतान नहीं करता क्योंकि बैंकर को स्वेच्छा से कर्ज चुकाना आवश्यक नहीं है। मांग उसी शाखा में जाकर की जा सकती है जहां उनका खाता खुला हुआ है या मौजूद हो व सही तरीके से कार्य दिवसों व कार्य के घण्टों (working hours) में ही किया जा सकता है।

ऋणदाता देनदार– पैसे उधार देना बैंक की सबसे महत्वपूर्ण गतिविधियों में से एक है। बैंक द्वारा जुटाये गये संसाधन ऋण देने के लिये उपयोग किये जाते हैं।

विशेष सम्बध

बैंक न्यासी के रूप में– ग्राहक कुछ कीमती चीजें या प्रतिभूतियां बैंक के पास सुरक्षित रखवाते हैं या किसी विशिष्ट उद्देश्य से बैंक में पैसे जमा कराते हैं तब ऐसे मामलों में बैंक न्यासी के रूप में कार्य करता है। बैंक सामान को सुरक्षित रखने के लिये शुल्क वसूल करता है।

उपनिहिती – उपनिधाता– बैंक अपने द्वारा दी गयी अग्रिम को सुरक्षित करने के लिये मूर्त प्रतिभूतियां रखते हैं। कुछ मामलों में प्रतिभूति माल का भौतिक कब्जा (गिरवी), कीमती सामान, बांड आदि रखे जाते हैं। प्रतिभूतियों का भौतिक कब्जा करते समय बैंक उपनिहिती हो जाता है और ग्राहक 'उपनिधाता'।

पट्टादाता – पट्टेदार– बैंक और ग्राहक के बीच सम्बन्ध पट्टादाता और पट्टेदार का होता है। बैंक अपनी अचल सम्पत्ति पट्टे पर (अपने ग्राहकों के लिये लॉकर किराये पर देना) ग्राहकों को देती है और उन्हें अधिकार देती है कि वह कुछ समय सीमा तक उसका उपयोग कर सकें जैसे– कार्यालय/बैंकिंग कार्यों के समय पर और इस सुविधा के लिये बैंक किराया चार्ज करती हैं।

अभिकर्ता एवं मालिक– बैंक धनादेश बिल इत्यादि एकत्र करता है और ग्राहकों की ओर से विभिन्न प्राधिकारियों को भुगतान करता है जैसे किराया, टेलीफोन बिल, बीमा प्रीमियम इत्यादि। अपने ग्राहकों द्वारा दिये गये निर्देशों का पालन बैंक को भी

करना होता है। ऐसे सभी मामलों में बैंक अभिकर्ता के रूप में कार्य करता है अपने ग्राहकों के लिये और सेवाओं के लिये शुल्क भी लेता है।

अभिरक्षक के रूप में– बैंक कानूनी तौर पर ग्राहक की प्रतिभूतियों की जिम्मेदारी लेता है। डीमैट खाता खोलते समय बैंक संरक्षक बन जाता है।

गारन्टर के रूप में– बैंक अपने ग्राहकों की ओर से गारन्टी देते हैं। गारंटी एक आकस्मिक अनुबंध है।

वह परिस्थितियां जब बैंकर ग्राहक के खाते की जानकारी का खुलासा कर सकता है, वह निम्न प्रकार से है–

अ.कानून की बाध्यता के तहत

ब.बैंकिंग प्रथाओं के तहत

स.राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिये

द.बैंक के खुद के हितों की रक्षा के लिये

य.ग्राहक की व्यक्त या अव्यक्त सहमति पर

बैंकिंग का अर्थ है जमा राशियों को स्वीकार करना जिससे चैक, ड्राफ्ट, आदेश या अन्यथा के द्वारा पैसा निकाला जा सके, बैंकर ग्राहकों द्वारा दिये गये चैक भुगतान करने के लिये बाध्य है।

चैक भुगतान निम्न परिस्थितियों में समाप्त हो जाता है–

अ.जब खाता धारक ने चैक का भुगतान न करने के लिये बैंक को निर्देश दिया हो,

ब.आहरणकर्ता की मृत्यु की सूचना पाने पर,

स.(गार्निशी) अनुऋणी आदेश खाते में धन के साथ संलग्न हो या बैंकर के द्वारा आयकर संलग्न आदेश प्राप्त हुआ हो,

द.चैक के भुगतान के समय आहरणकर्ता पागल या दिवालिया हो गया हो।

बैंक निम्न परिस्थितियों में चैक का भुगतान करने को मना कर सकता है–

1.जब खाते में पर्याप्त धन न हो,

2.जब सम्बन्धित पक्ष की दावेदारी में त्रुटि हो,

3.जब चैक में कुछ कमी हो (भुगतान से आगे की तारीख, चुराया, शब्दों और अंकों में अलग–अलग लिखा होना, इत्यादि)

4.जब खाते में शेष राशि किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिये निर्धारित हो और बाकी शेष राशि धनादेश का भुगतान करने के लिये पर्याप्त नहीं हो।

ऐसा नहीं है कि बैंक के अपने ग्राहकों की तरफ सिर्फ कर्तव्य है बल्कि उसके पास कुछ अधिकार भी हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

1.सामान्य धारणाधिकार

2.समायोजन का अधिकार

3.विनियोजन का अधिकार

4.ग्राहक के आदेश के अनुसार कार्य करने का अधिकार

5.ब्याज लगाना, कमीशन, प्रासंगिक प्रभार या शुल्क इत्यादि का अधिकार

व्यक्ति द्वारा की गयी इच्छा की अभिव्यक्ति नामांकन है कि उसकी मृत्यु के बाद नामांकित व्यक्ति को उसकी सम्पतित हस्तांतरित कर दी जाये। नामांकन वसीयत नहीं है लेकिन वसीयत जैसा कार्य करती है। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949, बैकिंग कम्पनियों (नामांकन) नियम 1985 की धारा 47जेड ए से 45जेड एफ इस संदर्भ में बनायी गयी है। नामांकन सुविधा एक सरल प्रक्रिया है जिसके द्वारा मृतक की जमा राशि और लाकर धारक के दावों को निपटाया जा सकता है एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना में जमाकर्ता की मौत बैंक को सक्षम बनाती है कि वह मृतक द्वारा नामांकित व्यक्ति को भुगतान कर सके, उस राशि का जो जमाकर्ता के खाते में शेष है एवं उसके द्वारा छोड़ा गया समान जो कि बैंक की सुरक्षित अभिरक्षा में है मृतक व्यक्ति द्वारा नामांकित व्यक्ति को दे दिया जाये बिना उत्तराधिकार प्रमाणपत्र या कानूनी वारिस की पुष्टि करे हुये।

भारतीय निक्षेप बीमा ओर प्रत्यय गारंटी निगम, एक सार्वजनिक लिमिटेड कम्पनी है जो कि भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रवर्तित है और इसका कार्य है बैंक जमाओं का बीमा करना।निगम जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करता है और बैंक के असफल होने पर जमा राशि पर बीमा प्रदान करता है जिससे कि उनका आत्मविश्वास बना रहे। भारत में कार्यरत सभी विदेशी बैंकों की शाखाओं सहित सभी वाणिज्यिक बैंकों, स्थानीय क्षेत्रों के बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, सभी पात्र सहकारी बैंक निक्षेप बीमा योजना के अन्तर्गत आते हैं। यह बीमा सभी जमा राशियों को शामिल करता है जैसे बचत, सावधि, चालू, आवर्ती आदि। लेकिन कुछ इसके अन्तर्गत नहीं आते, जैसे,

1.विदेशी सरकारों की जमा राशियां

2.केन्द्र/राज्य सरकारों की जमाराशियां

3.अन्तर बैंक जमा राशियां

4.राज्य सहकारी बैंक के पास राज्य भूमि विकास बैंकों की जमा राशियां

5.भारत के बाहर से प्राप्त की गयी राशि या खातों पर देय राशि

6.ऐसी राशि जो कि भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व अनुमोदन से, निगम द्वारा विशेष रूप से छूट प्राप्त हो।

केवाईसी (KYC) के दिशा निर्देशों का उद्‌देश्य है कि आपराधिक तत्वों द्वारा काले धन की वैध गतिविधियों का जानबूझकर या अनजाने में हिस्सा बनने से बैंकों को रोका जा सके। केवाईसी प्रक्रियाओं से बैंकों को सक्षम बनाया जाता है जिससे कि वह अपने ग्राहकों को और उनके वित्तीय लेन–देन को बेहतर समझ सके। बैंकों को खाता खोलते समय केवाईसी मानदण्डों को पूर्णरूप से ध्यान में रखना चाहिये। केवाईसी का उद्‌देश्य है कि ग्राहक की पहचान को सुनिश्चित करे और संदिग्ध प्रकृति के लेनदेन को निगरानी में रखें।

भारतीय बैंक संघ ने एक कोड तैयार किया है वो बैंकों के उचित व्यवहार के लिये मानक प्रस्तुत करता है। इस दस्तावेज के द्वारा व्यापक रूपरेखा देखने को मिलती है। जिसके तहत आम जमाकर्ताओं के अधिकारों को मान्यता दी गयी है। यह एक स्वैच्छिक कोड है जो प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है और बाजार की ताकतों को प्रोत्साहित करता है ताकि उच्च परिचालन मानकों से ग्राहकों को लाभ मिल सके। यह कोड लागू होता है– चालू, बचत और अन्य सभी बचत खातों, बैंकों द्वारा संग्रह और प्रेषण सेवाएं, ऋण और ओवरड्राफ्ट, विदेशी मुद्रा सेवायें, बैंकों द्वारा कार्ड उत्पाद व तीसरे पक्ष उत्पाद इत्यादि के लिये।

8.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

केवाईसी (KYC) – 'अपने ग्राहक को जानिए'– दिशा निर्देशों का उद्देश्य है कि आपराधिक तत्वों द्वारा काले धन की वैध बनाने संबंधी गतिविधियों का जानबूझकर या अनजाने में हिस्सा बनने से बैंकों को रोका जा सके। इसके चार महत्वपूर्ण तत्व हैं–

- ग्राहक प्रतिग्रहण नीति
- ग्राहक पहचान प्रक्रिया
- अंतरणों पर निगरानी, एवं
- जोखिम प्रबंधन

8.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मर्केन्टाइल विधि के सिद्वान्त –अवतार सिंह छठा संस्करण 1996
2. बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– पी0एन0वार्षनेय
3. भारत में बैंकिंग विधि एवं उसकी प्रेक्टिस– तन्नान
4. पेजेट्स बैंकिंग विधि आठवा संस्करण
5. भागीदारी अधिनियम
6. चतुर्वेदी,ममता., आधुनिक बैंकिग विधि, सेन्ट्रल लॉ पबिलकेशन

8.7 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.ग्राहक शब्द से आप क्या समझते हैं?
2.बैंकर को परिभाषित कीजिये।
3.बैंक के कर्तव्यों की व्याख्या कीजिए।
4.नामांकन सुविधा से आप क्या समझते हैं?

एलएल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–3. बैंकर एवं ग्राहक के सम्बन्ध एवं भारत में बैंकिंग प्रणाली में अ़द्यतन **(Relationship of Banker and Customer and Recent Trends of Banking System in India)**

इकाई –9. नई प्रोद्योगिकी – सूचना प्रोद्योगिकी, स्वचालन एवं स्वचालित यंत्रों के विधिक पहलू **(New technology- Information technology, Automation and legal aspects Automatic teller machine and)**

इकाई की संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 प्रस्तुतीकरण

- 9.3.1 इतिहास
- 9.3.2 पश्च उदारीकरण
- 9.3.3 नई दूर संचार नीति, 1999
- 9.3.4 अद्यतन विकास
- 9.3.5 स्वचालन
- 9.3.6 लाभ एवं हानि
- 9.3.7 विश्वसनीयता एवं सटीकता
- 9.3.8 स्वास्थ्य एवं पर्यावरण
- 9.3.9 परिवर्तनीयता एवं कायापलट (टर्नअराउण्ड) समय

9.3.10 स्वचालन उपकरण;

9.3.11 स्वचालन की सीमाएं

9.3.12 आई टी सम्बन्धित अन्तरणों का विधिक ढांचा

9.3.13 अधिनियम से पूर्ववर्ती लिखतों/संविदा का वर्जन

9.3.14 आनलाइन संविदाओं की वैधता

9.3.15 संविदाओं के निर्माण का समय

9.3.16 इलेक्ट्रानिक अभिलेखों का अभिप्रमाणन

9.3.17 इलेक्ट्रानिक अभिलेखों का अर्थ

9.3.18 अंकीय हस्ताक्षरों का अभिप्रमाणन

9.3.19 इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की विधिक स्थिति

9.3.20 आर बी आई अधिनियम, 1934 में संशोधन

9.3.21 बैंकर्स पुस्तक साक्ष्य अधिनियम, 1981 में संशोधन

9.3.22 साइबर अपराध एवं शास्तियां

9.4 सारांश

9.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

9.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

9.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

भारत में सूचना प्रोद्योगिकी उद्योग को इसके आई टी एवं आई टी ई एस क्षेत्र के कारण एक ब्राण्ड पहचान 'ज्ञान अर्थव्यवस्था' के रूप में प्राप्त हुई है। आई टी आई टी ई एस उद्योग के दो मुख्य घटक हैं– आई टी सेवाएं एवं व्यापार प्रक्रिया आउट सोर्सिंग (BPO)। भारत में सेवा क्षेत्र में वृद्धि आई टी आई टी ई एस क्षेत्र द्वारा अग्रसारित है, जिसका जी डी पी में बढ़ोत्तरी रोजगार एवं निर्यात में प्रमुख योगदान है। भारत की जीडीपी में इस क्षेत्र का योगदान वित्तीय वर्ष 1998 में 1.2 प्रतिशत से बढ़कर वित्तीय वर्ष 2011 में 7.1 प्रतिशत हो गया। NASSCOM के अनुसार वित्तीय वर्ष 2011 में IT-BPO क्षेत्र द्वारा अर्जित राजस्व का कुल योग US $ 88.1 बिलियन था जबकि निर्यात एवं घरेलू राजस्व क्रमशः US $ 59 बिलियन एवं US$ 29 बिलियन थे। सात प्रमुख शहर लगभग इस क्षेत्र का 90% निर्यात का कारण है वे– बैंगलोर, चेन्नई, हैदराबाद, मुम्बई, पुणे, दिल्ली, कोलकत्ता, कोयम्बटूर एवं कोची। IT-ITES उद्योग के कुल राजस्व का 77 प्रतिशत निर्यात से आता है। हालांकि IT-ITES क्षेत्र निर्यात लक्षित है, घरेलू बाजार भी मजबूत राजस्व वृद्धि के साथ महत्वपूर्ण है। कुल भारतीय निर्यात (व्यापार+सेवाएं) में उद्योग का हिस्सा, वित्तीय वर्ष 1998 में 4% से कम था जो बढ़कर वित्तीय वर्ष 2012 में 25% हो गया। यह क्षेत्र रोजगार सृजन में भी अग्रणी है। 17 सेवाओं एवं बीपीओ/आईटीईएस हिस्से में प्रत्यक्ष रोजगार 2009–10 में 2.3 मिलियन था, जिसका वित्तीय वर्ष 2010–11 के अन्त तक 2.5 मिलियन से आस–पास पहुँचना आंका गया है। लगभग 8.3 मिलियन जॉब अवसरों के अप्रत्यक्ष रोजगार सृजन, 2010–11 में इस क्षेत्र में वृद्धि के कारण अनुमानित किया गया है। वैश्विक आउटसोर्सिंग क्षेत्र में यह प्रमुख है। हालांकि वैश्वीकृत विश्व में इस क्षेत्र को लगातार प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है, विशेष रूप से चीन एवं फिलीपीन्स जैसे देशों से। सूचना के युग में भारत के बढ़त कद ने इसे, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं यूरोपियन यूनियन दोनों से नजदीक संबंध बनाने में सक्षम किया है। हालांकि हाल ही में वैश्विक वित्तीय संकट ने भारतीय आईटी कंपनियों एवं विश्व की कंपनियों को गम्भीर रूप से प्रभावित किया है। जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में नौकरी की तलाश में भारी गिरावट आई है एवं कर्मचारियों ने विभिन्न क्षेत्रों जैसे वित्तीय सेवाएं, दूसरसंचार एवं निर्माण उद्योग आदि की और देखना प्रारम्भ कर दिया है, जो पिछले कुछ वर्षों से असाधारण रूप से बढ़ रही है। बुरोफ्स (Burroughs) के साथ साझेदारी में टाटा समूह की स्थापना के साथ 1967 में मुम्बई में भारतीय आईटी सेवा उद्योग का जन्म हुआ। प्रथम सॉफ्टवेयर निर्यात जोन

SEEPZ की स्थापना यहाँ 1973 में हुई, जिसे आधुनिक आईटी पार्क का प्राचीन अवतार कह सकते हैं। अस्सी के दशक में 80 प्रतिशत से अधिक देश का साफ्टवेयर निर्यात SEEPZ से हुआ।

9.2 उद्देश्य

इस ईकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को नई तकनीक से अवगत कराना है, जब इसका उपयोग लगभग प्रतिदिन किया जाता है। आज के विश्व में प्रत्येक दिन इन तकनीकों पर निर्भर है। विद्यार्थियों को सूचना प्रोद्योगिकी का इतिहास पता होना चाहिए।

9.3.1 इतिहास

भारतीय सरकार ने EVS EM संगणक (कम्प्यूटर) सोवियत यूनियन से प्राप्त किया, जिसका प्रयोग बड़ी कंपनियों एवं शोधन प्रयोशालाओं में किया गया। टाटा समूह द्वारा मुम्बई में SEEPZ में टाटा कन्सलटेंसी सर्विर्सेज (TCS) की स्थापना की गई, जो 1960 के दौरान देश का सबसे बड़ा साफ्टवेयर उत्पादक था। जवाहर लाल नेहरू (कार्यालयः 15 अगस्त 1947–27 मई 1964) की विभिन्न नीतियों द्वारा आर्थिक रूप से घेराबंदी किया गया देश, संयुक्त राज्य एवं सोवियत यूनियन के बाद तीसरे नम्बर पर विशाल वैज्ञानिक कार्यबल बनाने में कामयाब हुआ। 18 अगस्त 1951 को शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने पश्चिम बंगाल के खड़गपुर में भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान का शुभारम्भ किया। संभवतः मैसाचुएट्स प्रोद्योगिकी संस्थान के प्रतिरूप में इन संस्थाओं हेतु एन आर सरकार की अध्यक्षता में विद्वानों और उद्यमियों की एक 22 सदस्यीय समिति नियुक्त की गई। संयुक्त राज्य अमेरिका के शिथिल अप्रवासी विधियों (1965) ने असंख्य कुशल भारतीय पेशेवरों को शोध के उद्देश्य हेतु आकर्षित किया। एक अनुमान के अनुसार 1960 तक लगभग 10,000 भारतीय यू एस में बस गए। 1980 तक भारत से अनेक इंजीनियर अन्य देशों में रोजगार की चाह रखते थे। जसके जवाब में भारतीय कंपनियों ने अपने अनुभवी स्टाफ को बनाए रखने हेतु वेतनमानों में बदलाव किया। भारत के विश्वकोष (Encyclopedia of India) में कामदार (2006) ने भारतीय अप्रवासियों (1980–पूर्वाद्ध 1990) की प्रोद्योगिकी चालित विकास में भूमिका के बारे में विवरण दिया है। अमेरिकी वैज्ञानिक एवं प्रोद्योगिकी उपलब्धियों के प्रत्येक क्षेत्र में हजारों उच्च प्रशिक्षण प्राप्त भारतीय अप्रवासियों ने सूचना प्रोद्योगिकी क्रान्ति के साथ योगदान किया जिसका आकलन नहीं किया जा सकता, 1980 एवं 1990 में अधिकांश कैलीफोर्निया सिलिकोन वैली से सम्बन्धित थे। मार्च 1975 में राष्ट्रीय

सूचना विज्ञान केन्द्र (National informations centre) स्थापित किया गया। अक्टूबर 1976 में कम्प्यूटर मेन्टीनेन्स कंपनी (CMS) का प्रारम्भ हुआ। 1977–1980 के दौरान भारत की सूचना प्रोद्योगिकी कंपनियों– टाटा इंफोटेक, पटनी कम्प्यूटर सिस्टमस एवं विप्रो परिदृश्य में उभरी। 1980 की माइक्रोचिप क्रांति इन्दिरा गांधी एवं उसके उत्तराधिकारी राजीव गांधी दोनों द्वारा गर्भित की गई क्योंकि इलेक्ट्रोनिक्स एवं दूरसंचार भारत की वृद्धि एवं विकास हेतु अति आवश्यक थे। MTNL प्रोद्योगिकी सुधार से गुजरा। 1986–1987 के दौरान भारतीय सरकार ने तीन विशाल क्षेत्रीय कम्प्यूटर नेटवर्किंग योजनाओं की रचना को चिन्हित कियाः INDONET (जिसका उद्देश्य भारत में IBM अधिसंसाधित्र (Mainfraims) की पूर्ति करना था), NICNET (भारतीय – राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र के लिए नेटवर्क), एवं ERNET (अकादमिक शोध अनुकूलित शिक्षा एवं शोध नेटवर्क Academic research oriented Education and Research Network)

9.3.2 पश्च उदारीकरण (Post Liberatization)

1991 में इलेक्ट्रनिक्स विभाग ने एक निगम–साफ्टवेयर टेक्नोलोजी पार्क इन इंडिया (भारत में साफ्टवेयर प्रोद्योगिकी पार्क–STPI) बनाकर इस गतिरोध को तोड़ा, कि सरकार द्वारा स्वामित्व के कारण, अपने एकाधिकार को तोड़े बिना VSAT संचार प्रदान कर सका। STPI ने विभिन्न शहरों में साफ्टवेयर प्रोद्योगिकी पार्क स्थापित किया, जिनमें से प्रत्येक ने फर्मों के प्रयोग हेतु सेटेलाइट लिंक प्रदान किए; स्थानीय लिंक एक बेतार रेडियो लिंक था। 1992 में सरकार ने व्यक्तिगत कम्पनियों को उनके अपने समर्पित लिंक की अनुमति प्रारम्भ की, जिसने भारत में किए गए कार्य का सीधे विदेश प्रसारण संभव किया। भारतीय फर्मों ने शीघ्र ही अमेरिकी ग्राहकों को कायल कर लिया कि एक सेटेलाइट लिंक उसी तरह विश्वसनीय है जितना कि ग्राहक के कार्यालय में कार्य कर रही प्रोग्रामर की एक टीम। विदेश संचार निगम लिमिटेड (VSNL) ने 1991 में गेटवे इलेक्ट्रानिक मेल सर्विस की शुरूआत की, 1992 में 64 kbit/s लीज्ड (Leased) लाइन सर्विस, 1992 में दृष्टिगत पैमाने पर वाणिज्यिक इंटरनेट एक्सेस शुरू किया। चुनाव के नतीजे राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र, NICNET के जरिए दिखाए गए।

1991 में भारतीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक सुधार लागू किए, जो वैश्वीकरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक एकीकरण के नए युग में ले गया। 1993–2002 के दौरान आर्थिक वृद्धि लगभग 6 प्रतिशत वार्षिक देखी गई। अटल बिहारी बाजपेयी के अन्तर्गत नए प्रशासन ने सूचना प्ऱोद्योगिकी के विकास को उसकी पाँच उच्च

प्राथमिकताओं में रखा एवं सूचना प्रोद्योगिकी एवं साफ्टवेयर विकास हेतु भारतीय राष्ट्रीय टास्क फोर्स का गठन किया। वालकॉट एवं गुडमेन (Wolcott & Goodman 2003) ने इस टास्क फोर्स की भूमिका के बारे में लिखाः गठन के 90 दिनों के अन्दर टास्क ने भारत में प्रोद्योगिकी की स्थिति पर व्यापक पृष्ठ भूमि प्रतिवेदन, एवं 108 सिफारिशों के साथ एक IT कार्य योजना प्रस्तुत की। टास्क फोर्स इतनी जल्दी कार्य कर सका क्योंकि इसका निर्माण, राज्य सरकार, केन्द्र सरकार की एजेन्सियों, विश्वविद्यालयों एवं साफ्टवेयर उद्योग के अनुभव एवं विफलता पर हुआ। इसके द्वारा प्रस्तावित अधिकांश भाग, अन्तर्राष्ट्रीय निकायों जैसे विश्व व्यापार सगठन, अन्तर्राष्ट्रीय दूर संचार यूनियन (ITU) एवं विश्व बैंक की सोच एवं सिफारिशों से भी सहमत था। इसके अलावा टास्क फोर्स ने सिंगापुर एवं अन्य देशों, जिन्होंने समान कार्यक्रम लागू किए, के अनुभवों को भी समाहित किया। यह एक खोज के कार्य से कम, सबकी सहमति एवं चिंगारी छोड़ने वाला कार्य अधिक था जो नेटवर्किंग समुदाय एवं सरकार के अन्दर पहले ही उत्पन्न हो चुका था।

9.3.3 नई दूर संचार नीति, 1999

नई दूरसंचार नीति, 1999 ने भारत के दूरसंचार क्षेत्र में आगे उदारीकरण में सहायता की। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम 2000 ने इलेक्ट्रानिक अन्तरण एवं ई–वाणिज्य के लिए विधिक प्रक्रियाएं निर्धारित कीं। 1990 के पूरे दशक के दौरान संयुक्त राज्य में भारतीय पेशेवरों के दाखिल होने की दूसरी लहर चली। 2000 तक भारतीय अमेरिकियों की संख्या 1.7 मिलियन पहुँच गई। इन अप्रवासियों में अधिकतर उच्च शिक्षा प्राप्त प्रोद्योगिकी निपुण वर्कर थे। संयुक्त राज्य के अन्दर भारतीय विज्ञान, इंजीनियरिंग एवं प्रबंधन में बहुत अच्छे थे। भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान (IIT) से स्नातक उनकी तकनीकी निपुणता के लिए पहचाने जाने लगे। भारत में सूचना प्रोद्योगिकी की सफलता न केवल आर्थिक अप्रत्यक्ष परिणाम थे, वरन इसके दूरगामी राजनीतिक परिणाम भी थे। भारत की, कुशल कार्यबल के लिए स्रोत एवं गंतव्य दोनों के रूप में प्रतिष्ठा ने विश्व की अनेक अर्थव्यवस्थाओं से सम्बन्ध बेहतर करने में सहायता की। अर्थव्यवस्था एवं प्रोद्योगिकी में सम्बन्ध का पश्चिमी विश्व में मूल्य था, इसने अप्रवासी भारतीयों के उद्यमी वर्ग के विकास को बढ़ावा दिया, जिसने फिर से प्रोद्योगिकी चालित वृद्धि में विस्तार हेतु सहायता की।

9.3.4 अद्यतन विकास

भारत में प्रोद्योगिकी प्रवृत्त सेवा क्षेत्र का आर्थिक प्रभाव 2006 में देश की जीडीपी में 40 प्रतिशत एवं निर्यात अर्जन में 30 प्रतिशत महत्व का रहा जबकि शर्मा (2006) के आंकलन के अनुसार केवल 25 प्रतिशत कार्यबल का प्रयोग हुआ। कुल निर्यात में IT (मुख्यतः साफ्टवेयर) का हिस्सा, जो 1990 में 1 प्रतिशत था, 2001 में बढ़कर 18 प्रतिशत हो गया। IT—सक्षम सेवाएं जैसे कि, बैंक ऑफिस संचालन, रिमोर्ट मेंटीनेन्स, लेखा, सार्वजनिक कॉल सेन्टर, चिकित्सीय ट्रान्सक्रिप्शन, बीमा क्लेम एवं अन्य बड़े परिमाण की प्रक्रियाओं में तेजी से विस्तार हुआ। भारतीय कम्पनियां जैसे— HC, TCS, विप्रो एवं इंफोसिस, विश्व भर में पारिवारिक नाम बन सका। आज बैंगलोर 'भारत की सिलिकॉन वैली' के नाम से जाना जाता है एवं इसका भारतीय IT निर्यात में 33% योगदान है। भारत की दूसरी एवं तीसरे सबसे बड़ी साफ्टवेयर कम्पनियों का प्रधान कार्यालय बेंगलोर में है एवं बहुत सी वैश्विक SEI-CMM, 5 स्तर की कंपनियों का भी। मुम्बई का भी IT कंपनियों में हिस्सा है, भारत की प्रथम एवं सबसे बड़ी TCS एवं सुस्थापित— रिलायंस, एम पटनी, एलएनटी, इंफोटेक, आई—फ्लैक्स, डब्ल्यू एनएस, शाइनी (shine), नौकरी (Naukri), जाबस्पर्ट (jobspert) आदि का प्रधान कार्यालय मुम्बई में है। ये IT एवं कॉक कम्पनियां, मुम्बई की सूचना प्रोद्योगिकी में अपेक्षाकृत उच्च ऑक्टेन उद्योग के बसेरे को शासित करती हैं। निवेश एवं आउटसोर्सिंग में ऐसी वृद्धि के कारण यह माना गया कि केप जेमिनी (Cap Gemine) के पास भारत में, इसके फ्रांस के घरेलू बाजार (21,000 निजी+भारत में के साथ) से अधिक स्टाफ होगा। 25 जून 2005 को भारत एवं यूरोपीय यूनियन के मध्य विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में द्विपक्षीय समझौता हुआ। ईयू—भारत के विद्वानों का एक साझा समूह 23 नवम्बर 2001 को, साझा शोध एवं विकास को बढ़ावा देने हेतु निर्मित हुआ। भारत ने CERN में पर्यवेक्षक की स्थिति धारण की जबकि एक साझा भारत ईयू साफ्टवेयर शिक्षा एवं विकास केन्द्र बैंगलोर में बनना बाकी है।

9.3.5 स्वचालन

स्वचालन, वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में मानव श्रम की आवश्यकता को कम करने हेतु सूचना प्रोद्योगिकी एवं नियन्त्रण प्रणाली का प्रयोग है। यान्त्रिकरण (Machanization) ने जहां, यन्त्रों के साथ मानव संचालन प्रदान किया जो यन्त्रों को मस्कुलर कार्य की आवश्यकता के साथ सहायता देता, स्वचालन ने मानव की संवेदी एवं मानसिक आवश्यकता को बहुत अधिक कम किया, स्वचालन विश्व अर्थव्यवस्था एवं रोजमर्रा के अनुभवों में, दिन पर दिन वृद्धि प्राप्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है। स्वचालन ने निर्माण के अलावा (जहाँ इसकी शुरूआत हुई) बड़ी

संख्या में उद्योगों पर महत्वपूर्ण प्रभाव है। इसने सर्वत्र टेलीफोन संचालकों को स्वचालित टेलीफोन स्विचबोर्ड एवं उत्तर देने वाले यन्त्र से विशाल पैमाने पर स्थानान्तरित किया। चिकित्सीय प्रक्रियाएं जैसे– इलेक्ट्रोकाडियोग्राफी एवं रेडियोग्राफी में प्राथमिक स्क्रीनिंग एवं मानव जीन, सेरा (sera), कोशिकाएं एवं ऊतकों का प्रयोगशाला में विश्लेषण, स्वाचालित प्रणाली द्वारा बहुत अधिक गति एवं सटीकता से किया जाता है। स्वचालित बोलने वाले यन्त्रों (Automatic teller machine) ने नकद प्राप्त करने एवं अन्तरण करने हेतु बैंक जाने का कार्य बहुत कम कर दिया। Automation (स्वचालन) शब्द पहले के शब्द automatic (स्चालित) जो automative से आया, से प्रभावित हुआ, यह 1947 से पूर्व अधिक चलन में नहीं था। उस समय स्वचालित प्रोद्योगिकी–इलेक्ट्रिकल, यान्त्रिक, हाइड्रोलिक एवं न्यूमेटिक (Pneumatic) थी। 1957 एवं 1964 के मध्य फैक्ट्रियों से निकलने वाली सामग्री करीब–करीब दोगुनी हो गयी, जबकि ब्ल्यू कॉलर श्रमिकों की संख्या घटनी शुरू हो गयी।

9.3.6 लाभ एवं हानियाँ

स्वचालन के प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं :–

- कठिन शारीरिक या थकाने वाले कार्यों के धन्धे में रत मानव संचालकों का स्थान लिया।
- जोखिम भरे वातावरण में कार्यरत मानवों का स्थान लिया (जैसे– अग्नि, अन्तरिक्ष, ज्वालामुखी, आणविक, पानी के अन्दर आदि)
- ऐसे कार्यों को अन्जाम देने जो आकार, भार, जाति, सहनशक्ति आदि में मानव क्षमता से परे हैं।
- आर्थिक सुधारः स्वचालन ने उद्यमियों, समुदायों या अधिकांश मानव जातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकता है। उदाहरणार्थ, जब कोई उद्यमी स्वचालन में निवेश करता है, प्रोद्योगिकी इस निवेश की भरपाई करती है; या जब एक राज्य या देश स्वचालन के कारण अपनी आमदनी में बढ़ोत्तरी करता है जैसे जर्मनी या जापान 20वीं सदी में।
- किसी कार्य के संचालन समय एवं पूर्ण करने के समय में महत्वपूर्ण कमी करता है,
- श्रमिकों को दूसरी भूमिकांए अदा करने हेतु मुक्त करता है।
- विकास, परिनियोजन, रख–रखाव एवं स्वचालित प्रक्रियाओं के चालन में उच्च स्तरीय नौकरियां प्रदान करता है।

स्वचालन की प्रमुख हानियां इस प्रकार हैं :—

- सुरक्षा जोखिम/अरक्षितताः एक स्वचालित प्रणाली के पास बुद्धिमता के सीमित स्तर हो सकते हैं, अतः गलतियों के प्रति ये अधिक संदिग्ध होते हैं।
- अप्रत्याशित विकास लागतेंः किसी प्रक्रिया के स्वचालन के शोध एवं विकास की लागत, स्वयं स्वचालन के द्वारा बनाई गयी लागत से अधिक हो सकती है।
- उच्च प्राथमिक लागतः एक नए उत्पाद या यन्त्र के स्वचालन हेतु, उत्पाद की ईकाई लागत की तुलना में बहुत अधिक प्राथमिक निवेश की आवश्यकता होती है, हालांकि स्वचालन की लागत कई उत्पादों में वितरित हो जाती है।

निर्माण में स्वचालन का उद्देश्य, उत्पादकता, लागत एवं समय से व्यापक मुद्दों की ओर परिवर्तित हो गया है।

9.3.7 विश्वसनीयता एवं सटीकता

पहले स्वचालन के प्रयोग का उद्देश्य उत्पादकता बढ़ाने एवं लागत घटाने पर केन्द्रित होता था, जो अब सही नहीं दृष्टिगत होता क्योंकि एक कुशल कार्यबल को भी प्रदान करने की जरूरत है जो यन्त्रों को मरम्मत एवं उनका रखरखाव भी कर सके। इसके अलावा स्वचालन की प्रारम्भिक लागत उच्च थी एवं अक्सर निर्माण प्रक्रियाओं को पुराने से नवीन में बदलते समय प्राप्त नहीं हो सकी (जापान का ''रोबोट जंकयार्ड'' एक समय में विश्व प्रसिद्ध निर्माण उद्योग था)। स्वचालन को अब मुख्यतः निर्माण प्रक्रिया की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु प्रयोग किया जाता है, जहाँ स्वचालन गुणवत्ता को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकता है। उदाहरण के तौर पर इंटरनल कंबशन इंजिन पिस्टन (Internal cumbustion engine piston) प्रयोग करने हेतु हाथों द्वारा लगाए जाते थे। स्वचालित लगाने वाली मशीनों द्वारा इनका परिवर्तन बहुत तेजी से हुआ क्योंकि हाथों से लगाने पर इसमें गलती का प्रतिशत 1—1.5 प्रतिशत के आसपास था जो घटकर 0.00001 प्रतिशत हो गया।

9.3.8 स्वास्थ्य एवं पर्यावरण

पर्यावरण के लिए स्वचालन की कीमत भिन्न है। जो प्रोद्योगिकी उत्पाद या स्वचालित इंजिन पर निर्भर करती है। कुछ स्वचालित इंजिन ऐसे हैं जो पहले के इंजिन के बनिस्पत पृथ्वी से, अधिक ऊर्जा स्रोत उपभोग करते हैं एवं कुछ ऐसे भी हैं जो इसके विपरीत हैं। जोखिम पूर्ण संचालन, जैसे कि तेल शोधन, ओद्योगिक

रसायनों का निर्माण एवं सभी प्रकार के धातु कार्य, स्वचालन हेतु सदा शुरूआती प्रतियोगी थे।

9.3.9 परिवर्तनीयता एवं कायापलट (टर्नअराउण्ड) समय

दूसरा प्रमुख परिवर्तन स्वचालन में, निर्माण प्रक्रियाओं में परिवर्तनीयता एवं लचीलेपन की बढ़ती मांग है। उत्पादन लाइन के पूर्णतः पुनः निर्माण के बगैर ए उत्पाद को बी उत्पाद में निर्मित करने की काबिलियत पाना निर्माताओं की बढ़ती मांग में शुमार है। लचीलेपन एवं वितरण प्रक्रियाओं ने नौवहन की प्राकृतिक विशेषताओं के साथ स्वचालित निर्देशित वाहन (Automated Guided Vehicles) के समावेशन को प्रमुखता दी। अंकीय (Digital) इलेक्ट्रानिक्स ने भी मदद की। पूर्व के एनालोग आधारित उपकरण, अंकीय समकक्षों द्वारा बदले गए जो अधिक सटीक एवं लचीले थे एवं अधिक परिष्कृत विन्यास, पेरामेट्रीजेशन एवं संचालन का अधिक विषय क्षेत्र प्रस्तावित करते थे। यह फील्डबस (fieldbus) क्रान्ति के साथ था जिसने नियन्त्रण प्रणाली एवं क्षेत्रीय स्तर के उपकरणों के मध्य कड़ी तार प्रणाली को समाप्त करते हुए, संचालन का नेटवर्क (अर्थात, एक केबिल) प्रदान किया। अलग निर्माण कारखानों ने इन प्रोद्योगिकीयों को शीघ्र ग्रहण किया। अधिक रूढ़िवादी प्रक्रिया वाले उद्योग, उनकी लम्बे जीवन चक्र वाले कारखानों के साथ एनालॉग आधारित उपायों एवं नियन्त्रण को अपनाने में धीमे रहे, फिर भी प्रभावी हैं। कारखानों के फ्लोर पर ओद्योगिक ईथरनेट का बढ़ता प्रयोग इन प्रचलनों को आगे बढ़ा रहा है, जो अगर आवश्यक हो तो इंटरनेट के जरिए निर्माण कारखानों को उद्यमिता के अन्तर्गत अधिक समेकित करने योग्य कर रहा है। वैश्विक प्रतियोगिता के कारण भी, पुनःविन्यास युक्त निर्माण तन्त्र (Reconfigurale manufacturing system) के लिए मांग बढ़ी है।

9.3.10 स्वचालन उपकरण

स्वचालित युक्तियों पर इंजीनियर्स का अब संख्यात्मक नियन्त्रण (Numerical control) है। जिसका परिणाम तेजी से विस्तार पाती अनुप्रयोगों के प्रकार (Dange of application) मानव गतिविधियां हैं। कम्प्यूटर जनित प्रोद्योगिकी (या CAx) जटिल तन्त्र की रचना करने में प्रयोज्य गणितीय एवं संगठनात्मक उपकरणों के लिए आधार प्रस्तुत करती है। CAx के उल्लेखनीय उदाहरणों में कम्प्यूटर जनित निर्माण (CAM सॉफ्टवेयर) है। CAx द्वारा सक्षम उत्पादों के उन्नत डिजाइन, विश्लेषण एवं निर्माण उद्योगों के लिए लाभदायक रहा। सूचना

प्रोद्योगिकी, औ़द्योगिक मशीनरी एवं प्रक्रियाओं के साथ नियन्त्रण तन्त्र के डिजाइन, लागू करने एवं अनुश्रवण में सहयोग कर सकता है। औद्योगिकी नियन्त्रण तन्त्र का एक उदाहरण प्रोग्रामेबिल लोजिक नियन्त्रक (PLC) है। PLCs विशिष्ट कठोर कम्प्यूटरर्स है जिनका प्रायः प्रयोग घटनाओं एवं संवेदकों (Sensers) से आगत (input) के बहाव को एवं प्रवर्तकों (Actutor) और घटनाओं से निर्गत के बहाव को समकालिक करने हेतु किया जाता है। मानव–यन्त्र अन्तराफलक (Human Machine Interface) (HMI) या संगणक – मानव अंतराफलक (CHI), जिन्हें औपचारिक रूप से आदमी यन्त्र अन्तराफलक (man-machine, interfaces) के नाम से जाना जाता है, उन्हें अक्सर PLC एवं अन्य संगणकों से सम्प्रेषण हेतु प्रयोग किया जाता है। सेवा कार्मिक जनका अनुश्रवण एवं नियन्त्रण HNI के माध्यम होता है, विभिन्न नामों से पुकारे जा सकते हैं। औद्योगिक प्रक्रियाओं एवं निर्माण वातावरण में, उन्हें संचालक या कुछ इसी के समान पुकारा जाता है। भट्टी घरों (Boiler houses) एवं केन्द्रीय उपादेयता (utilities) विभागों में उन्हें स्टेशनरी (Stationary) इंजीनियर्स कहा जाता है।

विभिन्न प्रकार के स्वचालन उपकरण हैं :–

- ANN- कृत्रित तंत्रकीय जाल (Artificial neural network)
- DCS -वितरित नियन्त्रण तन्त्र (Distributed control system)
- HNI -मानव यन्त्र अन्तराफलक (Human-Machine Interface)
- SCADA-निरीक्षणात्मक नियन्त्रण एवं डेटा उपार्जन (Supervisory Control and data Acquirition)
- PLC- प्रोग्रामेबिल लोजिक नियन्त्रक (Programmable Logic Controller)
- PAC -प्रोग्रामोबिल स्वचालन नियन्त्रक (Programmable automation controller)
- यन्त्रीकरण (Instrumentation)
- गति नियन्त्रण (Motion Control)
- रोबोटिक्स (Robotics)

9.3.11स्वचालन की सीमाएं

वर्तमान प्रोद्योगिकी सभी इच्छित कार्यों को स्वचालित करने में अक्षम हैं। जैसे ही एक प्रक्रिया में स्वचालन बढ़ता जाता है, उसमें श्रम जो जमा किया गया कम से

कम हो जाता है या गुणवत्ता में सुधार प्राप्त किया जाता है। यह ह्यासमान वापसी (diminishing returns) एवं तार्किक क्रिया (Logistic function) दोनों का उदाहरण है। दिसम्बर 1996 में UNO की आम सभा ने, अन्तर्राष्ट्रीय कारोबार की विधि के एकीकरण एवं विकासशील तालमेल को बढ़ाने के लिए, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार विधि पर संयुक्त राष्ट्र कमीशन (UNCITRAL) बनाने हेतु संकल्प किया। इसका उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अनावश्यक गतिरोध हटाना था जो सदस्य देशों की अधिनियमितों में असम्पूर्णता एवं विविधता का कारण थी। इन अन्तर्राष्ट्रीय विकासों के साथ सामंजस्य बिठाने के लिए भारत ने सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 (IT ACT) अधिनियमित किया, जबकि इलेक्ट्रानिक निधि स्थनान्तरण योजना पर समिति की सिफारिशों को पूरा ध्यान में रखा। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000, 17.10.2000 से प्रभाव में आया। यह जम्मू एवं कश्मीर सहित सभी राज्यों में प्रभावित हुआ। इस अधिनियम से भारत के अन्दर एवं बाहर घटित साइवर अपराधों पर संज्ञान ले पाना संभव हुआ। अधिनियम ने इलेक्ट्रोनिक अभिलेखों एवंअंकीय हस्ताक्षरों को पहचान मान्यता एवं विश्वसनायता प्रदान की। अधिनियम द्वारा ई–वाणिज्यक अंतरणों पर नियन्त्रण, शास्तियों का आरोपण एवं प्रावधानों के उल्लंघन पर जुर्माना अधिरोपित करने हेतु विधिक ढांचा भी निर्धारित किया। अधिनियम ने भारत में स्थानीय सच्चाइयों को भी घ्यान में रखा गया, जैसे कि नई प्राद्यागिकी के लिए बुनियादी ढांचे की कमी एवं कुछ अंतरणों में क्रियाशील विकल्प एवं अधिनियम के दृष्टि से कुछ उपकरणों को दूर किया।

9.3.12 आई टी सम्बन्धित अन्तरणों का विधिक ढांचा

सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000

उद्देश्य :– उन अंतरणों को विधिक मान्यता प्रदान करने के लिए जो इलेक्ट्रानिक डेटा एवं अन्य इलेक्ट्रानिक संचार द्वारा संचालित होते हैं, सामान्यता जिन्हें इलेक्ट्रानिक वाणिज्य के रूप में (e-commerce) जाना जाता है। ई–वाणिज्य पत्र आधारित संचार विधि एवं सूचनाओं के एकत्रीकरण के एक विकल्प के तौर पर जानी जाती है।

सरकारी विभागों/एजेन्सियों को दस्तावेजों के इलेक्ट्रानिक दाखिले को सुविधाजनक बनाने हेतु। अधिनियम के उद्देश्य को पाने के लिए निवर्तमान विधि में उपयुक्त संशोधन करने हेतु।अन्तर्राष्ट्रीय विधि के साथ तालमेल बनाए रखने हेतु UNCITRAL द्वारा प्रस्तावित मॉडल विधि के विचारों को असली जामा पहनाने हेतु।

9.3.13 अधिनियम से पूर्ववर्ती लिखतों/संविदा का वर्णन

हमारे देश में सूचना प्रोद्योगिकी क्षेत्र एवं संगणक साक्षरता में विकास में वर्तमान स्तर को ध्यान में रखते हुए, सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 द्वारा यह निर्धारित किया गया कि निम्नलिखित पर अधिनियम लागू नहीं होगा–

अ.एक **पराक्रम्य लिखत**पर, जैसा कि **पराक्रम्य लिखत**अधिनियम 1881 की धारा 13 में परिभाषित किया गया है (चैक को छोड़कर जैसा कि संशोधित)

ब.मुख्तारनामा पर, जैसा कि मुख्तारनामा अधिनियम, 1882 की धारा 1ए में परिभाषित है।

स.एक न्यास पर, जैसा कि भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 (1882 का 2) की धारा 3 में परिभाषित है।

द.एक वसीयत पर जैसे कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 2 के खण्ड (h) में परिभाषित है। अन्य किसी इच्छापक्षीय लिखत सहित।

य.किसी संविदा पर, जो बिक्री या अचल सम्पत्ति के हस्तान्तरण पत्र या इस प्रकार की सम्पत्ति में किसी ब्याज, के लिए हो।

भारतीय संविदा अधिनियम, 1972 के अन्तर्गत एक वैध प्रस्ताव के प्रतिग्रहण (Acceptance) का परिणाम एक वैध संविदा होता है। यह जानना आवश्यक है कि जब एक संविदा आनलाइन सम्पन्न होती है तो क्या पारम्परिक रूप से जैसे कि डाक द्वारा सम्पन्न संविदा और उसके मध्य कोई अन्तर होता है। धारा 4 प्रतिग्रहण की संसूचना के पूर्ण होने के नियम से सम्बन्धित है। प्रतिग्रहण की संसूचना प्रस्थापी के विरूद्ध तब सम्पूर्ण होती है जब यह प्रस्थापक के संज्ञान में पहुँच जाता है। परन्तु उच्चतम न्यायालय ने निर्णीत किया कि मौखिक साधनों से सम्प्रेषण के मामले में, टेलेक्स या टेलीफोन के जरिए प्रतिग्रहण संप्रेषित केवल तभी मानी जाएगी जब यह वास्तव में प्रस्थापक द्वारा ग्रहण की जाएगी। प्रश्न यह उठता है कि (a) जब ईमेल भेजा गया हो; या (b) जब यह प्रेषिती (Addressee) द्वारा ग्रहण किया जाए; या (c) जब यह मेजबान संगणक (host computer) तक पहुँच जाए, जिसने प्रेषिती को ई–मेल सुविधा प्रदान की है। संविदा से उत्पन्न दायित्वों के निर्धारण के तत्व–

- संविदा का समय एवं स्थान
- प्रस्ताव ग्रहणकर्ता द्वारा स्वीकृति के संप्रेषण का समय एवं स्थान
- प्रस्ताव कर्ता द्वारा स्वीकृति ग्रहण के सम्प्रेषण का समय एवं स्थान

  भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 4, स्वीकृति के संप्रेषण की सम्पूर्णता से सम्बद्ध है। धारा के अनुसार, ''प्रतिग्रहण की संसूचना प्रस्थापक

के विरूद्ध तब सम्पूर्ण हो जाती है जब वह उसके प्रति इस प्रकार पारेषण के अनुक्रम में कर दी जाती है कि वह प्रतिग्रहीता की शक्ति के बाहर हो जाएं....''

भगवानदास बनाम गिरधारी लाल [(1966) 1 SCR 656: AIR 1966 SC 543] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि संविदा अधिनियम की धारा 4 संसूचना के गैर—तात्कालिक रूपों के मामलों में ही लागू होगी एवं वहां लागू नहीं होगी जहां संसूचना के तात्कालिक रूपों का प्रयोग होगा, प्रस्थापक के विरूद्ध संविदा तभी सम्पूर्ण होगी जब वह प्रस्थापना का प्रतिग्रहण (Acceptance) प्राप्त करेगा। प्रस्थापना का स्थान या जहां प्रतिग्रहण प्राप्त होता है, प्रवर्तन के लिए क्षेत्राधिकार होगा। ई—वाणिज्य के मामले में प्रतिग्रहण ई—मेल द्वारा या 'Accept ' या 'Buy' माइकन (Icons) दबाकर किया जाता है। इंटरनेट के माध्यम से संविदा तभी सम्पूर्ण होगी जब प्रतिग्रहण, उत्पन्नकर्ता (originator) तक प्राप्त हो जाए। ई—मेल संविदाओं को गैर—तात्कालिक प्रकार की संसूचना के अन्तर्गत श्रेणीगत किया जा सकता है। हालांकि जब भेजने वाला (Sender) जानकारी प्राप्त करता है, यह नहीं संकेतिक होता कि दूसरे पक्ष को प्राप्ति का ज्ञान है या नहीं। अतः भगवानदास बनाम गिरधारी लाल के वाद में रेखांकित नियम ई—मेल संविदाओं पर लागू होगा। वेब—क्लिक (web clidk) संविदाओं के मामले में एक संविदा सम्पूर्ण होगी, जब प्रस्थापक, प्रतिग्रहण प्राप्त करेगा। इसके अलावा वेब—क्लिक रूप में एक प्रस्थापना या प्रतिग्रहण की संसूचना सम्पूर्ण होगी जब प्रेषिती इलेक्ट्रोनिक अभिलेख, जैसा कि आई टी अधिनियम की धारा 13 (2) में परिभाषित है, प्राप्त करेगा। प्राप्ति उस समय पर होगी जब इलेक्ट्रोनिक अभिलेख अंकीय संगणक (digital computer) स्रोत में प्रवेश करेगा।

9.3.14 आनलाइन संविदाओं की वैधता

वैधता एवं संविदा का निर्माण ई—वाणिज्य विधि का सार बनाते हैं। भारतीय संविदा अधिनियम, 1872, आधारिक सामान्य विधि, संविदात्मक नियम को सांविधिक प्रभाव देता है कि एक वैध संविदा का निर्माण हो सकता है अगर यह, पक्षकारों की स्वतन्त्र सम्मति, जो संविदा हेतु सक्षम है, वैध प्रतिफल के लिए एवं वैध उद्देश्य हेतु एवं जो प्रारम्भ से अभिव्यक्तः शून्य नहीं है, से किया गया है। संविदा अधिनियम प्रस्थापना की संसूचना एवं इसके प्रतिग्रहण हेतु कोई विशिष्ट तरीका वर्णित नहीं करता है और न ही पक्ष लेता है। यह मौखिक, लिखित या आचरण द्वारा भी निर्मित हो सकता है। अतः संविदा की वैधता हेतु उसका लिखित होना आवश्यक नहीं है, उन मामलों को छोड़कर, जहां विधि द्वारा लिखित होना विशेष रूप से आवश्यक है।

यह प्रतीत होता है कि किसी विशेष अधिनियमिति के अभाव में भी ऑनलान संविदा की वैधता को अकेले इन तकनीकी आधारों पर चुनौती नहीं दी जा सकती। अतः आई0टी0 अधिनियम, आन लाइन संविदाओं को वैधता प्रदान करने सम्बन्धित कोई विशेष प्रावधान शामिल करने से बचता है।

9.3.15 संविदा के निर्माण का समय

संविदा के निर्माण के समय की महत्ता जानी मानी है, अर्थात प्रतिस्पर्धा दावों के मध्य प्राथमिकताएं निर्णीत करना, संविदा पर लागू विधि का निर्धारण आदि। संविदा निर्माण का समयात्मक पहलू भी, संविदा निर्माण के स्थान पक्ष को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण है। भारतीय सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 13, इलेक्ट्रॉनिक संविदाओं के मामले में संविदा निर्माण के सिद्धान्त को समझने हेतु रूपरेखा प्रदान करती है। अन्य बातों के साथ–साथ यह निर्धारित करता है, जब तक अन्यथा समुदित न हो एक इलैक्ट्रानिक अभिलेख का प्रेषण होना माना जाता है जब यह उत्पत्तिकर्ता (originator) के नियन्त्रण से बाहर एक संगणक स्रोत में प्रवेश करता है। एक इलेक्ट्रानिक अभिलेख की प्राप्ति का समय वह समय होता है जब अभिलेख निर्दिष्ट संगणक स्रोत में प्रवेश करता है (अगर प्रेषिती के पास एक निर्दिष्ट संगणक स्रोत है) अगर इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्रेषिती के एक संगणक स्रोत को भेजा है जो कि निर्दिष्ट संगणक स्रोत नहीं है, प्राप्ति होना उस समय माना जाता है जब इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्रेषिती द्वारा वापस पा लिया जाता है। अगर प्रेषिती के पास विशिष्ट समय के साथ निर्दिष्ट एक संगणक नहीं है, अगर कोई प्राप्ति होती है जब इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्रेषिती के संगणक स्रोत में प्रवेश करते हैं, हालांकि उपरोक्त नियम हमें इससे अधिक नहीं बताते कि इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की प्रेषण एवं प्राप्ति होती है। अतः इलेक्ट्रानिक संविदा निर्माण से सम्बन्धित नियमों को समझने में इस सम्बन्ध में भारतीय संविदा अधिनियम के सिद्धान्तों को लागू करना होगा। प्रस्थापना एवं प्रतिग्रहण की संसूचना के सम्बन्ध में संविदा अधिनियम की धारा 4 निर्धारित करती है– प्रस्थापना की संसूचना सम्पूर्ण है जब वह उस व्यक्ति जिसने कि इसे बनाया है के संज्ञान में आ जाती है। प्रतिग्रहण की संसूचना–प्रस्थापक के विरूद्ध तब सम्पूर्ण हो जाती है, जब वह उसके प्रति इस प्रकार पारेषण के अनुक्रम में कर दी जाती है कि वह प्रतिग्रहीता की शक्ति से बाहर हो जाए; प्रतिग्रहीता के विरूद्ध तब सम्पूर्ण हो जाती है, जब वह प्रस्थापक के ज्ञान में आती है।

एक प्रतिसंहरण की संसूचना, उस व्यक्ति के विरूद्ध जिसने इसे बनाया है तब सम्पूर्ण हो जाती है जब वह उस व्यक्ति के, जिसने कि इसे बनाया था, के पारेषण के अनुक्रम में इस प्रकार कर दी जाती है कि वह व्यक्ति जिसने इस बनाया है, की शक्ति से बाहर हो जाए; उस व्यक्ति जिसने कि इसे बनाया था, के विरूद्ध तब

सम्पूर्ण हो जाती है, जब वह प्रस्थापक के ज्ञान में आती है। संविदा अधिनियम की धारा 4 एवं आई टी अधिनियम की धारा 13 का सम्मिलित अनुप्रयोग, उस घटना में जब संविदा में पक्षकारों के मध्य कुछ भी प्रतिकूल/विपरीत सहमति नहीं हुई है, इलेक्ट्रानिक अभिलेख के मामले में संविदा निर्माण के लिए निम्न विधि का खुलासा करता है—

अ. एक प्रस्थापना की संसूचना उस समय सम्पूर्ण होती है जब प्रस्तावक द्वारा इस उद्देश्य हेतु कोई सूचना तन्त्र/प्रणाली निर्दिष्ट की गई है में इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्रवेश करता है या अगर कोई तन्त्र/प्रणाली उद्देश्य हेतु निर्दिष्ट नहीं की गई है, तब इलेक्ट्रोनिक प्रस्थापना प्रस्थापी के सूचना तन्त्र/प्रणाली में प्रवेश करता है, या अगर कोई सूचना तन्त्र/प्रणाली निर्दिष्ट की गई है, परन्तु इलेक्ट्रोनिक प्रस्थापना किसी दूसरे सूचना तन्त्र/प्रणाली से भेजी जाती है, तब प्रस्थापी उस इलेक्ट्रोनिक अभिलेख को पा लेता है।

ब. एक प्रतिग्रहण की संसूचना सम्पूर्ण मानी जाती है— प्रस्थापना के विरूद्ध या जब इलेक्ट्रोनिक अभिलेख इस प्रकार भेज दिया जाता है कि यह प्रतिग्रहीता के नियन्त्रण से बाहर, संगणक स्रोत में प्रवेश करता है।

9.3.16 इलेक्ट्रोनिक अभिलेखों का अभिप्रमाणन

एक अभिलेख, एक अन्तरण का दस्तावेज है, जो किसी के द्वारा विशेष समय पर विशेष क्रियाविधि के परिणामस्वरूप हुआ है— अतः यह साक्ष्य है, सबूत है उसका जो घटा है, कौन सम्मिलित है एवं क्यों। पिछले दशकों के दौरान चर्चा रही है कि एक इलेक्ट्रोनिक वातावरण में एक अभिलेख क्या है। इलेक्ट्रोनिक अभिलेख डेटा एकत्रण एवं उत्पन्न करने में बहुत अधिक अच्छे हैं, परन्तु उस पहचान के वक्त बहुत कम यथेष्ट है, जब उस डेटा को एक अभिलेख विचारित किया जा सकता है।

उद्देश्यः— व्यापारिक गतिविधियों का साक्ष्य प्रदान करने हेतु अभिलेख रखे जाते हैं; व्यापक उद्देश्यों हेतु दस्तावेज रखे जा सकते हैं, उनमें निहित सूचना के प्रयोग के लिए एवं अन्य दस्तावेजों में पुनरावर्तन हेतु।

संदर्भः— व्यापार के अनुक्रम में अभिलेख निर्मित किए जाते हैं और फलस्वरूप व्यापारिक अंतरणों के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं; दस्तावेज व्यापार अनुक्रम में बनाए या न बनाए जा सकते हैं एवं एक व्यापारिक अंतरण से सम्बन्धित होते हैं। इस आधार पर अधिकांश अभिलेख दस्तावेज भी हैं एवं कुछ दस्तावेज अभिलेख भी हैं। लेकिन एक दस्तावेज अभिलेख की तरह कार्य तभी करता है अगर वह व्यापार के अनुक्रम में बनाया या प्राप्त किया गया था एवं उस व्यापारिक क्रियाविधि के साक्ष्य के रूप में रखा गया था। दूसरे शब्दों में, एक दस्तावेज अभिलेख बन जाता है जब यह व्यापारिक अंतरण में भाग लेता है एवं साक्ष्य प्रदान कराने हेतु रखा गया है। एक

दस्तावेज निर्मित करता है जब कोई इलेक्ट्रोनिक डाक संदेश बनाता है; यह अभिलेख बन जाता है जब इसे कोई भेजता है।

9.3.17 इलेक्ट्रोनिक अभिलेख का अर्थ

इलेक्ट्रोनिक अभिलेख का अर्थ, इसे प्रयोग के संदर्भ की रोशनी में समझा जाता है, केवल एक दस्तावेज के रूप में इलेक्ट्रानिक अभिलेख अधिक प्रासंगिक या महत्वपूर्ण नहीं है जबकि इलेक्ट्रानिक अभिलेख साक्ष्य के दस्तावेज के रूप में न्यायिक विश्लेषण एवं विधिक मान्यता चाहता है। सामान्यतौर पर एक '' इलेक्ट्रानिक अभिलेख'' साधारणतः एक अभिलेख है जो इलेक्ट्रानिक उपकरण के जरिए सम्प्रेषित एवं बनाए रखे जाता है। इलेक्ट्रानिक दस्तावेज, लिखित दस्तावेजों के समकक्ष मान्यता प्राप्त है। अंकीय हस्ताक्षर (digital signature) लिखित हस्ताक्षर के समकक्ष मान्यता प्राप्त है, एवं सरकारी अन्तरणों में इलेक्ट्रानिक दस्तावेजों एवं भुगतानों में उनका प्रयोग सक्षम है, ई–वाणिज्य को बढ़ावा देने में अंकीय हस्ताक्षरों के विधिक मान्यता की महत्ता को थोड़े उल्लेख की आावश्यकता है। अधिनियम अंकीय हस्ताक्षरों को विधिक मान्यता प्रदान करता है एवं अंकीय हस्ताक्षर प्रमाण पत्र की एक योजना भी उल्लिखित है जो तीसरे पक्ष द्वारा जारी की जाएगी। माडल विधि अंकीय हस्ताक्षरों की व्यापक परिभाषा प्रस्थापित करती है एवं तकनीकी रूप से तटस्थ है। हालांकि सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम धारा में जब अंकीय हस्ताक्षर को परिभाषित करने का प्रयास करता है, इसे कुछ तकनीकी सीमाओं के अन्दर घेरना चाहता है। इसके अनुसार एक इलेक्ट्रानिक अभिलेख का अभिप्रमाणन, केवल विषम प्रच्छनन तन्त्र (asymmni Crypto system) या द्रुतान्वेषण प्रकार्य (hash function) द्वारा ही प्रभावी हो सकता है। वास्तविक संसार में जहां आक्रामक परिवर्तन एवं विकास नियम है, विषम प्रच्छन्न तन्त्र के रूप में, एक विशेष तकनीक के प्रयोग को प्रतिबंधात्मक तरीके से वैधता देना विसंगति है।

9.3.18 अंकीय हस्ताक्षरों का अभिप्रमाणन

सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 के अध्याय II की धारा 8 इलेक्ट्रानिक अभिलेखों एवं अंतरणों के अभिप्रमाणन से सम्बन्धित है–

प्रावधानों के अन्तर्गत, कोई अभिदाता एक इलेक्ट्रानिक अभिलेख को उसके अंकीय हस्ताक्षर सम्बद्ध कर अभिप्रमाणित कर सकता है। अभिप्रमाण विषम प्रच्छनन तन्त्र एवं द्रुतान्वेषण प्रकार्य के प्रयोग द्वारा प्रभावी होगा, जो प्रारम्भिक इलेक्ट्रानिक अभिलेख को दूसरे इलेक्ट्रानिक अभिलेख में परिवर्तित करता है। अंकीय हस्ताक्षर की उत्पत्ति दो चरणो में होती है। प्रथम, इलेक्ट्रानिक अभिलेख द्रुतान्वेषण प्रकार्य

द्वारा संदेश व्यवस्था में बदला जाता है। जो संप्रेषण की विषयवस्तु की सत्यता/अखंडता को सुनिश्चित करता है। द्वितीय, अंकीय हस्ताक्षर सम्बद्ध करने वाले व्यक्ति की पहचान एक निजी की (key) के प्रयोग द्वारा अभिप्रमाणित होती है जो स्वयं को संदेश व्यवस्था के साथ जोड़ता है एवं जिसे किसी भी व्यक्ति, जिसके पास उस निजी की (key) के सदृश सार्वजनिक की (key) होती है, द्वारा सत्यापित किया जा सकता है। निजी एवं सार्वजनिक कीज (keys) अभिदाता के लिए विशिष्ट (unique) होती है एवं एक कार्यरत की (key) का जोड़ा बनाती हैं। अभिदाता की सार्वजनिक की (key) का प्रयोग कर कोई भी व्यक्ति इलेक्ट्रनिक अभिलेख का सत्यापन कर सकता है। धारा 4; प्रस्तुत या उपलब्ध/सुलभ बनाए गए इलेक्ट्रानिक अभिलेखों के लिए अभिप्रमाणन प्रदान करती है जिससे वे उत्तरवर्ती संदर्भों के लिए प्रयोग करने योग्य हो जाएं। धारा 5 अंकीय हस्ताक्षर को सम्बद्ध हस्ताक्षर के समान अभिप्रमाणित करती है। धारा 6, सरकारी कार्यालय या इसकी एजेंसी में इलेक्ट्रानिक प्रपत्र के माध्यम से कोई प्रपत्र, आवेदन या अन्य दस्तावेज करने, अभिलेखों की रचना, धारण या संरक्षण करने, किसी लाइसेंस, परमिट या प्राप्ति या भुगतान जारी करने या प्रदान करने की अनुमति द्वारा इलेक्ट्रानिक प्रशासन सक्षम बनाती है। धारा 7, इलेक्ट्रानिक अभिलेख जो मूलरूप से उत्पन्न, भेजी गई या प्राप्त की गई सूचना को सटीकता से प्रस्तुत करते हैं, उनके धारण करने से सम्बन्धित हैं।

9.3.19 इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की विधिक स्थिति

परक्राम्य लिखतअधिनियम में संशोधन :—

कुछ परिवर्तन जो संशोधन अधिनियम, 2002 द्वारा **परक्राम्य लिखत**अधिनियम, 1881 में किए गए, इस प्रकार हैं :—

परक्राम्य लिखतअधिनियम की धारा 6 एवं सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम की धारा 13 में चैक की परिभाषा चैकों के ट्रनकेटिड (truncated) एवं इलेक्ट्रानिक निकासी (clearance) को शामिल करने के लिए संशोधित की गई। धारा 6 के स्पष्टीकरण 1 (a) के अनुसार 'इलेक्ट्रानिक रूप में चैक' का अर्थ एक चैक जो एक पत्र चैक का हुबहू दर्पण प्रतिबिम्ब (mirror image) है एवं अंकीय हस्ताक्षर (बायोमेट्रिक हस्ताक्षर के साथ या बिना) और विषम प्रच्छन्न तन्त्र के प्रयोग के साथ न्यूनतम सुरक्षा स्तरों के आश्वासन वाली सुरक्षित प्रणाली द्वारा उत्पन्न, लिखित एवं हस्ताक्षरित है।

धारा–6 के स्पष्टीकरण 1(b) के अनुसार एक ट्रनकेटिड चैक का अर्थ एक चैक से हे जिसे क्लीयरिंग चक्र के दौरान ट्रनकेटिड किया जाता है या तो क्लीयरिंग गृह द्वारा क्लीयरिंग चक्र के दौरान या क्लीयरिंग गृह द्वारा या बैंक द्वारा चाहे भुगतान करना हो या पाना हो, संप्रेषण के लिए इलेक्ट्रानिक प्रतिबिम्ब उत्पन्न होने पर तुरन्त लिखित में चैक के कायिक गतिविधि (physical movement) हेतु आगे स्थापन्न किया जाए।

धारा 5 के अनुसार ''एक विनियम पत्र'' लिखित में दस्तावेज है जो बनाने वाले द्वारा हस्ताक्षरित, एक स्पष्ट (शर्त रहित) आदेश धारण करता है जो केवल उसे या उसके आदेश पर, एक निश्चित व्यक्ति या दस्तावेज/लिखत को धारण करने वाले को एक निश्चित राशि का भुगतान करने हेतु एक निश्चित व्यक्ति को निर्देशित करता है। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम की धारा (1) (4) (a) के अनुसार अधिनियम विनिमय पत्र पर लागू नहीं होगा। अतः एक विनिमय पत्र इलेक्ट्रानिक माध्यम द्वारा नहीं बनाया जा सकता। **पराक्रम्य लिखत**अधनियम, 1881 में किए गये संशोधनों के अनुसार, जबकि आई टी अधिनियम में भी कुछ संशोधन किए गए हैं धारा 81 के पश्चात धारा 81-A जोड़ी गई। धारा 81-A इलेक्ट्रानिक एवं ट्रनकेटिड चैकों पर लागू होती है। धारा 81-A के अनुसार उस समय प्रभावी इस अधिनियम के प्रावधान ऐसे परिवर्तन एवं संशोधनों के विषय में जो **पराक्रम्य लिखत**अधिनियम, 1881 (1881 का 26) के उद्देश्यों को बनाए रखने के लिए आवश्यक है, इलेक्ट्रानिक चैकों एवं ट्रनकेटिड चैकों के सम्बन्ध में या उन पर, लागू होंगे, भारतीय रिजर्व बैंक की राय के साथ सरकारी गजट में सूचना द्वारा केन्द्र सरकार द्वारा किए जाए।

9.3.20 आर0बी0आई0 अधिनियम, 1934 में संशोधन

सूचना प्रोद्योगिकि अधिनियम, 2000 की चौथी अनुसूची की धारा 94, इलेक्ट्रानिक पूंजी स्थानान्तरण के विनियमन की विधिक शक्ति आर बी आई में निहित करने वाले निम्न संशोधनों को सक्षम करती है–

आर बी आई अधिनियम की धारा 58 के अनुसार, खण्ड (P)- (PP) के पश्चात उपधारा (2), बैंकों के मध्य या बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं जो इस प्रकार के पूंजी स्थानान्तरण में भाग लेंगे के मध्य इलेक्ट्रानिक माध्यमों के द्वारा होने वाली पूंजी स्थानान्तण इस प्रकार के पूंजी स्थानान्तरण की विधि एवं इस प्रकार के स्थानान्तरण में भाग लेने वालों के अधिकार एवं दायित्वों का विनियमन।

9.3.21 बैंकरर्स पुस्तक साक्ष्य अधिनियम, 1891 में संशोधन

इलैक्ट्रानिक डेटा/अभिलेखों का साक्ष्य के रूप में सम्मिलन

सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 की तीसरी अनुसूची (धारा 93) को इस प्रकार प्रतिस्थापित किया गया–

धारा (2) खण्ड (3), बैंकर्स पुस्तक में शामिल हैं, ''लेजर एवं पुस्तकें, दिवस पुस्तकें, नकद पुस्तकें, लेखा पुस्तकें, एवं अन्य सभी पुस्तकें जो बैंक के साधारण व्यापार में प्रयोग होती हैं, चाहे लिखित रूप में या डेटा के प्रिंटआउट के रूप में एक फ्लोपी, डिस्क, टेप या इलेक्ट्रोमेगनेटिक डेटा स्टोरेज युक्ति के किसी अन्य रूप में एकत्रित की गई हो,''धारा 2(8) यान्त्रिक या अन्य प्रक्रियाओं जो स्वयं में एक प्रतिलिपि की सटीकता मानी जाती है, के द्वारा प्रमाणित प्रतिलिपियों को सन्दर्भित करती है। धारा 2(8)(b) एक फ्लापी, डिस्क, टेप या अन्य कोई इलेक्ट्रो–मेगनोटिक डेटा, स्टोरेज युक्ति में एकत्रित डेटा के प्रिंटआउट्स, इस प्रकार की प्रविष्टि का प्रिंटआउट, या धारा 2–ए में प्रावधानों के अनुसार प्रमाण पत्र सहित इस प्रिंटआउट की प्रतिलिपि को निहित करती है। धारा 2–ए प्रिंटआउट से संलग्न प्रमाणपत्र में शर्तें अपेक्षित करती हैं। एक प्रमाणपत्र, इस बात को प्रभाव देता है कि यही उस प्रविष्टि का प्रिंटआउट है या मुख्य लेखाकार या एक शाखा प्रबन्धक द्वारा लिए गए उसके प्रिंटआउट की प्रतिलिपि है। संगणक प्रणाली (computer system) के प्रभारी व्यक्ति द्वारा प्रमाणपत्र, जिसमें संगणक तन्त्र प्रणाली का संक्षिप्त वर्णन एवं अधिकारिक व्यक्ति द्वारा संचालन निश्चित करने हेतु प्रणाली द्वारा अपनाए गए सुरक्षा नियमों का ब्यौरा शामिल है; आंकड़े/डेटा का अनाधिकृत परिवर्तन रोकता एवं पता लगता है; प्रणाली की असफलता या अन्य कारण से खोया हुआ आंकड़ा/डेटा पुनः प्राप्त करता है; प्रणाली के साथ कोई छेड़छाड़ रोकता एवं पता लगाता है। उस विधि का ब्यौरा, जिसमें कि निर्दिष्ट सामग्री/डेटा, प्रणाली से पृथक करने योग्य माध्यम जैसे फ्लोपी, डिस्क, टेप या अन्य इलेक्ट्रो–मेगनेटिक युक्तियों में स्थानानरित किया जाता है; यह निश्चित करने हेतु सत्यापन का तरीका कि निर्दिष्ट सामग्री सटीकतापूर्वक उस पृथक करने योग्य माध्यम में स्थानान्तरित हो गई; इस प्रकार की आकड़े/निर्दिष्ट सामग्री भण्डारण युक्तियों की पहचान का तरीका; भण्डारण (storage) हेतु व्यवस्थाएं एवं इस प्रकार की भण्डारण युक्तियों की अभिरक्षा; अन्य कोई कारक जो प्रणाली/तन्त्र की अखण्डता एवं सटीकता के लिए उत्तरदायी होगा। संगणक प्रणाली के प्रभारी व्यक्ति से एक और प्रमाणपत्र इस बात को प्रभाव देता है कि उसकी अपनी जानकारी एवं विश्वास में कार्य के समय वह संगणक प्रणाली उपयुक्त रूप से संचालित थी एवं मांगे गये सभी सम्बन्धित आंकड़े/निर्दिष्ट सामग्री एवं प्रिंटआउट जो उसके द्वारा प्रदान किए गये, सत्यता प्रस्तुत करते हैं या निर्दिष्ट सामग्री से सही तरीके से प्राप्त किए गए हैं।

9.3.22 साइबर अपराध एवं शास्तियाँ

अधिनियम साइबर अपराधों जैसे– आंकड़ों/सामग्री की चोरी, हैकिंग एवं आंकड़ों/सामग्री की विश्वसनीयता के साथ छेड़छाड़ हेतु कठोर दण्ड का प्रावधान करता है। अधिनियम इलेक्ट्रानिक अंतरणों एवं अंकीय हस्ताक्षरों के प्रयोग के लिए विधिक ढांचा भी निर्मित करता है। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 एक प्रमुख अधिनियमिति पहल है जो अन्तर्राष्ट्रीय साइबर विधि की अनुरूपता में ई–वाणिज्य के सुरक्षा प्रावधानों हेतु विधिक ढांचा प्रदान करती है। बैंकर्स सतर्कता को सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम के सहयोग से ई–वाणिज्य के अन्तर्गत आने वाले नए क्षेत्रों को आच्छादित करेगा। ग्राहकों के न्यून संगणक साक्षरता स्तर के संदर्भ में, वर्तमान विधि उद्देश्य की समुचित पूर्ति कर सकेगी। यह ध्यान रखना भी समान महत्वपूर्ण है कि अधिकांश दावे निवर्तमान अधिनियमों जैसे– भारतीय संविदा अधिनियम, **पराक्रम्य लिखत**अधिनियम एवं वस्तु विक्रय अधिनियम के दायरे में आते हैं एवं इन विधियों और सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम के मध्य कोई विवाद नहीं है। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, बैंकिंग अंतरणों के इलेक्ट्रोनिक रूपों को आच्छादित करने वाले उपयुक्त खण्डों के निवेशन को केवल सक्षम बनाता है, जो अन्य प्रकार से निवर्तमान विधियों में पहले ही प्रस्तावित है। कदाचित आने वाले वर्षों में जब इलेक्ट्रोनिक बैकिंग पूर्ण आकार लेगी विभिन्न अधिनियमितियों के प्रावधानों का एक व्यापक अधिनियमिति के अन्तर्गत संहिताकरण आवश्यक हो जाएगा। निम्नलिखित सारणियां विभिन्न साइबर अपराधों एवं शस्तियों जो कि आई टी अधिनियम, 2000 के अन्तर्गत अधिरोपित की गई है, इस प्रकार हैः–

सारणी–1

अपराधों का वर्गीकरण

व्यक्ति के विरूद्ध	व्यक्तिगत सम्पदा के विरूद्ध	सगठन के विरूद्ध	बड़े पैमाने पर समुदाय के विरूद्ध
ई–संदेशों द्वारा उत्पीड़न साइबर स्टाकिंग अश्लील सामग्री भेजना मानहानि संगणक पर	वाइरस संप्रेषण अनाधिकार प्रवेश (नेट पर) अनाधिकृत नियन्त्रण आई पी अपराध समय–चोरियां	अनाधिकृत नियन्त्रण कब्जा अनाधिकृत सूचना साइबर आतंकवाद चोरी के साफ्टवेयर का वितरण	अश्लील विवरण अवैध व्यापार वित्तीय अपराध अवैध वस्तुओं का विक्रय आनलाइन जुआ कूट रचना

अना– धिकृत नियन्त्रण अशोभनीय प्रदर्शन ई–संदेश पूलिंग धोखा एवं कपट			

आई टी अधिनियम, 2000 के अन्तर्गत अपराध एवं शास्तियाँ

सारणी–2

अपराध	**शास्ति**	**धारा**
संगणक / प्रणाली / आंकड़े को क्षति पहुँचाना संगणक प्रणाली के प्रभारी व्यक्ति या स्वामी की अनुमति के बगैर प्रणाली तक पहुँच प्राप्त करना आंकड़े / सामग्री डाउनलोड या उनकी प्रतिलिपि लेना संगणक दूषित करना / वाइरस प्रवेश कराना अन्य प्राधिकारिक व्यक्ति तक पहुँच से नकारना संगणक प्रणाली या नेटवर्क से छेड़छाड़ या छलकपट द्वारा व्यक्ति द्वारा प्राप्त श्रृंखला या क्रम को दूसरे व्यक्ति के खाते से परिवर्तित करना	प्रभावित व्यक्ति को 1 करोड़ रूपयों तक की क्षतिपूर्ति	43
सूचना देने में अननुपालन प्रणाली कोई दस्तावेज / वापसी या प्रतिवेदन प्रमाणित प्राधिकरण के नियन्त्रक को प्रस्तुत करने में असफलता नियत समय में किसी विवरण को दायर करने में कोई सूचना / पुस्तक या अन्य दस्तावेज प्रस्तुतीकरण में	प्रत्येक असफलता हेतु रू0 1.50 लाख से ऊपर नहीं ऐसे अननुपालन की अवधि के दौरान प्रतिदिन रू0 5,000 से बढ़कर नहीं	44(a) 44(b)

असफलता लेखा या अभिलेखों की पुस्तकों के संरक्षण में असफलता किसी नियम या विनियम का उल्लंघन जिसके लिए अधिनियम में कहीं भी कोई विशेष शास्ति प्रदान नहीं की गई	प्रतिदिन रू0 10,000 तक प्रभावित व्यक्ति को रू0 2500 तक की क्षतिपूर्ति या एक जुर्माना रू0 25,000 तक का	44(c) 45
छेड़छाड़ संगणक स्रोत के साथ छेड़छाड़, दस्तावेज–छिपाना, नष्ट करना, परिवर्तित करना।	3 वर्ष तक का कारवास या रू0 2 लाख तक का जुर्माना या दोनों	65
अनाधिकृत प्रवेश (Hacking) संगणक प्रणाली में अनाधिकृत प्रवेश जो सार्वजनिक या किसी व्यक्ति के अनुचित हानि या क्षति का कारण बने। संगठन में सुरक्षित किसी सूचना /जानकारी को मिटाना, परिवर्तित करना या नष्ट करना।	3 वर्ष तक का कारावास या रू0 2 लाख तक का जुर्माना या दोनों	66(2)
अश्लील सामग्री का संप्रेषण इलेक्ट्रोनिक रूप में अश्लील सामग्री का प्रकाशन या संप्रेषण	5 वर्ष तक का कारावास एवं 1 लाख का जुर्माना, प्रथम अपराध हेतु द्वितीय एवं पश्चवर्ती अपराधों हेतु 10 वर्ष तक का कारावास एवं रू0 2 लाख तक का जुर्माना	67
प्रमाणिकृत प्राधिकरण के नियन्त्रण के समक्ष मिथ्या प्रस्तुतीकरण अंकीय हस्ताक्षर प्रमाणपत्र पाने हेतु प्रमाणीकृत प्राधिकरण के नियन्त्रक के समक्ष तथ्यों का मिथ्या प्रस्तुतीकरण या उनमें से कुछ का दमन करना	2 वर्ष तक का कारावास या रू0 1 लाख तक का जुर्माना या दोनों	71

अंकीय हस्ताक्षर प्रमाण पत्र में मिथ्या सूचना अंकीय हस्ताक्षर प्रमाण पत्र का मिथ्या विवरण के साथ प्रकाशन	2 वर्ष तक का कारावास या रू0 1 लाख तक का जुर्माना या दोनों	73
गोपनीयता का उल्लंघन इलेक्ट्रानिक अभिलेखों तक पहुँच प्राप्त करना, इलेक्ट्रोनिक अभिलेखों / सूचना दस्तावेजों को उजाकर करना।	2 वर्ष तक का कारावास या रू0 1 लाख तक का जुर्माना या दोनों	72
अंकीय हस्ताक्षर प्रमाणपत्र का गलत उपयोग किसी कपटपूर्ण या अवैध उद्देश्य के लिए एक अंकीय हस्ताक्षर प्रमाणपत्र का निर्माण, प्रकाशन या उपलब्ध कराना।	2 वर्ष तक का कारावास या रू0 1 लाख तक का जुर्माना या दोनों	74

9.4 सारांश

भारत में सूचना प्रोद्योगिकी उद्योग को इसके आई टी एवं आई टी ई एस क्षेत्र के कारण एक ब्राण्ड पहचान 'ज्ञान अर्थव्यवस्था' के रूप में प्राप्त हुई है। आई टी आई टी ई एस उद्योग के दो मुख्य घटक हैं– आई टी सेवाएं एवं व्यापार प्रक्रिया आउट सोर्सिंग (BPO)। भारत में सेवा क्षेत्र में वृद्धि आई टी आई टी ई एस क्षेत्र द्वारा अग्रसारित है, जिसका जी डी पी में बढ़ोत्तरी रोजगार एवं निर्यात में प्रमुख योगदान है। सात प्रमुख शहर लगभग इस क्षेत्र का 90% निर्यात का कारण है वे– बैंगलोर, चेन्नई, हैदराबाद, मुम्बई, पुणे, दिल्ली, कोलकत्ता, कोयम्बटूर एवं कोची। यह क्षेत्र रोजगार सृजन में भी अग्रणी है। वैश्विक आउटसोर्सिंग क्षेत्र में यह प्रमुख है। हालांकि वैश्वीकृत विश्व में इस क्षेत्र को लगातार प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है, विशेष रूप से चीन एवं फिलीपीन्स जैसे देशों से।

बुरोफ्स (Burroughs) के साथ साझेदारी में टाटा समूह की स्थापना के साथ 1967 में मुम्बई में भारतीय आईटी सेवा उद्योग का जन्म हुआ। प्रथम सॉफ्टवेयर निर्यात जोन SEEPZ की स्थापना यहाँ 1973 में हुई, जिसे आधुनिक आईटी पार्क का प्राचीन अवतार कह सकते हैं। अस्सी के दशक में 80 प्रतिशत से अधिक देश का साफ्टवेयर निर्यात SEEPZ से हुआ। 18 अगस्त 1951 को शिक्षा मंत्री मौलाना

अबुल कलाम आजाद ने पश्चिम बंगाल के खड़गपुर में भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान का शुभारम्भ किया। संयुक्त राज्य अमेरिका के शिथिल अप्रवासी विधियों (1965) ने असंख्य कुशल भारतीय पेशेवरों को शोध के उद्देश्य हेतु आकर्षित किया। एक अनुमान के अनुसार 1960 तक लगभग 10,000 भारतीय यू एस में बस गए। 1980 तक भारत से अनेक इंजीनियर अन्य देशों में रोजगार की चाह रखते थे। भारत के विश्वकोष (Encyclopedia of India) में कामदार (2006) ने भारतीय अप्रवासियों (1980–पूर्वाद्ध 1990) की प्रोद्योगिकी चालित विकास में भूमिका के बारे में विवरण दिया है। अमेरिकी वैज्ञानिक एवं प्रोद्योगिकी उपलब्धियों के प्रत्येक क्षेत्र में हजारों उच्च प्रशिक्षण प्राप्त भारतीय अप्रवासियों ने सूचना प्रोद्योगिकी क्रान्ति के साथ योगदान किया जिसका आकलन नहीं किया जा सकता, 1980 एवं 1990 में अधिकांश कैलीफोर्निया सिलिकोन वैली से सम्बन्धित थे। मार्च 1975 में राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र (National informations centre) स्थापित किया गया। अक्टूबर 1976 में कम्प्यूटर मेन्टीनेन्स कंपनी (CMS) का प्रारम्भ हुआ। 1977–1980 के दौरान भारत की सूचना प्रोद्योगिकी कंपनियों– टाटा इंफोटेक, पटनी कम्प्यूटर सिस्टमस एवं विप्रो परिदृश्य में उभरी। 1980 की माइक्रोचिप क्रांति इन्दिरा गांधी एवं उसके उत्तराधिकारी राजीव गांधी दोनों द्वारा गर्भित की गई क्योंकि इलेक्ट्रोनिक्स एवं दूरसंचार भारत की वृद्धि एवं विकास हेतु अति आवश्यक थे। MTNL प्रोद्योगिकी सुधार से गुजरा। 1986–1987 के दौरान भारतीय सरकार ने तीन विशाल क्षेत्रीय कम्प्यूटर नेटवर्किंग योजनाओं की रचना को चिन्हित कियाः INDONET (जिसका उद्देश्य भारत में IBM अधिसंसाधित्र (Mainfraims) की पूर्ति करना था), NICNET (भारतीय – राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र के लिए नेटवर्क), एवं ERNET (अकादमिक शोध अनुकूलित शिक्षा एवं शोध नेटवर्क Academic research oriented Education and Research Network)।

1992 में सरकार ने व्यक्तिगत कम्पनियों को उनके अपने समर्पित लिंक की अनुमति प्रारम्भ की, जिसने भारत में किए गए कार्य का सीधे विदेश प्रसारण संभव किया। भारतीय फर्मों ने शीघ्र ही अमेरिकी ग्राहकों को कायल कर लिया कि एक सेटेलाइट लिंक उसी तरह विश्वसनीय है जितना कि ग्राहक के कार्यालय में कार्य कर रही प्रोग्रामर की एक टीम। विदेश संचार निगम लिमिटेड (VSNL) ने 1991 में गेटवे इलेक्ट्रानिक मेल सर्विस की शुरूआत की, 1992 में 64 kbit/s लीज्ड (Leased) लाइन सर्विस, 1992 में दृष्टिगत पैमाने पर वाणिज्यिक इंटरनेट एक्सेस शुरू किया। चुनाव के नतीजे राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र, NICNET के जरिए दिखाए गए। 1991 में भारतीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक सुधार लागू किए, जो वैश्वीकरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक एकीकरण के नए युग में ले गया। अटल बिहारी बाजपेयी के

अन्तर्गत नए प्रशासन ने सूचना प्रोद्योगिकी के विकास को उसकी पाँच उच्च प्राथमिकताओं में रखा एवं सूचना प्रोद्योगिकी एवं साफ्टवेयर विकास हेतु भारतीय राष्ट्रीय टास्क फोर्स का गठन किया। गठन के 90 दिनों के अन्दर टास्क ने भारत में प्रोद्योगिकी की स्थिति पर व्यापक पृष्ठ भूमि प्रतिवेदन, एवं 108 सिफारिशों के साथ एक IT कार्य योजना प्रस्तुत की। नई दूरसंचार नीति, 1999 ने भारत के दूरसंचार क्षेत्र में आगे उदारीकरण में सहायता की। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम 2000 ने इलेक्ट्रानिक अन्तरण एवं ई–वाणिज्य के लिए विधिक प्रक्रियाएं निर्धारित कीं।1990 के पूरे दशक के दौरान संयुक्त राज्य में भारतीय पेशेवरों के दाखिल होने की दूसरी लहर चली। इन अप्रवासियों में अधिकतर उच्च शिक्षा प्राप्त प्रोद्योगिकी निपुण वर्कर थे। संयुक्त राज्य के अन्दर भारतीय विज्ञान, इंजीनियरिंग एवं प्रबंधन में बहुत अच्छे थे। भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान (IIT) से स्नातक उनकी तकनीकी निपुणता के लिए पहचाने जाने लगे। भारत में सूचना प्रोद्योगिकी की सफलता न केवल आर्थिक अप्रत्यक्ष परिणाम थे, वरन इसके दूरगामी राजनीतिक परिणाम भी थे। भारत की, कुशल कार्यबल के लिए स्रोत एवं गंतव्य दोनों के रूप में प्रतिष्ठा ने विश्व की अनेक अर्थव्यवस्थाओं से सम्बन्ध बेहतर करने में सहायता की। अर्थव्यवस्था एवं प्रोद्योगिकी में सम्बन्ध का पश्चिमी विश्व में मूल्य था, इसने अप्रवासी भारतीयों के उद्यमी वर्ग के विकास को बढ़ावा दिया, जिसने फिर से प्रोद्योगिकी चालित वृद्धि में विस्तार हेतु सहायता की। आज बैंगलोर 'भारत की सिलिकॉन वैली' के नाम से जाना जाता है एवं इसका भारतीय IT निर्यात में 33% योगदान है। भारत की दूसरी एवं तीसरे सबसे बड़ी साफ्टवेयर कम्पनियों का प्रधान कार्यालय बेंगलोर में है एवं बहुत सी वैश्विक SEI-CMM, 5 स्तर की कंपनियों का भी। मुम्बई का भी IT कंपनियों में हिस्सा है, भारत की प्रथम एवं सबसे बड़ी TCS एवं सुस्थापित– रिलायंस, एम पटनी, एलएनटी, इंफोटेक, आई–फ्लैक्स, डब्ल्यू एनएस, शाइनी (shine), नौकरी (Naukri), जाबस्पर्ट (jobspert) आदि का प्रधान कार्यालय मुम्बई में है। 25 जून 2005 को भारत एवं यूरोपीय यूनियन के मध्य विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में द्विपक्षीय समझौता हुआ। ईयू–भारत के विद्वानों का एक साझा समूह 23 नवम्बर 2001 को, साझा शोध एवं विकास को बढ़ावा देने हेतु निर्मित हुआ। भारत ने CERN में पर्यवेक्षक की स्थिति धारण की जबकि एक साझा भारत ईयू साफ्टवेयर शिक्षा एवं विकास केन्द्र बैंगलोर में बनना बाकी है। स्वचालन, वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में मानव श्रम की आवश्यकता को कम करने हेतु सूचना प्रोद्योगिकी एवं नियन्त्रण प्रणाली का प्रयोग है। पर्यावरण के लिए स्वचालन की कीमत भिन्न है। जो प्रोद्योगिकी उत्पाद या स्वचालित इंजिन पर निर्भर करती है। कुछ स्वचालित इंजिन ऐसे हैं जो पहले के इंजिन के बनिस्पत पृथ्वी से, अधिक ऊर्जा स्रोत उपभोग करते हैं एवं कुछ ऐसे भी हैं जो इसके विपरीत हैं। जोखिम पूर्ण

संचालन, जैसे कि तेल शोधन, ओद्योगिक रसायनों का निर्माण एवं सभी प्रकार के धातु कार्य, स्वचालन हेतु सदा शुरूआती प्रतियोगी थे। स्वचालित युक्तियों पर इंजीनियर्स का अब संख्यात्मक नियन्त्रण (Numerical control) है। जिसका परिणाम तेजी से विस्तार पाती अनुप्रयोगों के प्रकार (Dange of application) मानव गतिविधियां हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विकासों के साथ सामंजस्य बिठाने के लिए भारत ने सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 (IT ACT) अधिनियमित किया, जबकि इलेक्ट्रानिक निधि स्थनान्तरण योजना पर समिति की सिफारिशों को पूरा ध्यान में रखा। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000, 17.10.2000 से प्रभाव में आया। यह जम्मू एवं कश्मीर सहित सभी राज्यों में प्रभावित हुआ। इस अधिनियम से भारत के अन्दर एवं बाहर घटित साइवर अपराधों पर संज्ञान ले पाना संभव हुआ। अधिनियम ने इलेक्ट्रोनिक अभिलेखों एवंअंकीय हस्ताक्षरों को पहचान मान्यता एवं विश्वसनायता प्रदान की। अधिनियम द्वारा ई–वाणिज्यक अंतरणों पर नियन्त्रण, शास्तियों का आरोपण एवं प्रावधानों के उल्लंघन पर जुर्माना अधिरोपित करने हेतु विधिक ढांचा भी निर्धारित किया। अधिनियम ने भारत में स्थानीय सच्चाइयों को भी ध्यान में रखा गया, जैसे कि नई प्राद्यागिकी के लिए बुनियादी ढांचे की कमी एवं कुछ अंतरणों में क्रियाशील विकल्प एवं अधिनियम के दृष्टि से कुछ उपकरणों को दूर किया। कुछ परिवर्तन जो संशोधन अधिनियम, 2002 द्वारा **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 1881 में किए गए, इस प्रकार हैं :–

पराक्रम्य लिखत अधिनियम की धारा 6 एवं सूचना प्रो़द्योगिकी अधिनियम की धारा 13 में चैक की परिभाषा चैकों के ट्रनकेटिड (truncated) एवं इलेक्ट्रानिक निकासी (clearance) को शामिल करने के लिए संशोधित की गई।

सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम की धारा (1) (4) (a) के अनुसार अधिनियम विनिमय पत्र पर लागू नहीं होगा। अतः एक विनिमय पत्र इलेक्ट्रानिक माध्यम द्वारा नहीं बनाया जा सकता।

पराक्रम्य लिखत अधनियम, 1881 में किए गये संशोधनों के अनुसार, जबकि आई टी अधिनियम में भी कुछ संशोधन किए गए हैं धारा 81 के पश्चात धारा 81-A जोड़ी गई। धारा 81-A इलेक्ट्रानिक एवं ट्रनकेटिड चैकों पर लागू होती है। अधिनियम साइबर अपराधों जैसे– आंकड़ों/सामग्री की चोरी, हैकिंग एवं आंकड़ों/सामग्री की विश्वसनीयता के साथ छेड़छाड़ हेतु कठोर दण्ड का प्रावधान करता है। अधिनियम इलेक्ट्रानिक अंतरणों एवं अंकीय हस्ताक्षरों के प्रयोग के लिए विधिक ढांचा भी निर्मित करता है। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 एक प्रमुख अधिनियमिति पहल है जो अन्तर्राष्ट्रीय साइबर विधि की अनुरूपता में ई–वाणिज्य के सुरक्षा प्रावधानों

हेतु विधिक ढांचा प्रदान करती है। बैंकर्स सतर्कता को सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम के सहयोग से ई–वाणिज्य के अन्तर्गत आने वाले नए क्षेत्रों को आच्छादित करेगा। ग्राहकों के न्यून संगणक साक्षरता स्तर के संदर्भ में, वर्तमान विधि उद्देश्य की समुचित पूर्ति कर सकेगी। यह ध्यान रखना भी समान महत्वपूर्ण है कि अधिकांश दावे निवर्तमान अधिनियमों जैसे– भारतीय संविदा अधिनियम, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम एवं वस्तु विक्रय अधिनियम के दायरे में आते हैं एवं इन विधियों और सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम के मध्य कोई विवाद नहीं है। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, बैंकिंग अंतरणों के इलेक्ट्रोनिक रूपों को आच्छादित करने वाले उपयुक्त खण्डों के निवेशन को केवल सक्षम बनाता है, जो अन्य प्रकार से निवर्तमान विधियों में पहले ही प्रस्तावित है। कदाचित आने वाले वर्षों में जब इलेक्ट्रोनिक बैकिंग पूर्ण आकार लेगी विभिन्न अधिनियमितियों के प्रावधानों का एक व्यापक अधिनियमिति के अन्तर्गत संहिताकरण आवश्यक हो जाएगा।

9.6 महत्वपूर्ण शब्दावली

बायोमेट्रिक– शारीरिक चिन्हों जैसे उंगली के निशानों अथवा आखों की पुतलियों द्वारा व्यक्ति विशेष की पहचान की पद्धति।

पुलिंग– डेटा स्थानान्तरित करना।

9.7 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक एवं उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000
2.भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934
3.भारतीय टेलीग्राफ अधिनियम, 1885
4.राष्ट्रीय सूचना प्रोद्योगिकी नीति

9.6 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.भारत में सूचना प्रोद्यागिकी के इतिहास का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करें।
2.इस क्षेत्र में अद्यतन विकास की जानकारी दें।
3.स्वचालन से आप क्या समझते हैं?
4.सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 के उद्देश्यां को रेखांकित कीजिए।
5.इलेक्ट्रोनिक अभिलेखों से आप क्या समझते हैं?

एलएल.एम. प्रथम वर्ष

बैंकिंग विधि

खण्ड–3. बैंकर एवं ग्राहक के सम्बन्ध एवं भारत में बैंकिंग प्रणाली में अ़द्यतन **(Relationship of Banker and Customer and Recent Trends of Banking System in India)**

इकाई –10. इंटरनेट का प्रयोग, स्मार्ट कार्ड, विशेषज्ञ प्रणाली/तन्त्र का प्रयोग, क्रेडिट कार्डस **(Use of Internet, Smart Card, Use of Expert System, Credit Card)**

इकाई की संरचना

10.1 परिचय

10.2 उद्देश्य

10.3 विषय का प्रस्तुतीकरण

10.3.1 इन्टरनेट का प्रयोग

10.3.2 इन्टरनेट क्रान्ति

10.3.3 समय की बहुमूल्यता

10.3.4 इन्टरनेट बैंक

10.3.5 अन्तर्राष्ट्रीय बाजार

10.3.6 रोजगार प्रतिनिधि

10.3.7 स्मार्ट कार्ड्स

10.3.8 स्मार्ट कार्ड कैसे कार्य करते है

10.3.9 वर्तमान उपयोगिता

10.3.10 भुगतान फोन

10.3.11 मोबाइल संचारण

10.3.12 बैंकिग एवं खुदरा व्यापार

10.3.13 इलेक्ट्रोनिक बटुआ

10.3.14 स्वास्थ्य सुरक्षा

10.3.15 शिनाख्त प्रमाणीकरण एवं प्रवेश नियन्त्रण

10.3.16 विशेषज्ञ प्रणाली

10.3.17 इतिहास

10.3.18 क्रेडिट कार्डस

10.3.19 क्रेडिट कार्ड कैसे कार्य करता है

10.3.20 इतिहास

10.4 सारांश

10.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

10.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

10.7 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

10.1 परिचय

इंटरनेट, 1990 के पूर्वाद्ध में लोंगो द्वारा स्वप्नदर्शीसोच का परिणाम है, जिन्होंने, शोध एवं विज्ञान और सेना के क्षेत्र में विकास पर संगणक की सूचना संबंधी हिस्सेदारी में बड़ी क्षमता को देखा। MITके जे0 सी0 आर0 लिकलिडर (J.C.R. Licklider)ने 1962 में संगणकों के वैश्विक संजाल(Network) को प्रथम बार प्रस्तावित किया एवं 1962 के उत्तरार्द्ध में इस विकास के कार्य की अध्यक्षता हेतु डिफेंस एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी(DARPA) की ओर चले गये। MITके लियोनार्ड क्लिनरॉक(Leonard Klienrock) एवं बाद में UCLAने पेकैट स्विचिंग(Packet switching) का सिद्धांत विकसित किया, जो इंटरनेट संयोजन का आधार बना।NITके लारेन्स रार्बट्स(Lawrance Roberts) ने 1965 में डायल–अपटेलीफोन लाइन पर मैसाचुएट्स संगणक को कैलीफोर्निया के संगणक के साथ जोड़ा। इसने व्यापक क्षेत्र नेटवर्किंग कीसम्भाव्यता दिखाई, लेकिन यह भी जाहिर किया कि टेलीफोन लाइन का परिपथ घेरा अपर्याप्त था। क्लिनरॉक का पेकैट स्विचिंग सिद्धान्त पक्का था। रार्बट 1966 मेंDARPAकी ओर चले गए एवं उन्होने ARPANET के लिए अपनी योजना विकसित की। इन स्वप्नदर्शियों एवं अन्य बहुत लोंग जिनका नाम भी सामने नहीं आया, इंटरनेट के वास्तविक संस्थापक थे। 1968 में जब स्वर्गीय सिनेटर टेड केनैडी ने सुना कि जानी मानी मैसाचुएट्स कंम्पनी BBN ने एक ''अंताराफलक संदेश संसाधक (INP-Iinterface message processer)''के लिए ARPAका अनुबंध पाया है, उन्होंने BBN को एक बधाई संदेश भेजा। इन्टरनेट जो तब ARPA NET के नाम से जाता था, को एक अनुबंध के तहत नये नाम एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट एजेन्सी(ARPA), जिसने दक्षिण पश्चिमी संयुक्त राज्य में विश्वविद्यालयों UCLA, स्टेनफोर्ड रिसर्च इंसटीट्यूट, UCSB,यूनीवर्सिटी ऑफ उटाह (Utah) में चार प्रमुख संगणकों (computers) को प्रारम्भ में संयोजित किया था, द्वारा 1969 में आनलाइन ले जाया गया अनुबंध कैम्ब्रिज के BBN द्वारा बॉब काहन (Bobkahn) के नेतृत्व में वहन किया गया एवं दिसम्बर 1969 में आनलाइन चला गया। जून 1970 तक MIT, हावर्ज,BBN एवं सांता मोनिका में सिस्टम्स डेवेलपमेन्ट कारपो0 कैल0 (SDC) जुड़ गए। जनवरी 1971 तक स्टैनफोर्ड, MIT की लिंकन लैब्स, लारनेजी–मेलन (Larnegie-Mellan) एवं कैस–वेस्टर्न रिजर्व यू (case-western reserve U) जुड़ गये। आने वाले महीनों में नासा/एमीज (Ames),माइटर (Miter), बुरॉफ(Burroughs), RAND एवं इलिनॉइस का

यू (U of llinors) भी अन्दर आ गए। इसके पश्चात बहुत से जिनका वर्णन यहाॅ संभव नही है जुडे। सर्वप्रथम चार्ली क्लिन (UCLAमें) ने अर्पानेट पर पहला पेकैट भेजा, जबवह (अक्टूबर 29,1969) में स्टेनफोर्ड रिसर्च इंस्टीट्यूट से जुड़ने का प्रयास कर रहे थे। जैसे ही वे LOGINके G पर पहुॅचे प्रणाली घ्वस्त हो गई। ईन्टरनेट को संयोजन संजाल (नेटवर्क) प्रदान करने हेतु रूप रेखा प्रदान की गई है, जो कुछ प्रमुख कार्यस्थलो (sites) के निम्नगामी (down)होने पर भी कार्य करती है। अगर प्रमुख निर्देर्शित अनुमार्ग उपलब्ध न हो, अनुमार्गक संजाल के चारो ओर के यातायात को वैकल्पिक अनुमार्गो के माध्यम से निर्देशित कर देता है । प्रारम्भ में इंटनेट का प्रयोग संगणक विशेषज्ञों, इंजीनियर्स, वैैज्ञानिकों एवं पुस्तकालयध्यक्षों द्वारा किया जाता था। इसके प्रति दोस्ताना कुछ नहीं था। उन दिनों गृह या कर्यालय में निजी संगणक नहीं थे, एवं प्रत्येकउनका प्रयोग नहीं कर सकता था। एक संगणक पेशेवर या एक इंजीनियर या वैज्ञानिक, पुस्ताकलयध्यक्ष को इस बहुत जटिल प्रणाली के प्रयोग को सीखना पड़ता था। वॉफ ब्लिट्जर (Wolf blitzer) के साथ एक साक्षात्कार की CNN प्रतिलिपि के अनुसार अल गोरे (Algore)ने कहा था, ''संयुक्त राज्य कांग्रेस में मेरे कार्यकाल के दौरान में इंटरनेट की रचना में पहल की थी'' हालांकि अल गोरे 1969 में कांग्रेस में नही थे, जब ARPANET प्रारम्भ हुआा या 1974 में जब इंटरनेट शब्द प्रथम बार प्रयोग में आया। गोरे 1976 में कांग्रेस के लिए चुने गए थे। निष्पक्षता के साथ बाब काहन एवं विंट सर्फ ने अपने पत्र जिसका विषय 'अल गोरे एवं इंटरनेट' था में बताया गोरे ने कदाचित किसी अन्य चुने गए अधिकारी से अधिक, 1970 से अबतक इंटरनेट के विकास एवं वृद्दि में सहयोग किया है।ARPANET के लिए ई– संदेश, 1972 में BBN के रे टामलिसंन (Ray tomlinsan) द्वारा अनुकूलित किया गया। उन्होने अपने दूरमुद्रक (Teletype)पर उपलब्ध प्रतीको मेंसे @प्रतीक, प्रयोक्ता नाम (username) एवं पते (Adress) को जोड़ने हेतु लिया। टेलनेट नयाचार (Telnet protocol), जिसने दूरस्थ संगणक के साथ संलेखन (Logging) को सक्षम बनाया, 1972 में रिक्वेस्ट फार कमैट (RFC) के रूप में प्रकाशित हुआ था।RFC's पूरे समुदाय में विकास कार्यसाझा करने का एक माध्यम है। एफ टी पी नयाचार, जो इंटरनेट अनुमार्गो के मध्य फाईल स्थानान्तरण को सक्षम करता है, एक RFC के रूप में 1973 में प्रकाशित हुआ, एवं तबसे RFC's पर इंलेक्ट्रोनिक रूप में हरकिसी के लिए उपलब्ध था जो एफ टी पी नयाचार का प्रयोग करते थे। ARPA से स्वतंत्र 1960 के उत्तार्ध्द्ध में पुस्तालयाध्यक्षों ने अपनी नामावलियो का स्वचालन एवं नेटवकिंग प्रारम्भ की। ओहियो कॉलेज पुस्तकालय केन्द्र के दूरदर्शी फ्रेडरिक जी. किलगोर (अब OCIC एक) ने 60 वें एवं 70 वें दशकों के दौरान

ओहियो पुस्तकालयों की नेटवर्किंग का नेतृत्व किया मध्य 1970 में इंगलैण्ड, दक्षिणपश्चिम राज्यों एवं मध्य अटलांटिक राज्यों आदि से और स्थानीय संघों ने आहियों से संयुक्त होकर एक राष्ट्रीय (बाद मे अन्तर्राष्ट्रीय) संजाल (Network)बनाया। स्वचालित नामावलिया प्रारभ्म में बहुत प्रयोक्ता–अनुकूलित (User- Friendly)नही थी, पहले टेलनेट या आकवर्ड IBM वेरिचंरTN3270 (Awkword IBM Variant TM3270)के माध्यम से एवं बहुत वर्षो के पश्चात केवल वेव (Web)के माध्यम से विश्व को उपलब्ध हुई । अर्थनेट (Earthnet),अधिकांश स्थानीय संजालो के लिए नयाचार 1974 में हुआ जो हावर्ड के विघार्थी बाब मेटकाल्फे (Bob metcalfe)की ''पैकेट नेटवर्कस''पर शोध निबन्ध का परिणाम था। इस शोध निबन्ध को विश्व विश्वविद्यालय द्वारा अधिक विश्लेषित नही के कारण, प्रारम्भ में खरिज कर दिया गया था। जब इसमें कुछ और सूत्र जोड़े गए तब इसे स्वीकृति प्रदान की गई। 70 के दशक में इंटरनेट की परिपक्वता TCP/ IPस्थापत्यका परिणाम थी, जिसे पहले बाब काहन नेBBN में प्रस्तावित किया एवं आगे काहन एवं विंटसर्फ द्वारा स्टेनफोर्ड एवं अन्य में पूरे 70 के दशक के दौरान विकसित किया गया। इसे प्रतिरक्षा विभाग द्वारा पहले के नेटवर्क कन्ट्रोल प्रोटोकोल (NCP) को प्रतिस्थिापितकर 1980 में अपनाया गया एवं 1983 तक पूरी दुनिया द्वारा अपनाया गया। यूनिक्स से यूनिक्स प्रतिलिपि नयाचार (UUCP-Unix to Unix Copy Protocol) की बैल लैब्स में 1978 में खोज हुई। UUCP पर आधारित यूजनेट (usenet) 1979 मे आरम्भ हुआ। समाचार समूह (News group) जो एक विषय पर केन्द्रित वाद–विवाद समूह है। पूरे विश्व में सूचनाओं के आदान–प्रदान का माध्यम प्रदान करते है। जबकि यूजनेट इंटरनेट का एक भाग नही माना जाता है, क्योंकि यह TCP/IP का प्रयोग नहीं करती, यह यूनिक्स प्रणाली को विश्व भर में जोड़ती है एवं अनेक इंटरनेट अनुमार्ग (Sites) समाचार समूहों की उपलब्धता का लाभ लेती है। यह समुदाय निर्माण का एक महत्वपूर्ण भाग है जो संजालों (Networks) पर स्थान लेता है।

10.2 उद्देश्य

इंटरनेट आधुनिक समय की सबसे अधिक उपयोगी तकनीक बन गई है जो न केवल हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी में सहायक है बल्कि हमारी निजी एवं व्यवसायिक जिन्दगी के विकास में भी सहायक है। इंटरनेट इसे प्राप्त करने में हमारी विभिन्न तरीकों से सहायता करता है। विद्यार्थियों के लिए एवं शैक्षिक उद्देश्यों हेतु इंटरनेट जानकारी एकत्रित करने में व्यापक प्रयोग में आता है। जैसे कि किसी शोध या

किसी विषय में और जानकारी जोड़ने के लिए। यहॉ तक कि व्यापारिक व्यक्ति एवं व्यवसायी जैसे कि डॉक्टर अपने उपयोग हेतु आवश्यक जानकारी इंटरनेट से प्राप्त करते है। अतः इंटरनेट सभी आयु वर्गों के लोगों के लिए सबसे बड़ा विश्वकोष है। जो मित्र एवं रिश्तेदार विदेशों में निवास करते हैं उनसे सम्पर्क बनाए रखने का इंटरनेट सबसे उपयोगी जरिया है। सबसे सरल संचार माध्यम जैसे इंटरनेट चैटिंग प्रणाली एवं ई–सन्देश, विश्व भर में लोगों से सम्पर्क स्थापित करने का सबसे अच्छा एवं सामान्य तरीका हैं। यह भी नही भूलना चाहिए कि इन दिनों मनोरंजन प्रदान करने में भी इंटरनेट सबसे उपयोगी है। सभी खेलो एवं सम्मेंलनों या आनलाइन मूवीज, गाने, नाटक एवं प्रश्नोंत्तरी इंटरनेट प्रयोक्ता को उपलब्ध कराता है। उनकी जिन्दगियों से ऊब को नष्ट करने के महान मौके के साथ इंटरनेट का प्रयोग, इंटरनेट के उन्नयन में भी होता है एवं शोध एवं दस्तावेजी कार्यों पर कार्य करने के लिए विशेष साफ्टवेयर के प्रयोग हेतु होता है,क्योकि इंटरनेट प्रयोक्ता को विभिन्न उद्देश्यों के लिएअसंख्य, विभिन्न साफ्टवेयर के अधःभारण (download) में सक्षम करता है, जो मॅहगी साफ्टवेयर सीडी खरीदने से बेहद सरल है।

10.3.1 इंटरनेट का प्रयोग

प्रत्येक व्यक्ति जो इसका प्रयोग करना चाहते है उन्हें इंटरनेट बहुत से लाभदायक प्रस्ताव देता है। बहुत बड़ी मात्रा में जानकारी उपलब्ध है एवं इंटरनेट के माध्यम से उनका उपयोग कोई भी कर सकता है। इसी ने इसे एक व्यक्ति के जीवन में सबसें अधिक कीमती साधन बना दिया है। इंटरनेट पर प्रतिदिन बड़ी मात्रा में प्रकाशन जोड़ा जाता है एवं यह जानकारी के सबसे शक्तिशाली स्रोत के रूप में उभर रहा है। इसके अलावा इंटरनेट का प्रयोग काम–काज को सरल बनाता है एवं चुनौतियों, जो पहले बहुत अधिक समय ले लेती थी, को अधिक सरल कर दिया है। इसके अतिरिक्त इंटरनेट, बैंक की परेशानियों से बचने के लिये अच्छा उपकरण बन गया । इसके जरिये अंतरण अतिशीघ्रता से एवं सुरक्षापुर्वक अंजाम दिए जाते है। यह खरीदारी के लिए शक्तिशाली स्रोत भी बनता जा रहा है। एवं इसके माध्यम से वस्तुएं सीधे घर तक वितरित की जाती हैं अगर कोई घर से बाहर न जाना चाहें तो। इंटरनेट के व्यापक प्रयोग ने जाब के लिए सभी देशों में नए क्षेत्र तलाशे है एवं घर से ही कार्य करने की उपलब्धता को विस्तारित किया। इंटरनेट शिक्षा में एक सबसे कीमती साधन है क्योंकि यह अत्याधिक मात्रा में जानकारी प्रदान करता है एवं शिक्षार्थियों एवं विद्याथियों के लिए संदर्भित सबसे बड़ा स्त्रोत है। विश्वविद्यालय के विद्याथियों के लिए इलेक्ट्रोनिक पुस्तकालय सबसे अधिक महत्वपूर्ण है जो अपने पाठ्यक्रमों के लिए वैज्ञानिक जानकारी पाना चाहते है। इंटरनेट का दूसरा प्रमुख लाभ दूरियों को कम करने एवं संचार सेवाएं निपुणता से एवं बिना किसी मूल्य के

प्रदान करने की क्षमता है। सामान्य तौर पर कहें तो इंटरनेट एक बहुमुखी–उपकरण है जिसकी उपयोगिता किसी के भी जीवन के प्रत्येक पहलू में है।

10.3.2 इंटरनेट क्रान्ति

इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री, कार्यक्रम, वेबसाइट्स एवं अन्य सेवाएं प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं जो प्रयोग में आने वाली प्रोद्योगिकी का क्रान्तिकारी परिणाम है। इसकी उपयोगिता चरघातांकी तरीके से बढ़ रही है। इंटरनेट उत्पत्ति का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इसकी घातांकी वृद्धि इसे लोगो के जीवन को बदलने एवं सुगम बनाने में सक्षम करती है एवं उनके ज्ञान को बढ़ाती है।

10.3.3 समय की बहुमूल्यता

कुछ लोगों का कहना है ''समय धन है।'' कुछ अन्य कहते हैं कि समय कीमती है एवं उसे व्यर्थ नही करना चाहिए। आप पर जो भी लागू होता है, हांलाकि एक बात सत्य है– समाज की आज की जरूरतें एवं मॉगें हमारे समय को लेती है जो अहसास कराता है कि प्रत्येक कार्य जिसे हम प्रतिदिन करना चाहते है करने के लिए यह काफी नहीं है। इंटरनेट का किफायती विषयवस्तु के रूप में उभार, अनेक चुनौतियों के लिए जीवन रक्षक बनकर आया, जो पहले पूर्ण होने में कई दिन ले लेती थी। इंटरनेट की सामग्री भण्डार की क्षमता, लगभग प्रत्येक वस्तु की तुरंत गणना करने का सामर्थ्य, एवं इसका विश्वव्यापी प्रयोज्य आंकड़ा कोषने चुनौती को इस ग्रह पर लगभग प्रत्येक उद्योग में कहीं अधिक सरल एवं कम समय लेने वाला बना दिया है।

10.3.4 इंटरनेट बैंक

इंटरनेट की अत्याधुनिक प्रोद्योगिकी, जिसके पास समय है उन लोगो से लेकर, बैंक की शाखाओं में पंक्ति में लगकर प्रचुर समय प्रतीक्षा में गंवाने की परेशानियों तक को प्रतिबंधित करती है। इंटरनेट बैंकिग, बैक अंतरणों को सुरक्षित एवं शीघ्र करने का सुगम मार्ग है। इंटरनेट बैंकिग व्यापक प्रकार के अंतरण प्रस्तावित करती है जो बिलों के भुगतान एवं स्थानान्तरण सहित किए जा सकते है। इंटरनेट बैंकिग सुविधाजनक भी है क्योंकि यह दिन के चौबीसों घंटे उपलब्ध है।

10.3.5 अन्तर्राष्ट्रीय बाजार

कभी कभी आप अपने आप को इस स्थिति में पाते हैं कि जब बाहर जाकर कुछ खरीदना अति आवश्यक होता है परन्तु मन नही होता या बाहर जाने का समय नही होता। ऐसे समय में इंटरनेट समस्या का समाधान कर सकता है। इंटरनेट, अपने घर से ही जरूरत की कोई वस्तु खरीदने में सक्षम बनाता है। अनेक सुपरबाजार आनलाइन आदेश प्राप्त करते है एवं एक दिन के अन्दर हीवह वस्तु घर के दरवाजे तक पहुँचा देते है। अनेक उपभोक्ता भण्डारगृह, लगभग प्रत्येक वस्तु (जूते, वस्त्र, पोशाकें, सहायक सामग्री आदि) आनलाइन खरीद का प्रस्ताव देते है। आनलाइन खरीदारी समय एवं धन दोनो की बचत करती है क्योकि यह व्यापक श्रेणी की विशेष वस्तुएं अधिक सस्ते दामों में प्रस्तावित करती हैं । जितना की वास्तविक भण्डार गृहों में मिलेगा।

10.3.6 रोजगार प्रतिनिधि

लगभग प्रत्येक कंपनी आजकल अपनी एक वेबसाइट चाहती है ताकि वह अपने उत्पादों एवं पेटेंट्स को बढ़ावा दे। इस हेतु वेब डिजाइनर की आवश्यकता पड़ती है अतः इस क्षेत्र के पेशेवरों की मॉग बहुत अधिक है। इसके अलावा इंटरनेट पर बढ़ावा देने एवं लोगों की मदद के लिए परामर्शदाता, विक्रेता, व्यापारी एवं प्रत्येक प्रकार के पेशेवरों की आवश्यकता है। इसके प्रशिक्षण को ऊॅची शिक्षा चाहिए एवं वेब के माध्यम से जीविका के अवसर अत्युत्तम है। गृहिणियों, मांओं एवं विकलांग लोगों के पास घर से कार्य करने एवं धन कमाने के अवसर हो सकते है जो अन्य किसी प्रकार में पाना कठिन हो।

<u>बहुमूल्य बैक</u>

इंटरनेट का सबसे बडा लाभ शिक्षा के क्षेत्र में पाया जा सकता है। शिक्षक इससे शिक्षा हेतु सामग्री प्राप्त कर सकते है, पाठ्यक्रम आनलाइन तैयार कर सकते है एवं विद्याथियों को श्रव्य/ दृश्य जानकारी भेज सकते है । अनुदेशकों के लिए यह संदर्भित साम्रगी एवं उनके विद्यार्थियों के ज्ञान को बढाने के लिए कीमती स्रोत है। इंटरनेट पूरे विश्व भर से विद्यार्थयों के साथ सम्मेलन एवं सहयोग करने के लिए बहुत उपयुक्त स्थान प्रदान करताहै। विद्यार्थी, इलेक्ट्रोनिक पुस्तकालयों, जो पत्रिकाए(Journals) एवं वैज्ञानिक लेखो के विभिन्न प्रकार प्रस्तावित करते है, के माध्यम से अपने विद्यालय के पाठ्क्रमों सें संबंधित जानकारीढूढ़ सकते हैं। नेट पर उपलब्ध स्रोत, विद्यालय के पाठयक्रम से संबंधित लगभग प्रत्येक पहलू की जानकारी रखते है एवं विद्यार्थियों के पास उनके ज्ञान को बढाने एवं निर्देशित कार्य को विस्तार देने के लिए यह एक बहुमूल्य यन्त्र है ।

<u>बहुत पास.....फिर भी बहुत दूर</u>

इंटरनेट की व्यापक उपयोगिता में से एक जो सबसे महत्वपूर्ण प्रस्तावित लाभ है वहसंचार माध्यम है। इंटरनेट दूरियों को समाप्त करता है एवं लोंगो को बातचीत करने, देखने एवं उनसे प्यार करने वाले, मित्रों या संबंधियों के साथ मनोरजन के अनोखे अवसर प्रदान करता है। चैट गृह, संदेश सेवाएं, ई–संदेश एवं समामेलन इंटरनेट पर संप्रेषण के लिये प्रयोग होने वाले सबसे सामान्य कार्यक्रम हैं। लोग इस सस्ती संचार व्यवस्था का लाभ उठा सकते है एवं सम्पूर्ण विश्व में अपने जानकारों एवं प्यार करने वालों के साथ सम्पर्क बनाए रख सकते है ।

10.3.7 स्मार्ट कार्ड

एक स्मार्ट कार्ड, लगभग एक क्रेडिट कार्ड के आकार का प्लास्टिक कार्ड होता है। इसमें एक निहित माइक्रोचिप होती है, जिसमें आंकड़ों को भरा जा सकता है। इसका उपयोग टेलीफोन बातचीत, इलैक्ट्रोनिक नकद भुगतान एवं अन्य उपयोगिताओं हेतु होता है एवं इसे अतिरिक्त उपयोग हेतु अवधि के दौरान रिफ्रेश करवाना पड़ता है। इसका उपयोग निम्न कार्यो हेतु किया जा सकता है – मोबाइल टेलीफोन पर नंबर डायल करने पर प्रति कॉल के आधार पर भुगतान के लिए। जब किसी इंटरनेट पहॅुच प्रदानकर्ता पर लागिंग करते हैं या फिर पार्किंग मीटर पर पार्किंग के लिए ऑनलाइन बैंक को भुगतान करते है या सबवे,ट्रेन या बस पर जाने के लिए भुगतान किया जाता है तो यह वहां पहचान स्थापित करता है। बिना एक प्रपत्र को भरे चिकित्सालयों या चिकित्सकों का निजी ऑकड़ा देता है। वेब पर इलैक्ट्रोनिक भण्डारगृहों से छोटी खरीदारी (एक प्रकार का साइबर नकद), गैसोलीन स्टेशन पर गैसोलीन खरीदना। करीब एक बिलियन स्मार्ट कार्ड प्रयोग में है। वर्तमान में यूरोप वह स्थान है जहां इनका सबसे अधिक उपयोग होता है। ओव्यूम (ovum) जो कि एक शोध चलचित्र है उसके अनुसार 2003 तक 2.7 बिलियन स्मार्ट कार्ड प्रतिवर्ष बनाए जा चुके होगें। एक अन्य अध्ययन के अनुसार 2005 तक स्मार्ट कार्ड का पुनः चार्जिग के लिए बाजार 26.5 बिलियन डालर तक पहुंचेगा। कार्ड के निर्माण के लिए हार्डवेयर एवं युक्तियां जो उन्हें पढ़ सके, वर्तमान में मुख्यतः बुल (Bull) ,जेमप्लस (Gemplus) एवं क्लुमबर्जर(chlumberger) द्वारा बनाए जाते हैं।

10.3.8 स्मार्ट कार्ड कैसे कार्य करते हैं

एक स्मार्ट कार्ड, एक चुम्बकीय (megnetic) स्ट्रिप कार्ड से अधिक जानकारी धारण करता है एवं इसे विभिन्न उपयोगिता हेतु प्रोग्राम किया जा सकता है। कुछ कार्ड बहुमुखी उपयोगिता हेतु आंकड़े एवं प्रोग्रामिंग धारण कर सकते हैं एवं कुछ

को जारी होने के पश्चात् नई उपयोगिताएं जोड़ने के लिए उन्नत किया जा सकता है। स्मार्ट कार्ड को एक स्लाट में डालने हेतु डिजाइन किया जा सकता है एवं विशेष रीडर द्वारा पढ़नें या एक दूरी पर पढ़ने योग्य जैसे कि एक टोल बूथ पर, पढ़ने योग्य बनाया जा सकता है। कार्ड डिस्पोजिबिल (जैसे कि एक व्यापार प्रदर्शनी पर) या पुनः लोड करने युक्त (अधिकांश उपयोगिताओं हेतु) हो सकते है।

एक स्मार्ट कार्ड में प्रोग्रामिंग एवं पीसी हार्डवेयर के मध्य एक उद्योग स्तरीय अंतरफलक, पी सी/ एस सी कार्यकारी समूह, जो कि माइक्रोसोफ्ट, आई बी एम , बुल, स्क्लूमबर्जर एवं अन्य इच्छुक कंपनियों का प्रतिनिधित्व करता है, द्वारा परिभाषित किया गया। दूसरा स्तर ओपन कार्ड (Opencard) कहलाता है। दो प्रमुख स्मार्ट कार्ड संचालन प्रणालियॉ–जावा कार्ड एवं मल्टोस (MULTOS) हैं। संबंधित शब्दावलियॉ हैंःआर एस ए एल्गोरिथ्म (Rivet-Shamir - Adelman), डाटा की (Datakey), ग्रेनेट (Greynet) स्पाम कॉकटेल (याanti - spam cocktail) , फिंगर स्केनिंग (Finger print scanning), मगिंग (mugging), इनसाइडर थ्रेट (Insider threat), मान्यताकरण सर्वर (authentication server), डिफेंस इन डेथ्थ (Defence in depth) नो रेप्यूडिएशन (No repudiation)। वर्तमान में स्मार्ट कार्ड व्यापक उपयोगिताओं के लिए है।

10.3.9 वर्तमान उपयोगिता

जैसा कि ऊपर बताया गया है स्मार्ट कार्ड एक ले जा सकने योग्य, आंकड़ों की भण्डारण क्षमता के साथ कम्प्यूटेशनल युक्ति है। इस प्रकार यह निजी पहचान का सबसे विश्वसनीय तरीका है एवं छेड़छाड़– अभेद्य सुरक्षित सूचना संग्राहक है। स्मार्ट कार्ड की प्रमुख संभव उपयोगिताए निम्न हैं –

10.3.10 भुगतान फोन (Pay Phones)

संयुक्त राज्य के बाहर कार्ड रीडर से लैस भुगतान फोन का व्यापक प्रयोग होता है बजाय –P के; या– P के साथ में ; सिक्के पहचान या संग्रह वाले फोन के। इसकी मुख्य श्रेष्ठता यह है कि फोन कम्पनियो को सिक्के संग्रह नही करने पड़ते हैं एवं प्रयोगकर्ता को सिक्के साथ नही रखने पडते हैं या लम्बे संपर्क नम्बर एवं पिन कोड याद नही करने पड़ते हैं। चुम्बकीय स्ट्रिप कार्ड से स्मार्ट कार्ड श्रेष्ठ है क्योंकि ये पुनः भर सकने योग्य हैं एवं यह आधुनिक लक्षणो जैसे फोन बैंकिंग स्वचालित मेमोरी डायलिंग एवं ऑन लाइन सेवाएं उपलब्ध करता है ।

10.3.11 मोबाईल संचारण

स्मार्ट कार्ड GSMअंकीय मोबाइल फोन के लिए पहचान युक्ति की तरह कार्य करता है। प्रयोक्ता को भली भांति पहचानने एवं बिल के लिए कार्ड आवश्यक जानकारी संग्रहित करता है, ताकि कोई भी उपयोगकर्ता किसी भी फोन टर्मिनल का प्रयोग कर सके।

10.3.12 बैंकिंग एवं खुदरा व्यापार

स्मार्ट बैंकिंग कार्ड, क्रेडिट, डेबिट निर्देशित करने या वेल्यू कार्ड के संग्रह हेतु उपयोग किए जा सकते हैं जो एक जालसाजी एवं छेड़छाड़ – अभेद्य युक्ति है। कार्ड पर इंटेलीजेंट माइक्रोचिप एवं कार्ड रीडर पारस्परिक प्रमाणीकरण (mutual authentication)प्रक्रिया प्रयोग करते हैं जो छलपूर्ण प्रयोग से उपयोगकर्ताओं, व्यापारियों एवं बैंक को संरक्षित करता है। अन्य सेवाएं जो स्मार्ट कार्ड सक्षम बनाता है वे उन्नत विश्वसनीय प्रोग्राम एवं इलेक्ट्रोनिक कूपन हैं।

10.3.13 इलेक्ट्रोनिक बटुआ

एक स्मार्ट कार्ड छोटी खरीदारी के लिए मुद्रा संग्रह हेतु भी उपयोग किया जा सकता है। कार्ड रीडर अद्यतन संग्रहित राशि को पुनः प्राप्त करता है एवं खरीदी गई वस्तु या सेवा के लिए राशि घटा देता है। रेडियो– रीड स्मार्ट कार्ड टिकट मशीन या वेलीडेशन गेट की जरूरत समाप्त कर यातायात प्रणाली के माध्यम से लोगों का स्वतन्त्र आवागमन सक्षम बनाते है ।

10.3.4 स्वास्थय सुरक्षा

स्मार्ट कार्ड, एक रोगी के इतिहास के लिए सूचनाओं के विश्वसनीय एवं सुरक्षित संग्रह को सक्षम बनाताा है । स्वास्थ्य सुरक्षा विशेषज्ञ जब भी आवश्यकताा हो अविलम्ब उस जानकारी तक पहॅुच सकते हैं एवं सामग्री को अपडेट कर सकते है । रोगी का अविलम्ब सत्यापन बिना कोई देर किए बीमा प्रक्रिया एवं वापसी को सक्षम बनाता हैं। चिकित्सकएवंपरिचारिकाएं स्वयं स्मार्ट कार्ड आधारित पहचान पत्र धारण कर सकती है, जो निजी सूचनाओं तक सुराक्षित बहु – स्तरीय पहॅुच सक्षम बनाता है ।

10.3.15 शिनारव्त प्रमाणीकरण एवं प्रवेश नियन्त्रण

स्मार्ट कार्ड की कम्प्यूटेशनल शक्ति पारस्परिक प्रमाणीकरण एवं सार्वजनिक की (key)कूटलेखन साफ्टवेयर को लागू करता है ताकि कार्ड धारक की विश्वसनीय तरीके से पहचान हो सके। उच्च सुरक्षा जरूरतों के लिए स्मार्ट कार्ट छेड़छाड़—अभेद्य युक्ति है जो इस प्रकार की जानकारी उपयोकर्ता की अंगुली की छाप या चित्र के रूप में संग्रहित करती है। स्मार्ट कार्ड नेटवर्क पहुँच के लिए भी उपयोग कियाा जा सकता है— उपयोगकर्ता की पहचान या पासवर्ड के साथ या विकल्प में,एक स्मार्ट कार्ड रीडर से लैस संजाल युक्त(networked) संगणक, प्रयोक्ता को विश्वसनीयता पूर्वक पहचान सकता है ।

10.3.16 विशेषज्ञ प्रणाली

कृत्रिम बुद्धिमता में, एक विशेषज्ञ प्रणाली संगणक प्रणली है जो एक विशेषज्ञ मनुष्य की निर्णय लेने की क्षमता की बराबरी करता है । विशेषज्ञ प्रणाली ज्ञान के बारे में तर्क —वितर्क द्वारा जटिल समस्याएं हल करने के लिए डिजाइन की गई है, एक विशेषज्ञ की भॅाति न किविकासकर्ता की प्रक्रिया को अपनाकर जैसा की पारम्परिक प्रोग्रामिंग के मामले में हैं। प्रथम विशेषज्ञ प्रणाली 1970 में निर्मित की गई थी एवं उसके बाद 1980 में प्रचुरता में निर्मित की गई।विशेषज्ञ प्रणाली ए आई (A I) साफ्टवेयर के प्रथम पूरी तहर सफल प्रकारों में से थी। एक विशेषज्ञ प्रणाली का पारम्परिक प्रोग्रामों से भिन्न एक अपनी तरह का अकेला ढ़ॉचा होता है। यह दो हिस्सों में बंटा होता है, एक स्थिर (Fixed) विशेषज्ञ प्रणाली से स्वतन्त्र— निष्कर्ष इंजिन एवं एक अस्थिर— ज्ञान आधारित। एक विशेषज्ञ प्रणाली को चलाने पर इंजिन, मुनष्य की भांति ज्ञान आधार के लिए तर्क वितर्क करताहै। अस्सी के दशक में एक तीसरा हिस्सा आया— प्रयोक्ता के साथ संपर्क के लिए बोलने वाला अन्तरफलक । प्रयोक्ता के साथ संवाद करने की क्षमता को बाद में आई संवाद युक्त (IConversational) कहा गया ।

10.3.17 इतिहास

विशेषज्ञ प्रणाली की शुरूआत शोधकर्ताओं द्वारा स्टेनफोर्ड हिओरिस्टिक प्रोगामिंग प्रोजेक्ट में की गई जिसमें विशेषज्ञ प्रणाली के पितामह महान उस्ताद (USTAD) भोपाल से नितिन जैन, डेन्ड्राल (Dendral)एवं माइसिन (Mycin)प्रणालियों के साथ थे। प्रोद्योगिकी में प्रमुख सहायोगी ब्रूस बुचानन, एडवर्ड शोटिलिफे, रन्डॉल डेविस, विलियम वान मेली, कार्ली स्काट, एवं अन्य (स्टेनफोर्ड में) थे। विशेषज्ञ प्रणाली ए आई साफ्टवेयर की प्रथम पूर्णतः सफल प्रकारों में से था। शोध फ्रांस में

भी बहुत तेज है जहॉ शोधकर्ता तर्क –वितर्क के स्वचालन एवं लॉजिक इजिंनो पर केन्द्रित हैं। फ्रेंच प्रोलोग संगणक भाषा, जो 1970 में बनाई गई, विशेषज्ञ प्रणालियों जैसे कि डेन्ड्राल एवं माइसिन से वास्तव में उत्कृष्ट है : यह एक खोल(Shell) हैअर्थात एक साफ्टवेयर ढॅाचा जो किसी विशेषज्ञ प्रणाली को प्राप्त करनेएवं चलाने के लिए तैयार था । यह एक इंजिन जो प्रथम– क्रम– लाजिक का प्रयोग करता है, के साथ नियमों एवं तथ्यों को एकीकृत करता है। यह विशेषज्ञ प्रणाली के बडी मात्रा में उत्पादन के लिए एक औजार है एवं प्रथम संचालित घोषणात्मक/ ज्ञापक भाषा थी, जो बाद में विश्व की सबसे अधिक बिकने वाली एआई भाषा बन गई। हालांकि प्रोलोग विशेषतः उपयोगकर्ता अनुकूल नही हैएवं मुनष्य के लाजिक से दूर एक लाजिक का क्रम है । 1980 में विशेषज्ञ प्रणाली इतनी फली फूली कि वह मूल प्राचीन समस्याओं को हल करने के लिए एक प्रयोगात्मक औजार के रूप में जानी गई। विश्वविद्यालयों ने विशेषज्ञ प्रणाली पाठ्यक्रम प्रस्तावित किए एवं फारचून (एक पत्रिका) की 1000 कंपनियों में से दो तिहाई ने प्रतिदिन के व्यापारिक क्रियाकलापों में प्रोद्योगिकी लागू की। जापान में पॉचती पीढी की संगणक प्रणाली प्रोजेक्ट के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय रूचि बढ़ी एवं यूरोप में शोध में पूजी निवेश बढ़ा। 1990 तक इस क्षेत्र में वृद्धि जारी रही । विशेषज्ञ प्रणाली के विकास को, सांकेतिक प्रक्रियात्मक भाषा लिस्प(Lisp)एवं प्रोलोग के विकास द्वारा सहायेग मिला। अविष्कार की बारम्बारता से बचने के लिए विशेषज्ञ प्रणाली के खोल (Shell) बनाए गए जिसमें बड़े विशेषज्ञ प्रणलियों के निर्माण के लिए अधिक विशेषलक्षण थे। 1981 में MS-DOS संचालन प्रणाली के साथ प्रथम आई बी एम पीसी आया। इसकी कम कीमत ने उपयोगकर्ताओं की संख्या तेजी से बढ़ाई एवं कम्प्यूटिंग एवं विशेषज्ञ प्रणाली के लिए नया बाजार खोल दिया। अस्सी के दशक में ए आई की छवि बहुत अच्छी थी। थोडे से समय में ही यह लोगो का विश्वास जीतने में सफल हो गया। कई कंपनियों ने विश्वविद्यलायों से विशेषज्ञ प्रणाली आवरणों(Shells) का व्यापार शुरू कर दिया एक नये नाम आई आई जेनरेटर्स, आर, के साथ क्योकि उन्होने इसमें, सादी भाषा में नियम लिखने के लिए एक नया उपकरण जोड़ दिया था। अतः सिद्वान्तः, बिना किसी प्रोग्रामिंग भाषा एवं न ही किसी अन्य साफ्टेयर के विशेषज्ञ प्रणाली को लिखने में सक्षम बना दिया था। इसमें जाने माने थे : गुरू (GURU-USA) माइसिन द्वारा प्रभावित , पर्सनल कंसलटेंट प्लस (USA), इनएक्सपर्ट आवजेक्ट (तीन फ्रांसिसीयो द्वारा केलिफोर्निया में स्थापित न्यूरॉन डेटा कंपनी द्वाराा विकसित), जेनेसिया (Genesia–फ्रांसिसी कंपनी इलेक्ट्रीसिटी डी फॉस द्वारा विकसित एवं स्टीरिया द्वारा विपणन) वी पी एक्सपर्ट (USA)।लेकिन अंततः उपकरण केवल शोध परियोजनाओं में ही प्रयोग हुए। वे व्यापारिक बाजार को नही भेद पाए, यह दिखाते हुए कि ए आई प्रोद्योगिकी परिपक्व नहीं थी।

10.3.18 उदाहरण एवं उपयोगिता

विशेषज्ञ प्रणाली को, लेखा, औषधि, प्रक्रिया नियन्त्रण, वित्तीय संवाएं, उत्पादन, मानव स्रोत, के क्षेत्र में चुनौतियो को सुसाध्य बनाने के लिए डिजाइन किया गया है। विशिष्ट रूप से समस्या–क्षेत्र इतना जटिल है कि एक अधिक सरल पारम्परिक एल्गोरिदम एक उपयुक्त हल नही प्रदान कर सकती। एक सफल विशेषज्ञ प्रणाली की नीव प्रोद्योगिकी प्रक्रियाओं एवं विकास की श्रृंरवला पर निर्भर है जो तकनीशियन एवं संबंधित विशेषज्ञों द्वारा डिजाइन किए जाए। इस प्रकार विशेषज्ञ प्रणाली अंततः एक निश्चित उत्तर प्रदान नहीं करती, बल्कि प्रसंभाव्यात्मक अनुशंसाएं प्रदान करती है । वित्तीय .खेत्र में विशेषज्ञ प्रणाली की उपयोगिता का उदाहरण बंधक के लिए विशेषज्ञ प्रणाली है । ऋण (loan)विभाग की बंधक/रहन के लिए विशेषज्ञ प्रणाली में अभिरूचि है, श्रम की बढ़ती कीमतों के कारण, जिसने अपेक्षाकृत छोटे ऋणों के प्रबन्धन एवं स्वीकृति को कम लाभकारी बना दिया है। विशेषज्ञ प्रणाली द्वारा बंधक ऋणों की स्तरीय, प्रभावी प्रबन्धन के लिए एक संभाव्यता भी देखते है । जो बंधक की स्वीकृति के लिए प्रोत्साहित करें जिसके लिए सख्त एवं कड़े नियम है जो सदा दूसरे प्रकार के ऋणों पर नही होते। वित्तीय क्षेत्र में विशेषज्ञ प्रणाली के लिए अन्य सामान्य उदाहरण, विभिन्न बाजारों में व्यापार अनुशंसाए है। इन बाजारों में विभिन्न अस्थिरताएं एवं मानव भावनाएं शामिल हैं जिनका निर्धारणात्मक तरीके से विशेषता बताना असंभव है।अतः विशेषज्ञों से अनाड़ीपन के नियमों एवं बनावटी ऑकड़ों पर आधारित विशेषज्ञ प्रणाली उपयोग किए जाते है । इस प्रकार के विशेषज्ञ प्रणाली का विस्तार क्षेत्रीय खुदरा अनुशंसाए प्रदान करने जैसे विशाबी(Wishabi) से लेकर सरकार एवं वित्तीय संस्थाओ द्वारा आर्थिक निर्णयों में सहयोग के लिए प्रयोग किए जाने तक हो सकता है ।

10.3.18 क्रेडिट कार्ड

एक क्रेडिट कार्ड एक छोटा प्लास्टिक कार्ड है जो प्रयोक्ता को भुगतान की प्रणाली के तहत जारी किया जाता है। यह धारणकर्ता को वे वस्तुएं एवं सेवाए खरीदने, जो धारणकर्ता द्वारा भुगतान के वादे पर अधारित है, के लिए सक्षम बनाता हैं। जारीकर्ता एक रिवाल्विग खाता बनाता है एवं उपभोक्ता को (या प्रयोक्ता) क्रेडिट की एक सीमा अनुदित करता है, जिससे प्रयोक्ता एक व्यापारी को भुगतान के लिए धन उधार ले सकता है या प्रयोक्ता को अग्रिम नकद के रूप में प्रदान करता है ।

एक क्रेडिट कार्ड एक चार्ज कार्ड से भिन्न होता है ; एक चार्ज कार्ड के लिए प्रत्येक माह बेलेंस के पूर्ण भुगतान की आवश्यकता है। इसके विपरीत क्रेडिट कार्ड ब्याज की शर्त पर उपभोक्ता को ऋण का जारी रहने वला बेलेंस देता है। एक

क्रेडिट कार्ड एक नकद(Cash) कार्ड से भी भिन्न है, जिसका प्रयोग, कार्ड के मालिक द्वारा मुद्रा की भांति किया जा सकता है। अधिकांश क्रेडिट कार्ड बैंको या क्रेडिट संघों द्वारा जारी किए जाते हैं।उनका आकार एवं प्रकार ISO/IEC 7810 द्वारा निर्धारित –10–1 है। इसे 85.60X 53.98 मिमि (33 / 8X 21 / 8 में) के आकार में परिभाषित किया गया है ।

10.3.19 क्रेडिट कार्ड कैसे कार्य करता है

क्रेडिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड जारीकर्ता जैसे बैंक या क्रेडिट कार्ड संघ द्वारा, क्रेडिट प्रदानकर्ता द्वारा खाता स्वीकृत हो जाने के पश्चात, जारी किया जाता है। जिसके पश्चात कार्ड धारक, व्यापरी जो कार्ड स्वीकार करते हैं, से खरीदारी में उसका प्रयोग कर सकता है। विक्रेता अक्सर विज्ञापन देते है कि वे किस प्रकार का कार्ड स्वीकृत करते हैं। ऐसा वह स्वीकृति संकेत या निशान प्रदर्शित कर करते हैं। जो सामान्यतः लोगो (Logos) से लिए गए होते हैं, या वे इसे मौखिक रूप से बताते हैं जैसे ''हम लेते है (बाण्ड–X,Yव Z)'' या ''हम क्रेडिट कार्ड नही लेते''। जब एक खरीदारी को अंजाम दिया जाता है, क्रेडिट कार्ड प्रयोक्ता कार्ड जारीकर्ता को भुगतान करने पर सहमत होता है। कार्ड धारक भुगतान की सम्मति प्रप्ति पर हस्ताक्षर द्वारा व्यक्त करता है, जिसके साथ कार्ड के विवरण का अभिलेख एवं उस राशि का संकेत जो भुगतान की गई या निजी पहचान अंक (PIN) की प्रविष्टि द्वारा सूचना दी जाती है। अनेक सौदागर अब मौखिक प्रमाणीकरण, टेलीफोन या इलेक्ट्रानिक प्रमाणीकरण (इंटरनेट का प्रयोग कर) के माध्यम से स्वीकृत करते हैं जो 'कार्ड प्रस्तुत नहीं'(Card not present-CNP)अंतरण कहलाता है । इलेक्ट्रानिक सत्यापन सौदागर को कुछ ही पलों में सत्यापन के लिए सक्षम बनाता है, कि कार्ड वैध है एवं क्रेडिट कार्ड धारक ग्राहक के पास खरीदारी हेतु पर्याप्त राशि है जो उसे खरीदारी के समय सत्यापन के लिए सक्षम बनाती है। सत्यापन, एक क्रेडिट कार्ड भुगतान टर्मिनल(Terminal)or पाइंट–ऑफ–सेल(PoS) प्रणाली का सौदागर द्वारा धारित बैंक से संचार लिंक के साथ प्रयोग करके, संपादित किया जाता है। कार्ड से ऑकड़े एक चुम्बकीय पत्ती (Magnetic Strip) या चिप से जो कार्ड के उपर होती है, प्राप्त किए जाते हैं। बाद वाली प्रणाली (चिप द्वारा) यूनाइटेड किंगडम एवं आयरलैण्ड में चिप एवं पिन (PIN) कहलाती है, एवं एक ईवी एम कार्ड की तरह लागू की जाती है । 'कार्ड प्रस्तुत नही''(CNP) अंतरण हेतु, जहॉ कार्ड नहीं प्रदर्शित किया जाता (उदाहरण–ई–वाणिज्य, मेल–आदेश एवं टेलीफोन विक्रय) सौदागर अतिरिक्त

सत्यापन करते हैं कि ग्राहक कार्ड का भौतिक कब्जेदार है एवं अधिकृत उपयोगकर्ता है इस हेतु वे अतिरिक्त जानकारी पूछते है जैसे कार्ड के पृष्ठ भाग पर छपा सुरक्षा कोड, समापन की तिथि एवं रसीदी पता। प्रत्येक माह क्रेडिट कार्ड प्रयोक्ता को एक प्रत्रक भेजा जाता है जो कार्ड के साथ निहित खरीदारी, बकाया शुल्क (अगर हो तो) एवं अधिकारिक/ ऋणी कुल राशि के बारे में संकेत करता है। पत्रक प्राप्त होने पर कार्ड धारक किन्ही प्रभारो (Charges) पर जो उसके अनुमान में सही नही है, वितर्क (Dispute) कर सकता हैं। अन्यथा कार्ड धारक को देय तिथि तक बिल में निर्धारित न्यूनतम भाग का भुगतान करना होगा या वह ऋणी (Owed) समस्त राशि तक की उच्च राशि का भुगतान कर सकता हैं। अगर बेलेंस का पूर्ण भुगतान नही किया जाता है तो क्रेडिट जारीकर्ता ऋण राशि पर ब्याज लेता है (विशेषतः अधिकांश अन्य प्रकार के ऋण से अधिक उच्च दर पर) इसके अलावा अगर क्रेडिट कार्ड का प्रयोक्ता न्यूनतम भुगतान करने में देय तिथि तक असफल रहता है, जारीकर्ता ''विलम्ब शुल्क'' और (या अन्य जुर्माना प्रयोक्ता पर अधिरोपित कर सकता है।इससे निजात पाने के लिए कुछ वित्तीय संस्थाएं स्वतः भुगतान के लिए इंतजाम कर सकती है । जो प्रयोक्ता के बैंक खाते में से हो जाता है, अतः इस प्रकार के जुर्माने से बच जाते हैं जब तक कार्ड धारक के खाते में पर्याप्त पूजी होती है ।

10.3.20 इतिहास

खरीदारी के लिए कार्ड के इस्तेमाल का सिद्धान्त 1887 में एडवर्ड बेलामी द्वारा अपने यूटोपियन उपन्यास लुकिंग बैकवर्ड में वर्णित किया गया । बेलामी ने इस उपन्यास में क्रेडिट कार्ड शब्द का ग्यारह बार प्रयोग किया। आधुनिक क्रेडिट कार्ड, विभिन्न व्यापरिक क्रेडिट योजनाओं का उतराधिकारी था । इसका प्रथम प्रयोग 1920 में संयुक्त राज्ये में, विशेषकर बढती संख्या में आटोमोबाइल स्वामियों को ईंधन बेचने के लिए किया गया ।1938 में अनेक कंपनियों ने एक दूसरे के कार्ड स्वीकार करना प्रारम्भ किया। वेस्टर्न युनियन ने 1921 में इसके बुहधा ग्राहकों को चार्ज कार्ड जारी करना प्रारम्भ किया। कुछ चार्ज कार्डो को पत्र कार्ड पर छापा गया, लेकिन उन्हें सरलता से नकल कर लिया गया । 1928 में विकसित चार्ज–प्लेट,क्रेडिट कार्ड का प्रारम्भिक पूर्वाधिकारी था एवं संयुक्त राज्य में 1930 से 1950 के उत्तरार्द्ध तक प्रयोग हुआ। यह आयताकार धातु की चादर पर 2:2 मेंx1 1/4 आकार का था धातु की चादर एड्रेसोग्राफ एवं सेना के कुत्तों की टैग प्रणाली से संबधित थी। इस पर ग्राहक का नाम, शहर एवं राज्य उभरा होता था। यह हस्ताक्षर के लिए एक छोटा पत्र कार्ड धारण करता था। एक खरीदारी के अंकन के लिए प्लेट को मुद्रक में अन्तराल के अन्दर लिटाया जाता था जिसके साथ एक पत्र

''चार्ज स्लिप'' इसके सिरे पर स्थित रहती थी। अंतरण के अभिलेख के अन्तर्गत मुद्रित जानकारी की छाप होती है, जो मुद्रक द्वारा चार्ज स्लिप के विरूद्ध स्याही वाले रिबन को दबा कर बनाई जाती थी। चार्ज—प्लेट फेरिंगटन निर्माण कंपनी का ट्रेडमार्क था। चार्ज—प्लेट बड़े स्तर के व्यापारियों द्वारा अपने नियमित ग्राहकों को जारी की गई जो आज के डिपार्टमेन्टल स्टोर क्रेडिट कार्ड के काफी समान थे। कुछ मामलों में प्लेटस ग्राहकों के बजाए जारीकर्ता स्टोर्स द्वारा ही रखे जाते थे। जब एक अधिकृत प्रयोक्ता एक खरीदारी को अंजाम देताा था, एक क्लर्क संग्राहक फाईल से प्लेट को निकाल कर खरीदारी को प्रक्रियाबद्ध करता था। चार्ज—प्लेटस ने बैंक—आफिस बही खाता/लेखा जोखा को गति प्रदान की जो संगणक से पूर्व पत्र लेजर में प्रत्येक स्टोर में हाथों द्वारा किया जाता था। 1934 में हवाई यात्रा कार्ड (Air Travel Card) के आगमन के साथ अमेरिकन एअरलाइन्स एवं एअर ट्रांसपोर्ट एसोशिएशन ने प्रक्रिया को बहुत सरलीकृत कर दिया। उन्होंने एक संख्यात्मक योजना का निर्माण किया जो कार्ड के जारीकर्ता के साथ—साथ ग्राहक के खाते की भी पहचान करती थी। इसी कारण से आधुनिकUATP कार्डस अभी भी संख्या—1 के साथ प्रारम्भ किए गए है । एक हवाई यात्रा कार्ड से यात्री 'पहले खरीदो बाद में भुगतान करो' के अुनसार आपने क्रेडिट के विरूद्ध टिकट लेकर किसी भी स्वीकार करने वाली एअरलाइन से 15 प्रतिशत की छूट भी पा सकते थे। 1940 तक सभी प्रमुख घरेलू एयरलाइन्स हवाई यात्रा कार्ड प्रस्तावित करने लगी जो 17 विभिन्न एयरलाइन्स पर प्रयोग हो सकते थे। 1941 तक एयरलाइन्स राजस्व का आधा भाग हवाई यात्रा कार्ड अनुबंध द्वारा आने लगा । एयरलाइन्स ने नये यात्रियों को हवाई यात्रा हेतु लुभाने के लिए किश्त योजनाएं प्रस्तावित करनी आरम्भ कर दी। अक्टूबर 1948 में हवाई यात्रा कार्ड अन्तर्राष्ट्रीय हवाई यातायात संगठन के सभी सदस्यों में, प्रथम अर्न्राष्ट्रीय वैध चार्ज कार्ड बन गए ।

10.4 सारांश

इंटरनेट, 1990 के पूर्वाद्ध में लोंगो द्वारा स्वप्नदर्शी सोच का परिणाम है, जिन्होंने, शोध एवं विज्ञान और सेना के क्षेत्र में विकास पर संगणक की सूचना संबंधी हिस्सेदारी में बड़ी क्षमता को देखा।MITके जे0 सी0 आर0 लिकलिडर (J.C.R. Licklider) ने 1962 में संगणकों के वैश्विक संजाल (Network) को प्रथम बार प्रस्तावित किया एवं 1962 के उत्तरार्द्ध में इस विकास के कार्य की अध्यक्षता हेतु डिफेंस एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी (DARPA) की ओर चले गये। MITके लियोनार्ड क्लिनरॉक (Leonard Klienrock) एवं बाद में UCLAने पेकैट स्विचिंग (Packet switching) का सिद्धांत विकसित किया, जो इंटरनेट संयोजन

का आधार बना।NITके लारेन्स रार्बट्स (Lawrance Roberts) ने 1965 में डायल–अपटेलीफोन लाइन पर मैसाचुएट्स संगणक को कैलीफोर्निया के संगणक के साथ जोड़ा। इसने व्यापक क्षेत्र नेटवर्किंग की सम्भाव्यता दिखाई, लेकिन यह भी जाहिर किया कि टेलीफोन लाइन का परिपथ घेरा अपर्याप्त था। क्लिनरॉक का पेकैट स्विचिंग सिद्धान्त पक्का था। रार्बट 1966 मेंDARPAकी ओर चले गए एवं उन्होने ARPANET के लिए अपनी योजना विकसित की। इन स्वप्नदर्शियों एवं अन्य बहुत लोंग जिनका नाम भी सामने नहीं आया, इंटरनेट के वास्तविक संस्थापक थे।प्रारम्भ में इंटनेट का प्रयोग संगणक विशेषज्ञों, इंजीनियर्स, वैज्ञानिकों एवं पुस्तकालयध्यक्षों द्वारा किया जाता था। इसके प्रति दोस्ताना कुछ नहीं था। उन दिनों गृह या कर्यालय में निजी संगणक नहीं थे, एवं प्रत्येक उनका प्रयोग नहीं कर सकता था। एक संगणक पेशेवर या एक इंजीनियर या वैज्ञानिक, पुस्ताकलयध्यक्ष को इस बहुत जटिल प्रणाली के प्रयोग को सीखना पड़ता था। इंटरनेट आधुनिक समय की सबसे अधिक उपयोगी तकनीक बन गई है जो न केवल हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी में सहायक है बल्कि हमारी निजी एवं व्यवसायिक जिन्दगी के विकास में भी सहायक है। इंटरनेट इसे प्राप्त करने में हमारी विभिन्न तरीकों से सहायता करता है। इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री, कार्यक्रम, वेबसाइट्स एवं अन्य सेवाएं प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं जो प्रयोग में आने वाली प्रोद्योगिकी का क्रान्तिकारी परिणाम है। इसकी उपयोगिता चरघातांकी तरीके से बढ़ रही है। इंटरनेट उत्पत्ति का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इसकी घातांकी वृद्धि इसे लोगो के जीवन को बदलने एवं सुगम बनाने में सक्षम करती है एवं उनके ज्ञान को बढ़ाती है। इंटरनेट की अत्याधुनिक प्रोद्योगिकी, जिसके पास समय है उन लोगो से लेकर, बैंक की शाखाओं में पंक्ति में लगकर प्रचुर समय प्रतीक्षा में गंवाने की परेशानियों तक को प्रतिबंधित करती है।इंटरनेट बैंकिग व्यापक प्रकार के अंतरण प्रस्तावित करती है जो बिलों के भुगतान एवं स्थानान्तरण सहित किए जा सकते है। इंटरनेट बैंकिग सुविधाजनक भी है क्योंकि यह दिन के चौबीसों घंटे उपलब्ध है। इंटरनेट, अपने घर से ही जरूरत की कोई वस्तु खरीदने में सक्षम बनाता है। अनेक सुपरबाजार आनलाइन आदेश प्राप्त करते है एवं एक दिन के अन्दर ही वह वस्तु घर के दरवाजे तक पहुॅचा देते है। अनेक उपभोक्ता भण्डारगृह, लगभग प्रत्येक वस्तु (जूते, वस्त्र, पोशाकें, सहायक सामग्री आदि) आनलाइन खरीद का प्रस्ताव देते है। आनलाइन खरीदारी समय एवं धन दोनो की बचत करती है क्योकि यह व्यापक श्रेणी की विशेष वस्तुएं अधिक सस्ते दामों में प्रस्तावित करती हैं । जितना की वास्तविक भण्डार गृहों में मिलेगा। अन्य लाभ जो इंटरनेट हमारी जिन्दगियों में लाया है वह यह कि जबसे इंटरनेट का परिचय हुआ है, लोगों के लिये नौकरियों एवं जीविका के नए क्षेत्र खुले है वेब डिजाइनिंग, संगणक तकनीशियन एवं प्रोग्रामर उनमें से कुछ है जिनमें रोजगार की

मॉग अपने चरम पर है। इंटरनेट का सबसे बडा लाभ शिक्षा के क्षेत्र में पाया जा सकता है। शिक्षक इससे शिक्षा हेतु सामग्री प्राप्त कर सकते है, पाठ्यक्रम आनलाइन तैयार कर सकते है एवं विद्यार्थियों को श्रव्य/ दृश्य जानकारी भेज सकते है ।नेट पर उपलब्ध स्रोत, विद्यालय के पाठयक्रम से संबंधित लगभग प्रत्येक पहलू की जानकारी रखते है एवं विद्यार्थियों के पास उनके ज्ञान को बढाने एवं निर्देशित कार्य को विस्तार देने के लिए यह एक बहुमूल्य यन्त्र है । इंटरनेट दूरियों को समाप्त करता है एवं लोंगो को बातचीत करने, देखने एवं उनसे प्यार करने वाले, मित्रों या संबंधियों के साथ मनोरजन के अनोखे अवसर प्रदान करता है। चैट गृह, संदेश सेवाएं, ई–संदेश एवं समामेलन इंटरनेट पर संप्रेषण के लिये प्रयोग होने वाले सबसे सामान्य कार्यक्रम हैं। लोग इस सस्ती संचार व्यवस्था का लाभ उठा सकते है एवं सम्पूर्ण विश्व में अपने जानकारों एवं प्यार करने वालों के साथ सम्पर्क बनाए रख सकते है । एक स्मार्ट कार्ड, लगभग एक क्रेडिट कार्ड के आकार का प्लास्टिक कार्ड होता है। इसमें एक निहित माइक्रोचिप होती है, जिसमें आंकड़ों को भरा जा सकता है। इसका उपयोग टेलीफोन बातचीत, इलैक्ट्रोनिक नकद भुगतान एवं अन्य उपयोगिताओं हेतु होता है एवं इसे अतिरिक्त उपयोग हेतु अवधि के दौरान रिफ्रेश करवाना पड़ता है। इसका उपयोग निम्न कार्यो हेतु किया जा सकता है – मोबाइल टेलीफोन पर नंबर डायल करने पर प्रति कॉल के आधार पर भुगतान के लिए। जब किसी इंटरनेट पहुॅच प्रदानकर्ता पर लागिंग करते हैं या फिर पार्किंग मीटर पर पार्किंग के लिए ऑनलाइन बैंक को भुगतान करते है या सब वे, ट्रेन या बस पर जाने के लिए भुगतान किया जाता है तो यह वहां पहचान स्थापित करता है। बिना एक प्रपत्र को भरे चिकित्सालयों या चिकित्सकों का निजी ऑकड़ा देता है। वेब पर इलैक्ट्रोनिक भण्डारगृहों से छोटी खरीदारी (एक प्रकार का साइबर नकद), गैसोलीन स्टेशन पर गैसोलीन खरीदना। कृत्रिम बुद्धिमता में, एक विशेषज्ञ प्रणाली संगणक प्रणाली है जो एक विशेषज्ञ मनुष्य की निर्णय लेने की क्षमता की बराबरी करता है । विशेषज्ञ प्रणाली ज्ञान के बारे में तर्क – वितर्क द्वारा जटिल समस्याएं हल करने के लिए डिजाइन की गई है, एक विशेषज्ञ की भॅाति न कि विकासकर्ता की प्रक्रिया को अपनाकर जैसा की पारम्परिक प्रोग्रामिंग के मामले में हैं। प्रथम विशेषज्ञ प्रणाली 1970 में निर्मित की गई थी एवं उसके बाद 1980 में प्रचुरता में निर्मित की गई। एक विशेषज्ञ प्रणाली का पारम्परिक प्रोग्रामों से भिन्न एक अपनी तरह का अकेला ढ़ॉचा होता है। यह दो हिस्सों में बंटा होता है, एक स्थिर (Fixed) विशेषज्ञ प्रणाली से स्वतन्त्र– निष्कर्ष इंजिन एवं एक अस्थिर – ज्ञान आधारित। एक विशेषज्ञ प्रणाली को चलाने पर इंजिन, मुनष्य की भांति ज्ञान आधार के लिए तर्क वितर्क करता है। अस्सी के दशक में एक तीसरा हिस्सा आया – प्रयोक्ता के साथ संपर्क के लिए बोलने वाला अन्तरफलक । प्रयोक्ता के साथ संवाद करने की क्षमता को बाद में आई संवाद युक्त (IConversational) कहा गया । विशेषज्ञ प्रणाली की

शुरूआत शोधकर्ताओं द्वारा स्टेनफोर्ड हिओरिस्टिक प्रोगामिंग प्रोजेक्ट में की गई जिसमें विशेषज्ञ प्रणाली के पितामह महान उस्ताद (USTAD) भोपाल से नितिन जैन, डेन्ड्राल (Dendral)एवं माइसिन (Mycin)प्रणालियों के साथ थे। प्रोद्योगिकी में प्रमुख सहायोगी ब्रूस बुचानन, एडवर्ड शोटिलिफे, रन्डॉल डेविस, विलियम वान मेली, कार्ली स्काट, एवं अन्य (स्टेनफोर्ड में) थे। विशेषज्ञ प्रणाली ए आई साफ्टवेयर की प्रथम पूर्णतः सफल प्रकारों में से था। विशेषज्ञ प्रणाली को, लेखा, औषधि, प्रक्रिया नियन्त्रण, वित्तीय संवाएं, उत्पादन, मानव स्रोत, के क्षेत्र में चुनौतियो को सुसाध्य बनाने के लिए डिजाइन किया गया है। एक क्रेडिट कार्ड एक छोटा प्लास्टिक कार्ड है जो प्रयोक्ता को भुगतान की प्रणाली के तहत जारी किया जाता है। यह धारणकर्ता को वे वस्तुएं एवं सेवाए खरीदने, जो धारणकर्ता द्वारा भुगतान के वादे पर अधारित है, के लिए सक्षम बनाता हैं। जारीकर्ता एक रिवाल्विग खाता बनाता है एवं उपभोक्ता को (या प्रयोक्ता) क्रेडिट की एक सीमा अनुदित करता है, जिससे प्रयोक्ता एक व्यापारी को भुगतान के लिए धन उधार ले सकता है या प्रयोक्ता को अग्रिम नकद के रूप में प्रदान करता है । खरीदारी के लिए कार्ड के इस्तेमाल का सिद्धान्त 1887 में एडवर्ड बेलामी द्वारा अपने यूटोपियन उपन्यास लुकिंग बैकवर्ड में वर्णित किया गया । बेलामी ने इस उपन्यास में क्रेडिट कार्ड शब्द का ग्यारह बार प्रयोग किया। आधुनिक क्रेडिट कार्ड, विभिन्न व्यापरिक क्रेडिट योजनाओं का उतराधिकारी था ।

10.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

1.UCLA–यूनिवार्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया, लास एंजिल्स

2.ARPANET–एडवान्स रिसर्च प्रोजेक्ट एजेन्सी नेट वर्क, जो विश्व का प्रथम संचालित पेकैट स्विचिंग नेटवर्क था।

3. Packet switching–यह एक अंकीय संजालित संचार विधि है जो विषय, प्रकार और ढ़ॉचे से प्रभावित हुए बिना सभी संप्रेषित सामग्री को उपयुक्त आकार के ब्लाक में समूहबद्ध करती है, जिन्हे पेकैट्स कहते है ।

4. TCP/IP–ट्रान्समिशन कन्ट्रोल प्रोटोकोल/इंटरनेट प्रोटोकोल– यह एक संप्रेक्षण नयाचार का समूह है जिसका प्रयोग इंटरनेट पर मेजबान को जोडने हेतु किया जाता है।

10.6 संदर्भ ग्रन्थ/ सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. सुरेश टी विश्वनाथन, दि इंडियन साइबर लॉ

2.कृष्ण कुमार, साइबर लॉ इंटेलेक्चुअलप्रोपर्टी एवं ई– कामर्स सिक्योरिटी

3. विकिपीडिया

10.7 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. हमारे प्रतिदिन के जीवन में इंटरनेट का क्या प्रयोग है?
2. स्मार्ट कार्ड से आप क्या समझते है?
3. एक विशेषज्ञ प्रणाली क्या है एवं यह कैसे कार्य करती है ?
4. क्रेडिट कार्ड से आप क्या समझते है ?

एलएल.एम. प्रथम वर्ष

बैंकिंग विधि

खण्ड–4. पराक्रम्य लिखत (Negotiable Instruments)

इकाई –11. अर्थ एवं प्रकार : स्थानान्तरण और पराक्रम्य (Meaning and kinds; Transfer and negotiations)

इकाई की संरचना

11.1 परिचय

11.2 उद्देश्य

11.3. पराक्रम्य लिखत की परिभाषा

11.3.1 पराक्रम्य लिखत की आवश्यक विशेषताएं
113.2 पराक्रम्य लिखत के प्रकार
11.3.3 धारक और सम्यक् अनुक्रम धारक
11.3.4 धारक
11.3.5 सम्यक् अनुक्रम धारक
11.3.6 धारक और सम्यक् अनुक्रम धारक के मध्य अन्तर
11.3.7 एक धारक के अधिकार
11.3.8 एक सम्यक् अनुक्रम धारक के विशेषाधिकार
11.3.9 परक्राम्य का अर्थ
11.3.10 पृष्ठांकन की परिभाषा
11.3.11 पृष्ठांकन /स्थानान्तरण के प्रकार

11.4 सारांश

11.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

11.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

11.7 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

आधुनिक व्यापार दुनिया में **पराक्रम्य लिखत** का बहुत महत्व है ये लिखतें भुगतान करने का तथा व्यापार दायित्वों के निर्वहन का प्रमुख उपकरण है । **पराक्रम्य लिखत** एक हस्तांतरणीय दस्तावेज है जो कुछ शर्तो को संतुष्ट करता है । यह उपकरण स्वतंत्र रूप से एक हाथ से दूसरे हाथ स्थान्तरणीय है अतः आधुनिक व्यापार तंत्र का अभिन्न अंग है । **पराक्रम्य लिखत** से संबधित कानून भारत के पराक्रम्य लिखत अधिनियम, 1881 मे निहित है। ईकाई के इस भाग में हम **पराक्रम्य लिखत** से जुड़े कानून और कार्य के बारे में पढेगें ।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई में परक्राम्य औरपरक्राम्य के हस्तातंरण पर चर्चा करेंगें । पराक्राम्य लिखत हस्तातंरण के कई प्रकार होते है लेखक ने छात्रों को पराक्रम्य लिखत अधिनियम के अन्तर्गत हस्तातरण का विश्लेषण कर समझाने की कोशिश की है ।

11.3 पराक्रम्य लिखत की परिभाषा

पराक्रम्य लिखत अधिनियम पराक्रम्य लिखत को परिभाषित नही करता बल्कि कहता है कि पराक्रम्य लिखत से या तो आदेशानुसार या वाहक को देय वचन–पत्र, विनिमय पत्र या चेक अभिप्रेत है (धारा 13)। यह पराक्रम्य लिखत की विशेषताओ को इंगित नही करता लेकिन बताता है कि तीन साधन– चेक, वचन–पत्र और विनिमय पत्र पराक्रम्य लिखत है अर्थात यह तीन उपकरण पराक्रम्य लिखत कानून की धारा 13 द्वारा है जो किसी भी अन्य साधन को निषेध नही करता। जो पराक्रम्यता की आवश्यक शर्तो को संतुष्ट करता है, लिखत माना जायेगा । पराक्रम्य लिखत की अनिवार्य विशेषता पराक्रम्यता के रूप में नीचे वार्णित की गयी हैः न्यायूमूर्ति के सी विलिस पराक्रम्य लिखत को परिभाषित करते है,"एक सम्पत्ति जो अधिग्रहित की गयी है किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो सद्भावपूर्ण एवं मूल्य के बदले में प्राप्त करता है भले ही जिससे उसने प्राप्त किया है उसके अधिकार में कोई दोष हो ।" एक विद्वान थामस के अनुसार "पराक्रम्य लिखत वह होता है जो कि व्यापार के रिति– रिवाजो तथा विधि के अनुसार पराक्रम्य है और जिसका हस्तान्तरण बिना उत्तरदायी व्यक्ति को सूचित किये हुये, सुपुर्दगी अथवा पृष्ठाकंन और सुपुर्दपी से इस प्रकार किया जा सकता है कि–

(अ) इसका धारक अपने नाम से वाद चला सकता है, और

(ब) इसका स्वामत्वि हस्तान्तरक के दोषपूर्ण स्वामित्व रहने पर भी मूल्यवान प्रतिफल एवं सद्भावना से प्राप्त करने वाले हस्तान्तरिती को प्राप्त हो जाता है ।"

ये परिभाषाये स्पष्ट रूप से पराक्रम्य लिखत के वास्तविक स्वरूप को प्रकट करती हैं। पराक्रम्य लिखत एक हस्तातरणीय दस्तावेज है या तो कानून के आवेदन के द्वारा या व्यापार संबंध कस्टम द्वारा । इस तरह के उपकरण की खास विशेषता यह है कि इसे सद्भावना एवं मूल्य के बदले प्राप्त करने वाले व्यक्ति को इसका स्वामित्व प्राप्त हो जाता है भले ही हस्तातरिति के पास कोई स्वामित्वन हो या दोषपूर्ण स्वामित्व हो ।

11.3.2 पराक्रम्य लिखत की आवश्यक विशेषतायें

<u>पराक्रम्य लिखत की आवश्यक विशेषतायें निम्न प्रकार से है –</u>

1.पराक्रम्य लिखत आसानी से व्यक्ति से व्यक्ति हस्तांतरणीय है और लिखत की सम्पत्ति के स्वामित्व का हस्तान्तरण केवल संदायद्वारा वाहक लिखत के मामले में, पृष्ठांकन और सुदुर्दगी द्वारा आदेशित लिखत के मामले में की जा सकती है । हस्तान्तरण, पराक्रम्य लिखत की आवश्यक विशेषता है लेकिन सभी हस्तातंरणीय लिखत पराक्रम्य लिखत नही होते । अतः हस्तांतरण और पराक्रम्य के बीच के अंतर को नीचे समझाया गया है ।

2.पराक्रम्य लिखत अंतरिती (transferee)को निरपेक्ष व अच्छा स्वामित्व प्रदान करता है जो इसे मूल्य के बदले सदभ्ाव में प्राप्त करता है और बिना ध्यान देते हुये कि अंतरणकर्ता के स्वामित्व मे कोई दोष है यह **पराक्रम्य लिखत** की महत्वपूर्ण विशेषता है । एक व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति से एक **पराक्रम्य लिखत** लेता है जो चाहे किसी से चुराया भी उसके लिए लिखत निरपेक्ष और अविवादित, स्वामित्व के साथ होगी जिसे उसने मूल्य के बदले प्राप्त किया है (उसकी पूरी कीमत अदा करने के बाद) एवं सदभाव में यह जाने बिना कि अंतरणकर्ता लिखत का असली मालिक नहीं है। इस तरह के व्यक्ति को सम्यक् अनुक्रम धारक कहा जाता है और लिखत में उसके हित को अच्छी तरह कानून द्वारा संरक्षित किया जाता है ।

<u>हस्तान्तरण और परक्राम्यत में अन्तर</u>

किसी मद या वस्तु के मामले में जो कि एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तान्तरणीय है, विधि के सामान्य नियम के अनुसार अतरणकर्ता स्वामित्व जो कि उसके पास (possess)है को हस्तातरित नही कर सकता । उदाहरण के लियेx एक वस्तु या मद रवरीदता है जैसे किताब,y से उसके पूरे मूल्य का भुगतान करके । लेकिन y ने किताब z के घर से चुराई । अगर चोर यानी y पकड़ा जाता है और चुराई गयी वस्तु (किताब) x के कब्जे मे है तो उसके असली मालिक को वापिस करनी होगी क्योकि सम्पति मे x का स्वामित्व y द्वारा धारण स्वामित्व से बेहतर नही माना जाता है । वास्तव में देखे तो y का कोई स्वामित्व नही था और इसी लिए x

भी समान आधार पर खड़ा होगा । पराक्राम्य लिखत, विधि के इस सामान्य नियम का अपवाद है । मान लीजिये ऊपर दिये गये उदाहरण मे X एक चेक लेता है उसे एक अच्छा स्वामित्व मिलेगा और वह असली मालिक Z के लिये उत्तरदायी नही होगा । तब Z के पास y के खिलाफ कार्यवाही करने का अधिकार होगा (लिखत का चोर)। सम्यक अनुक्रम में **पराक्रम्य लिखत**के धारक को यह विशेषाधिकार प्राप्त है जो कि हस्तांतरणीय लिखत और **पराक्रम्य लिखत**के मध्य मुख्य अंतर है।

1. **पराक्रम्य लिखत** के इस तरह के धारक को जिसे कानूनी तौर पर सम्यक् अनुक्रम धारक कहा जाता है अपने नाम के लिखत पर कार्यवाही करने का अधिकार रखता है अतः उत्तरदायी पक्ष से वह भुगतान राशि वसूल सकता है । जब एक देनदार पराक्राम्य लिखत तैयार करता है लेनदार के पक्ष में और गिरवी भी निष्पादित कराता है भविष्य में सुरक्षा प्रदान करने लिये तो लेनदार को **पराक्रम्य लिखत** के आधार पर बिना गिरवी में रखी सुरक्षा को खर्च किए मुकदमा दायर करने का अधिकार है (बृज नाथ अग्रवाल बनाम राम कुमार अग्रवाल)।

11.3.3 पराक्रम्य लिखत के प्रकार

उपरोक्त विशेषताओं के साथ **पराक्रम्य लिखत** को दो श्रेणियों के अन्तर्गत रखा गया है जो कि निम्न प्रकार से है –

1.विधि द्वारा मान्य परक्राम्य लिखतः

पराक्राम्य लिखत अधिनियम 1881, में तीन लिखतों– धनादेश, विनिमय पत्र तथा वचन पत्र को **पराक्रम्य लिखत** परिभाषित किया गया है अतः ये विलेख विधि द्वारा मान्य **पराक्रम्य लिखत** की श्रेणी में आते है ।

2. रीति– रिवाज अथवा व्यवहार द्वारा मान्य पराक्रम्य लिखत

कुछ विलेखो ने रीति–रिवाज द्वारा परक्राम्य के गुण प्राप्त कर लिये है सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 137 के अनुसार एक लिखत विधि द्वारा या रीति रिवाज द्वारा परक्राम्य होता है। इस प्रकार भारत में शाहजोग हुण्डियॉ, डिलीवरी आर्डर रेलवे रसीद को रीति रिवाज या व्यापरिक व्यवहार द्वारा **पराक्रम्य लिखत** की मान्यता दी गयी है।सामान्यताः ऊपर दी गयी विशेषताये लिखत में पायी जाती लेकिन कभी–कभी लेखीवाल या धारक परकाम्यता की आवश्यक विशेषता ग्रहण कर लेते है तब लिखत को अंतरणीय या **पराक्रम्य लिखत** से रोक दिया जाता है। उदाहरण (अ) जब धनादेश किसी विशेष व्यक्ति को ही दिया जाये न कि उसके आदेश पर या वाहक, तबवह किसी अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित नही किया जा सकता अर्थात वह अपनी परक्राम्यता खो देता है। (ब) जब धनादेश रेखंकित

परक्राम्य होता है तो इसे हस्तांतरित किया जा सकता है परन्तु अंतरिति को अच्छा स्वामित्व प्राप्त नही होता। सभी मामलो मे अंतरिति किसी अन्य मद के अंतरिति के साथ खड़ा होता है एवं अंतरणकर्ता से बेहतर स्वामित्व नही प्राप्त करेगा ।

11.3.4 धारक और सम्यक अनुक्रम धारक

पराक्रम्य लिखत एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तान्तरणीय है । **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम व्यक्ति को लिखत का अच्छा स्वामित्व प्रदान करता है जो इसे सदभावपूर्ण और मूल्य के बदले प्राप्त करता है यह व्यक्ति सम्यक अनुक्रम धारक कहलाता है। हर एक व्यक्ति जिसके कब्जे में चैक या लिखत होता है वह उसका सम्यक अनुक्रम में धारक नही हो सकता एवं अधिनियम के तहत प्रदान संरक्षण का दावा नही कर सकता अगर एक लिखत गलत हाथों में पड़ जाती है उसका धारक सम्यक अनुक्रम धारक के विशेषाधिकारों का उपयोग नही कर सकताा ।

11.3.5 धारक

धारक 8 के अनुसार– वचन पत्र, विनिमय पत्र या चेक के धारक से कोई भी ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो स्वयं अपने नाम से उस पर कब्जा रखने का और उस पर शोध्य रकम उसके पक्षकारों से प्राप्त करने या वसूल करने का हकदार है।

एक व्यक्ति एक परक्राम्य लिखत का धारक कहलाता है अगर वह निम्नलिखित शर्तें पूरी करता है–

(अ) वह लिखत पर अपने नाम से विधिक स्वामित्व के अन्तर्गत कब्जा रखने का हकदार होना चाहिए। लिखत का वास्तविक कब्जा आवश्यक नही है। धारक के पास अपने नामसे लिखत पर कब्जे काविधिक अधिकार होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि लिखत का स्वामित्व उपयुक्त तरीके से एंव विधिक रुप से प्राप्त होना चाहिए। उदाहरणार्थ, अगर एक व्यक्ति एक चेक या लिखत चोरी , धोखे या जाली प्रष्ठांकन या कही पड़ा हुआ प्राप्त करता करता है वह उसके लिए स्वयं अपने नाम से विधिक स्वामित्व नही पाता है एवं इसलिए वह उसका धारक नही कहला सकता

(ब) वह अपने नाम से संबधित पक्षकारों से रकम प्राप्त करने या वसूल करने का हकदार होना चाहिए। इस उद्देश्य हेतु , यह आवश्यक है कि धारक का नाम लिखत के ऊपर पानेवाला या पृष्ठांकिती के रुप में लिखा हो, अगर यह एक आदेशिती लिखत है। एक वाहक लिखत के मामले में वाहक चेक पर नाम अंकित हुए बिना ही धन का दावा कर सकता है। धारक अपने नाम पर दूसरे पक्षों के विरुद्ध कार्यवाही दायर कर रकम प्राप्त करने या वसूलने में सक्षम है, लिखत परक्राम्य करने हेतु एवं विधिक उन्मोचन देने हेतु।

अगर एक विनिमय पत्र, वचन पत्र या चेक खो जाता है या नष्ट हो जाता है वहां उसका घारक वह व्यक्ति है जो कि ऐसे खो जाने या नष्ट होने के समय ऐसा हकदार था (धारा 8) । दूसरे शब्दों में, लिखत के खो जाने के समय जो व्यक्ति भुगतान प्राप्त करने का हकदार था, वह आगे भी उसका धारक माना जायेगा, खोई लिखत प्राप्त करने वाला उसका धारक नही बनता।

11.3.6 सम्यक अनुक्रम धारक

धारा 9 के अनुसार – ''सम्यक अनुक्रम धारक'' से कोई भी ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो वचन पत्र , विनिमय पत्र या चेक में वार्णित रकम के देय होने से पूर्व और यह विश्वास करने का कि जिस व्यक्ति से उसे अपना हक व्युत्पन्न हुआ हैउस व्यक्ति के हक में कोई त्रुटि विद्यमान थी पर्याप्त हेतुक रखे बिना , उस दशा में, जिसमें कि वह वाहक को देय है, उस पर प्रतिफलार्थ काबिज हो गया है, अथवा उस दशा में, जिसमें कि वह आदेशानुसार देय है, उसका पानेवाला या पृष्ठांकिती हो गया है।

एक व्यक्ति एक **पराक्रम्य लिखत** का सम्यक अनुक्रम धारक बन जाता है अगर वह निम्नलिखित शर्ते पूरी करता हैः–

1. **पराक्रम्य लिखत** सम्यक अनुक्रम धारक के कब्जें में होना चाहिए आदेशिती लिखत के मामले में वह इसका पानेवाला या पृष्ठांकिती होना चाहिए अर्थात उसका नाम लिखत पर होना चाहिए ।
2. **पराक्रम्य लिखत** सभी मायनों में नियमित एवं पूर्ण होना चाहिए अगर कोई परिवर्तन हो तो उपरवाल (drawee) के हस्ताक्षर के माध्यम से निश्चित होना चाहिए, एक अपूर्ण दस्तावेज का धारक सम्यक अनुक्रम में धारक नही हो सकता , लिखत सम्यक अनुक्रम में धारक को उपयुक्त रूप से संदाय होना चाहिए, एक आदेशिती चंक के मामले में धारक के पक्ष में पृष्ठांकन आवश्यक है। एक उत्तर दिनांकित चैक अनियमित नही माना जाता है ।
3. लिखत कीमत के प्रतिफल के बदले में प्राप्त होना चाहिए अर्थात इसकी सम्पूर्ण कीमत अदा करके। एक व्यक्ति जो उपहार में चेक प्राप्त करता है वह प्रतिफल के हेतुक के लिए सम्यक अनुक्रम में धारक नही कहलाएगा। प्रतिफल वैध एवं पर्याप्त होना चाहिए। उदाहरणार्थ अगर एक चेक जुए में हासिल ऋण के संदर्भ में दिया जाता है, चेक के लिए प्रतिफल अवैध है। अगर प्रतिफल की रकम लिखत से कम होती है तो व्यक्ति प्रतिफल की बकाया रकम के लिए सम्यक अनुक्रम में धारक माना जाएगा ।
4. लिखत को उसमें अंकित राशि के भुगतान होने से पूर्व ही प्राप्त कर लेना चाहिए। यह शर्त मॉगे जाने पर देय के अलावा लिखतों पर लागू होती है एवं चेक पर नही लागू होती जो सदा मॉगे जाने पर ही देय होता है ।

5. सम्यक अनुक्रम धारक को लिखत यह विश्वास होने के पूरे कारण के साथ कि अतंरणकर्ता के स्वामित्व में कोई दोष उपस्थित नही है , प्राप्त होनी चाहिए। यह शर्त मॉगे जाने पर देय के अलावा लिखतों पर लागू होती है एवं चेक पर लागू नही होती जो सदा मॉगे जाने पर देय होता है.
6. सम्यक अनुक्रम धारक को लिखत यह विश्वास होने के पूरे कारण के साथ कि अंतरणकर्ता के स्वामित्व में कोई दोष उपस्थित नही है, प्राप्त होनी चाहिए। यह संतुष्ट होने की सबसे महत्वपूर्ण शर्त है। एक **पराक्रम्य लिखत** में एक व्यक्ति का स्वामित्व दोषपूर्ण माना जाता है अगर वह उसे अनुचित तरीकों से प्राप्त करता है, अर्थात धोखे, दवाब, अनुचित प्रभााव या किसी अन्य अवैध तरीके द्वारा या एक अवैध प्रतिफल के लिए। अतः वह उसमें कोई स्वामित्व धारण नही करता, उसका स्वामित्व दोषपूर्ण माना जाता है।

धारा 9 इस संबध में **पराक्रम्य लिखत** को प्रतिग्रहण करने वाले व्यक्ति पर भारी कर्तव्य आरोपित करती है । उसे न केवल अन्तरणकर्ता को स्वामित्व मे काई दोष नही देखना चाहिए वरन उसके पास यह विश्वास करने का कारण नही होना चाहिए कि स्वामित्व दोषपूर्ण है। इसका अर्थ है कि मामले के परिस्थितियों को अंतरणकर्ता के दोषपूर्ण स्वामित्व के बारे में कोई शक या संदेह उत्पन्न नही करना चाहिए। सम्यक्र अनुक्रम धारक को इसीलिए अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए एवं यह देखने में कि अंतरणकर्ता का स्वामित्व दोषपूर्ण है , सभी आवश्यक सावधानियॉ लेनी चाहिए अगर वह उपेक्षा दिखाता है या इस संबध में पूरी सावधानी नही बरतता, वह सम्यक अनुक्रम धारक नही कहलएगा।

11.3.7 धारक एवं सम्यक अनुक्रम धारक के मध्य अन्तर

'धारक' एवं'सम्यक अनुक्रम धारक' शब्दावली की परिभाषओं से हम उनमें निम्नलिखित अन्तर निकाल सकते है –

1. प्रतिफल– एक धारक के मामले में प्रतिफल की उपस्थिति अनिवार्य नही है, लेकिन एक सम्यक अनुक्रम धारक इसकी पूर्ण कीमत अदा करने के पश्चात लिखत प्राप्त करता है उदाहरणार्थ अगर एक चेक एक खैराती न्यास को उपहार या चंदा प्रदान करने के लिए जारी किया जाता है, न्यास इसका सम्यक अनुक्रम धारक नही बन जाता है। दूसरी ओर स्कूल या कॉलेज को भुगतान किया गया टूयूशन शुल्क एक कीमती प्रतिफल के लिए है। अतः एक स्कूल या कॉलेज सम्यक अनुक्रम धारक की स्थिति प्राप्त करता है।
2. कब्जा– वह व्यक्ति जो सम्यक अनुक्रम धारक कहलाने का हकादर है, इसके भुगतान होने से पूर्व लिखत का कब्जेदार होना चाहिए।

उदाहरणार्थ, अगर एक विनिमय पत्र मार्च 20, 1997 को देय है, एक व्यक्ति जो इसे इस तिथि से पूर्व धारण करता है वह इसका सम्यक अनुक्रम धारक होने का हकदार है। अगर यह इस तिथि के पश्चात प्राप्त होता है, कब्जेदार इसका सम्यक अनुक्रम धारक नही कहलाएगा, धारक के मामले मे समय सीमा जिसके अंतर्गत इसे प्राप्त करना चाहिए, आवश्यक है ।

3. अन्तरणकर्ता के स्वामित्व में दोष– अन्तर का सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि एक सम्यक अनुक्रम धारक एक लिखत यह विश्वास करने के पर्याप्त कारण के बगैर लिखत प्राप्त करता है कि अन्तरणकर्ता के स्वामित्व में काई दोष है। यह शर्त धारक के मामले में आवश्यक नही है। यह शर्त उस व्यक्ति पर भारी कर्तव्य आरोपित करती है जो सम्यक अनुक्रम धाकर होने का दावा करता है उसे न केवल अन्तरणकार्त के दोषपूर्ण स्वामित्व का ज्ञान नही होना चाहिए वरन प्रत्येक मामले की परिस्थितियों में, वहॉ यह विश्वास करने का कोई कारण नही होना चाहिए कि अन्तरणकर्ता के स्वामित्व में काई दोष है। इस अर्थ यह है कि सम्यक अनुक्रम धारक को एक लिखत, अन्तंरणकर्ता के अच्छे स्वामित्व के बारे में सभी संभव सावधानियों को लेने के पश्चात प्राप्त करना चाहिए ।

उदाहरण

4. एक फर्म के भागीदार पर Xका ऋण देय है। भागीदार Xके पक्ष में फर्म के पक्ष में भारित एक चैक पृष्ठांकित करता है।मामले की परिस्थितियॉ फर्म के पक्ष में भारित, भागीदार के चेक के स्वामित्व के बारें में संदेह उत्पन्न करती है। अगर X अपने आप को भागीदार के चेक के वैध स्वामित्व के बारे में आशवस्त पाता है वह सम्यक अनुक्रम धारक बन जाता है ।

5. यू एस दूतावास द्वारा 10,000 रूपयों का चेक नई दिल्ली में एक फर्नीचर आपूर्तिकार के पक्ष में जारी किया जाता है। यह Xके पक्ष में पृष्ठांकन धारित करता है जो एक सरकारी कर्मचारी है। वह इस कीमत के प्रतिफल के लिए Y को पृष्ठांकित करता है। ये परिस्थितियॉ Yके मस्तिष्क में संदेह उत्पन्न करने हेतु पर्याप्त है कि कैसे एक फर्नीचर आपूर्तिकर्ता से चेक सरकारी कर्मचारी के हाथों में आ गया । Yसम्यक अनुक्रम धारक का हकदार तभी होगा अगर वह चेक अंतरणकर्ता से चेक स्वीकार करता है ।

11.3.8 एक धारक के अधिकार

एक पराक्रम्य लिखत का धारक निम्नलिखित अधिकारों का उपयोग करता है –

1. निरंक पृष्ठंकांन उसके द्वारा पूर्ण पृष्ठांकन में परिवर्तित किया जा सकता है।
2. वह एक चैक को सामान्यतः या विशेषतः रेखोकित करने का अधिकारी होता है एवं 'परक्राम्य नही' शब्द भी जोड़ सकता है ।
3. वह एक तीसरे व्यक्तिको चैक परक्रामित कर सकता है अगर इस प्रकार का परक्रामण चेक में दिए गए निर्देश द्वारा प्रतिबंधित नही है ।
4. वह लिखत के भुगतान का दावा कर सकता है एक लिखत पर अपने नाम से वाद ला सकता है ।
5. खोए हुए चेक की दूसरी प्रति धारक से प्राप्त कर सकता है ।

11.3.9 एक सम्यक अनुक्रम धारक के विशेषाधिकार

एक धारक पर उपरोक्त प्रकाश के अलावा, एक सम्यक अनुक्रम धारक **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अन्तर्गत निम्नलिखित विशेषाधिकारो का प्रयोग करता है–

वह दोषों से रहित बेहतर स्वामित्व धारण करता है। यह एक सम्यक अनुक्रम धारक का सबसे महत्वपूर्ण विशेषाधिकार है। वह सदा अंतरणकर्ता से बेहतर स्वामित्व धारण करता है या किस़ी भी पूर्व पक्ष से बेहतर एवं उत्तरवर्ती पक्षो को अपने से अच्छा स्वामित्व दे सकता है। धारा 53 के अनुसार– **पराक्रम्य लिखत** का वह धारक जिसे सम्यक–अनुक्रम धारक से हक व्युत्पन्न हुआ है इस लिखत पर उस सम्यक–अनुक्रम धारक के अधिकार रखता है ।

11.3.11 परक्रामण का अर्थ

एक **पराक्रम्य लिखत** की प्रमुख विशेषता इसकी परक्राम्यता है, अर्थात इसे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को परक्रामण किया जा सकता है। धारा 14 के अनुसार जब एक वचन–पत्र विनिमय–पत्र या चेक किसी व्यक्ति को ऐसे अन्तरित कर दिया जाता है कि वह व्यक्ति उसका धारक हो जाता है तबवह लिखत परक्रामित कर दी गई है, यह कहा जाता है। परक्रामण का सार लिखत के एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को केवल अंतरण में निहित नही है वरन इस तथ्य में भी है कि एक लिखत का अंतरिति लिखत के धारक की भांति अधिकार प्राप्त करता है। अगर लिखत के अंतरिती को इसका धारक नही कहा जा सकता, जैसा कि धारा 8 में परिभाषित है, लिखत को परक्रामित हुआ नही कहा जाता है ।

एक लिखत का परक्रामण निम्नलिखित में से किसी की तरीके से किया जा सकता है –

1. परिदान द्वारा– एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चेक वाहक को देय, उसके परिदान द्वारा परक्राम्य है (धारा 47)। अतः एक वाहक लिखत के मामले में केवल उसका परिदान उसके परक्रामण का निर्माण करता है । परिदान उसके अंतरिती को या उसके अभिकर्ता या बैंकर जो उसके लिए कार्य करता है, को किया जा सकता है ।

उदाहरण–

(a) अ जो वाहक को देय **पराक्रम्य लिखत** का धारक है उसे ब के हेतुक रखने के लिऐ ब के अभिकर्ता को परिदान करता है। लिखत अतः परक्रामित है ।

(b) अ वाहक को देय **पराक्रम्य लिखत** का धारक है। लिखत अ के बैंकर के हाथो में है जो उस समय ब का भी बैकर है। अ बैकर को लिखत ब के खाते में अंतरण का निर्देश देता है। बैकर ऐसा ही करता है एवं उसी प्रकार अब वह लिखत को ब के अभिकर्ता के रूपमें धारण करता है। लिखत अतः परक्रामित है एव ब इसका धारक बन गया है।

2.पृष्ठांकन एवं परिदान द्वारा–आदेश पर देय एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चेक धारक द्वारा उसके पृष्ठांकन और परिदान द्वारा परक्रामित होता है (धारा 48)। अतः आदेशानुसार देय लिखत के परक्रामण हेतु आवश्यक है पहले उसके धारक द्वारा उसका पृष्ठांकन एवं उसके पश्चात अंतरिती को उसका परिदान।

11.31.11 पृष्ठांकन की परिभाषा

धारा 15 पृष्ठांकन को निम्न प्रकार से परिभाषित करती है– जब कि परक्राम्य लिखत का रचयिता या धारक ऐसे रचयिता के रूप में हस्ताक्षर करने से अन्यथा, परक्रामण के प्रयोजन के लिए उसके पृष्ठ पर या मुख भाग पर या उससे उपाबद्ध कागज की परची पर हस्ताक्षर करता है या **पराक्रम्य लिखत** के रूप में पूर्ति किए जाने के लिए आशयित स्टाम्प– पत्र पर उसी प्रयोजन के लिए हस्ताक्षर करता है तब यह कहा जाता है किवह उसे पृष्ठांकित करता है और वह 'पृष्ठांकक' कहलाता है। अतः एक पृष्ठांकन में एक **पराक्रम्य लिखत** के रचयिता (या निष्पादक) या उसके किसी धारक का हस्ताक्षर निहित होता है लेकिन यह आवश्यक है कि लिखत पर हस्ताक्षर में निहित भावना परक्रामण की होनी चाहिए अन्यथा यह एक पृष्ठांकन का निर्माण नही करेगा। वह व्यक्ति जो परक्रामण के उद्देश्य से लिखत हस्ताक्षरित करता है पृष्ठांकक कहलाता है एवं वह व्यक्ति जिसके पक्ष में लिखत अंतरित किया जाता है वह अंतरिती कहलाता है। अंतरणकर्ता **पराक्रम्य लिखत** के या तो

मुख भाग पर या पृष्ठ भाग पर हस्ताक्षर कर सकता है लेकिन सामान्य प्रथा के अनुसार पृष्ठांकन सामान्यतः लिखत के पृष्ठ भाग पर किया जाता है। अगर इस उद्देश्य हेतु लिखत के पृष्ठ भाग में जगह अपर्याप्त है एक कागज का टुकड़ा जिसे संगलग्नक कहा जाता है उसे पृष्ठांकन के अभिलेख के उद्देश्य के लिएउससे जोड़ा का सकता है।पृष्ठांकन से संबधित विधिक प्रावधान– एक **पराक्रम्य लिखत** का पृष्ठांकन तत्पश्चात परिदान होने पर उसमें की संपति पृष्ठांकिती को आगे के परक्रामण के अधिकार सहित अंतरित कर देता है (धारा 50)। अतः पृष्ठांकिती लिखत में की संपति या ब्याज उसके धारक की भांति प्राप्त करता है। वह उसे आगे परक्रामित कर सकता है (हालांकि उसके अधिकार को प्रतिबंधित पृष्ठांकन के मामले में पृष्ठांकनकर्ता प्रतिबंधित कर सकता है)।

धारा 50 यह भी अधिकार देती है कि एक लिखत को इस तरह की पृष्ठांकित किया जा सकता है कि पृष्ठांकिती पृष्ठांकनकर्ता का अभिकर्ता बन जाता है–

1.लिखत का आगे पृष्ठांकन करने हेतु, या

2. पृष्ठांकनकर्ता या किन्ही अन्य विशेष व्यक्ति के लिए रकम प्राप्त करने हेतु ।

इस प्रकार पृष्ठांकन के उदाहरण निम्नलिखित हैं–

1. मेरे उपयोग क लिए 'ग' को संदाय करो।
2. 'ख' के लेखे 'ग' कोया आदेशानुसार संदाय करो।

जब एक **पराक्रम्य लिखत** उपरोक्त मे किसी उद्देश्य के लिए पृष्ठांकित किया जाता है, पृष्ठांकिती इसका धारक बन जाता है एवं उसमे निहित संपत्ति पृष्ठांकिती को अंतरित हो जाती है। कुंजु पिल्ली एवं अन्य बनाम पेरियासामी वाद में, मूल पाने वाले (payee)संग्रह के उद्देश्य से पृष्ठांकिती के पक्ष में प्रोनोट पृष्ठांकन करने के पश्चात मर गया। पृष्ठांकिती ने देय रकम की वसूली हेतु प्रोनोट के रचयिता के खिलाफ वाद दायर किया। ट्रायल कोर्ट द्वारा निर्धारित किया गया कि संग्रह हेतु पृष्ठांकन ने मूल पानेवाले एवं पृष्ठाकिती के मध्य मालिक एवं अभिकर्ता के संबधों का निर्माण किया एवं पानेवाले की मृत्यु पर भारतीय संविदा अधिनियम, 1970 की धारा 201 के अनुसार अभिकरण कर अंत हो गया। अपील करने पर उच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि पराक्राम्य लिखत का धारक जो उसमें पृष्ठांकन द्वारा सुरक्षित है मूल पाने वाले की मृत्यु के कारण कार्यवाही का अपना अधिकार खो नही देता है। मुथईरेड्डी बनाम पोकईरेड्डी वाद में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि एक विशेष उद्देश्य जैसे कि रकम के संग्रह के लिए किए गए पृष्ठांकन पर आधरित अधिकार तब तक वैध है जब तक उद्देश्य पूर्ण नहीं हो जाता। अभिकरण के संबंध में सामान्य विधि इसीलिए ऐसे मामलों में लागू नही होती।

2. पृष्ठांकनकर्ता या पृष्ठांकंक– एक पराक्राम्य लिखत का प्रत्येक एकल रचयिता, लेखीवाल, पानेवाला या पृष्ठांकिती या अनेक संयुक्त रचयिता जो लेखीवालों, पानेवालो या पृष्ठाकितीयों में से सब उसे पृष्ठांकित या पराक्रामित कर सकेंगे यदि ऐसी लिखत कीपराक्राम्यता धारा 50 में वार्णित रूप में निर्बन्धित या अपवर्जित नही की गई है (धारा 51)। अतः उस मामले में जहॉ लिखत को संयुक्त रूप से अनेक व्यक्तियों द्वारा धारित किया गया है सभी के द्वारा पृष्ठांकन अनिवार्य है। एक दूसरे का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता ।

लिखत में उसके पृष्ठांकन में या आदेशनुसार शब्दों की अनुपस्थिति आगे पराक्रामण को निर्बन्धित नहीं करती। उदाहरणार्थ, एक विनिमय पत्र क को या आदेश पर देय लिखा गया है । क उसे ख को पृष्ठांकित करता है। पृष्ठांकन में 'या आदेशानुसार' शब्द या कोई समतुल्य शब्द अंतर्विष्ट नहीं है। ख लिखत को पराक्रामित कर सकेगा।यह हालांकि आवश्यक है कि एक लिखत का रचयिता या लेखीवाल का उस पर वैध कब्जा होना चाहिए, अर्थात वह उसके पृष्ठांकन या पराक्रामण करने की सक्षमता के क्रम मे उसका धारक होना चाहिए। लिखत का पानेवाला या पृष्ठांकिती समान उद्देश्य के लिए उसका धारक होना चाहिए ।

3. समय– **पराक्रम्य लिखत** तब तक परक्रामित की जा सकेगी जब तक रचयिता, ऊपरवाल या प्रतिग्रहीता द्वारा उसका संदाय या तुष्टि परिपक्वता पर या के पश्चात न का दी गई हो परन्तु उसके पश्चात नही (धारा 60) ।
4. रकम के एक भाग के लिए पृष्ठाकंन– लिखत का पृष्ठांकन इसकी समस्त राशि के लिए होना चाहिए । धारा 56 के अनुसार–पराक्राम्य लिखत पर का कोई भी लेख, यदि उससे यह तात्पर्यित हो कि वह उस लिखत पर शोध्य प्रतीत होने वाली रकम केकिसी भाग को ही अंतरित करता है, पराक्रामण केप्रयोजन के लिए विधिमान्य न होगा, किन्तु जहॉ कि ऐसी रकम का संदाय भागतः कर दिया गया है वहॉ उस आशय वाला टिप्पण उस लिखत पर पृष्ठांकित किया जा सकेगा जो तब बाकी के लिए पराक्रामित की जा सकेगी। अगर पृष्ठाकंक दस्तावेज को दो या अधिक पृष्ठांकितीयों को अलग–अलग अंतरण करना चाहता है, यह एक वैध पृष्ठांकन का निर्माण नहीं करेगा।
5. आदेशानुसार देय और मृतक द्वारा पृष्ठांकित किन्तु अपरिदत्त वचन–पत्र, विनियम–पत्र या चेक को मृतक का विधिक प्रतिनिधि केवल परिदान द्वारा पराक्रामित नही कर सकता (धारा 57)। अगर पृष्ठांकन आदेश पर देय लिखत के पृष्ठांकन के पश्चात मर जाता है ऐसा पृष्ठांकन वैध नही होगा एवं इसका विधिक प्रतिनिधि केवल उसके परिदान द्वारा पराक्रामण पूर्ण नही कर सकता ।

6. जब तक कि प्रतिकूल साबित नही कर दिया जाता, धारा 118 के अन्तर्गत यह उपाधारणा की जाएगी –'कि पराक्राम्य लिखत पर विद्यमान पृष्ठांकन उस क्रम में किए गए थे जिसमें वे उस पर विद्यमान है'। इसका अर्थ है पृष्ठाकंन जो लिखत पर प्रथम बार विद्यमान होगा उसे दूसरे से पहले बना या लिखा हुआ मान लिया जाएगा।

11.3.12 पृष्ठाकन/अंतरण के प्रकार

पराक्राम्य लिखत अधिनियम के अनुसार पृष्ठांकन निम्न प्रकार के होते हैं—

1. निरंक पृष्ठांकन—यदि पृष्ठांकन केवल अपना नाम हस्ताक्षरित करता है तो पृष्ठांकन निरंक कहलाता है (धारा 6)। इस प्रभाव के साथ पृष्ठाकंक पृष्ठांकिती का नाम नहीं लिखता कि एक निरंक पृष्ठांकित लिखत वाहक को देय बन जाती है (रेखांकित चेकों से संबधित प्रावाधानों के अध्यधीन)। जबकि मूलतः आदेशितदेय थी (धारा54) एवं इसके पराक्रामण के लिए तत्पश्चात आगे पृष्ठांकन की आवश्यकता नही होती। उदाहरणार्थ, अगर एक चेक x को देय या आदेशित है एवं इसके पृष्ठ भाग पर केवल हस्ताक्षर करता है ऐसा पृष्ठांकन निरंक पृष्ठांकन कहलाता है इस प्रकार का पृष्ठांकन इसे एक वाहक चेक बनाता है जिसे केवल परिदान द्वारा आगे परक्रामित किया जा सकता है । लेकिन अगर ऐसा चैक रेखाकित है इसका भुगतान बैंक के काउंटर पर नही किया जा सकता तब भी अगर यह निरंक पृष्ठांकित है। उसे निरंक पृष्ठांकन के पश्चात पूर्ण पृष्ठांकन किया जाता है यह वाहक को या आखिरी पृष्ठांकन में अंकित व्यक्ति के आदेश पर देय बन जाता है।

2. पूर्ण पृष्ठांकन – यदि पृष्ठाकंक लिखत वर्णित रकम किसी विनिर्दिष्ट व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार संदत्त करने का निदेश जोड़ देता है तो ऐसा पृष्ठांकन पूर्ण कहलाता है (धारा16)। अगर उपरोक्त उदाहरण में x ये शब्द जोड़ देता है –'y को भुगतान करो या आदेशानुसार' इस प्रकार पृष्ठांकन पूर्ण पृष्ठांकन कहलाता है । लिखत तब y को देय होगी या उसके आदेशानुसारएवं इसके आगे परक्रामण हेतु yद्वारा पृष्ठकांन आवश्यक होगा। निंरक पृष्ठांकन पूर्ण पृष्ठांकन में परिवर्तित किया जा सकता है। निरंक पृष्ठांकित परक्राम्य लिखत का धारक बगैर अपना नाम हस्ताक्षरित किए पृष्ठाकंक के हस्ताक्षर के ऊपर 'किसी अन्य व्यक्ति करें संदाय किया जाए', का निर्देश लिखकर निरंक पृष्ठांकन कोपूर्ण पृष्ठांकन में संपरिवर्तित कर सकता है एवं वह धारक तदद्वारा पृष्ठाकंक का उत्तरदायित्व उपगत नही करता (धारा 49)। उदाहरण के लिए x द्वारा लिखत के पृष्ठ भाग पर हस्ताक्षर द्वारा इसे निरंक पृष्ठांकित किया जाता है। इसका धारक yx के हस्ताक्षर के ऊपर –'z को सदांय या उसके आदेश पर संदाय' लिखकर निरंक पृष्ठकांन को पूर्ण पृष्ठांकन में

संपरिवार्तित कर सकता है। अतः Z पृष्ठांकिती बन जाएगा परन्तु y उसके प्रति पृष्ठाकंक के रूप में उत्तरदायी नही होगा क्योकि उसका नाम पूर्ण पृष्ठांकन में कही भी अंकित नही होता । अगर चेक अनादरित हो जाता है, zy के अलावा अन्य सभी पक्षो को चेक पर उत्तरदायी बना सकता है ।

धारा 55 के अनुसार,'अगर परक्रारम्य लिखत निंरक पृष्ठांकित को जाने के पश्चात पूर्ण पृष्ठांकित की जाए तो जिस व्यक्ति के पक्ष में वह पूर्ण पृष्ठांकित की गई है या जिसका हक ऐसे व्यक्ति के माध्यम द्वारा व्युत्पन्न हुआ है उसके द्वारा किए जाने के सिवाए उसकी रकम का दावा पूर्ण पृष्ठांकन करने वाले से नही किया जा सकता उदाहरण के लिए x द्वारा एक चेक निरंक पृष्ठांकित किया गया एवंy को अंतरित किया गया जो इसे z के पक्ष में पृष्ठांकित करता है।z बिना पृष्ठांकन के इसेAको अंतरित करता है अगर चैक अनादरित होता है,Ay याZपर वाद नही ला सकता वह केवलxपर वाद ला सकता है।

3.सशर्त पृष्ठांकन– अगर परक्राम्य लिखत का पृष्ठांकक, पृष्ठांकन में अभिव्यक्त शब्दों द्वारा उस पर का अपना स्वयं का दायित्व अपवार्जित करता है या उस लिखत पर शोध्य रकम को प्राप्त करने के पृष्ठांकिती के अधिकार को किसी विनिर्दिष्ट धटना के घटित होने पर चाहे, ऐसी घटना कभी भी घटित न हो, अश्रित करता है, ऐसा पृष्ठांकन सशर्त पृष्ठांकन कहलाता है (धारा 52)। इस प्रकार का पृष्ठांकन निम्नलिखित अधिकार प्राप्त करता है–

(a) वह लिखत पर अपना दायित्व किसी विशेष घटना के घटित होने पर सर्शत बना सकता है। वह तद्पश्चात धारकों के प्रति उत्तरदायी नही होगा अगर विनिर्दिष्ट घटना घटित नही होतीहै। इस मामले में पृष्ठाकंक इस विशेष घटना के घटित होने से पूर्वही लिखत के अन्य पक्षों पर वाद ला सकता है।

(b) वह लिखत पृष्ठांकिती के अधिकार को किसी विशेष घटना के घटित होने पर सशर्त बना सकता है। उदाहरण के लिए,C को संदाय करों अगर वही बाम्बे से वापस आता है। अतः C भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी एक विशेष घटना के घटित होने पर ही होगा अर्थात अगर वह बाम्बे से पास आता है।अगर वह घटना घटित नही होती है पृष्ठांकिती किसी भी पक्ष पर वाद नही ला सकता ।

सशर्त पृष्ठांकन लिखतों को गैर अन्तरणीय नही बनाता है। हालांकि इस प्रकार का पृष्ठांकन सामान्यतः उपयोग नही किया जाता ।

4. निर्बन्धित पृष्ठांकन– सामान्यता **पराक्रम्य लिखत** का पृष्ठांकिती इसे आगे परक्राम्य करने के लिए पूर्णतः सक्षम है। लेकिन धारा 50 निर्बन्धित पृष्ठांकन का अधिकार

देती है। जो इस प्रकार के लिखतों की परकाम्यता को अपवर्जित करता है। पृष्ठांकन अभिव्यक्त शब्दों द्वारा परक्रामण के अधिकार को निर्बन्धित या अपवर्जित कर सकेगा या पृष्ठांकिती को लिखत के पृष्ठांकन करने का या पृष्ठाकंक के लिए या किसी अन्य विनिर्दिष्ट व्यक्ति के लिएउसकी अंर्तवस्तुएं प्राप्त करने को केवल अभिकर्ता बना संकेगा – इस प्रकार का पृष्ठांकन आगे पृष्ठांकन को प्रतिबन्धित करता है एवं निर्बन्धित पृष्ठांकन कहलाता है। उदाहरण के लिए क वाहककोदेय लिखत को निम्न प्रकार से पृष्ठांकित करता है –

(क) अन्तर्वस्तुओं का संदाय केवल ग को करो।

(ख) मेरे उपयोग के लिए ग को संदाय करों ।

(ग) ख के लेखे 'ग' को या आदेशानुसार संदाय करो ।

(ध) इसकी अन्तर्वस्तुएं ग के नाम जम कर दो ।

ग द्वारा आगे का पृष्ठांकन का अधिकार इन पृष्ठांकनों से अपवर्जित है परन्तु निम्नलिखित पृष्ठांकन निर्बन्धित पृष्ठांकन नहीं हैं–

(क) ग को संदाय करों ।

(ख) X बैंक में ग के खाते में इनका मूल्य जमा कर दो।

क्योकि पृष्ठाकंक ने विनिर्दिष्ट रूप से परक्राम्यता निर्बन्धित नहीं की है परक्राम्यता 'या आदेशानुसार' शब्दों के विलोपन द्वारा निर्बन्धित नहीं होती (धारा 52)।

5.दायित्व रहित पृष्ठांकन– **पराक्रम्य लिखत** का पृष्ठकंक पृष्ठांकन में अभिव्यक्त शब्दों द्वारा, उस पर का अपना स्वयं का दायित्व अपवर्जित कर सकेगा (धारा 52)। उदाहरण के लिए अ एक चैक का पृष्ठांकन निम्न प्रकार करता है –

(क) अपने स्वंय के खतरे पर संदाय 'क' को 'या आदेशानुसार' करो ।

(ख) मेरे को 'दायित्व रहित''ख' को संदाय करो।

वह (अ) क के प्रति एवं पश्चातवर्ती पृष्ठांकितीयों के प्रति दायित्वाधीन नही होगा अगर तत्पश्चात बैंक चेक का अनादरण करता है। वे इस पृष्ठाकंक से पूर्व के किसी भी पक्ष पर वाद ला सकेंगे लेकिन अगर पृष्ठाकंक जिसने अपना दायित्व इस तरह अपवर्जित किया हैऔर बाद में लिखत का धारक बना जाता है वहॉ सब मध्यवर्ती पृष्ठाकंक उसकेप्रति दायी होते है। उदाहरण के लिए अ अपना निजी दायित्व, चेक को 'दायित्व रहित' पृष्ठांकित कर अपवर्जित करता है। इसे वह ब को अन्तरणं करता है। ब स को पृष्ठांकित करता हैजो इसे वापस अ को पृष्ठांकित करता है। अतः अ के पास ब और स के विरूद्ध पृष्ठांकिती के अधिकार होंगे जिन्होने लिखत को वापस अ के पास आने से पहले पृष्ठांकित किया था ।

6. एच्छिक पृष्ठांकन– पृष्ठांकिती को लिखत के अनादरण की सूचना पृष्ठाकंक को अवश्य देनी चाहिए। परन्तु पृष्ठाकंक, पृष्ठांकिती के इस कर्तव्य को पृष्ठाकंन में 'अनादरण की सूचना का अधित्याग' लिखकर अधित्याग (waive) सकता है। पृष्ठाकंक लिखत के असंदाय के लिए सदा पृष्ठांकिती के प्रति दायी होता है।

11.4 सारांश

पराक्रम्य लिखत अधिनियम पराक्रम्य लिखत को परिभाषित नही करता बल्कि कहता है कि पराक्रम्य लिखत से या तो आदेशानुसार या वाहक को देय वचन–पत्र, विनिमय पत्र या चेक अभिप्रेत है (धारा 13)। यह पराक्रम्य लिखत की विशेषताओ को इंगित नही करता लेकिन बताता है कि तीन साधन– चेक, वचन–पत्र और विनिमय पत्र पराक्रम्य लिखत है अर्थात यह तीन उपकरण पराक्रम्य लिखत कानून की धारा 13 द्वारा है जो किसी भी अन्य साधन को निषेध नही करता। जो पराक्रम्यता की आवश्यक शर्तो को संतुष्ट करता है, लिखत माना जायेगा । पराक्रम्य लिखत की अनिवार्य विशेषता पराक्रम्यता के रूप में नीचे वार्णित की गयी हैः
न्यायूमूर्ति के सी विलिस पराक्रम्य लिखत को परिभाषित करते है, "एक सम्पत्ति जो अधिग्रहित की गयी है किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो सद्भावपूर्ण एवं मूल्य के बदले में प्राप्त करता है भले ही जिससे उसने प्राप्त किया है उसके अधिकार में कोई दोष हो ।" एक विद्वान थामस के अनुसार "पराक्रम्य लिखत वह होता है जो कि व्यापार के रिति– रिवाजो तथा विधि के अनुसार पराक्रम्य है और जिसका हस्तान्तरण बिना उत्तरदायी व्यक्ति को सूचित किये हुये, सुपुर्दगी अथवा पृष्ठाकंन और सुपुर्दपी से इस प्रकार किया जा सकता है कि (अ) इसका धारक अपने नाम से वाद चला सकता है, और (ब) इसका स्वामत्वि हस्तान्तरक के दोषपूर्ण स्वामित्व रहने पर भी मूल्यवान प्रतिफल एवं सद्भावना से प्राप्त करने वाले हस्तान्तरिती को प्राप्त हो जाता है ।" ये परिभाषाये स्पष्ट रूप से पराक्रम्य लिखत के वास्तविक स्वरूप को प्रकट करती हैं। पराक्रम्य लिखत एक हस्तातरणीय दस्तावेज है या तो कानून के आवेदन के द्वारा या व्यापार संबंध कस्टम द्वारा । इस तरह के उपकरण की खास विशेषता यह है कि इसे सद्भावना एवं मूल्य के बदले प्राप्त करने वाले व्यक्ति को इसका स्वामित्व प्राप्त हो जाता है भले ही हस्तातरिति के पास कोई स्वामित्व न हो या दोषपूर्ण स्वामित्व हो ।

पराक्रम्य लिखत की आवश्यक विशेषतायें निम्न प्रकार से है –

1. पराक्रम्य लिखत आसानी से व्यक्ति से व्यक्ति हस्तांतरणीय है और लिखत की सम्पत्ति के स्वामित्व का हस्तान्तरण केवल संदाय द्वारा वाहक लिखत के मामले में, पृष्ठांकन और सुदुर्दगी द्वारा आदेशित लिखत के मामले में की जा सकती है । हस्तान्तरण, पराक्रम्य लिखत की आवश्यक विशेषता है लेकिन सभी हस्तातंरणीय लिखत पराक्रम्य लिखत नही होते । अतः हस्तांतरण और पराक्रम्य के बीच के अंतर को नीचे समझाया गया है ।
2. पराक्रम्य लिखत अंतरिती (transferee)को निरपेक्ष व अच्छा स्वामित्व प्रदान करता है जो इसे मूल्य के बदले सदभाव में प्राप्त करता है और बिना ध्यान देते हुये कि अंतरणकर्ता के स्वामित्व मे कोई दोष है यह

पराक्रम्य लिखत की महत्वपूर्ण विशेषता है । एक व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति से एक **पराक्रम्य लिखत** लेता है जो चाहे किसी से चुराया भी उसके लिए लिखत निरपेक्ष और अविवादित, स्वामित्व के साथ होगी जिसे उसने मूल्य के बदले प्राप्त किया है (उसकी पूरी कीमत अदा करने के बाद) एवं सदभाव में यह जाने बिना कि अंतंरणकर्ता लिखत का असली मालिक नहीं है। इस तरह के व्यक्ति को सम्यक् अनुक्रम धारक कहा जाता है और लिखत में उसके हित को अच्छी तरह कानून द्वारा संरक्षित किया जाता है ।

हस्तान्तरण और परक्राम्यत में अन्तर

किसी मद या वस्तु के मामले में जो कि एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तान्तरणीय है, विधि के सामान्य नियम के अनुसार अतरणकर्ता स्वामित्व जो कि उसके पास (possess)है को हस्तातरित नही कर सकता । उदाहरण के लिये x एक वस्तु या मद रवरीदता है जैसे किताब,y से उसके पूरे मूल्य का भुगतान करके । लेकिन y ने किताब z के घर से चुराई । अगर चोर यानी y पकड़ा जाता है और चुराई गयी वस्तु (किताब) x के कब्जे मे है तो उसके असली मालिक को वापिस करनी होगी क्योकि सम्पति मे x का स्वामित्व y द्वारा धारण स्वामित्व से बेहतर नही माना जाता है।वास्तव में देखे तो y का कोई स्वामित्व नही था और इसी लिए x भी समान आधार पर खड़ा होगा।पराक्राम्य लिखत, विधि के इस सामान्य नियम का अपवाद है । मान लीजिये ऊपर दिये गये उदाहरण मे x एक चेक लेता है उसे एक अच्छा स्वामित्व मिलेगा और वह असली मालिक z के लिये उत्तरदायी नही होगा । तब z के पास y के खिलाफ कार्यवाही करने का अधिकार होगा (लिखत का चोर)।सम्यक अनुक्रम में **पराक्रम्य लिखत** के धारक को यह विशेषाधिकार प्राप्त है जो कि हस्तांतरणीय लिखत और **पराक्रम्य लिखत** के मध्य मुख्य अंतर है।

3. **पराक्रम्य लिखत** इस तरह के धारक को जिसे कानूनी तौर पर सम्यक् अनुक्रम धारक कहा जाता है अपने नाम के लिखत पर कार्यवाही करने का अधिकार रखता है अतः उत्तरदायी पक्ष से वह भुगतान राशि वसूल सकता है।जब एक देनदार पराक्राम्य लिखत तैयार करता है लेनदार के पक्ष में और गिरवी भी निष्पादित कराता है भविष्य में सुरक्षा प्रदान करने लिये तो लेनदार को **पराक्रम्य लिखत** के आधार पर बिना गिरवी में रखी सुरक्षा को खर्च किए मुकदमा दायर करने का अधिकार है (बृज नाथ अग्रवाल बनाम राम कुमार अग्रवाल)।

उपरोक्त विशेषताओं के साथ **पराक्रम्य लिखत** को दो श्रेणियों के अन्तर्गत रखा गया है जो कि निम्न प्रकार से है –

1. विधि द्वारा मान्य परक्राम्य लिखतः

पराक्राम्य लिखत अधिनियम 1881, में तीन लिखतों– धनादेश, विनिमय पत्र तथा वचन पत्र को **पराक्रम्य लिखत** परिभाषित किया गया है अतः ये विलेख विधि द्वारा मान्य **पराक्रम्य लिखत** की श्रेणी में आते है ।

2. रीति– रिवाज अथवा व्यवहार द्वारा मान्य **पराक्रम्य लिखत** कुछ विलेखो ने रीति–रिवाज द्वारा परक्राम्य के गुण प्राप्त कर लिये है सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 137 के अनुसार एक लिखत विधि द्वारा या रीति रिवाज द्वारा परक्राम्य होता है। इस प्रकार भारत में शाहजोग हुण्डियॉ, डिलीवरी आर्डर रेलवे रसीद को रीति रिवाज या व्यापरिक व्यवहार द्वारा **पराक्रम्य लिखत** की मान्यता दी गयी है।सामान्यताः ऊपर दी गयी विशेषताये लिखत में पायी जाती लेकिन कभी–कभी लेखीवाल या धारक परकाम्यता की आवश्यक विशेषता ग्रहण कर लेते है तब लिखत को अंतरणीय या **पराक्रम्य लिखत** से रोक दिया जाता है। उदाहरण (अ) जब धनादेश किसी विशेष व्यक्ति को ही दिया जाये न कि उसके आदेश पर या वाहक, तब वह किसी अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित नही किया जा सकता अर्थात वह अपनी परक्राम्यता खो देता है। (ब) जब धनादेश रेखंकित परक्राम्य होता है तो इसे हस्तांतरित किया जा सकता है परन्तु अंतरिति को अच्छा स्वामित्व प्राप्त नही होता। सभी मामलो मे अंतरिति किसी अन्य मद के अंतरिति के साथ खड़ा होता है एवं अंतरणकर्ता से बेहतर स्वामित्व नही प्राप्त करेगा ।

एक लिखत का परक्रामण निम्नलिखित में से किसी की तरीके से किया जा सकता है –

1. परिदान द्वारा– एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चेक वाहक को देय, उसके परिदान द्वारा परक्राम्य है (धारा 47)। अतः एक वाहक लिखत के मामले में केवल उसका परिदान उसके परक्रामण का निर्माण करता है । परिदान उसके अंतरिती को या उसके अभिकर्ता या बैंकर जो उसके लिए कार्य करता है, को किया जा सकता है ।

उदाहरण–(a) अ जो वाहक को देय **पराक्रम्य लिखत** का धारक है उसे ब के हेतुक रखने के लिऐ ब के अभिकर्ता को परिदान करता है। लिखत अतः परक्रामित है ।

(b)अ वाहक को देय **पराक्रम्य लिखत** का धारक है। लिखत अ के बैंकर के हाथो में है जो उस समय ब का भी बैकर है। अ बैकर को लिखत ब के खाते में अंतरण का निर्देश देता है। बैकर ऐसा ही करता है एवं उसी प्रकार अब वह लिखत को ब के

अभिकर्ता के रूप में धारण करता है। लिखत अतः परक्रामित है एव ब इसका धारक बन गया है।

2. पृष्ठांकन एवं परिदान द्वारा– आदेश पर देय एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चेक धारक द्वारा उसके पृष्ठांकन और परिदान द्वारा परक्रामित होता है (धारा 48)। अतः आदेशानुसार देय लिखत के परक्रामण हेतु आवश्यक है पहले उसके धारक द्वारा उसका पृष्ठांकन एवं उसके पश्चात अंतरिती को उसका परिदान।

धारा 15 पृष्ठांकन को निम्न प्रकार से परिभाषित करती है– जब कि परक्राम्य लिखत का रचयिता या धारक ऐसे रचयिता के रूप में हस्ताक्षर करने से अन्यथा, परक्रामण के प्रयोजन के लिए उसके पृष्ठ पर या मुख भाग पर या उससे उपाबद्ध कागज की परची पर हस्ताक्षर करता है या **पराक्रम्य लिखत** के रूप में पूर्ति किए जाने के लिए आशयित स्टाम्प– पत्र पर उसी प्रयोजन के लिए हस्ताक्षर करता है तब यह कहा जाता है कि वह उसे पृष्ठांकित करता है और वह 'पृष्ठांकक' कहलाता है। अतः एक पृष्ठांकन में एक **पराक्रम्य लिखत** के रचयिता (या निष्पादक) या उसके किसी धारक का हस्ताक्षर निहित होता है लेकिन यह आवश्यक है कि लिखत पर हस्ताक्षर में निहित भावना परक्रामण की होनी चाहिए अन्यथा यह एक पृष्ठांकन का निर्माण नही करेगा। वह व्यक्ति जो परक्रामण के उद्देश्य से लिखत हस्ताक्षरित करता है पृष्ठांकक कहलाता है एवं वह व्यक्ति जिसके पक्ष में लिखत अंतरित किया जाता है वह अंतरिती कहलाता है। अंतरणकर्ता **पराक्रम्य लिखत** के या तो मुख भाग पर या पृष्ठ भाग पर हस्ताक्षर कर सकता है लेकिन सामान्य प्रथा के अनुसार पृष्ठांकन सामान्यतः लिखत के पृष्ठ भाग पर किया जाता है। अगर इस उद्देश्य हेतु लिखत के पृष्ठ भाग में जगह अपर्याप्त है एक कागज का टुकड़ा जिसे संगलग्नक कहा जाता है उसे पृष्ठांकन के अभिलेख के उद्देश्य के लिए उससे जोड़ा का सकता है ।

पराक्राम्य लिखत अधिनियम के अनुसार पृष्ठांकन निम्न प्रकार के होते हैं–

1. निरंक पृष्ठांकन
2. पूर्ण पृष्ठांकन
3. सशर्त पृष्ठांकन
4. निर्बन्धित पृष्ठांकन
5. दायित्व रहित पृष्ठांकन
6. एच्छिक पृष्ठांकन

11.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

उपरवाल (drawee)– लेखीवाल (drawee)या चैक या पत्र का रचयिता के द्वारा संदाय करने के लिए निर्दिष्ट व्यक्ति ''ऊपरवाल'' कहलाता है ।

लिखत— उधार ली या दी गई राशि का प्रमाण पत्र होता है ।
परक्राम्य होना— जब किसी लिखत को ऐसे व्यक्ति को अन्तरित किया जाता है जिससे कि वह व्यक्ति उसका धारक बना जाए तो उस लिखत को परक्राम्य हुआ कहा जाता है ।

11.6 संदर्भ ग्रन्थ / सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बॉगिया, आर.के. दि नेगोशिएबिल इन्स्टूमेन्ट एक्ट, छठॉ संस्करण, 1997;
2. .सिंह, अवतार. प्रिंसिपल्स आफ मरकेन्टाइल लॉ, छठा संस्करण, 1996.
3. अग्रवाल, सी. एल. लॉ ऑफ हुण्डी एण्ड नेगोशिएबिल;
4. चुतुर्वेदी,ममता., आधुनिक बैंकिग विधि, सेन्ट्रल लॉ पबिलकेशन;
5. **पराक्रम्य लिखत** आधिनियम;
6. टेनन्स, बैंकिंग ला एण्ड प्रेक्टिस इनइंडिया;
7. भाष्यम आदिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 16 संस्करण, 1997;

11.7 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. **पराक्रम्य लिखत** का परक्रामरण कैसे किया जाता है ?
2. परक्राम्य लिखतों के अन्तरण रूपों का विस्तृत वर्णन करें।
3. विभिन्न प्रकार के पृष्ठांकनों का विवरण दें।
4. अधिनियम के अन्तर्गत परक्राम्य एवं अंतरण का अर्थ क्या है?

एलएल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–4. पराक्रम्य लिखत (Negotiable Instruments)

इकाई –12. धारक एवं सम्यक अनुक्रम धारक (Holder and holder in due course.)

इकाई की संरचना

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 विषय सामग्री
 12.3.1 धारक
 12.3.2 सम्यक अनुक्रम धारक
  12.3.2.1 प्रतिफल
  12.3.2.2 परिपक्वता से पूर्व
  12.3.2.3 सम्पूर्ण एवं नियमित
  12.3.2.4 सद्भाव
  12.3.2.5 सम्यक अनुक्रम धारक के अधिकार एवं विशेषाधिकार
  12.3.2.6 उपधारणाएं
  12.3.2.7 स्टाम्प युक्त अपूर्ण लिखत के विरूद्ध विशेषाधिकार
  12.3.2.8 कल्पित लेखीवाल या पानेवाला
  12.3.2.9 सम्यक अनुक्रम धारक से पृष्ठांकिती
  12.3.2.10 यथा संदाय या सम्यक अनुक्रम में संदाय
  12.3.2.11 केवल धन में संदाय
  12.3.2.12 परिवक्वता से पूर्व संदाय
  12.3.2.13 किसके द्वारा संदाय
  12.3.2.14 संदाय किसे करना चाहिए
  12.3.2.15 सद्भावना में संदाय
12.4 सारांश
12.5 महत्वपूर्ण शब्दावली
12.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
12.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

एक लिखत पर प्रारम्भ से ही पाने वाले का अधिकार होता है। वह इस पर अपने अधिकार के लिए अधिकृत है। आदाता अपने ऋण के भुगतान के लिए इसे किसी भी व्यक्ति को हस्तान्तरित कर सकता है। यह हस्तांतरण परक्रामणीय कहलाता है एवं यह दो प्रकार से किया जा सकता है। एक वाहक लिखत साधारण परिदान द्वारा दिया जाता है एवं जिसको यह दिया जाता है वही इसका धारक हो जाता है। दूसरी तरफ एक आदेषित लिखत को मात्र पृष्ठांकित करके दिया जा सकता है एवं जिसको पृष्ठांकित किया गया है वही इसके लिए अधिकृत हो जाता है। अंग्रेजी विनिमय देयक अधिनियम, 1882 की धारा 2 के अनुसार धारक का मतलब है पानेवाला या पृष्ठांकिती जिसके लिए देयक या पत्र को पृष्ठांकित किया गया है। भारतीय विनिमय देयक अधिनियम की धारा 8 के अनुसार भी उस परिभाषा का समान प्रभाव है हालांकि इसे भिन्न शब्दों द्वारा परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार धारक का अर्थ है जिसके नाम में या अधिकार में ऐसा साधन है एवं जो इसे प्राप्त करने या वसूल करने के लिए अधिकृत किया गया है। इस देयक को धारण करने वाले या जिसके लिए पृष्ठांकित किया गया है, उसके अलावा कोई और इसे वसूल नहीं कर सकता है। एक परक्रामणीय साधन में निहित सम्पत्ति का अधिकार उसे ही मिलता है जो इसे वास्तविक एवं मूल्य के लिए एवं जिससे लिया है उसके अधिकार को दोष रहित जानकर लेता है। वह व्यक्ति जो इस साधन को विश्वस्त होकर किसी मूल्य पर लेता है वही इसका धारक हो जाता है।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य वैधानिक प्रावधानों एवं न्यायिक दृष्टिकोण से इस बात पर विस्तार से चर्चा करता है किकौन धारक है व समय केसाथ कौन धारक हो सकता है। साथ ही लिखतों के मध्य अन्तर को उदाहरण एवं संबंधित वादों के माध्यम से समझाने का प्रयास किया गया है।

12.3.1 धारक

धारा 8 के अनुसार वचन पत्र, विनियम पत्र या चेक के धारक का अर्थ उस व्यक्ति से है जिसके नाम में यह जारी किया गया है या फिर वह व्यक्ति जिसे किसी व्यक्ति से इसको वसूलपाने के लिए अधिकृत किया गया है। इस प्रकार किसी परक्रामणीय लिखत का धारक वह व्यक्ति हो जाता है जिसके नाम यह बनाया गया हो। वह व्यक्ति जिसके भौतिक कब्जे में लिखत है उसके नाम में वह लिखत न

बनाया गया हो, उसका धारक नहीं हो सकता है। इस प्रकार जैसे यदि किसी चोर के पास एसी कोई लिखत है तो वह उसका धारक नहीं हो सकता क्योंकि उसके पास इसका कब्जा होना गलत है और वह इस परक्रामणीय लिखत को रखने के लिए पात्र नहीं है। इसी प्रकार यदि अपने किसी नौकर को ऐसा कोई लिखत इसलिए दे दिया गया है कि वह उसे सुरक्षित रख दे तो वह नौकर उसके धारक नहीं हो सकता है, क्योंकि वह उसे अपने नाम में रखने के लिए अधिकृत नहीं है। इस प्रकार वह एक वस्तुतः धारक है न कि विधि सम्मत धारक। इस प्रकार यदि कोई लिखत खो जाता है या नष्ट हो जाता है तब भी वह व्यक्ति जो उसके खोने या नष्ट होने से पहले धारक था वहीं इसका धारक रहता है। अतः यदि यह खोया हुआ लिखत किसी को मिल जाता है तो सिर्फ इसलिए कि वह उसे मिला है, व्यक्ति उसका धारक नहीं बन जाता है। इसी प्रकार किसी लिखत के नष्ट होने पर भी वही उसका धारक बना रहेगा जो उसके नष्ट होने से पहले था। जहां कि विनियम पत्र अतिशोध्य होने के पूर्व खो गया है वहां जो व्यक्ति उसका धारक था वह उसके लेखीवाल को इस बात के लिए कि जिस विनिमय पत्र का खो जाना अधिकथित है, उसके पुनः पाए जाने की दशा में सब व्यक्तियों के विरूद्ध चाहे वे कोई भी हों, लेखीवाल की क्षतिपूर्ति की जायेगी, प्रतिभूति यदि वह अपेक्षित की जाये देकर अपने को वैसा ही दूसरा विनिमय पत्र देने के लिए आवेदन कर सकेगा। यदि लेखीवाल पूर्वोक्त जैसी प्रार्थना पत्र विनिमय पत्र की ऐसी दूसरी प्रति से इन्कार करे तो वह ऐसा करने के लिए विवश किया जा सकेगा (धारा 45)। प्रत्येक मूल परक्रामणीय साधन का आदाता ही इसका धारक होता है। यदि अदाता अपने अधिकार को हस्तांतरित कर देता है तो वह व्यक्ति उसके लिये आदाता के स्थान पर अधिकृत हो जाता है।वाहक उपकरणों के मामलों में वह व्यक्ति जिसको उसका परिदान किया जाता है उसका धारक होता है। इसी प्रकार आदेशिती लिखत के मामले में जहां इसका हस्तांतरण पृष्ठांकन द्वारा किया जाता है तो परांकिती ही इसका धारक हो जाता है। इस प्रकार धारक के अन्र्तगत निम्न शामिल है—

1. पानेवाला
2. वाहक (अर्थात वाहक उपकरण का अंतरिती)
3. परांकिती (अर्थात आदेशित लिखत का अंतरिती)

12.3.2 सम्यक अनुक्रम धारक

सम्यक अनुक्रम धारक का अर्थ उस व्यक्ति से है जो किसी विनिमय देयक वचन पत्र या चेक को जारी करने वाले व्यक्ति के अधिकृत होने के प्रति आश्वस्त है एवं किसी राशि को दे कर उसने किसी विनिमय देयक, वचन पत्र या चेक की देय तिथि से पहले उसके अदाता, धारक या परांकिती से धारण कर लिया है (धारा 9)।

सम्यक अनुक्रम धारक बनने के लिए निम्न शर्तों का अनुपालन आवश्यक हैः–

1. धारक के किसी मूल्य को देकर वह लिखत लिया है।
2. देय तिथि से पहले वह लिखत लिया है।
3. लिखत का मार्ग उसके मुख भाग पर सम्पूर्ण एवं नियमित है।
4. उसने लिखत सद्‌भावना से, लिखत में किसी प्रकार के दोष की जानकारी के बगैर या जिस व्यक्ति ने उसे परक्रामित किया है उसके स्वामित्व में किसी दोष के ज्ञान के बिना उसे लिया है।

12.3.2.1 प्रतिफल

सम्यक अनुक्रम धारक द्वारा प्रतिफल देकर ही यह लिखत लिया गया हो। ऐसा प्रतिफल के केवल अच्छा न होकर मूल्यवान होना चाहिए। बिना कोई प्रतिफल दिये विनिमय देयक लेने वाला इसे लागू नहीं करा सकता है। हालांकि परक्रामणीय प्रतिभूतियों के मुक्त प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिफल के सिद्धान्त में कुछ छूट दी गई है। सबसे पहले यदि कोई व्यक्ति साधारण संविदा को लागू करने की चेतावनी देता है तो उसे यह साबित करना होगा कि उसने इस संविदा के लिए कोई प्रतिफल दिया था, किन्तु पराक्रमणीय लिखतों के मामले में यह उपधारणा कर ली जाती है कि प्रतिफल दिया गया है। तथापि यदि प्रतिवादी यह स्थापित करना चाहता है कि मूल्य नहीं दिया गया है तब इसको सिद्ध करने की जिम्मेदारी भी उसी की होगी।[1] इसलिए प्रत्येक धारक को मूल्य के लिए धारक माना जाता है। दूसरे साधारण संविदा में केवल वही व्यक्ति मुकदमा कर सकता है जिसने प्रतिफल दिया है।[2] किन्तु परक्रामणीय लिखतों के मामले में यदि कोई प्रतिफल इस हेतु होता है इस बात से फर्क नहीं पड़ता है कि यह कहां से हस्तान्तरित हो रहा है। तीसरे कोई भूतकाल का प्रतिफल संविदा का समर्थन करने के लिए पर्याप्त है। जैसे एक भैंस जिसे कुछ समय पूर्व बेचा गया, कीमत के लिए जारी किया वचन पत्र वैध प्रतिफल द्वारा समर्थित माना जाता है।[3] इस प्रभाव का अधिकार पत्र होना चाहिए कि दोनों पक्षों के बीच अतीत का ऋण भी शामिल है। यदि कोई लिखत किसी प्रतिफल के लिए तीसरे पक्ष द्वारा निर्गत किया गया है तो इसे लागू नहीं कराया जा सकता है। चौथा, यदि धारक द्वारा मुआवजा देकर लिखत हासिल किया गया है तो उत्तरदायी पक्ष उसके किसी दोष के लिए या पूर्ववर्ती प्रतिफल के सम्बन्ध में निवेष्दन की अनुमति नहीं देगा।

12.3.2.2. परिपक्वता से पूर्व

धारा 9 के अनुसार एक सम्यक अनुक्रम धारक बनने के लिए यह अनिवार्य है कि व्यक्ति **पराक्रम्य लिखत** को देय रकम के संदाय से पहले इसे प्राप्त करे। उदाहरणार्थ, अगर एक **पराक्रम्य लिखत** की परिपक्वता की तिथि 1 मार्च है तो एक व्यक्ति जो इसे 1 मार्च या उसके बाद लेता है उसे सम्यक अनुक्रम धारक नहीं कहा जा सकता क्योंकि उसने **पराक्रम्य लिखत** को इसकी परिपक्वता से पूर्व प्राप्त नहीं किया। लेकिन अगर व्यक्ति इस लिखत को 1 मार्च से पूर्व लेता है, वह इसे देय रकम के संदाय से पहले ही ले लेता है एवं वह सम्यक अनुक्रम धारक हो सकता है। यह बहुत पहले 1825 में मै डाउन बनाम हेलिंग[5] के वाद में निर्धारित किया था कि अगर एक विनिमय पत्र, वचन पत्र, या चेक इसके देय के पश्चात लिया जाता है, जो व्यक्ति इसे लेता है वह उसे अपने खतरे पर लेता है, उसे उस पर उस पक्ष से अच्छा स्वामित्व नहीं प्राप्त हो सकता जिससे कि उसने उसे प्राप्त किया है, एवं इसीलिए वह उसको शोध्य नहीं करा सकता अगर यह निर्धारित हो चुका है कि यह पहले ही खो गया था या चुरा लिया गया था। इस सिद्धान्त को धारा 59 के प्रथम भाग में कथित किया गया है, जो कहता है कि व्यक्ति जो **पराक्रम्य लिखत** उसकी परिपक्वता के पश्चात लेता है वह सम्यक–अनुक्रम धारक नहीं होगा एवं अंतरणकर्ता से अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं कर सकेगा। उपरोक्त कथित प्रावधान का कारण यह है कि जब भुगतान देय होता है एवं व्यक्ति जिसके कब्जे में वह लिखत है भुगतान नहीं लेता है लेकिन **पराक्रम्य लिखत** की परिपक्वता के पश्चात इसके अंतरण का प्रयास करता है, एक संदेह उत्पन्न होता है कि उसके स्वामित्व के संबंध में अवश्य कोई दोष है, जिसके कारण कि उसने स्वयं शोध्य रकम (भुगतान) को नहीं लिया।

12.3.2.3 सम्पूर्ण एवं नियमित

सम्यक अनुक्रम धारक की दूसरी आवश्यकता यह है कि लिखत को उसके मुख भाग पर सम्पूर्ण एवं नियमित होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति जो **पराक्रम्य लिखत** लेता है, का यह कर्तव्य है कि वह उसके रूप, हेतुक की परीक्षा करे, अगर इसमें कोई तात्विक दोष निहित है, वह सम्यक अनुक्रम धारक नहीं बनेगा। एक लिखत में कई प्रकार से दोष हो सकते हैं। होगार्थ बनाम लेथम एण्ड कं0[6] वाद में अपीलार्थी ने बिना लेखीवाल के नाम के दो विनिमय पत्र लिए एवं न ही उन्हें स्वयं पूर्ण किया। न्यायालय ने निर्धारित किया कि वह विनिमय पत्रों को शोध्य नहीं करा सकता – कोई भी व्यक्ति जो इस प्रकार का लिखत लेता है यह जानते हुए कि जब उसने पत्र को स्वीकार किया था उसमें किसी लेखीवाल का नाम नहीं था, वह उसे अपने खतरे पर लेता है।[7] एक लिखत अपूर्ण हो सकती है क्योंकि इसे उपर्युक्त तरीके से

दिनांकित या स्टाम्प नहीं किया गया, लेकिन विनिमय पत्र को इसे पूर्ण या नियमित बनाने के लिए स्वीकरण की जरूरत नहीं होती। लिखत पर असामान्य चिन्ह इसे दोषपूर्ण बना सकते हैं, जैसे अनादरण, निरंक या निर्बन्धित या सशर्त पृष्ठांकन के चिन्ह, एक अनुप्युक्त पृष्ठांकन सम्पूर्ण लिखत को अनियमित बना देता है। ऐसा अरब बैंक लि0 बनाम रास[8] के वाद में हुआ। इस वाद में अपीलार्थी बैंक ने, प्रतिपक्ष द्वारा दिए गए दो वचनपत्र मुल्य के बदले भुनाए। वचन पत्र– एफ एवं एफ एन कम्पनी के रूप में अदाता के नाम से बने थे। दूसरों के धोखे में एक भागीदार ने उन्हें बैंक को पृष्ठांकित किया अतः–एफ एवं एफ एन, शब्द 'कम्पनी' को हटा दिया। यह निर्धारित किया गया कि 'कम्पनी' शब्द का विलोपन इस संदेह के कारण हेतु पर्याप्त है कि अदाता एवं पृष्ठांकनकर्ता आवश्यक रूप से एक ही है, इसीलिए वचनपत्र उनके मुख भाग पर सम्पूर्ण एवं नियमित नही है एवं बैंक सम्यक अनुक्रम धारक के रूप में सफल नहीं हो सकता। हालांकि अपीलार्थी इस आधार पर शोध्य रकम वसूल सकते हैं कि प्रतिपक्ष किसी पूर्व पक्ष के स्वामित्व में दोष दिखाने में असफल रहा। पृष्ठांकनकर्ता के नाम के अक्षर में कोई गलती पृष्ठांकनकर्ता को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए लियोनार्ड बनाम विल्सन[9] में टारने एवं फैन्सी (Torney and Fancy) को शोध्य एक चेक टोरने एवं फार्ले (Torney and Farley) के नाम पृष्ठांकित किया गया। यह निर्धारित किया गया कि पृष्ठांकन, अक्षरों की गलती के बावजूद चेक में की संपत्ति के संदाय के लिए अधिकृत है। इस बिन्दु पर विधि को विनिमय पत्र की चाल्मर्स डाइजेस्ट[10] में सबसे अच्छा वर्णित किया गया है– अगर विनिमय पत्र स्वयं में एक चेतावनी वाहित करता है, इसका धारक, हालांकि ईमानदार हो अंतरणकर्ता से अच्छा स्वामित्व नहीं पा सकता। एक निरंक स्वीकृति या एक विनिमय पत्र जिसकी किसी सामग्री विशेष से चेतावनी झलकती हो एवं एक वह विनिमय पत्र की जो फटा हो एवं जिसके टुकड़ों को आपस में जोड़ा गया हो, कम से कम अगर फाड़ने से उसे समाप्त करने का विचार झलकता हो तो धारक उसे अपने खतरे पर लेता है। एक उत्तरदिनांकित चैक अनियमित नहीं है।

12.3.2.4 सदभावना पूर्ण

अधिनियम शब्द– ''सद्भावना'' का प्रयोग नहीं करता लेकिन बदले में कहता है कि सम्यक अनुक्रम धारक बनने हेतु व्यक्ति को यह विश्वास करने का कि जिस व्यक्ति से उसे अपना हक व्युत्पन्न हुआ है उस व्यक्ति के हक में कोई त्रुटि वर्तमान थी पर्याप्त हेतुक रखे बिना, **पराक्रम्य लिखत** लेनी चाहिए। जो शर्त आवश्यक है वह यह कि उसे सदभाव में कार्य करना चाहिए एवं बिना उपयुक्त शर्त के।[11] अर्थात् धारक को लिखत एक ईमानदार विश्वास के साथ प्राप्त करनी चाहिए कि अंतरणकर्ता का

स्वामित्व अच्छा है। इसके अतिरिक्त, वहां ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए जो मस्तिष्क में कोई संदेह उत्पन्न कर सके जैसे कि अंतरणकर्ता का स्वामित्व दोषप्रर्ण है। अगर कुछ भी संदेह उत्पन्न करने वाला है एवं बिना उपयुक्त जांच के वह **पराक्रम्य लिखत** लेता हैयह नहीं कहा जा सकता कि उसने सद्भावना में कार्य किया है एवं इसीलिए सम्यक –अनुक्रम धारक नहीं कहला सकता। उदाहरण के लिए जब वह एक **पराक्रम्य लिखत** लेता है जो टुकड़ों में फटा हुआ था एवं उसके बाद टुकड़ों को आपस में जोड़ दिया गया था या परक्राम्य लिखत में लेख के ऊपर कुछ दोबारा लिखा गया है एवं वह बिना स्वयं करे संतुष्ट किए कि अंतरणकर्ता के पास अच्छा स्वामित्व था, उसे ले लेता है, वह सम्यक–अनुक्रम धारक नहीं है। इसी प्रकार उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि अंतरणकर्ता का स्वामित्व दोषपूर्ण हो सकता है परन्तु उपेक्षा में या अन्यथा यह जांच करने में कि वह दोष उसके ज्ञान में आ सके विलोपन करता है, उसेसम्यक अनुक्रम धारक नहीं कहा जा सकता।[12] एक व्यक्ति के सद्भाव को सुनिश्चित करने के लिए दो विधियां हैं– व्यक्तिपरक एवं वस्तुनिष्ठ। व्यक्तिपरक परीक्षा में न्यायालय धारक के स्वयं के मस्तिष्क को देखेगा एवं अकेला प्रश्न यह है– क्या उसने लिखत ईमानदारी से लिया है? वस्तुनिष्ठ परीक्षा में, दूसरी ओर न्यायालय धारक के मस्तिष्क के परे जाता है एवं क्या उसने प्रतिभूति लेते समय उस तरह से सावधानी बरती है जितना कि एक उचित रूप से सावधान व्यक्ति को लेनी चाहिए। व्यक्तिपरक परीक्षा ईमानदारी चाहती है। वस्तुनिष्ठ– उचित सावधानी एवं सतर्कता।

इसकी परीक्षा में कि सदभाव है या नहीं, विषय पर भारतीय विधि, अंग्रेजी विधि से कठोर है। अंग्रेजी विनिमय पत्र अधिनियम की धारा 90 के अनुसार, इस अधिनियम के अर्थों के तहत एक वस्तु सदभाव में की गई मानी जायेगी जहां वास्तव में यह ईमानदारी पूर्वक की गई है चाहे यह उपेक्षापूर्वक की गई हो या नहीं। अतः अंग्रेजी विधि के अन्तर्गत सद्भाव की उपस्थिति की परीक्षा यह देखने में है कि लिखत इस ईमानदार विश्वास के अनतर्गत लिया गया कि अंतरणकर्ता का स्वामित्व अच्दा है, अगर वह ईमानदार विश्वास उपस्थित है, वहां वह सदभाव में कहा जाता है जबकि **पराक्रम्य लिखत** लेने वाले व्यक्ति ने उपेक्षापूर्वक कार्य किया है। ईमानदारी का नियम राफेल बनाम बैंक ऑफ इंग्लैंड[13] वाद में लागू किया गया। जहां बैंक ऑफ इंग्लैंड द्वारा जारी बैंक पत्र, लिवरपूल की बी एस एण्ड कं0 से 13 नवम्बर 1852 को चोरी हो गए। बैंक ऑफ इंग्लैंड को इस चोरी की सूचना दे दी गई एवं यही सूचना हस्तपत्रों द्वारा लिवरपूल, लंदन एवं पेरिस के विभिन्न बैकिंग संस्थाओं में संचालित की गई। अप्रैल 1853 में इसी प्रकार का एक हस्तपत्र पेरिस में धन परिवर्तन की एक फर्म–सेन्टपाल द्वारा प्राप्त किया गया। चोरी गए बैंक पत्रों में एक 500 डालर मूल्य का सेंटपाल में जून 25, 1854 को प्रस्तुत किया गया एवं यह सत्यापित करने

के प्श्चात कि धारक के पास वीजा है एवं उसके हस्ताक्षर लेकर धारक को फ्रांस की मुद्रा में संदाय कर दिया गया।संदाय के वक्त सेंटपाल ने संबंधित बैंक की चोरी की सूचना वाली फाइल को नहीं देखा, नहीं तो संदाय नहीं किया जाता।

राफेल जो लंदन में सेंटपाल का पत्र वाहक था, ने बैंक नोट की रकम को बैंक ऑफ इंग्लैंड से वसूल करना चाहा। बैंक ऑफ इंग्लैंड ने दावा कि चूंकि सेंट पाल ने उपेक्षा की क्योंकि उसने बैंक नोट की चोरी से संबंधित फाइल को नहीं देखा वह सम्यक अनुक्रम धारक नहीं था, एवं इसीलिए वह चोरी किए गए बैंक नोट के संदाय का हकदार नहीं था। परन्तु न्यायालय ने निर्धारित किया कि नोट लेते समय राफेल ने (सेण्ट पाल के एजेण्ट) पूरी ईमानदारी से उसकी कीमत देकर नोट लिया था, भले ही लापरवाही के कारण चोरी की सूचना को ध्यान में नहीं रख सका, अतः उसका नोट लेना सदभावपूर्ण था अतः उसके स्वामित्व में कोई दोष नहीं था। अतः वह बैंक ऑफ इंग्लैण्ड से नोट का भुगतान पाने का अधिकारी था।

इस प्रकार अंग्रेजी विधि के अनुसार जब एक व्यक्ति ईमानदारी से कार्य करता है, वह सदभावना में कार्य करता है जबकि वह लिखत लेने में लापरवाह है, परन्तु इस संबंध में भारतीय विधि कठोर है अगर राफेल बनाम बैंक ऑफ इंग्लैण्ड[14] के समान कोई वाद भारत में उत्पन्न होता है अपीलार्थी (लिखत लेने वाला व्यक्ति) सदभाव में कार्य करता हुआ नहीं माना जाएगा जब वह लापरवाह हो एवं वह लिखत के अंतरणकर्ता के स्वामित्व में दोष के तथ्य के ज्ञान के बाद स्वयं लाभ प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि हमारे **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम की धारा 9 के अनुसार, अगर एक व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का पर्याप्त कारण है कि अंतरणकर्ता के स्वामित्व में दोष है, वह सदभाव में कार्य नहीं कर रहा है।

12.3.2.5 सम्यक अनुक्रम धारक के अधिकार एवं विषेशाधिकार

पराक्रम्य लिखत अधिनियम के अन्तर्गत एक सम्यक अनुक्रम धारक निम्नलिखित अधिकारों एवं विषेशाधिकारों का उपयोग करता है–

12.3.2.6 उपधारणाएं

इस अधिनियम की धारा 118 के अनुसार प्रथम विशेषाधिकार यह है कि प्रत्येक धारक प्रथम दृष्टया सम्यक अनुक्रम धारक मान लिया जाएगा। अपने स्वामित्व को साबित करने का भार उस पर नहीं है। एक बार यह दिखा दिए जाने पर कि पत्र का इतिहास धोखे या अवैधता से लिप्त है, यह साबित का भार धारक पर आ जाता है कि वह सम्यक अनुक्रम धारक है।[15] जब उसकी सदभावना का स्थापित करने का भार इस तरह धारक पर डाल दिया जाता है, उसे यह दिखाना होगा कि लिखत

को कीमत के बदले सदभाव में लिया गया है या वह कीमत के बदले एक सदभावपूर्ण धारक है।

12.3.2.7 स्टाम्प युक्त अपूर्ण लिखत के विरूद्ध विशेषाधिकार

जहां कि एक व्यक्ति भारत में **पराक्रम्य लिखत** संबंधी तत्समय प्रवृत्त विधि के अनुसार, स्टाम्पित और या तो पूर्णतः निरंक या उस पर अपूरित **पराक्रम्य लिखत** लिखकर कोई कागज हस्ताक्षरित करता है और किसी दूसरे को परिदत्त कर देता है जहां वह उसके धारक को तद्द्वारा यह प्रथम दृष्टया अधिकार देता है कि वह किसी भी रकम के लिए, जो उसमें विनिर्दिष्ट हो, और उस रकम से अधिक न हो जिसके लिए वह स्टाम्प पर्याप्त है, **पराक्रम्य लिखत** उस पर यथास्थिति रच ले या पूर्ण कर ले। ऐसे हस्ताक्षर करने वाला व्यक्ति अपनी उस हैसियत में, जिसमें उसने उस पर हस्ताक्षर किया, किसी भी सम्यक–अनुक्रम–धारक के प्रति ऐसी रकम के लिए ऐसी लिखत पर दायी होगा, परन्तु सम्यक अनुक्रम धारक से भिन्न कोई भी व्यक्ति लिखत परिदत्त करने वाले व्यक्ति से उस रकम से अधिक कुछ वसूल न करेगा जो उसके द्वारा तद्धीन संदत्त की जाने के लिए आशायित थी (धारा 20)। अतः हम कह सकते हैं कि धारा 20 उपयोगी है जब व्यक्ति जिसे स्टाम्प युक्त अपूर्ण लिखत दी गई है, वह लिखत सम्यक अनुक्रम धारक को परिदत्त करता है, सम्यक अनुक्रम धारक रकम वसूलने का हकदार होता है। अगर प्रतिवादी एक निरंक स्टाम्प पेपर हस्ताक्षरित करता है वह इसे सम्पूर्ण करके एवं स्वयं को पानेवाला बनाकर सम्यक अनुक्रम धारक नहीं हो जाता। इसका कारण यह है कि पानेवाला जो एक अपूर्ण लिखत लेता है उसे सम्यक अनुक्रम धारक नहीं कहा जा सकता क्योंकि इस मामले में पाने वाले को अंतरण एवं परक्रामण, **पराक्रम्य लिखत** का नहीं होता बल्कि केवल एक अपूर्ण लिखत का होता है जो एक **पराक्रम्य लिखत** है।[16]

12.3.2.8 कल्पित लेखीवाल या पानेवाला

धारा 42 के अनुसार, कल्पित नाम में लिखा गया और लेखीवाल के आदेश पर देय विनिमय पत्र का प्रतिग्रहीता, किसी ऐसे सम्यक –अनुक्रम धारक के प्रति, जो लेखीवाल के हस्ताक्षर जैसे ही हस्ताक्षर द्वारा और लेखीवाल द्वारा रचित तात्पर्यित पृष्ठांकन के अधीन दावा करता है, दायित्व से मुक्त नहीं हो जाता कि ऐसा नाम कल्पित है। इसका अर्थ है कि जब एक विनिमय पत्र लेखीपाल के आदेश पर देय है एवं लेखीपाल एक कल्पित व्यक्ति है (इसका अर्थ यह है कि पानेवाला भी एक कल्पित व्यक्ति है), ऐसे विनिमय पत्र का स्वीकारकर्ता सम्यक अनुक्रम धारक के

प्रति दायी होगा, अगर सम्यक अनुक्रम धारक के प्रति दायी होगा, अगर सम्यक अनुक्रम धारक यह दिखा सकता है– कि उसने लेखीवाल के हस्ताक्षर जैसे ही हस्ताक्षर द्वारा और लंखीवाल द्वारा रचित तात्पर्यित पृष्ठांकन द्वारा ही इसे प्राप्त किया है। धारा 42 कामन लॉ के उस नियम को प्रस्तुत करती है जो इस प्रकार है– जहां एक विनिमय पत्र एक कल्पित व्यक्ति के नाम लिखा गया, लेखीवाल के आदेश पर देय है, उस पत्र का प्रतीग्रहीता या स्वीकारकर्ता उस व्यक्ति, जिसन रचयिता के हस्ताक्षर किए है के अन्तर्गत संदाय हेतु दायी माना जाएगा एवं इसीलिए एक अंतरिती इस दावे के लिए सबूत दे सकता है कि पत्र पर कल्पित लेखीवाल के हस्ताक्षर एवं प्रथम पृष्ठांकन समान हस्त–लेख के हैं।[17] इस नियम में निहित कारण यह है कि प्रतिग्रहीता को उस व्यक्ति जिसने कि लेखीवाल के रूप में हस्ताक्षर किए हैं के आदेश के अन्तर्गत संदाय की जिम्मेदारी लेने के रूप में मान लिया जायेगा। पृष्ठांकिती जो सम्यक अनुक्रम धारक है, यह दिखाकर रकम वसूलने का हकदार है कि कल्पित लेखीवाल के हस्ताक्षर एवं प्रथम पृष्ठांकन जो उस पर है एक ही हस्तलेख में है।

12.3.2.9 सम्यक अनुक्रम धारक से पृष्ठांकिती

धारा 53 निर्धारित करती है कि, **पराक्रम्य लिखत** का वह धारक जिसे सम्यक–अनुक्रम धारक से हक व्युत्पन्न हुआ है उस लिखत पर उस सम्यक–अनुक्रम धारक के अधिकार रखता है तब भी जब उसे पूर्व दोषों का ज्ञान हो इस बात के साथ कि वह उनमें से एक पक्ष नहीं था, यह उस लेखवाल के मामले में भी लागू होगा जो एक विनिमय पत्र को सम्यक अनुक्रम धारक से वापस पा लेता है। एक विक्रेता ने स्टील के दो भेजे हुए माल की कीमत के लिए क्रेता पर एक विनिमय पत्र रचित किया, विक्रेता ने इस विनिमय पत्र को एक बैंक से भुना लिया, जिसने उसे दूसरे बैंक को अंतरित कर दिया, लेकिन स्टील की गुणवत्ता के बारे में विवाद होने के कारण अन्त में उसने भुगतान से इंकार कर दिया। वापस परक्रामण की प्रक्रिया द्वारा विक्रेता के पास विनिमय पत्र वापस आ गया। विक्रेता ने विनिमय पत्र के भुगतान के लिए क्रेता पर दावा किया। यह निर्धारित किया गया कि हालांकि विक्रेता लेखीवाल था वह सम्यक अनुक्रम धारक भी था एवं उसके अधिकार उसी प्रकार से निर्धारित किए जाएंगे।[18]

12.3.2.10 सम्यक अनुक्रम में संदाय या यथाक्रम संदाय

सम्यक अनुक्रम में 'संदाय' से लिखत पर कब्जा रखने वाले व्यक्ति को उस लिखत के प्रकट शब्दों के अनुसार सदभावपूर्वक और उपेक्षा किए बिना ऐसी परिस्थितियों में

किया गया संदाय अभिप्रेत है जिससे कि यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार नहीं पैदा होता कि वह उसमें वर्णित रकम का संदाय पाने का हकदार नहीं है। एक संदाय यथाक्रम संदाय नहीं हो सकता अगर यह उस व्यक्ति को किया गया जो इसे पाने का हकदार नहीं था या इसे देय तिथि से पूर्व संदाय किया गया या यह इस तथ्य के ज्ञान के साथ किया गया है जो धारक के प्राप्त करने के अधिकार को उचित बिगाड़ता है या नष्ट करता है या उन परिस्थितियों के अन्तर्गत किया जाता है जिसमें यह मानने के पर्याप्त आधार है धारक संदाय प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। अन्त में, संदाय उस व्यक्ति को होना चाहिए जिसके पास इस हेतु अधिकार, प्राधिकार एवं सक्षमता है। जहां एक बैंक लिखत पर प्रकट शब्दों के अनुसार सदभावपूर्ण एवं उपेक्षा किए बिना ऐसी परिस्थितियों में जिसमें यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार नहीं पैदा होता कि, वह उसमें वर्णित रकम का संदाय पाने का हकदार नहीं है, संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय किया गया कहा जाता है।[19]

12.3.2.11 केवल धन (मुद्रा) में संदाय

धन का अर्थ नकद या कोई भी जो वैध निविदा(Tender) के रूप में माना जाता है, जैसे मुद्रा–पत्र। संदाय प्राप्त करने हेतु प्राधिकृत एक अधिकर्ता सामान्यतः वस्तुओं का संदाय नहीं ले सकता,[20] लेकिन अगर एक बार चेक प्रस्तुत एवं प्राप्त कर लिया गया एवं लेने वाला या उसका अभिकर्ता केवल रकम पर आपत्ति व्यक्त करते हैं वे तत्पश्चात निविदा की प्रकृति पर आपत्ति नहीं व्यक्त कर सकते।[21]

12.3.2.12 परिपक्वता से पूर्व संदाय

परिपक्वता से पूर्व संदाय, लिखत के शब्दों के अनुसार संदाय नहीं है, एवं इसीलिए, हालांकि संदाय आसन्न पक्ष को अंतरण से उन्मुक्त कर सकता है, फिर भी तीसरे व्यक्ति की भांति इसका प्रभाव सम्यक अनुक्रम में संदाय के लिए अन्यथा है, अर्थात् परिपक्वता पर संदाय एवं पूर्वानुमान द्वारा नहीं। अतः अगर इस प्रकार समय पूर्व संदाय के प्श्चात लिखत शेश परांकित है सदभावना पूर्ण परांकिती के हाथों में यह वैध है[22], जबकि जब वचन पत्र का रचयिता या विनिमय पत्र का प्रतिग्रहीता, अंतरण द्वारा लिखत के धारक बन जाते हैं। परिपक्वता से पूर्व विनिमय पत्र को दुबारा जारी कर सकते हैं, इस तरह स्वयं को एवं पश्चातवर्ती पक्षों को उसके जोड़कर।[23]

12.3.2.13 संदाय किसके द्वारा

विनिमय पत्र का कोई भी पक्ष इसका संदाय कर सकेगा, एवं वह पक्ष धारक का अधिकार प्राप्त करता है उससे, जिससे उसने लिखत ली उसकी पूर्व सभी पक्षों के विरूद्ध, परन्तु किसी दूसरे द्वारा शोध्य विनिमय पत्र या वचनपत्र के संदाय का अधिकार अजनबी के पास नहीं है, अतः धारक के अधिकारों के भांति अधिकार प्राप्त करता है। विनिमय पत्र या वचन पत्र के कुछ पक्षों के आदरणार्थ या प्रसाक्ष्याधीन के अलावा। एक अजनबी द्वारा संदाय विनिमय पत्र के लिए वैध संतुष्टी निर्धारित किया गया अगर यह प्रतिग्रहीता के कारण से किया गया एवं प्रतिग्रहीता या तो वर्तमान में इससे सहमत है, या बाद में इसे स्वीकार करता है, लेकिन भारतीय विधि के तहत यह एक वैध संतुष्टि है तब भी जब प्रतिग्रहीता इसको सत्यापन नहीं करता।[24]

12.3.2.14 संदाय किसको

व्यक्ति जिसको कि संदाय किया गया लिखत का कब्जाधारी होना चाहिए। एक संदाय, सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं हो सकता अगर यह लिखत के जरूरी उत्पादन के बगैर किया गया है। यह आवश्यक है कि संदाय उस व्यक्ति को किया जाना चाहिए जो एक वैध उन्मुक्ति प्रदान करने की स्थिति में है। अतः संदाय धारक को या उसके निमित्त संदाय प्राप्त करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति को किया जाना आवश्यक है। जहां लिखत किसी विनिर्दिष्ट व्यक्ति को देय है या उसके आदेश पर एवं संकेत द्वारा पृष्ठांकित नहीं है, इस प्रकार के लिखत के वास्तविक कब्जाधारी किसी व्यक्ति को संदाय, सम्यक अनुक्रम में संदाय नही समझा जायेगा। लेकिन अगर एक लिखत वाहक को देय या निरंक पृष्ठांकित है लिखत के कब्जाधारी व्यक्ति को संदाय, किसी संदेहजनक परिस्थिति की अनुपस्थिति में सम्यक अनुक्रम में संदाय है।

12.3.2.15 सदभावना में संदाय

संदाय सदभावना में बिना उपेक्षा एवं ऐसी परिस्थितियों के अन्तर्गत जो यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार नहीं दर्शाती कि वह व्यक्ति जिसको कि यह किया गया है वह रकम प्राप्ति का हकदार नहीं है। अगर वहां संदेहजनक परिस्थितियां हैं, संदाय करने वाले व्यक्ति को तुरंत जांच करनी चाहिए, एवं अगर वह संदाय कर देता है एवं जांच करने में उपेक्षा बरतता है, ऐसा संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं है। अतः वाहक को देय एक विनिमय पत्र चुरा लिया गया एवं चोर ने इसकी परिपक्वता पर इसे स्वीकर्ता को प्रस्तुत किया, अगर स्वीकर्ता ने, सदभावना में एवं विश्वास करने के किसी कारण के बिना कि प्रस्तुतकर्ता एक चोर है, इसका संदाय कर दिया तो सम्यक अनुक्रम में संदाय है एवं सवीकर्ता उन्मुक्त हो गया है। लेकिन

लिखत पर संदाय, वस्तुतः वाहक को देय सम्यक अनुक्रम में नहीं है अगर संदाय करने वाला व्यक्ति जानता है या उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि लिखत चोरी किया हुआ है एवं मांग करने वाला व्यक्ति इसे प्राप्त करने का हकदार नहीं है। लेखीवाल के संदाय रोक देने के आदेश की प्राप्ति के पश्चात स्वीकर्ता द्वारा विनिमय पत्र का संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं है।[25] इसके अलावा एक **पराक्रम्य लिखत** का संदाय करने से पहले उस व्यक्ति को, जो उसका संदाय करता है, यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि इसे संदाय के लिए प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति उस पर संदाय प्राप्ति का हकदार है। अतः अगर हुण्डी का लेखीवाल एक गलत व्यक्ति को लापरवाही से संदाय करता है, ऐसा संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं है एवं ऊपरवाल हुण्डी के सम्पूर्ण रकम के वैध स्वामी के सम्मुख सदा दायी रहेगा।[26]

12.4 सारांश

एक लिखत पर प्रारम्भ से ही पाने वाले का अधिकार होता है। वह इस पर अपने अधिकार के लिए अधिकृत है। आदाता अपने ऋण के भुगतान के लिए इसे किसी भी व्यक्ति को हस्तान्तरित कर सकता है। यह हस्तांतरण परक्रामणीय कहलाता है एवं यह दो प्रकार से किया जा सकता है। एक वाहक लिखत साधारण परिदान द्वारा दिया जाता है एवं जिसको यह दिया जाता है वही इसका धारक हो जाता है। दूसरी तरफ एक आदेषित लिखत को मात्र पृष्ठांकित करके दिया जा सकता है एवं जिसको पृष्ठांकित किया गया है वही इसके लिए अधिकृत हो जाता है। अंग्रेजी विनिमय देयक अधिनियम, 1882 की धारा 2 के अनुसार धारक का मतलब है पानेवाला या पृष्ठांकिती जिसके लिए देयक या पत्र को पृष्ठांकित किया गया है। भारतीय विनिमय देयक अधिनियम की धारा 8 के अनुसार भी उस परिभाषा का समान प्रभाव है हालांकि इसे भिन्न शब्दों द्वारा परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार धारक का अर्थ है जिसके नाम में या अधिकार में ऐसा साधन है एवं जो इसे प्राप्त करने या वसूल करने के लिए अधिकृत किया गया है। इस देयक को धारण करने वाले या जिसके लिए पृष्ठांकित किया गया है, उसके अलावा कोई और इसे वसूल नहीं कर सकता है। धारा 8 के अनुसार वचन पत्र, विनियम पत्र या चेक के धारक का अर्थ उस व्यक्ति से है जिसके नाम में यह जारी किया गया है या फिर वह व्यक्ति जिसे किसी व्यक्ति से इसको वसूल पाने के लिए अधिकृत किया गया है। इस प्रकार किसी परक्रामणीय लिखत का धारक वह व्यक्ति हो जाता है जिसके नाम यह बनाया गया हो। वह व्यक्ति जिसके भौतिक कब्जे में लिखत है उसके नाम में वह लिखत न बनाया गया हो, उसका धारक नहीं हो सकता है। इस प्रकार जैसे यदि किसी चोर के पास एसी कोई लिखत है तो वह उसका धारक नहीं

हो सकता क्योंकि उसके पास इसका कब्जा होना गलत है और वह इस परक्रामणीय लिखत को रखने के लिए पात्र नहीं है। इसी प्रकार यदि अपने किसी नौकर को ऐसा कोई लिखत इसलिए दे दिया गया है कि वह उसे सुरक्षित रख दे तो वह नौकर उसके धारक नहीं हो सकता है, क्योंकि वह उसे अपने नाम में रखने के लिए अधिकृत नहीं है। इस प्रकार वह एक वस्तुतः धारक है न कि विधि सम्मत धारक। सम्यक अनुक्रम धारक का अर्थ उस व्यक्ति से है जो किसी विनिमय देयक वचन पत्र या चेक को जारी करने वाले व्यक्ति के अधिकृत होने के प्रति आश्वस्त है एवं किसी राशि को दे कर उसने किसी विनिमय देयक, वचन पत्र या चेक की देय तिथि से पहले उसके अदाता, धारक या परांकिती से धारण कर लिया है (धारा 9)। सम्यक अनुक्रम धारक बनने के लिए निम्न शर्तों का अनुपालन आवश्यक है:–

1. धारक के किसी मूल्य को देकर वह लिखत लिया है।
2. देय तिथि से पहले वह लिखत लिया है।
3. लिखत का मार्ग उसके मुख भाग पर सम्पूर्ण एवं नियमित है।
4. उसने लिखत सद्भावना से, लिखत में किसी प्रकार के दोष की जानकारी के बगैर या जिस व्यक्ति ने उसे परक्रामित किया है उसके स्वामित्व में किसी दोष के ज्ञान के बिना उसे लिया है।

सम्यक अनुक्रम धारक द्वारा प्रतिफल देकर ही यह लिखत लिया गया हो। ऐसा प्रतिफल के केवल अच्छा न होकर मूल्यवान होना चाहिए। बिना कोई प्रतिफल दिये विनिमय देयक लेने वाला इसे लागू नहीं करा सकता है। हालांकि परक्रामणीय प्रतिभूतियों के मुक्त प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिफल के सिद्धान्त में कुछ छूट दी गई है। सबसे पहले यदि कोई व्यक्ति साधारण संविदा को लागू करने की चेतावनी देता है तो उसे यह साबित करना होगा कि उसने इस संविदा के लिए कोई प्रतिफल दिया था, किन्तु पराक्रमणीय लिखतों के मामले में यह उपधारणा कर ली जाती है कि प्रतिफल दिया गया है। तथापि यदि प्रतिवादी यह स्थापित करना चाहता है कि मूल्य नहीं दिया गया है तब इसको सिद्ध करने की जिम्मेदारी भी उसी की होगी। इसलिए प्रत्येक धारक को मूल्य के लिए धारक माना जाता है। दूसरे साधारण संविदा में केवल वही व्यक्ति मुकदमा कर सकता है जिसने प्रतिफल दिया है। किन्तु परक्रामणीय लिखतों के मामले में यदि कोई प्रतिफल इस हेतु होता है इस बात से फर्क नहीं पड़ता है कि यह कहां से हस्तान्तरित हो रहा है। तीसरे कोई भूतकाल का प्रतिफल संविदा का समर्थन करने के लिए पर्याप्त है। जैसे एक भैंस जिसे कुछ समय पूर्व बेचा गया, कीमत के लिए जारी किया वचन पत्र वैध प्रतिफल द्वारा समर्थित माना जाता है। इस प्रभाव का अधिकार पत्र होना चाहिए कि दोनों पक्षों के बीच अतीत का ऋण भी शामिल है। यदि कोई लिखत किसी प्रतिफल के लिए तीसरे पक्ष द्वारा निर्गत किया गया है तो इसे लागू नहीं कराया जा सकता है। चौथा, यदि धारक द्वारा मुआवजा देकर लिखत हासिल किया गया है तो

उत्तरदायी पक्ष उसके किसी दोष के लिए या पूर्ववर्ती प्रतिफल के सम्बन्ध में निवेदन की अनुमति नहीं देगा।

पराक्रम्य लिखत अधिनियम के अन्तर्गत एक सम्यक अनुक्रम धारक निम्नलिखित अधिकारों एवं विशेषाधिकारों का उपयोग करता है–

इस अधिनियम की धारा 118 के अनुसार प्रथम विशेषाधिकार यह है कि प्रत्येक धारक प्रथम दृष्टया सम्यक अनुक्रम धारक मान लिया जाएगा। अपने स्वामित्व को साबित करने का भार उस पर नहीं है। एक बार यह दिखा दिए जाने पर कि पत्र का इतिहास धोखे या अवैधता से लिप्त है, यह साबित का भार धारक पर आ जाता है कि वह सम्यक अनुक्रम धारक है। जब उसकी सदभावना का स्थापित करने का भार इस तरह धारक पर डाल दिया जाता है, उसे यह दिखाना होगा कि लिखत को कीमत के बदले सदभाव में लिया गया है या वह कीमत के बदले एक सदभावपूर्ण धारक है। जहां कि एक व्यक्ति भारत में **पराक्रम्य लिखत** संबंधी तत्समय प्रवृत्त विधि के अनुसार, स्टाम्पित और या तो पूर्णतः निरंक या उस पर अपूरित **पराक्रम्य लिखत** लिखकर कोई कागज हस्ताक्षरित करता है और किसी दूसरे को परिदत्त कर देता है जहां वह उसके धारक को तद्द्वारा यह प्रथम दृष्टया अधिकार देता है कि वह किसी भी रकम के लिए, जो उसमें विनिर्दिष्ट हो, और उस रकम से अधिक न हो जिसके लिए वह स्टाम्प पर्याप्त है, **पराक्रम्य लिखत** उस पर यथास्थिति रच ले या पूर्ण कर ले। ऐसे हस्ताक्षर करने वाला व्यक्ति अपनी उस हैसियत में, जिसमें उसने उस पर हस्ताक्षर किया, किसी भी सम्यक–अनुक्रम–धारक के प्रति ऐसी रकम के लिए ऐसी लिखत पर दायी होगा, परन्तु सम्यक अनुक्रम धारक से भिन्न कोई भी व्यक्ति लिखत परिदत्त करने वाले व्यक्ति से उस रकम से अधिक कुछ वसूल न करेगा जो उसके द्वारा तद्धीन संदत्त की जाने के लिए आशायित थी (धारा 20)। अतः हम कह सकते हैं कि धारा 20 उपयोगी है जब व्यक्ति जिसे स्टाम्प युक्त अपूर्ण लिखत दी गई है, वह लिखत सम्यक अनुक्रम धारक को परिदत्त करता है, सम्यक अनुक्रम धारक रकम वसूलने का हकदार होता है। अगर प्रतिवादी एक निरंक स्टाम्प पेपर हस्ताक्षरित करता है वह इसे सम्पूर्ण करके एवं स्वयं को पानेवाला बनाकर सम्यक अनुक्रम धारक नहीं हो जाता। इसका कारण यह है कि पानेवाला जो एक अपूर्ण लिखत लेता है उसे सम्यक अनुक्रम धारक नहीं कहा जा सकता क्योंकि इस मामले में पाने वाले को अंतरण एवं परक्रामण, **पराक्रम्य लिखत** का नहीं होता बल्कि केवल एक अपूर्ण लिखत का होता है जो एक **पराक्रम्य लिखत** नहीं है। धारा 42 के अनुसार, कल्पित नाम में लिखा गया और लेखीवाल के आदेश पर देय विनिमय पत्र का प्रतिग्रहीता, किसी ऐसे सम्यक –अनुक्रम धारक के प्रति, जो लेखीवाल के हस्ताक्षर जैसे ही हस्ताक्षर द्वारा और लेखीवाल द्वारा रचित

तात्पर्यित पृष्ठांकन के अधीन दावा करता है, दायित्व से मुक्त नहीं हो जाता कि ऐसा नाम कल्पित है।

इसका अर्थ है कि जब एक विनिमय पत्र लेखीपाल के आदेश पर देय है एवं लेखीपाल एक कल्पित व्यक्ति है (इसका अर्थ यह है कि पानेवाला भी एक कल्पित व्यक्ति है), ऐसे विनिमय पत्र का स्वीकारकर्ता सम्यक अनुक्रम धारक के प्रति दायी होगा, अगर सम्यक अनुक्रम धारक के प्रति दायी होगा, अगर सम्यक अनुक्रम धारक यह दिखा सकता है– कि उसने लेखीवाल के हस्ताक्षर जैसे ही हस्ताक्षर द्वारा और लंखीवाल द्वारा रचित तात्पर्यित पृष्ठांकन द्वारा ही इसे प्राप्त किया है। धारा 42 कामन लॉ के उस नियम को प्रस्तुत करती है जो इस प्रकार है– जहां एक विनिमय पत्र एक कल्पित व्यक्ति के नाम लिखा गया, लेखीवाल के आदेश पर देय है, उस पत्र का प्रतीग्रहीता या स्वीकारकर्ता उस व्यक्ति, जिसन रचयिता के हस्ताक्षर किए है के अन्तर्गत संदाय हेतु दायी माना जाएगा एवं इसीलिए एक अंतरिती इस दावे के लिए सबूत दे सकता है कि पत्र पर कल्पित लेखीवाल के हस्ताक्षर एवं प्रथम पृष्ठांकन समान हस्त–लेख के हैं।इस नियम में निहित कारण यह है कि प्रतिग्रहीता को उस व्यक्ति जिसने कि लेखीवाल के रूप में हस्ताक्षर किए हैं के आदेश के अन्तर्गत संदाय की जिम्मेदारी लेने के रूप में मान लिया जायेगा। पृष्ठांकिती जो सम्यक अनुक्रम धारक है, यह दिखाकर रकम वसूलने का हकदार है कि कल्पित लेखीवाल के हस्ताक्षर एवं प्रथम पृष्ठांकन जो उस पर है एक ही हस्तलेख में है।

संदाय सदभावना में बिना उपेक्षा एवं ऐसी परिस्थितियों के अन्तर्गत जो यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार नहीं दर्शाती कि वह व्यक्ति जिसको कि यह किया गया है वह रकम प्राप्ति का हकदार नहीं है। अगर वहां संदेहजनक परिस्थितियां हैं, संदाय करने वाले व्यक्ति को तुरंत जांच करनी चाहिए, एवं अगर वह संदाय कर देता है एवं जांच करने में उपेक्षा बरतता है, ऐसा संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं है। अतः वाहक को देय एक विनिमय पत्र चुरा लिया गया एवं चोर ने इसकी परिपक्वता पर इसे स्वीकर्ता को प्रस्तुत किया, अगर स्वीकर्ता ने, सदभावना में एवं विश्वास करने के किसी कारण के बिना कि प्रस्तुतकर्ता एक चोर है, इसका संदाय कर दिया तो सम्यक अनुक्रम में संदाय है एवं सवीकर्ता उन्मुक्त हो गया है। लेकिन लिखत पर संदाय, वस्तुतः वाहक को देय सम्यक अनुक्रम में नहीं है अगर संदाय करने वाला व्यक्ति जानता है या उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि लिखत चोरी किया हुआ है एवं मांग करने वाला व्यक्ति इसे प्राप्त करने का हकदार नहीं है। लेखीवाल के संदाय रोक देने के आदेश की प्राप्ति के पश्चात स्वीकर्ता द्वारा विनिमय पत्र का संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं है। इसके अलावा एक **पराक्रम्य लिखत** का संदाय करने से पहले उस व्यक्ति को, जो उसका संदाय करता है, यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि इसे संदाय के लिए प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति उस पर संदाय प्राप्ति का हकदार है। अतः अगर हुण्डी का लेखीवाल एक

गलत व्यक्ति को लापरवाही से संदाय करता है, ऐसा संदाय सम्यक अनुक्रम में संदाय नहीं है एवं ऊपरवाल हुण्डी के सम्पूर्ण रकम के वैध स्वामी के सम्मुख सदा दायी रहेगा।

निर्देशः–

1. सिंह अवतार, प्रिंसिपल्स ऑफ मरकेन्टाईल लॉ, छठा संस्करण, 1996,पृष्ठ 698
2. विल्स, दि लॉ ऑफ नेगोशिएबिल सिक्योरिटीज 61 (चौथा संस्करण)
3. जे.एम.एस. पिंटू बनाम ए.सी. रोड्रीज्यूस, ए.आई.आर. 1978 गोवा
4. ओलिवर बनाम डेविस (1949) 2 ए.एल.एल.ई.आर. 353
5. (1825) के0वी0 107 ई.आर. 1082
6. (1878)3 क्यू.बी.डी. 643
7. Ibid,ब्रामवेल एल.जे. –645 (क्यू.बी.डी.)
8. (1925)2 क्यू बी 216
9. (1834)39 आर.आर. 855
10. 11 वां संस्करण पृष्ठ 78
11. यू. पोनप्पा बनाम सी.एस. बैंक, ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 441
12. बांगिया, आर. के., **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, छठा संस्करण
13. (1855) 104 आर.आर. 638; 25 एल.जे.सी.पी. 33
14. Ibid
15. बॉके बिहारी सिकदर बनाम सेक्रेटरी ऑफ स्टेट ऑफ इंडिया, (1908)36 कलकत्ता, 239
16. केदारकराई रेडियर बनाम अरूमुगम नाडर, ए.आई.आर. 1992 मद्रास 346, 350 पर
17. कूपर बनाम मेयर, (1820)10बी एण्ड सी 468
18. जेड इन्टरनेशनल बनाम रॉबर्ट निकोलस (स्टील्स), (1978) 3 डब्ल्यू एल. आर. 350 सी.ए.
19. दास (पी.एम.) बनाम सेट्रल बैंक ऑफ इंडिया, ए.आई.आर. 1978 कलकत्ता, 55
20. हावर्ड बनाम चैपमैन (186) 4 सी एण्ड पी 508
21. बैंक ऑफ स्कॉटलैण्ड बनाम डोमिनियन बैंक (टोरंटो)(1891) ए.सी. 592
22. देंखें धारा 60 एवं 90
23. मोरले बनाम क्लेवरवैल (1840) 7 एम एण्ड डब्ल्यू 174, 178 पर; एटनब्राफ बनाम मेकेन्जिया (1856) 25 एल.जे. एक्स 2412
24. बेलशॉ बनाम बुष (1851) 11सी.बी. 191
25. राय बहादुर साहू बनाम चार्ल्स (1901) 9 सी.डब्ल्यू. एन. 841
26. लाला मल बनाम केशवदास, 26 ए.आई.आई., 495

12.5 महत्वपूर्ण प्रश्नावली

सदभावना से– अच्छी नीयत से, विश्वासपूर्ण, बिना किसी गलत भावना से

लेखीवाल– **पराक्रम्य लिखत** का रचयिता या लिखने वाला

ऊपरवाल–लेखीवाल द्वारा संदाय करने के लिए तदद्वारा निर्दिष्ट व्यक्ति ऊपरवाल कहलाता है।

12.6 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. सिंह अवतार, प्रिंसिपल्स ऑफ मरकेन्टाईल लॉ, छठा संस्करण, 1996
2. विल्स, दि लॉ ऑफ नेगोशिएबिल सिक्योरिटीज (चौथा संस्करण)
3. बांगिया, आर. के., **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, छठा संस्करण
4. **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 1881
5. चतुर्वेदी ममता, आधुनिक बैंकिंग विधि, प्रथम संस्करण, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन

12.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. धारक एवं सम्यक अनुक्रम धारक के बारे में विस्तार से बताइए।
2. **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 1881 के अन्तर्गत सम्यक अनुक्रम धारक को कौन से विशेषाधिकार प्रदान किए गए हैं?
3. कैसे एक धारक सम्यक अनुक्रम धारक बनता है?

एलएल.एम. प्रथम वर्ष

बैंकिंग विधि

खण्ड–4. पराक्रम्य लिखत (Negotiable Instruments)

इकाई –13. प्रस्तुतीकरण एवं भुगतान (Presentment and payment.)

इकाई की संरचना

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 विषय
13.3.1 प्रतिग्रहण हेतु उपस्थापन/ प्रस्तुतीकरण
13.3.1.1प्रस्तुतीकरण किसे
13.3.1.2 प्रस्तुतीकरण किसके द्वारा
13.3.1.3 प्रस्तुतीकरण का समय स्थान
13.3.1.4 धारक के कर्तव्य एंव उपस्थापन/ प्रस्तुतीकरण
13.3.1.5 प्रस्तुतीकरण का प्रभाव
13.3.1.6 कब प्रस्तुतीकरण क्षम्य है
13.3.2 दर्शन हेतु वचन पत्र का प्रस्तुतीकरण
13.3.3 भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण
13.3.3.1 प्रस्तुतीकरण किसके समक्ष
13.3.3.2 प्रस्तुतीकरण किसके द्वारा
13.3.3.3 प्रस्तुतीकरण का समय
13.3.3.4 लेखीवाल को भारित करने के लिए चैक का उपस्थान/प्रस्तुतीकरण
13.3.3.5 परांकनकर्ता को भारित करने के लिए चेक का उपस्थापन/प्रस्तुतीकरण
13.3.3.6 उपस्थापन का स्थान
13.3.3.7 प्रस्तुतीकरण का प्रभाव
13.3.3.8 कब प्रस्तुतीकरण अनावश्यक है
13.3.4 अस्वीकृति द्वारा अनादरण
13.4 सारांश
13.5 महत्वपूर्ण शब्दावली
13.7 आत्म मूल्यांकन हेतु प्रश्न

13.1 परिचय

एक परक्राम्य लिखत अस्वीकृति या गैर भुगतान के द्वारा अनादरित हो सकती है क्योकि स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण केवल विनिमय पत्रों के मामले में आवश्यक है। केवल विनिमय पत्र ही हैजो अस्वीकृति के कारण अनादरित हो सकते है। हालांकि किसी भी प्रकार का परक्राम्य लिखित जैसे– वचन पत्र, विनिमय पत्र या चैक अस्वीकृति के द्वारा अनादरित हो सकता है। परक्राम्य लिखित अधिनियम तीन प्रकार के प्रस्तुतीकरण निर्धारित करता है–

1. स्वीकृति हेतु विनिमय पत्र का प्रस्तुतीकरण।[1]
2. अवलोकन हेतु वचन पत्र प्रस्तुतीकरण।[2]
3. एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चैक का भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण।[3]

स्वीकृति की आवश्यकता केवल विनिमय पत्र के मामले में होती है, अतः केवल विनिमय पत्र का ही मामला है जिसमें स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण है। प्रत्येक परक्राम्य लिखत, वचन पत्र, विनिमय पत्र या चैक का अन्तिम हेतुक भुगतान ही है। भुगतान की प्रक्रिया में इसे निष्पादक,(maker) आदेशिति (drawee)या स्वीकर्ता / ग्राही जैसा कि मामला हो, को प्रस्तुत करना होता है। एक विनिमय पत्र को दो बार प्रस्तुत करना होता है, पहले स्वीकृति के लिये एवं दोबारा भुगतान के लिए वचन पत्र एवं एक चैक को स्वीकृति की आवश्यकता नही होती अतः उन्हें केवल भुगतान हेतु प्रस्तुत होना होता है।

13.2 उद्देश्य

<u>इस ईकाई को पढ़ने के पश्चात आप समझ सकेगे–</u>

- स्वीकृति एवं भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण
- प्रतिनिधि को प्रस्तुतीकरण
- प्रस्तुतीकरण का समय एवं स्थान
- सम्बन्धित वाद

13.3.1 **प्रतिग्रहण हेतु** उपस्थापन / प्रस्तुतीकरण

एक विनिमय पत्र की भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण से पूर्व स्वीकरण हेतु प्रस्तुति करनी होती है। परन्तु प्रत्येक विनिमय पत्र के स्वीकरण प्रस्तुति की आवश्यकता नही होती। स्वीकरण प्रस्तुति केवल वही आवश्यक है जहॉ :

1. जब पत्र एक निर्धारित समय पर स्वीकृति के पश्चात या अवलोकन के पश्चात देय है। ''अवलोकन के पश्चात'' अभिव्यक्ति का अर्थ है कि बिल आदेशिति(drawee) को उसके ज्ञान हेतु प्रस्तुत या अवलोकन करने के पश्चात एक निर्धारित समय पर देय है।
2. बिल में अभिव्यक्त शर्त हो कि इसे भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण से पूर्व इसकी स्वीकरण प्रस्तुति होगी।
3. बिल को आदेशिति के गृह स्थान या व्यापारिक स्थान से अलग एक स्थान पर देय बनाया गया है। जब एक विनिमय पत्र अभिव्यक्त रुप से ''अवलोकन के पश्चात'' देय है, इसका अर्थ है इसका भुगतान केवल ''स्वीकृति के पश्चात" ही देय है।[4] इस प्रकार के विनिमय पत्र की समाप्ति नियत करने हेतु, इसकी स्वीकृति, जिसमें इसकी स्वीकरण प्रस्तुति शामिल है, नितान्त आवश्यक है। अतः A एक विनिमय पत्र 1 जनवरी 2013 को आदेशित (draw) किया गया भुगतान ''अवलोकन के 2 माह पश्चात'' उसे आदेश देते हुए, तब इसका भुगतान, उस तिथि जब इसे B द्वारा स्वीकृत किया जायेगा, से दो माह की अवधि की समाप्ति के पश्चात ही देय होगा। अगर B इस पत्र को स्वीकृत नही करता है, इसका भुगतान कभी देय नही होगा। अतः अवलोकन के पश्चात देय एक विनिमय पत्र को उसकी स्वीकृति हेतु आदेशिति (drawee) को प्रस्तुत करना अनिवार्य है।[5]

हालंकि स्वीकरण प्रस्तुति केवल विनिमय पत्र के मामले में ही, जैसा की उपरोक्त कहा गया है, आवश्यक है एवं अन्य मामलो में नहीं, पत्रों की स्वीकृति हेतु प्रस्तुति के कुछ लाभ है चाहे ऐसा करना आवश्यक नही है। पहला लाभ यह है कि , आदेशिति के पत्र स्वीकृति के मामले में, बिल को स्वीकारकर्ता के नाम की अतिरिक्त सुरक्षा मिल जाती है। एवं द्वितीय, अगर आदेशिति पत्र का अनादरण करता है, धारणकर्ता तुरन्त आदेशक या परांकनकर्ता अगर कोई हो तो के विरुद्ध अपना अवलंब ले सकता है। आदेशक भी, अनादरण की सूचना प्राप्त होने पर आदेशिति के हाथों से अपनी चल संपत्ति वापस ले सकता है।

13.3.1.1 प्रस्तुतिकरण किसको

1. सामान्यतः यह आदेशिति है जिसको स्वीकृति हेतु प्रस्तुतिकरण किया जाता है।[6]आदेशिति से निमित्त विधिवत प्राधिकृत अभिकर्ता द्वारा भी स्वीकृति की जा सकती है।[7]
2. वहॉ, जहॉ अनेक आदेशिति है सभी की स्वीकृति आवश्यक है[8] एवं तद्नुसार स्वीकरण प्रस्तुति सभी को की जाती है। परन्तु अगर कुछ

आदेशिति के पास दूसरों से स्वीकृति का प्राधिकार प्राप्त है, या आदेशिति भागीदार है, ऐसे मामले मे एक भागीदार के पास दूसरे भागीदारों के निमित्त स्वीकृति की शाक्ति हैं, ऐसे व्यक्ति को जिसके पास ऐसा अधिकार है या ऐसे भागीदार को प्रस्तुतिकरण पर्याप्त है।[9]

3. अगर एक आदेशिति की मृत्यु हो जाती है, उसके विधिक प्रतिनिधियो को प्रस्तुतिकरण किया जा सकता है।[10] विधिक प्रतिनिधि ऐसी स्वीकृति द्वारा व्यक्तिगत रुप से उत्तरदायी होगा जब तक किउसके द्वारा इस प्रकार प्राप्त चल सम्पत्ति के हद तक उसका उत्तरदायित्व अभिव्यक्त रुप से सीमित न किया गया हो।[11]
4. अगर आदेशिति दिवालिया हो जाता है, प्रस्तुतिकरण उसके समनुदेशिति(assignee) को किया जा सकता है।[12]

अगर एक एक विनिमय पत्र में 'आवश्यकता की दशा में अदाकर्ता'(drawee in case of need) को भी उल्लेखित किया गया है, आदेशिति द्वारा विनिमय पत्र का अनादरण होने पर उसी पत्र को 'आवश्यकता की दशा में अदाकर्ता' को प्रस्तुत करना होगा। जहॉ एक विनिमय पत्र में आवश्यकता की दशा में अदाकर्ता का नाम दिया गया है या उसमें कोई पृष्ठांकन है, पत्र तब तक अनादरित नही होगा जब तक ऐसे अदाकर्ता द्वारा उसका अनादरण नही हो।[13]

13.3.1.2 प्रस्तुतिकरण किसके द्वारा

एक विनिमय पत्र धारक को प्रस्तुतिकरण करना होता है। एक विनिमय पत्र, स्वीकृति से पूर्व भी परक्रामित किया जा सकता है। धारक जो विवक्षित रुप से पत्र लेता है उसका उपयुक्त तरीके से प्रस्तुतिकरण जैसा कि धारा 61 द्वारा आवश्यक है, द्वारा स्वीकृति उपार्जित करने का उत्तरदायित्व लेता है। अगर प्रस्तुती करने वाला व्यक्ति एक वैध धारक नही पाया जाता है, आदेशिति की स्वीकृति उस व्यक्ति के लाभ को आश्वस्त करेगी जो पत्र का वास्तविक अधिकारी है। स्वीकृति हेतु पत्र प्रस्तुत करने से धारक जामिन (guarantee) नही होता कि पत्र या दस्तावेज जो संलग्न हैं वे वास्तविक/सच्चे हैं।[14]

13.3.1.3 प्रस्तुतिकरण का समय–स्थान

जब प्रस्तुतिकरण का समय अथवा स्थान विनिमय पत्र में निश्चित है, उसे तद्नुसार ही स्वीकृति हेतु प्रस्तुत करना अनिवार्य है। जब पत्र में कोई समय एवं स्थान प्रस्तुतिकरणहेतु उल्लेखित नही है इसके आहरण के उपयुक्त समयके पश्चात प्रस्तुत करना अनिवार्य है, और एक व्यवसायिक दिवस पर व्यवसाय के घण्टों में। प्रस्तुतिकरण या तो आदेशिति के व्यवसाय के स्थान पर या उसके गृह पर किया

जा सकता है। अगर आदेशिति के व्यवसाय का कोई ज्ञात स्थान नही है या नियत गृह नही है एंव लिखत में स्वीकृति हेतु कोई कोई स्थान निश्चित नही है, इस प्रकार प्रस्तुतिकरण उस व्यक्ति को जहॉ पर भी वह मिले किया जा सकता है। प्रस्तुतिकरण निश्चित ही किया जाता है। अगर आदेशिति, उचित खोज के पश्चात मिल सकता है। अगर आदेशिति उचित खोज के पश्चात नही मिल सकता, पत्र आनादरित है।[15] जहॉ अनुबंध या व्यापारिक प्रथाएं अनुमति देती है, प्रस्तुतिकरण डाकघर के माध्यम से रजिस्टर्ड पत्र द्वारा पर्याप्त है।[16] यहॉ ध्यान देने योग्य है कि जहॉ प्रस्तुतिकरण हेतु कोई समय निश्चित नही किया गया है, पत्र निष्पादन के पश्चात उचित समय के अन्दर अवश्य प्रस्तुत करना अनिवार्य है। अर्थात पत्र का प्रस्तुतिकरण बिना यथोचित देरी के करना है। स्वीकरण प्रस्तुती हेतु उचित समय के निर्धारण, लिखत की प्रकृति एवं समान लिखत के साथ व्यवहार का सामान्य अनुक्रम के संबध में होगा एवं इस प्रकार समय की गणना में सार्वजनिक छुट्टियों का अपवर्जन होगा।[17] प्रस्तुतीकरण में देरी क्षम्य है, अगर देरी, धारक के नियन्त्रण से परे परिस्थितियों के कारण है एवं उसकी गलती कदाचार या उपेक्षा के कारण नही है जब देरी का कारण सामप्त हो जाए प्रस्तुतीकरण उचित समय के अन्दर करना है।[18]

13.3.1.4 धारक के कर्तव्य एवं प्रस्तुतीकरण

धारक आदेशिति को यह विचार करने के लिए 48 घण्टे (सार्वजनिक छुटिटयों को छोडकर) दे सकता है कि वह पत्र स्वीकृत करेंगा या नही।[19] इसका अर्थ है कि अगर आदेशिति विचार– विमर्श हेतु समय चाहता है, धारक उसे अधिकतम 48 घण्टो की अनुमति देगा। 48 घण्टो की अवधि की समाप्ति पर धारक को पत्र की वापसी मॉग करनी चाहिए चाहे स्वीकृत हो या नही। अगर आदेशिति स्वीकृत पत्र को 48 घण्टों के अन्दर वापस नहीं करता धारक के मान लेना चाहिए कि पत्र अनादरित हो गया। पत्र का धारक आदेशिति को सार्वजनिक छुटिटयों को छोडकर 48 घण्टो से अधिक यह विचार विमर्श हेतु प्रदान करता है कि क्या वह उसे (पत्र) स्वीकृत करेगा , सभी पूर्व पक्ष जिनका इस प्रकार अनुमति में अनुमोदन नही लिया गया, वे तत्पश्चात उस धारक के प्रति उत्तरदायित्व से उन्मुक्त हो जाते हैं।[20] धारक का दूसरा कर्तव्य विनिमय पत्र की पूर्ण बिनाशर्त एवं स्पष्ट स्वीकृति प्राप्त करना है। अगर आदेशिति एक शर्त सहित स्वीकृति देता है धारक को मानना चाहिए कि पत्र अनादरित हो गया । अगर धारक शर्त सहित स्वीकृति में मौन सम्मति रखता है सभी पूर्व पक्ष जिनकी इस प्रकार स्वीकृति में अनुमोदन नही प्राप्त किया गया है धारक के निमित्त उन्मुक्त हो जाते है।[21]
प्रस्तुतीकरण पर धारक के कर्तव्य निम्नलिखित हैं–

1. इस उ्देश्य हेतु पत्र में निश्चित समय के अन्तर्गत स्वीकृति हेतु विनिमय पत्र प्रस्तुत करना एवं अगर समय निश्चित नही है इसके आरहण के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत।[22]
2. उस स्थान पर पत्र प्रस्तुत करना अगर कोई पत्र में उल्लिखित है एवं अगर कोई स्थान उल्लिखित नहीं है आदेशिति के व्यवसाय के सामान्य स्थान पर या उसके गृह पर।
3. आदेशिति को 48 घण्टों की अनुमति देना एवं उससे अधिक नहीं यह विचार करने के लिए कि वह पत्र स्वीकृत करेगा या नहीं।[23]
4. पत्र की बिनाशर्त स्वीकृति प्राप्त करना।[24]

13.3.1.5 अप्रस्तुतीकरण का प्रभाव

जैसे कि ऊपर वर्णन किया गया है धारक का यह कर्तव्य है किवह स्वीकृति हेतु विनिमय पत्र, इस उद्देश्य हेतु पत्र में निश्चित समय के अन्तर्गत प्रस्तुत करे एवं अगर काई समय निश्चित नहीं है तो इसके निष्पादन के पश्चात उचित समय के अन्दर प्रस्तुत करे। इस प्रकार के प्रस्तुतीकरण मे काई व्यतिक्रम होने पर कोई पक्ष इस प्रकार व्यतिक्रम करने वाले व्यक्ति के प्रति उत्तरदायी नहीं होगा।[25] इसका अर्थ है कि न केवल आदेशिति को उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता क्योंकि उसने स्वीकृति नहीं दी है, अन्य पक्ष उसे अर्थात आदेशक एवं परांकनकर्ता, अगर कोई है उनके भी उत्तरदायित्व का अन्त हो जाता है या दूसरे शब्दों में,इस प्रकार के धारक के प्रति अपने उत्तरदायित्वों से उन्मुक्त हो जाते हैं, जिसने प्रस्तुती के कर्तव्याधीन होते हुए पत्र के प्रस्तुतीकरण मे व्यतिक्रम किया ।

13.3.1.6 कब प्रस्तुतीकरण क्षम्य है

धारा 91 के अनुसार जहॉ प्रस्तुतीकरण क्षम्य है पत्र को अस्वीकृति हेतु अनादरित मानना होता है । इस धारा के पैराग्राफ 2 एव 3 निहित दो दृष्टान्तों का छोड़कर, वहॉ उन मामलों को रेखांकित करने वाला कोई प्रावधान नहीं है जहॉ प्रस्तुतीकरण क्षम्य है। विनिमय पत्र अधिनियम की धारा 39 (4) एवं 4 (2) उन दृष्टातों को रेखांकित करती है,जहॉ प्रस्तुतीकरण क्षम्य है। अतः स्वीकरण प्रस्तुति क्षम्य है जब आदेशिति एक कल्पित /फर्जी व्यक्ति है या अनुबन्ध के लिए अक्षम है या अगर वह उचित खोज के पश्चात नही पाया जा सका है। पुनः अगर प्रस्तुतीकरण अनियमितता से किया है, इस प्रकार की अनयिमितता क्षम्य है जब स्वीकृति किन्ही अन्य आधारो पर इन्कार की गई है। लेकिन तथ्य यह है कि धारक के पास

विश्वास करने का कारण है कि प्रस्तुतीकरण पर पत्र अनादरित होगा, प्रस्तुतीकरण का क्षम्य नही करता ।[26]

13.3.2 दर्शन हेतु वचन पत्र का प्रस्तुतीकरण

जब एक बिल या वचन पत्र दर्शन के पश्चात देय है इसे धारक द्वाराप्रस्तुत करना चाहिए आदेशिति या निष्पादक की स्वीकृति हेतु निश्चित समय के अन्तर्गत या अगर समय निश्चित नही है, इसके जारी होने के उचित समय के अन्तर्गत। उचित समय एक तथ्य का प्रश्न है जो संचार मध्यमों की उपलब्धता एवं विशेष व्यापार की प्रथाओं पर निर्भर करता है । धारक आदेशिति एव परांकनकर्ताओं के हितों को भी विचार मे रखना चाहिए । इसके अलावा प्रस्तुतीकरण व्यापारिक घण्टों में एक व्यापारिक दिवस पर करना चाहिए। यह, हालांकि धारक के लिए सलाह है किवह निष्पादक द्वारा लिखत पर सभी जरूरी बातों को लिखित में ले ले। अगर धारक अपने कर्तव्य में असफल होता है, निष्पादक एवं सभी उससे पूर्व परांकनकर्ता उसके प्रति अपने दायित्व से उन्मुक्त हो जाएंगें। अतः, प्रिवी काउंसिल के समक्ष एक वाद में[27], कलकत्ता के एक पक्ष ने अवलोकन के पश्चात 60 दिनों में देय एक विनिमय पत्र हॉगकॉग के एक पक्ष को दिया। धारक ने इसे 5 माह तक रखा एवं तत्पश्चात इसे स्वीकृति हेतु प्रस्तुत किया,पत्र अपनी कीमत खो चुका था। इसे अयुक्तियुक्त देरी निर्धारित करते हुए पक्षों को उन्मुक्त कर दिया गया।

13.3.3 भुगतान हेतु प्रस्तुतिकरण

सभी वचन पत्र विनिमय पत्र एवं चैकों की समाप्ति पर भुगतान हेतु प्रस्तुति आवश्यक है। सामान्य पूर्वानुमान है कि भुगतान ऋणी के स्थान पर किया जाता है। वचन पत्र का निष्पादक या विनिमय पत्र का स्वीकर्ता को मुख्य ऋणी होने के कारण भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण के बिना भी उन पर उत्तरदायित्व डाला जा सकता है। परन्तु निष्पादक एवं स्वीकर्ता के विरूद्ध कोई वाद लागत सहित तभी सफल होगा अगर प्रस्तुतीकरण किया गया था एव भुगतान से मना हो जाए । लिखत के अन्य पक्षों से वसूली हेतु भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण आवश्यक है, उन मामलों को छोडकर जो धारा 76 में उल्लिखित है, जब प्रस्तुतीकरण क्षम्य है। अगर इस प्रकार प्रस्तुतीकरण में कोई व्यतिक्रम होता है निष्पादक, आदेशिति एवं स्वीकर्ता के अलावा अन्य पक्ष उस धारक के प्रति उत्तरादायी नहीं हैं ।[28]

13.3.3.1 प्रस्तुतीकरण किसके समक्ष

वचन पत्र विनिमय पत्र एवं चैक का भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण निष्पादक, स्वीकर्ता या आदेशिति, उनको क्रमशः या आदेशिति, निष्पादक या स्वीकर्ता जैसा कि मामला हो के विधिवत प्राधिकृत प्रतिनिधियों को करना आवश्यक है या जहॉ आदेशिति, निष्पादक या स्वीकृति की मृत्यु हो गई हो उनके वैध प्रतिनिधि को या जहॉ वे दिवालिया घोषित हो चुके हों उनके समुनुदेशिति को प्रस्तुतीकरण किया जाना चाहिए ।[29]

13.3.3.2 किसके द्वारा प्रस्तुतीकरण

प्रस्तुतीकरण वचन पत्र, विनियम पत्र या चैक के धारक द्वारा उसके निमित्त किया जाना चाहिए। वह प्रस्तुतीकरण हेतु बाध्य है जब तक कि मामला धारा 76 के अन्तर्गत न आता हो जहॉ लिखत को अनादरित मान लिया जा सकता है प्रस्तुतीकरण बिना भी ।

13.3.3.3 प्रस्तुतीकरण हेतु समय

जहॉ एक लिखत एक नियत अवधि के पश्चात देय है उसे उसकी समाप्ति पर प्रस्तुत करना चाहिए।[30] एक वचन पत्र या विनिमय पत्र की परिपक्वता उस तिथि को होती है जिस पर वह शोध्य होता है। प्रत्येक वचन पत्र या विनियम पत्र जिनका मॉगे जाने पर, दर्शन पर या उपस्थापन पर देय होना अभिव्यक्त नहीं है, की परिपक्वता (maturity) उस तिथि के तीसरे दिन होती है जिसको उसका देय होना अभिव्यक्त है।[31] इस अर्थ है कि वचन पत्र या विनियम पत्र के संदर्भ में जो 'मॉगे जाने पर' के अलावा देय है, को तीन दिवसों की अनुग्रह अवधि अनुमत है। उदाहरण के तौर पर अगर एक वचन पत्र या एक विनिमय पत्र अभिव्यक्त रूप से 1 जून को देय है, इसकी परिपक्वता की तिथि 4 जून है । किश्तों में देय एक वचन पत्र की भुगतान हेतु प्रस्तुति भुगतान की प्रत्येक किश्त के लिए नियत तिथि के तीन दिन पश्चात होनी चाहिए एवं इस प्रकार प्रस्तुतीकरण पर अदेय होने कर वही प्रभाव है जो पत्र की समाप्ति पर अदेय (non-payble)का है।[32] अतः जब भुगतान किश्तों द्वारा होना है प्रत्येक किश्त हेतु तीन दिन की अनुग्रह अवधि अनुमत है। एक विशेष किश्त के संबंध में अप्रस्तुतीकरण, व्यतिक्रम करने वाले धारक के प्रति उत्तरदायित्व से परांकनकर्ता को उन्मुक्त कर देता है, केवल विशेष किश्त के संबध में उत्तरादित्व के संदर्भ में; जब तक कि उसके विपरीत कोई अनुबंध न हो । अवलोकन पर एवं मॉगें जाने पर देय एक वचन पत्र या विनिमय पत्र के लिए परिपक्वता का प्रश्न नही उठता है एवं एक चैक के लिए भी जो सदा मॉगें जाने पर देय है क्योकि ये लिखत/दस्तावेज उनके जारी होने की तिथि से भुगतान हेतु

देय हो जाते है। मॉगे जाने पर देय एक परक्राम्य लिखत, धारक द्वारा इसकी प्राप्ति के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत भुगतान हेतु प्रस्तुत कर देनी चाहिए।[33] इस संदर्भ में उचित समय का निर्धारण लिखत की प्रकृति एवं वैसी ही लिखतों के बारे व्यवहार की प्रायिक चर्चा को ध्यान में रखा जाएगा एवं इस प्रकार समय की गणना में सार्वजनिकछुटिटयों का अपवर्जन होगा ।[34]

13.3.3.4 लेंखीपाल को भारित करने के लिएचैक का उपस्थापन

धारा 72 निर्धरित करती है कि लेखीवाल को भारित के अनुक्रम में चैक को उस बैंक में जिस पर वह लिखा गया है, उपस्थापित करना चाहिए, इससे पहले कि बैंकर एव लेखीवाल के मध्य संबंध ऐसे परिवर्तित हो जाए कि जिससे लेखीवाल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हो।यह प्रावधान धारा 84 के अध्यधीन है, जो कहता है अगर भुगतान के लिए चैंक के उपस्थापन में धारक देरी करता है एवं देरी के दौरान बैंकर एंव लेखीवाल के संबंधो में बदलाव आता है (उदाहरण के लिए जब बैंक असफल हो जाता है) जिसके परिणामस्वरूप लेखीवाल को तदद्वारा हानि होतीी है वहॉ ऐसी हानि की मात्रा तक लेखीवाल उन्मोचित हो जाता है । अर्थात उस मात्रा तक जिस तक ऐसा लेखीवाल या व्यक्ति उस रकम से अधिक के लिए बैंकर कर लेनदार है, जिस रकम का लेनदार वह होता यदि चैक संदाय कर दिया गया होता, लेकिन तत्पश्चात चुंकि बैंक असफल हो गया, धारक इसके लिए लेखीवाल को दोष नही दे सकता एवं लेखीवाल पर वाद भी नही ला सकता। धारक स्वयं को उस राशि हेतु आदेशिति बैक के लेनदार की श्रेणी मे रखता है ।[35]

13.3.3.5 परांकनकर्ता को भारित करने हेतु चैक का उपस्थापन

धारा 73 निर्धारित करती है कि लेखीवाल के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को भारित के क्रम में,अर्थात परांकनकर्ता को भारित करने हेतु ऐसे व्यक्ति द्वारा उसके परिदान के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत चैक की प्रस्तुति करनी चाहिए। लेखीवाल के अलावा अन्य व्यक्ति निश्चित ही परांकनकर्ता हैं। एक विशेष परांकनकर्ता के प्रभार के लिए यह आवश्यक है कि भुगतान हेतु चैक का प्रस्तुतीकरण उस परांकनकार्त द्वारा परिदान के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत होना चाहिए। उचित समय की गणना एक विशेष पराकनकर्ता द्वारा परिदान की तिथि से एवं धारक द्वारा प्राप्ति की तिथि से की जाती है।अतः यहॉ एक सम्भावना है कि कुछ परांकनकर्ता द्वारा सुपुर्दगी के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत प्रस्तुतीकरण हो सके एवं कुछ बाद के परांकनकर्ता के संबध में देरी हो जाए,क्योकि सभी पराकनकर्ता सदा एक ही तिथि को सुपुर्दगी नही करते। उदाहरण के लिए 'अ' जो चैक का देयता है, परांकनकर्ता

है एवं इसे'ब' को सुपुर्द करता है।'ब' चैक अपने पास रखता है अनुचित लम्बे समय के लिए एवं फिर परांकन करता है एवं'स' को सुपुर्द करता है।'स' 'ब' से चैक प्राप्त करने के उचित समयान्तर्गत इसे प्रस्तुत करता है परन्तु उसका चैक अनादरित हो जाता है। चुंकि 'ब' द्वारा सुपुर्दगी के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत प्रस्तुतीकरण हो गया था,'स' 'ब' के विरूद्ध भुगतान प्रवर्तित (enforce) करा सकता है परन्तु 'अ' द्वारा चैक की सुपुर्दगी के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत प्रस्तुतीकरण नही हुआ,'स''अ' पर प्रभार नही कर सकता। प्रस्तुतीकरण को उचित तरीके में करने के क्रम में इसे व्यापार के सामान्य घण्टों में प्रस्तुत करना अनिवार्य है एवं अगर एक बैंकर के समक्ष करना है तो बैंकिग के घण्टों के अन्तर्गत।[36] प्रस्तुतीकरण में देरी क्षम्य है अगर वह धारक के नियन्त्रण से बाहर परिस्थितियों के कारण है एवं उसके व्यतिक्रम, गलती, या उपेक्षा हेतु वह दोषी नही है। जब देरी का कारण समाप्त हो जाता है उचित समय के अन्तर्गत प्रस्तुतीकरण कर देना अनिवार्य है ।[37]

13.3.3.6 उपस्थापन का स्थान

जहॉ एक वचन पत्र, बिल या चैक देय, रचित, लिखित या प्रतिग्रहीत एक विशेष स्थान पर है, कहीं और नहीं इसकी उसी स्थान पर प्रस्तुती अनिवार्य है अन्यथा कोई पक्ष धारक के लिए उत्रदायी नही होगा ।[38] इसी प्रकार एक बिल या पत्र एक विशेष स्थान पर देय बनाया गया है उसे उसी स्थान पर प्रस्तुत करना अनिवार्य है अन्यथा आदेशक या निष्पादक धारक के प्रति उतरदायित्व से उन्मुक्त हो जाएंगे।[39] अन्य पक्ष सदा उत्तरदायी होंगे । शब्द–'विशेष स्थान' का अर्थ है एक कथन जो स्थान का निश्चित पता देता है जहॉ लिखत की प्रस्तुति अपेक्षित है। उदाहरण के तौर पर मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष एक वाद[40] में वचन पत्र को मद्रास में देय बनाया गया। प्रश्न के सभी पहलूओं पर सावधानी से विचार विमर्श के पश्चात न्यायालय इस नतीजें पर पहॅुचा कि बिल में उल्लिखित भुगतान का स्थान विशेष निश्चित एंव निर्दिष्ट होना चाहिए एक बड़े शहर मद्रास के मात्र नाम के उल्लेख से लिखत एक विशिष्ट स्थान पर देय नहीं बन जाता है एवं इसीलिए एक विशिष्ट स्थान पर प्रस्तुतीकरण का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। यह ठीक उसी प्रकार से होगा अगर संयोगवश धारक निष्पादक का पता जान लेता है, लेकिन पश्चावर्ती धारक या परांकनकर्ता को निष्पादक के पते से युक्त नही किया जा सकता जहॉ पर प्रस्तुतीकरण होना है एंव वर्तमान का उत्तरदायित्व, इसीलिए उपस्थित नही होगा । जहॉ वचन पत्र या बिल मे प्रस्तुतीकरण के लिए कोई विशिष्ट स्थान नहीं है, प्रस्तुतीकरण व्यापार के स्थान पर, अगर कोई है, होना अनिवार्य है या निष्पादक आदेशक या स्वीकर्ता द्वारा प्रयोग किए गए गृह पर, जैसा कि मामला हो, प्रस्तुतीकरण होना अनिवार्य है।[41] अगर निष्पादक, आदेशक या स्वीकर्ता का व्यापार

का कोई जाना माना स्थान या नियत गृह नहीं है एवं लिखत भी किसी स्थान को नियत नही करता, प्रस्तुतीकरण हेतु, स्वीकृति हेतु या भुगतान के लिए तब प्रस्तुतीकरण उस व्यक्ति को जहॉ वह मिल सके किया जा सकता है।[42]

13.3.3.7 अप्रस्तुतीकरण का प्रभाव

जैसा कि उपर वर्णित है मॉगे जाने पर देय एक **पराक्रम्य लिखत** को धारक द्वारा इसकी प्राप्ति के पश्चात उचित समय के अन्तर्गत भुगतान के लिए प्रस्तुत करना अनिवार्य है एवं अन्य लिखतों को उनकी परिपक्वता के उचित समय के अन्दर प्रस्तुत होना है। एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चैक के धारक को उसके भुगतान के लिए निष्पादक, स्वीकर्ता या आदेशक को क्रमशः एक उचित स्थान पर एवं उचित समय पर प्रस्तुत करना अनिवार्य है। इस प्रकार प्रस्तुतीकरण में व्यतिक्रम पर उसके अन्य पक्ष उस धारक के लिए उतरदायी नहीं होते है।[43] भुगतान के लिए अप्रस्तुतीकरण निष्पादक या उसके आदेशक को उन्मुक्त नही करता। यह केवल अन्य पक्षों को उन्मुक्त करता है अर्थात उसके आदेशक एवं उसके परांकनकर्ता को। एक विनिमय पत्र या चैक के मामले में उसके आदेशक एवं परांकनकर्ता अगर कोई हैं, एवं वचन पत्र के मामले में , उसके परांकनकर्ता उन्मुक्त होने वाले व्यक्ति है। धारा 61 एवं 62 के अन्तर्गत अप्रस्तुतीकरण पर परक्राम्य लिखत का कोई पक्ष उसके लिए उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता जबकि धारा 64 के अन्तर्गत भुगतान हेंतु अप्रस्तुतीकरण, उसका निष्पादक, स्वीकर्ता एवं उसके आदेशक को तब भी उतरदायी बनाया जा सकता है एवं इनके अलावा अन्य पक्ष उन्मुक्त हो जाते है। अतः केनरा बैक बनाम संजीव एन्टरप्राइजेज वाद[44] में यह निर्धारित किया गया कि अगर एक हुण्डी भुगतान हेतु प्रस्तुत नहीं गई है इसका स्वीकर्ता उतरदायित्व से बाहर नहीं है लेकिन केवल उतनी ही राशि के लिए जिसके लिए हुण्डी के अन्य पक्ष उत्तरदायित्व से मुक्त है ।

13.3.3.8 कब उपस्थापन/प्रस्तुतीकरण **अनावश्यक है**

धारा 76 निम्नलिखित परिस्थितियां निर्धारित करता है जब भुगतान हेतु कोई उपस्थापन या प्रस्तुतीकरण आवश्यक नही है एवं लिखत उस तिथि पर अनादृत हो जाती है, जो उपस्थापन के लिये नियत है अर्थात,

(1) अगर लिखत का आदेशक (रचियता), अपरवाल या प्रतिगहीता लिखत का उपस्थापन साशय निवारित करता है;

(2) अगर लिखत उसके व्यापार के स्थान पर देय है वह उस स्थान को एक व्यापारिक दिवस पर सामान्य व्यापारिक घण्टों दौरान बन्द रखता है;

(3) अगर लिखित किसी अन्य विशिष्ट स्थान पर देय है, न तो वह और न ही भुगतान को प्राधिकृत कोई भी व्यक्ति उस स्थान पर सामान्य व्यापार के प्रायिक समय के दौरान हाजिर रहता है । अतः जहॉ एक लिखत एलाएंस बैंक ऑफ इंडिया पर देय है एवं नियत तिथि पर न तो प्रतिग्रहीता न ही उसके निमित्त कोई व्यक्ति वहॉ उपस्थित होता है, पुनः कोई प्रस्तुतीकरण उसके प्रभार को आवश्यक नही है;[45]
(4) अगर लिखत किसी विशिष्ट स्थान पर देय नही है, उत्तरदायी पक्ष सम्यक खोज के पश्चात नही पाया जा सका है;
(5) जहॉ तक कि किसी ऐसे पक्षकार का सम्बन्ध है , जिसे उससे भारित किया जाना इप्सित है यदि वह यह अनुस्थापन की दशा में भी संदाय करने के लिए वचनवद्ध हुआ है;
(6) जहॉ तक कि किसी पक्षकार कर सम्बन्ध है, यदि वह यह ज्ञान रखते हुए कि लिखत उपस्थापित नही की गई है। परिपक्वता के पश्चात –
(अ) लिखत पर शोध्य रकम मद्धे भागतः संदाय कर देता है ;
(ब)या उस पर शोध्य रकम को पूर्णतः या भागतः संदाय करने का वचन दे देता है ;
(स) या संदाय के लिए उपस्थापन मे किसी व्यतिक्रम का फायदा उठाने का अपना अधिकार अन्यथाअधित्यक्त कर देता है।
(6) जहॉ तक लेखीवाल का प्रश्न है यदि लेखीवाल को ऐसे उपस्थापन के अभाव से नुकसान नही पहुच सकता।

13.3.4 अस्वीकृति द्वारा अनादरण

स्वीकृति केवल विनमिय पत्र के मामले में आवश्यक है एवं इसीलिए, यह केवल एक विनिमय पत्र के मामले में है कि वहॉ स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरणहै। धारा 91 निर्धारित करती है कि अस्वीकृति द्वारा , एक विनिमय पत्र का अनादरण किसी भी या निम्नलिखत तरीकों से हो सकता है–
(1) अगर आदेशिति स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण के समय से 48 घण्टों के अन्दर बिल स्वीकृत नही करता है, या स्वीकृति को मना कर देता है, बिल उसी क्षण अनादरित हो जाता है। अगर वहॉ दो या अधिक आदेशिति हैं जो भागीदार नही है एवं अगर उनमें से एक स्वीकृति को इन्कार करता है वह बिल अनादरित हो जायेगा , जब तक ये अनेक आदेशिति भागीदार नहीं हैं।[47] सामान्यतः जब वहॉ अनेक आदेशिति हैं, सभी की उसके प्रति स्वीकृति अनिवार्य है, लेकिन जब आदेशिति भागीदार है एक द्वारा स्वीकृति का अर्थ सबके द्वारा स्वीकृति है।
(2) जहॉ स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण क्षम्य है एवं बिल स्वीकृत नही है; यह अस्वीकृति द्वारा अनादरण कहा जाता है। परिस्थितियॉ जिसके अन्तर्गत स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण क्षम्य है–

(क) जहॉ आदेशिति उचित खोज के पश्चात भी नही पाया जा सका है।
(ख) जहॉ आदेशिति एक कल्पित व्यक्ति है।
(ग) जहॉ आदेशितिदिवालिया हो गया है, या मृत है, धारा 75 के अन्तर्गत अभिग्राही या विधिक प्रतिनिधि के लिए स्वीकृति हेतुप्रस्तुतीकरण वैकल्पिक बनाया गया है, कदाचित इस आधार पर कि स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण जितना सम्भव हो, निजी रहना अनिवार्य है।
(घ) जहॉ हालांकि स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण अनियमित है स्वीकृति किन्ही अन्य आधार पर अस्वीकार की गई है।
(3) जब आदेशिति एक अपूर्ण/ शर्त सहित स्वीकृति देता है, धारक विनिमय पत्र को अनादरित होने की भांति व्यवहार कर सकता है। यह अपेक्षित है कि आदेशिति एक पूर्ण/शर्तरहित स्वीकृति देगा । अगर आदेशिति अपूर्ण/ शर्तसहित स्वीकृति देता है एवं धारक उससे सहमत होता है, वे सभी पक्ष जिन्होने इस प्रकारस्वीकृति को सहमति नही दी,धारक के प्रति उत्तरदायित्व से उन्मुक्त हो जाते है।[48] यह, इसलिये धारक के हित में है कि जब आदेशिति के द्वारा एक अपूर्ण / शर्त सहित स्वीकृति होती है उसे बिल को अनादरित समझना चाहिए। अपूर्ण/शर्तसहित स्वीकृति के उदाहरण है– एक भिन्न राशि के भुगतान की स्वीकृति या शर्त की पूर्ति के विषय पर भुगतान या आदेशक द्वारा विनिमय पत्र में नियत स्थान के बदले एक भिन्न स्थान या भुगतान । इस धारा के प्रावधान 'मॉगे जाने' पर या 'अवलोकन पर' देय विनिमय पत्र पर लागू होते है।[49] नानक चन्द बनाम लाल चन्द[50] वाद में पंजाब एवं हरियाणा उच्चन्यायालय ने निर्धारित किया कि 'मॉगे जाने पर' या 'अवलोकन पर' देय बिल की विधि द्वारा केवल स्वीकृति हेतु प्रस्तुती आवश्यक नही है। यह सही नही है। जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने जगजीवन बनाम रणछोड़दास[51] के वाद मे ध्यान आकर्षित किया, स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण सदा अनिवार्य है एवं प्रत्येक मामले में भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण से पहले आता है एवं 'मागे जाने पर' या 'अवलोकन पर' देय विनिमय पत्र के मामले में दोनो चरण समक्रमिक है एवं वहॉ केवल एक प्रस्तुतीकरण है जो दोनो, स्वीकृति हेतु एवं भुगतान हेतु है। अगर बिल का भुगतान नही किया गया, यह अस्वीकृती द्वारा अनादरित है।

13.4 सारांश

एक परक्राम्य लिखत अस्वीकृति या गैर भुगतान के द्वारा अनादरित हो सकती है क्योकि स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण केवल विनिमय पत्रों के मामले में आवश्यक है। केवल विनिमय पत्र ही है जो अस्वीकृति के कारण अनादरित हो सकते है। हालांकि किसी भी प्रकार का परक्राम्य लिखित जैसे– वचन पत्र, विनिमय पत्र या

चैक अस्वीकृति के द्वारा अनादरित हो सकता है। परक्राम्य लिखित अधिनियम तीन प्रकार के प्रस्तुतीकरण निर्धारित करता है–

1. स्वीकृति हेतु विनिमय पत्र का प्रस्तुतीकरण।
2. अवलोकन हेतु वचन पत्र प्रस्तुतीकरण।
3. एक वचन पत्र, विनिमय पत्र या चैक का भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण।

एक विनिमय पत्र की भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण से पूर्व स्वीकरण हेतु प्रस्तुति करनी होती है। परन्तु प्रत्येक विनिमय पत्र के स्वीकरण प्रस्तुति की आवश्यकता नही होती। स्वीकरण प्रस्तुति केवल वही आवश्यक है जहॉ :

1. जब पत्र एक निर्धारित समय पर स्वीकृति के पश्चात या अवलोकन के पश्चात देय है। ''अवलोकन के पश्चात'' अभिव्यक्ति का अर्थ है कि बिल आदेशिति (drawee) को उसके ज्ञान हेतु प्रस्तुत या अवलोकन करने के पश्चात एक निर्धारित समय पर देय है।
2. बिल में अभिव्यक्त शर्त हो कि इसे भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण से पूर्व इसकी स्वीकरण प्रस्तुति होगी।
3. बिल को आदेशिति के गृह स्थान या व्यापारिक स्थान से अलग एक स्थान पर देय बनाया गया है। जब एक विनिमय पत्र अभिव्यक्त रुप से ''अवलोकन के पश्चात'' देय है, इसका अर्थ है इसका भुगतान केवल ''स्वीकृति के पश्चात" ही देय है। इस प्रकार के विनिमय पत्र की समाप्ति नियत करने हेतु, इसकी स्वीकृति, जिसमें इसकी स्वीकरण प्रस्तुति शामिल है, नितान्त आवश्यक है। अतः A एक विनिमय पत्र 1 जनवरी 2013 को आदेशित (draw) किया गया भुगतान ''अवलोकन के 2 माह पश्चात'' उसे आदेश देते हुए, तब इसका भुगतान, उस तिथि जब इसे B द्वारा स्वीकृत किया जायेगा, से दो माह की अवधि की समाप्ति के पश्चात ही देय होगा। अगर B इस पत्र को स्वीकृत नही करता है, इसका भुगतान कभी देय नही होगा। अतः अवलोकन के पश्चात देय एक विनिमय पत्र को उसकी स्वीकृति हेतु आदेशिति (drawee) को प्रस्तुत करना अनिवार्य है।

जब प्रस्तुतिकरण का समय अथवा स्थान विनिमय पत्र में निश्चित है, उसे तद्नुसार ही स्वीकृति हेतु प्रस्तुत करना अनिवार्य है। जब पत्र में कोई समय एवं स्थान प्रस्तुतिकरण हेतु उल्लेखित नही है इसके आहरण के उपयुक्त समयके पश्चात प्रस्तुत करना अनिवार्य है, और एक व्यवसायिक दिवस पर व्यवसाय के घण्टों में। प्रस्तुतिकरण या तो आदेशिति के व्यवसाय के स्थान पर या उसके गृह पर किया जा सकता है। अगर आदेशिति के व्यवसाय का कोई ज्ञात स्थान नही है या नियत गृह नही है एंव लिखत में स्वीकृति हेतु कोई कोई स्थान निश्चित नही है, इस

प्रकार प्रस्तुतिकरण उस व्यक्ति को जहॉ पर भी वह मिले किया जा सकता है। प्रस्तुतिकरण निश्चित ही किया जाता है। अगर आदेशिति, उचित खोज के पश्चात मिल सकता है। अगर आदेशिति उचित खोज के पश्चात नही मिल सकता, पत्र आनादरित है। जहॉ अनुबंध या व्यापारिक प्रथाएं अनुमति देती है, प्रस्तुतिकरण डाकघर के माध्यम से रजिस्टर्ड पत्र द्वारा पर्याप्त है।

स्वीकृति केवल विनमिय पत्र के मामले में आवश्यक है एवं इसीलिए, यह केवल एक विनिमय पत्र के मामले में है कि वहॉ स्वीकृति हेतु प्रस्तुतीकरण है। धारा 91 निर्धारित करती है कि अस्वीकृति द्वारा , एक विनिमय पत्र का अनादरण तीन तरीकों से हो सकता है।

निर्देश

1. धारा 61
2. धारा 62
3. धारा 64
4. देखें धारा 21
5. धारा 61
6. धारा 61
7. धारा 27
8. धारा 33 एवं 34
9. धारा 34
10. धारा 75
11. धारा 29
12. धारा 75
13. धारा 115
14. भाष्यम एवं आदिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम 16 वॉ संस्करण, 1997, पृष्ठ 440
15. धारा 61 एवं 91
16. धारा 61
17. धारा 105
18. धारा 75 –ए (1920 में संशोधन द्वारा स्थापित)
19. धारा 63
20. धारा 83
21. धारा 86
22. धारा 61 एवं 3
23. धारा 63
24. धारा 83 एवं 86

25. धारा 61
26. विनिमय पत्र अधिनियम (अंग्रेजी), 1882 की धारा 41 (3)
27. सिंह अवतार, प्रिंसिपल ऑफ मरकेन्टाइल लॉ, छठा संस्करण, 1996, पृष्ठ 727
28. धारा 64
29. धारा 64, 27 एवं 75
30. धारा 66
31. धारा 22
32. धारा 67
33. धारा 74
34. धारा 105
35. बांगिया, आर. के., **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, छठा संस्करण, पृष्ठ 83
36. धारा 65
37. धारा 75—ए
38. धारा 69
39. धारा 69
40. शिवराम बनाम जयराम, ए. आई. आर 1966 मद्रास 297
41. पिहिलपोल्ट बनाम ब्रायनी (1827) 3 सी एण्ड पी 244; 172 ईआर 405
42. धारा 71
43. धारा 64
44. ए आई आर 1988 दिल्ली 372
45. रामसिंह बनाम गुलाबराम, 1 एलआर, लॉ 262
46. महेश्वर दयाल बनाम अमर सिंह, ए आई आर 1983, पी एण्ड एच, 197
47. धारा 33 एवं 34
48. धारा 86
49. वीरप्पा चेट्री बनाम वीलडानेट एम्बुलम, 101 डब्ल्यू 39; 52 आईसी 370
50. ए आई आर 1958 पंजाब, 222; आई एल आर (1958), पंजाब 1178
51. ए आई आर 1954, एससी 554; देखें भाष्यम एवं आदिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 16 वॉ संस्करण, 1997, पृष्ठ 570

13.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

समनुदेशिति— वह जिसे कोई अधिकार या सम्पत्ति विधिक रूप से अंतरित की जाती है।

व्यतिक्रम— किसी कार्य में कोई चूक या भूल।

विवक्षित– जो अंतर्निहित है, जिसे बताने की आवश्यकता नहीं है।

13.5 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक/उपयोगीपाठ्य सामग्री

1. बॉगिया आर.के., दि नेगोशिएबिल इंस्ट्रूमेन्ट एक्ट, छठा संस्करण, 1997
2. सिंह अवतार, प्रिंसिपलस ऑफ मरकेटाइल लॉ, छठा संस्करण, 1996
3. अग्रवाल, सी.एल., लॉ आफ हुंण्डी एण्ड नेगोशिएबिल
4. पी. एन. वार्ष्णेय, बैंकिग लॉ एण्ड प्रेक्टिस
5. टेनन्स, बैकिग लॉ एण्ड प्रेक्टिस इन इण्डिया
6. भाष्यम एवं आदिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 16 वॉ संस्करण, 1997,

13.6 आत्ममूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. **पराक्रम्य लिखत** की 'स्वीकृति प्रस्तुतीकरण' का विस्तारपूर्वक वर्णन करो।
2. कब **पराक्रम्य लिखत** अनादरित कहे जाते हैं ?
3. किस उद्देश्य हेतु लिखत का स्वीकृति प्रस्तुतीकरण होता है ?
4. मानार्थ स्वीकृति पर चर्चा करें ।

एलएल.एम. प्रथम वर्ष
बैंकिंग विधि

खण्ड–4. पराक्रम्य लिखत (Negotiable Instruments)

इकाई –14. पक्षों का दायित्व एवं चैक का अनादरण (Liabilities of Parties and Dishonour of cheque)

इकाई की संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 विषय

14.3.1 रचयिता और स्वीकारकर्ता का दायित्व

14.3.1.1 रचयिता का दायित्व

14.3.1.2 स्वीकारकर्ता का दायित्व

14.3.1.3 बिल के आहरणकर्ता का दायित्व

14.3.1.4 आहर्ती का दायित्व

14.3.1.5 जहाँ धनराशि पर्याप्त न हो

14.3.1.6 जब ग्राहक दिवालिया हो गया हो

14.3.1.7 जहां ग्राहक पागल व्यक्ति हो गया हो

14.3.2 पृष्ठांकक का दायित्व

14.3.2.1 विभिन्न पक्षकारों के दायित्व की प्रकृति जो गारंटी के अनुबन्ध के तहत समान है

14.3.3 अनादरण

14.3.3.1 अस्वीकार्यता के कारण अनादरण

14.3.3.2 भुगतान न होने के कारण अनादरण

14.4 सारांश

14.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

14.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक पाठ्य सामग्री

14.7 निबन्धात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

वचन पत्र के निर्माता और बिल के स्वीकारकर्ता लिखत की परिपक्वता होने पर क्रमशः वचनपत्र पर स्पष्ट शब्दो के अनुसार या स्वीकृति के अनुसार, राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य हैं। ऐसे व्यक्ति बाध्य होते हैं लिखत के किसी भी पक्ष को भरपाई करने के लिये जो उनके द्वारा नुकसान या क्षति के कारण हुआ। मूल रूप में बने हुये लिखत की वैधता को इन्कार करने से वचनपत्र के निर्माता को रोक दिया जाता है और एक वाद में सम्यक् अनुक्रम धारक द्वारा भुगतानकर्ता की लिखत के पृष्ठांकन हेतु अक्षमता का प्रतिपादन नहीं किया जा सकता। स्वीकर्ता न ही भुगतानकर्ता की क्षमता को इन्कार कर सकता है और न ही लेखीवाल द्वारा बिल की रचना (draw) या पृष्ठांकन के अधिकार को इन्कार कर सकता है। हालांकि वह इस बात की वकालत कर सकता कि बिल वास्तविकता में उस व्यक्ति द्वारा रचित नहीं है जिस व्यक्ति द्वारा इस बात का दावा किया गया। स्वीकर्ता यह भी दिखा सकता है कि पृष्ठांकन जाली है, लेकिन अगर यह पता चले या विश्वास करने का कारण हो कि स्वीकृत बिल पृष्ठाकंक जाली है, तो वह दायित्व से बच नहीं सकता। पृष्ठाकंनकर्ता के सम्बन्ध में, उसका दायित्व विनिमय पत्र के रचयिता के समान है। वास्तव में वह एक नया रचयिता कहलाता है और उसे अनादरण का नोटिस प्राप्त होने पर, आहर्ती, निर्माता या स्वीकर्ता द्वारा अनादरण के कारण, प्रत्येक पश्चातवर्ती धारक को उन्हें पहुंची क्षति हेतु क्षतिपूर्ति करने के लिये बाध्य होता है।

14.2 उद्देश्य

इस पाठ का मुख्य उद्देश्य स्वीकर्ता, निर्माता, आहरणकर्ता और आहर्ती के दायित्वों को साविधिक प्रावधानों व प्रासांगिक वादों का सहायता से चर्चा करना है, जिसमें वे परिस्थितियां भी शामिल हैं जिनमें ग्राहक के चैक का अनादरण बैंकर की बाध्यता या ऐसा करना न्यायोचित है।

14.3.1 लेखक और प्रतिगृहीता का दायित्व

पराक्रम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 32 जो कि वचनपत्र के रचयिता और विनिमयपत्र के प्रतिगृहीता के दायित्व के बारे में बताती है, निम्नलिखित हैः–
तत्प्रतिकूल संविदा न हो तो वचनपत्र का रचयिता और विनिमय–पत्र के परिपक्व होने के पूर्व उसका प्रतिगृहीता क्रमशः वचनपत्र या प्रतिग्रहण के प्रकट शब्दों के अनुसार उसकी परिपक्वता पर उसकी रकम और विनिमय पत्र का प्रतिगृहीता उसकी परिपक्वता पर या परिपक्वता के पश्चात उसकी रकम धारक को मांग पर

संदत्त करने के लिये आबद्ध है। पूर्वोक्त जैसे संदाय में व्यतिक्रम होने पर ऐसा रचयिता या प्रतिग्रहीता वचनपत्र या विनिमय पत्र के किसी भी पक्षकार को किसी ऐसी हानि या नुकसान के लिये प्रतिकर देने के लिये आबद्ध है तो उसे उठाना पड़ा है और ऐसे व्यतिक्रम से हुआ है।

14.3.1.1 रचयिता का दायित्व

जब रचयिता उसी वचन पत्र पर हस्ताक्षर कर देता है तब उस पर प्रकट शब्दों के अनुसार बिना किसी शर्त के पत्र का भुगतान उसे करना होता है। वह परिपक्व होने से पहले भुगतान करने के लिये बाध्य नहीं है और तब भी अगर वह ऐसा करता है बिना उसके समक्ष उसके आत्मसमर्पण किये। वह देय होने से पहले बिना सूचना के कीमत के बदले सद्भावनापूर्ण किसी पश्चातवर्ती धारक को मूल्य चुकाने के लिये उत्तरदायी होगा।[1] जैसे ही यह मान लिया जाता है कि पत्र के रचयिता या बिल के प्रतिग्रहीता ने रचित या स्वीकार कर लिया हैं, तब उस पर यह जिम्मेदारी होती है कि वह अपने दायित्व से छुटकारा पाये, जब तक कि जिस व्यक्ति पर बिल या पत्र के लिये मुकदमा चल रहा है उसके विरूद्ध धोखाधड़ी व कोई प्रथम दृष्टया मामले का आरोप तय न हो, उसी व्यक्ति को दस्तावेज में लिखी पूरी राशि के लिये उत्तरदायित्व माना जायेगा जिसके बिल पर हस्ताक्षर होंगे।[2] जब एक व्यक्ति अपने सहभागी को पत्र देता है जो कि फर्म पर बाध्य न होकर, सहभागी पर हो तब सहभागी द्वारा उस व्यक्ति पर मुकदमा चलाया जा सकता है हालांकि पत्र जिस पर प्रश्न उठाया गया है साझेदारी लेन–देन के संदर्भ में हो एवं भागीदारी पर अंतिम निर्णय न लिया गया हो।[3] एक महत्वपूर्ण मामले में, प्रोनोट के रचयिता ने यह तर्क दिया कि उसने दस्तावेज अपने साले को ऋण दिलाने के लिये एक गारन्टर के रूप में निष्पादित किये थे और यह समझौता उसके व उसके साले के बीच में प्रभावी है। इस मामले कोर्ट ने कहा कि उस व्यक्ति पर राशि का भुगतान करने का कोई दायित्व नहीं बनता और अगर प्रोनोट के गारंटर या प्रतिभू के रूप में निष्पादित किया है तो वह पूर्ण रूप से विचार करने योग्य होगा और प्रतिवादी प्रोनोट के दायित्व को वह पूरा करने को बाध्य होगा।

14.3.1.2 स्वीकारकर्ता (प्रतिग्रहीता) का दायित्व

यदि विनिमय पत्र का रचयिता विनिमय पत्र को स्वीकार करता है, तो वह उस विनिमय पत्र के लिये उत्तरदायी हो जाता है। उसके द्वारा स्वीकृति का मतलब होता है कि विनिमय पत्र पर प्रकट शब्दों के अनुसार उसे राशि का भुगतान करना होगा। विनिमय पत्र के स्वीकारकर्ता का उत्तरदायित्व वचन पत्र के रचयिता के

समान है। विनिमय पत्र बिना शर्त का आदेश धारित करता है और जब देनदार या ऊपरवाल राशि का भुगतान करता है तब विनिमय पत्र पर प्रकट शब्दों के अनुसार बिना किसी शर्त के उसे भुगतान करना होता है। स्वीकृति करने के बाद, स्वीकारकर्ता की यह मुख्य जिम्मेदारी हो जाती है कि वह परिपक्वता होने पर विनिमय पत्र की राशि का भुगतान करे।विनिमय पत्र का स्वीकर्ता खुद में ही प्रमुख ऋणी बन जाता है और सम्यक् अनुक्रम धारक को भुगतान करने के लिये मुख्य रूप से जिम्मेदार व्यक्ति भी है। विनिमय पत्र के रचयिता या अदाकर्ता प्रतिभू की स्थिति से हस्तान्तरित होने की पूरी कोशिश करते हैं। एक प्रमुख देनदार के रूप में स्वीकर्ता का दायित्व पूर्ण है। इस प्रकार, एक हद तक स्वीकर्ता का दायित्व बाध्य नहीं है हुंडी की परिपक्वता से पहले भुगतान करने के लिये। लेकिन यदि वह इसे बिना समर्पित किये ऐसा करता है तो वह इसके, कीमत के बदले सद्भावनापूर्ण किसी पश्चातवर्ती धारक को मूल्य चुकाने के लिये उत्तरदायी होगा बिना किसी सूचना के।[4] विनिमय पत्र के स्वीकर्ता के विरूद्ध वाद में जहां रचयिता मुकदमे का हिस्सा नहीं बना वहां अधिनियम के तहत विनिमय पत्र का स्वीकर्ता प्रमुख देनदार के रूप में उत्तरदायी होगा।[5] अधिनियम की धारा 42 के अनुसार यदि कोई विनिमय पत्र फर्जी नाम से बनाया गया है और रचयिता के आदेश पर देय है, तो ऐसे सम्यक् अनुक्रम धारक के प्रति जो लेखीवाल के हस्ताक्षर जैसे ही हस्ताक्षर द्वारा और लेखीवाल द्वारा रचित तात्पर्यित पृष्ठांकन के अधीन दावा करता है, विनिमय पत्र का स्वीकारकर्ता अपने दायित्व से नहीं बच सकेगा कि रचयिता एक कल्पित व्यक्ति है। आमतौर पर फर्जी पृष्ठांकन एक अच्छे स्वामित्व को नहीं पा सकते यहां तक कि सम्यक अनुक्रम धारक के लिये भी नहीं और इसीलिये कोई भी व्यक्ति **पराक्रम्य लिखत** पर उत्तरदायी नहीं होगा किसी ऐसे व्यक्ति के लिये जिसने अपना स्वामित्व फर्जी पृष्ठांकन के आधार पर प्राप्त किया हो। इस सामान्य नियम का एक अपवाद भी है कि अगर स्वीकृति से पहले फर्जी पृष्ठांकन लापरवाही द्वारा स्वीकृत किया गया है तो स्वीकर्ता ऐसे बिल के लिये उत्तरदायी होगा। पहले से ही पृष्ठांकित विनिमय पत्र का प्रतिगृहीता दायित्व से इस कारण से मुक्त नहीं हो जाता कि ऐसा पृष्ठांकन कूटरचित है यदि जबकि उसने विनिमय–पत्र प्रतिगृहीत किया था, वह जानता था या विश्वास रखने का कारण रखता था कि वह पृष्ठांकन कूटरचित है।[6] 'फर्जी पृष्ठांकन पर स्वीकर्ता के दायित्व का कारण है कि या तो उसे इसकी (फर्जी होने की) जानकारी थी या उसके पास विश्वास करने का कारण था कि उसकी स्वीकृति से पहले जो पृष्ठांकन विनिमय पत्र पर था वह कूटरचित था और इस तरह स्वीकर्ता अपनी ही गलती का लाभ नहीं ले सकता। उसे चाहिये कि वह इस तरह के बिल स्वीकार न करे लेकिन एक बार स्वीकार कर लिया तो पृष्ठांकन फर्जी है इस दावे से वह दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता। हालांकि एक स्वीकर्ता स्वीकृति से पहले फर्जी पृष्ठांकन का उत्तरदायी तब नहीं होगा जब वह

न तो जानता हो और न ही यह जान सकने के लिए युक्तियुक्त व्यक्ति हो। बिल स्वीकृत करने के बाद फर्जी पृष्ठांकन के लिए धारक के प्रति स्वीकर्ता उत्तरदायी नहीं होगा।[7]

14.3.1.3 बिल के रचयिता या लेखीवाल का दायित्व

विनिमय पत्र या चैक का लेखीवाल उसके अपरवाल या प्रतिगृहीता द्वारा उसके अनादृत किये जाने पर उसके धारक को प्रतिकर देने के लिये आबद्ध हैं, परन्तु यह तब जबकि लेखीवाल को अनादर की सम्यक् सूचना एतस्मिनपश्चात् उपबंधित रूप में दे दी गयी या प्राप्त हो गयी हो।[8] विनिमय पत्र का लेखीवाल मुख्य रूप से तब तक जिम्मेदार है जब तक स्वीकर्ता द्वारा उसे स्वीकार न कर लिया गया हो। लेकिन स्वीकृति के बाद स्वीकर्ता मुख्य रूप से तब तक जिम्मेदार हो जाता है। लेखीवाल का दायित्व स्वीकर्ता के सम्मुख द्वितीयक बन जाता है। इस प्रकार बिल के लेखीवाल के दायित्व के संदर्भ में निम्नलिखित प्रस्ताव रखा जा सकता है;

1.बिल को जारी व निष्कासित (drawing) कर वह बंध जाता है कि उस पर प्रकट शब्दों अनुसार ऊपरवाल द्वारा स्वीकृत व भुगतान कर दिया जाएगा।

2.अगर गैर स्वीकृति या भुगतान न होने की वजह से अनादृत, हो जाये तो वह धारक व सभी पृष्ठांककों को क्षतिपूर्ति करेगा उस नुकसान को पूरा करने के लिये जो कि उसके द्वारा हुआ है, अनादर की सूचना उसे दिए जाने या प्राप्त हाने के बाद।चेक का लेखीवाल धारक को यह गारंटी देता है कि प्रस्तुत करने पर बैंकर उसका भुगतान करेगा, अगर चेक अनादृत हो जाये, तो लेखीवाल उत्तरदायी होगी धारक की क्षतिपूर्ति करने का बशर्ते उसे अनादृत की सूचना प्राप्त हो गयी हो। फिर भी, विनिमय पत्र के लेखीवाल के दायित्व और धनादेश के लेखीवाल के दायित्व में अन्तर है कि धनादेश के लेखीवाल का दायित्व प्रमुख न कि द्वितीयक। ऐसा इसलिये है क्योंकि विनिमय पत्र का धारक स्वीकर्ता पर मुकदमा दायर कर सकता है लेकिन चेक धारक को बैंकर के विरूद्ध कोई उपचार उपलब्ध नहीं है। उसको उपचार सिर्फ लेखीवाल के विरूद्ध प्राप्त है।[9]

14.3.1.4 ऊपरवाल का दायित्व

पराक्रम्य लिखत अधिनियम में इस बात का कोई प्रावधान नहीं है कि लिखत पर ऊपरवाल का कोई दायित्व होगा लेकिन अपवाद स्वरूप धारा– 31 के अन्तर्गत एक मामले में कहा गया था कि जब धनादेश के ऊपरवाल के पास ग्राहक की पर्याप्त धनराशि हो और तब भी जब दायित्व केवल लेखीवाल के प्रति होगा न कि पाने वाले (payce) के प्रति।[10] धनादेश के ऊपरवाल हमेशा बैंकर ही होते हैं। वह

व्यक्ति जो हमेशा एक खाता बैंकर के साथ रखते हैं, उन्हें ग्राहक कहा जाता है। बैंकर और उनके ग्राहक के बीच के सम्बन्ध संविदात्मक होते हैं। बैंकर का यह संविदात्मक कर्तव्य है कि वह चेक का भुगतान केवल ग्राहक को करे और न ही पाने वाले को या चेक के धारक को करे। अर्थात् अगर बैंकर चेक का भुगतान करने को मना कर दे तो धारक बैंकर के विरूद्ध कोई कदम नहीं उठा सकता और यह तब भी होगा जब अदाकर्ता बैंकर भुगतान के लिये अच्छे के रूप में चिन्हित कर दे। यह प्रिवी काउंसिल द्वारा बैंक आफ बड़ौदा बनाम पंजाब नेशनल बैंक के मामले में निर्धारित किया गया।[11] इस मामले में जी एम का ऋणी था। जी ने ऋण की संतुष्टि में एम को 275000/— का बैंक आफ बड़ोदा का उत्तरदिनांकित धनादेश दे दिया। बी बैंक द्वारा धनादेश को चिन्हित किया गया 20.06.39 को भुगतान किया जायेगा। एम यह धनादेश पंजाब नेशनल बैंक के पास लेकर गया और 240000 रूपये तत्काल मिल गये। 20.06.39 को पंजाब नेशनल बेंक ने यह चैक बड़ौदा बैंक के काउन्टर पर प्रस्तुत किया। क्लर्क ने जी के खाते को देखा और उसमें सिर्फ 7 आने एवं 3 पैसे पाये। इस आधार पर भुगतान करने के लिये मना कर दिया। पंजाब नेशनल बैंक ने बड़ौदा बैंक पर मुकदमा दायर किया ताकि उसके चेक का भुगतान हो सके। उनका तर्क था कि चेक भुगतान के लिये चिन्हित किया था अतः अधिनियम की धारा 7 के अर्थ के आधार पर बड़ौदा बैंक ने चेक को स्वीकार किया था और इसलिये स्वीकर्ता के रूप में जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिये। इस तर्क को अस्वीकार करते हुये, लार्ड राईट ने कहा—

''चेक की स्वीकृति के लिये बैंकों में ऐसा कोई मामला नहीं है............ लेखकों की राय है कि अंकन या प्रमाणीकरण न तो फार्म में और न ही प्रभाव में स्वीकृत है। माननीय न्यायाधीश के मत है कि अंग्रेजी और भारतीय अधिनियमों के अर्थ के अंतर्गत स्वीकृति गठित करने के रूप में चेक का प्रमाणन स्वीकृति नहीं है। यह कहना आवश्यक नहीं है कि चेक कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता यह कहना पर्याप्त होगा कि ऐसा बहुत ही असामान्य और विशेष परिस्थितियों में किया गया है। आज तक भारत या इंग्लैण्ड में ऐसा कोई मामला दर्ज नहीं किया गया जब बैंकर को उसके ऊपर निष्पादित चैक की स्वीकार्यता के लिये उत्तरदायी ठहराया गया हो या उस पर कोई मुकदमा दायर हुआ है।

14.3.1.5 जहाँ धनराशि अपर्याप्त हो

पराक्रम्य लिखत अधिनियम 1881 की धारा 31 के अनुसार, बैंकर का कर्तव्य है कि आहरणकर्ता (लेखीवाल) के खाते में अगर पर्याप्त धनराशि हो, तो वह धनादेश का भुगतान करे। अर्थात् जब या तो चेक का भुगतान करने के लिये पैसे न हो या चैक की पूरी राशि का भुगतान करने के लिये ग्राहक क्रेडिट पर्याप्त न हो, तब चेक का

भुगतान करने के लिये बैंकर का मना करना जायज है। हालांकि अगर बैंकर और ग्राहक के बीच अनुबंध होता है जहां बैंकर ने कहा हो कि वह ग्राहक के सभी चेकों को पूरा करेगा तब भी जब भुगतान करने के लिये ग्राहक के खाते में पर्याप्त धन नहीं होगा, तब बैंकर बाध्य होते हैं, चेक का भुगतान करने के लिये, अन्यथा बेंकर अगर अनुबंध का उल्लंघन करता है तो वह खुद ग्राहक के प्रति उत्तरदायी होगा।[12] अगर एक ही समय पर एक से अधिक धनादेश प्रस्तुत किये जाते हैं और शेष राशि पूर्ण भुगतान के लिये पर्याप्त न होकर कुछ के लिए है, तो बैंकर आंशिक भुगतान नहीं करेगा। केनेडियन कोर्ट के एक निर्णय के अनुसार, बैंकर को सभी चेकों का भुगतान करने से इन्कार कर देना चाहिए।[13] लेकिन संयुक्त राज्य में बैंकर जिस क्रम में चाहे भुगतान कर सकता है जब तक अपर्याप्त धन नहीं रह जाता।[14]

14.3.1.6 जब ग्राहक दिवालिया हो गया हो

बैंकर का अधिकार तब भी निर्धारित किया जाता है जब ग्राहक के दिवालियेपन या उसके खिलाफ दिवालिया याचिका प्रस्तुत होने का नोटिस की सूचना प्राप्त हो।[15] जब ग्राहक के दिवालिया होने का निर्णय दे दिया गया हो, तब उसकी सम्पत्ति अधिकारिक समानुदेशिती के पास निहित होगी, जो केवल उनके साथ निपटने के लिये शक्ति रखता है। ऐसे मामलों में बैंकर दिवालिया ग्राहक के चेक का भुगतान करने से मना कर देगा।[16]

14.3.1.7 जहां ग्राहक पागल व्यक्ति हो गया हो

पागल व्यक्ति अनुबंध करने के लिये सक्षम नहीं होता। अगर बैंकर को सूचना प्राप्त हो, ग्राहक के पागलपन की तो वह भुगतान के अनुबंध पर भी चैक निलंबित कर देगा।

14.3.2 पृष्ठांकक का दायित्व

पराक्रम्य लिखत अधिनियम की धारा 35 में प्रावधान है कि हर पृष्ठांकक विवक्षित रूप से उत्तरदायी होगा हर अनुवर्ती धारक के निर्माता, अदाकर्ता और स्वीकर्ता द्वारा अनादर के लिये। इस प्रकार पृष्ठांकन की स्थिति पूर्व पक्षकारों के लिये प्रतिभू जैसी है। उसका दायित्व तभी होता है जब परिपक्व होने पर मुख्य पक्षकार द्वारा लिखत का भुगतान करना हो। पृष्ठांकक अपने स्वयं के दायित्व पृष्ठांकन में व्यक्त शब्दों के द्वारा अपवर्जित या सशर्त कर सकता है। अधिनियम की धारा 62 अनुमति देता है कि पृष्ठांकक पृष्ठांकन बनाते समय या तो अपने दायित्व को अपवर्जित करेगा (दायित्व रहित पृष्ठांकन द्वारा) या उस पर देय राशि प्राप्ति के लिए इस तरह

दायित्व या पृष्ठांकिती का अधिकार बनायेगा है जो किसी निर्दिष्ट घटना के घटित होने पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिये X द्वारा बनाये गये पृष्ठांकन में वह लिखता है कि Y को दायित्वरहित भुगतान करो। X इस लिखत पर अपना कोई दायित्व नहीं रखता और Y भी X के विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं कर सकता। तब भी जब उन लोगों द्वारा लिखत का अनादरण हो जाए जो उसके भुगतान के लिये बाध्य है । इस तरह के लिखत को दायित्वरहित पृष्ठांकन कहते हैं। इसी तरह X अपने पृष्ठांकन में लिख सकता है– अगर जहाज आ जाये तो Y को भुगतान कर दे। इस तरह के मामले में Y, पृष्ठांकिती का अधिकार है कि वह राशि प्राप्त करे या X का भुगतान करने का दायित्व तब तक नहीं उत्पन्न होता जब तक जहाज आ नहीं जाता।

14.3.2.1विभिन्न पक्षकारों के दायित्व की प्रकृति जो गारंटी के अनुबन्ध के तहत की तरह समान है

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि वचन पत्र बनाना, विनिमय पत्र को स्वीकृत करना, बिल या चैक का स्वरूप बनाना, या पराक्रम्य लिखत के पृष्ठांकन **पराक्रम्य लिखत** को बनाने, स्वीकृत, प्रारूपित या पृष्ठांकित करने वाले व्यक्ति पर कुछ दायित्व आरोपित होते हैं। हालांकि विभिन्न पक्षकार **पराक्रम्य लिखत** के प्रति उत्तरदायी हो सकते हैं लेकिन दायित्व की प्रकृति सभी के लिये एक समान नहीं होती। उनमें से कुछ की दायित्व की प्रकृति प्रमुख देनदार के समान होती है जबकि कुछ लोगों का दायित्व प्रतिभू के समान होगा। **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम की धारा 37 के अनुसार,

''वचन पत्र या चेक का रचयिता, विनिमय पत्र का लेखीवाल प्रतिग्रहण तक, और प्रतिग्रहीता उसके आधार पर क्रमशः मूल ऋणियों के रूप में, तत्प्रतिकूल संविदा न होते, दायी हैं और उसके अन्य पक्षकार, यथास्थिति, रचयिता, लेखीवाल या प्रतिगृहीता के प्रतिभूओं के रूप में उसके आधार पर दायी हैं।''

गारन्टी की संविदा में एक व्यक्ति जो उत्तरदायित्व लेता है प्रमुख दायी हो जाता है और वह व्यक्ति मूल ऋणी होता है एवं वह व्यक्ति जो उत्तरदायित्व लेता है प्रमुख दायी हो जाता है अगर मूल ऋणी प्रतिभू के रूप में अपने कर्तव्य को नहीं निभाता है। चार लोग यानी, वचन पत्र का निर्माता, चेक का निर्माता या आहरणकर्ता और विनिमय पत्र का रचयिता जब तक सवीकृत नहीं होता एवं विनिमय पत्र का स्वीकर्ता मूल ऋणी की स्थिति धारित करते हैं। जब कोई व्यक्ति वचन पत्र बनाता है तब उसकी तरफ से बिना शर्त भुगतान का वचन लिया जाता है और, इसीलिए भुगतान करने की जिम्मेदारी उसकी वैसी ही हो जाती है जैसी प्रमुख ऋणी की

होती है। इसी तरह, जब कोई व्यक्ति चेक लिखता है तब वह अकेला व्यक्ति होता है जिसकी ओर पानेवाला, चेक का भुगतान प्राप्त करने के उसके अधिकार को लागू कराने के लिए देख सकता है एवं वह मूल ऋणी होता है क्योंकि आहर्ती बैंक या धारक की आहर्ती बैंक के साथ कोई संविदात्मक संबंध नहीं होता और चेक के धारक के प्रति आहर्ती बैंक किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं रखता है। इसकी स्वीकृति से पहले विनिमय पत्र लेखीवाल की स्थिति उसी समान होती है जैसी चेक के आहरणकर्ता की होती है यानी वह व्यक्ति ही केवल जिम्मेदार होता है और इसका दायित्व प्रमुख ऋणी की तरह ही होता है। विनिमय पत्र को स्वीकार करने के पश्चात् यह माना जाता है कि विनिमय पत्र का स्वीकर्ता राशि का भुगतान करने का अभिव्यक्त वचन देता हैं, उसका दायित्व प्राथमिक व बिना किसी शर्त के होता है यानी प्रमुख ऋणी की तरह। ऊपर वर्णित पक्षों के अलावा अन्य पक्ष प्रतिभू के रूप में उन लोगों के लिये उत्तरदायी है जो प्रमुख ऋणी के रूप में उत्तरदायी है। अतः विनिमय पत्र के स्वीकार होने के पश्चात् स्वीकर्ता प्रमुख ऋणी होता है और आहर्ती स्वीकर्ता के लिए प्रतिभू होता है, इसी तरह जहां **पराक्रम्य लिखत** पृष्ठांकित किया जाता है, वहां पृष्ठांकक उन लोगों के लिये प्रतिभू होता है जो पहले से ही **पराक्रम्य लिखत** पर उत्तरदायी है। उदाहरण के लिये, A अपने आदेश द्वारा B को देय विनिमय पत्र की रचना करता है जो उसे स्वीकार कर लेता है। बाद में A बिल का पृष्ठांकक C को करता है फिर C. D को और D, E को करता है। इस मामले में B जो कि बिल का स्वीकर्ता है, प्रमुख ऋणी होगा और अन्य सभी पक्ष, यानी A आहरणकर्ता और पृष्ठांकक और C व D भी उसके पृष्ठांकक हैं वह प्रमुख ऋणी (B) के लिये प्रतिभू के रूप में उत्तरदायी होंगे। बेशक इन सभी का दायित्व E की ओर है जो कि विनिमय पत्र का धारक है। जहां दो या दो से अधिक प्रतिभू हैं, उनकी परस्पर स्थिति **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम की धारा 8 में वर्णित है, जो कि इस प्रकार है– प्रत्येक पक्ष वैसे ही उत्तरदायी होगा जैसे प्रत्येक पूर्व पक्ष प्रतिभू के लिये होगा। इसके विपरीत, अनुबंध के अभाव में, वैसे ही उत्तरदायी होगा जैसे प्रमुख ऋणी प्रत्येक अनुवर्ती पक्ष के लिये है।

ऊपर दिये गये पूर्वज्ञान से तात्पर्य यह है कि विभिन्न व्यक्ति **पराक्रम्य लिखत** पर उत्तरदायी है वह न केवल सह–प्रतिभू है, बल्कि आपस में भी उसी तरह हैं स्थिति उनसे प्रत्येक अनुवर्ती पक्ष प्रत्येक पश्चातवर्ती पक्ष जो उसका प्रतिभू है, से सम्बन्धित प्रमुख ऋणी है। A अपने आदेशानुसार देय विनिमय पत्र B पर लिखता है, जो उसे प्रतिगृहीत कर लेता है, तत्पश्चात A विनिमय पत्र को C के नाम, C, D के नाम और D, E के नाम पृष्ठांकित कर देता है। E और B के मध्य, B मूल ऋणी है

और A, C और D उसके प्रतिभू हैं। D और C के मध्य, C मूल ऋणी है और D उसका प्रतिभू है।[17]

14.3.3 अनादरण

अनादरण दो प्रकार के होते हैं –
1. अस्वीकार्यता के कारण विनिमय पत्र का अनादरण।
2.वचन पत्र, विनिमय पत्र या धनादेश का भुगतान न होने के कारण अनादरण।

14.3.1.अस्वीकार्यता के कारण अनादरण

स्वीकृति की आवश्यकता केवल विनिमय पत्र के मामले में पड़ती है एवं इसीलिये ऐसा केवल विनिमय पत्र के मामले में है कि स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण है। धारा 91 में प्रावधान है कि अस्वीकार्यता के कारण विनिमय पत्र का अनादरण किसी भी निम्न तरीकों में हो सकता है–
1.अगर आहर्ती पत्र को स्वीकृति के प्रस्तुतीकरण के समय से 48 घण्टों के अन्दर स्वीकृत नहीं करता या स्वीकृत करने से मना कर दे, पत्र का उसी समय अनादरण हो जाता है। अगर दो या दो से अधिक आहर्ती है जो कि भागीदार नहीं है और उनमें से कोई एक स्वीकृत करने को मना कर देता है, तब बिल का अनादरण होता है, जब तक अनेक आहर्ती भागीदार हैं।[18] आमतौर पर जब अनेक आहर्ती होते हैं तो उन सबको स्वीकृत करना होता है, लेकिन जब आहर्ती भागीदार हो तो एक की स्वीकृति सबकी स्वीकृति मानी जाती है।
2.जब स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण को माफ किया जाये, और बिल को स्वीकृत न किया जाये, तो इसे अस्वीकार्यता के कारण अनादरण कहते हैं। परिस्थितियां जब स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण को छोड़ या माफ कर दिया जाता है वह निम्नलिखित है–
अ.जहां उचित खोज के बाद आहर्ती को पाया न जा सके।
ब.जहां आहर्ती अनुबंध के लिये सक्षम हो।
स.जहां आहर्ती एक फर्जी व्यक्ति हो।
द.जहां आहर्ती दिवालिया हो गया हो या मर चुका हो, धारा 75 के तहत स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण रिसीवर या कानूनी प्रतिनिधि के लिये वैकल्पिक बना दिया है, शायद इस आधार पर कि स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण जहां तक सम्भव हो व्यक्तिगत होना चाहिये।
य.अगर स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण अगर अनियमित हो, तो कुछ अन्य आधारों पर स्वीकृति से इन्कार किया जा सकता है।

3.जब आहर्ती योग्य स्वीकृति देता है, धारक विनिमय पत्र को अनादरण की तरह व्यवहार करेगा। यह उम्मीद की गई है कि आहर्ती बिनाशर्त स्वीकृति देगा। अगर आहर्ती शर्त सहित स्वीकृति देता है और धारक सहमत हो जाता है, वे सभी पक्ष जो कि सहमत नहीं है इस तरह की स्वीकृति देने के लिये, धारक के प्रति अपने दायित्वों से उन्मोचित हो जाते हैं।[19] यह अतः धारक के हित में है कि आहर्ती द्वारा शर्त सहित स्वीकृति दी गई है उसे विनिमय पत्र को अनादरित मान लेना चाहिए। बिनाशर्त स्वीकृति के उदाहरण है अलग राशि का भुगतान करने के लिये स्वीकृति या शर्त की पूर्ति के अधीन भुगतान करना या आहरणकर्ता द्वारा विनिमय पत्र में बताये गये स्थान की जगह किसी दूसरे स्थान पर संदाय।इस धारा के प्रावधान अवलोकन पर या मांग पर देय विनिमय पत्र के पर लागू होते हैं।[20] नानक चंद बनाम लाल चंद[21] के मामले में, पंजाब व हरियाणा उच्च न्यायालय ने कहा कि अवलोकन पर या मांग पर देय विनिमय पत्र के लिए यह आवश्यक नहीं है कि सिर्फ स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण किया जाये। यह सही नहीं है, जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने जगजीवन बनाम रंछोड़दास[22] में कहा था– स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण हमेशा आवश्यक है और हर मामले में भुगतान के लिये पूर्व प्रस्तुति होनी चाहिये और अवलोकन पर या मांग पर देय विनिमय पत्र के मामले में दोनों चरण साथ–साथ होने चाहिये और केवल एक ही प्रस्तुतीकरण हो जो कि स्वीकृति और भुगतान दोनों के लिये हो। अगर बिल का भुगतान नहीं होता, तो अस्वीकार्यता के कारण अनादरण होगा।

14.3.3.2भुगतान न होने (असंदाय) के कारण अनादरण

जब वचन पत्र, विनिमय पत्र या धनादेश भुगतान के लिये विधिवत प्रस्तुत किया जाता है और भुगतान करने से इन्कार कर दिया जाये तो ऐसे लिखत को भुगतान न होने के कारण अनादरित कहते हैं। जब बिल पहले से ही स्वीकार कर लिया गया हो, तो स्वीकर्ता बाध्य है अपने भुगतान को सही समय व स्थान पर प्रदान करने के लिये और ऐसा करने में उसका विफल होना विनिमय पत्र का अनादरण है जिसके संदाय हेतु वह दायी था। चुंकि चैक अदाकर्ता बैंक द्वारा स्वीकार नहीं किया गया, तो वह चैक के लिए आदर नहीं पाएगा जब तक कि उसके साथ चैक के आहरणकर्ता का ऐसा करने के लिये अनुबंधित न हो। यह हालांकि, चेक के अनादरण के सवाल पर कोई प्रभाव नहीं डालता आहरणकर्ता के लिए उसकी रचना द्वारा पानेवाले के लिए घोषणा की गई है कि अगर वह इसे बैंकर को जिसके लिए यह लिखा गया है प्रस्तुत करेगा वह उसका आदर करेगा। अगर ऐसे प्रस्तुतीकरण पर भी बैंकर भुगतान नहीं करता तो अनादरण हो जाता है और धारक को उसी क्षण आहरणकर्ता एवं चेक पर अन्य पक्षों के विरूद्ध अवलंब का अधिकार प्राप्त हो जाता है। वचन पत्र के मामले में जैसे ही निर्माता नियत तारीख पर भुगतान नहीं करता वैसे ही अनादरण हो जाता है।

14.4 सारांश

वचन पत्र के निर्माता और बिल के स्वीकारकर्ता लिखत की परिपक्वता होने पर क्रमशः वचनपत्र पर स्पष्ट शब्दो के अनुसार या स्वीकृति के अनुसार, राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य हैं। ऐसे व्यक्ति बाध्य होते हैं लिखत के किसी भी पक्ष को भरपाई करने के लिये जो उनके द्वारा नुकसान या क्षति के कारण हुआ। मूल रूप में बने हुये लिखत की वैधता को इन्कार करने से वचनपत्र के निर्माता को रोक दिया जाता है और एक वाद में सम्यक् अनुक्रम धारक द्वारा भुगतानकर्ता की लिखत के पृष्ठांकन हेतु अक्षमता का प्रतिपादन नहीं किया जा सकता। स्वीकर्ता न ही भुगतानकर्ता की क्षमता को इन्कार कर सकता है और न ही लेखीवाल द्वारा बिल की रचना (draw) या पृष्ठांकन के अधिकार को इन्कार कर सकता है। हालांकि वह इस बात की वकालत कर सकता कि बिल वास्तविकता में उस व्यक्ति द्वारा रचित नहीं है जिस व्यक्ति द्वारा इस बात का दावा किया गया। स्वीकर्ता यह भी दिखा सकता है कि पृष्ठांकन जाली है, लेकिन अगर यह पता चले या विश्वास करने का कारण हो कि स्वीकृत बिल पृष्ठाकंक जाली है, तो वह दायित्व से बच नहीं सकता। पृष्ठाकंनकर्ता के सम्बन्ध में, उसका दायित्व विनिमय पत्र के रचयिता के समान है। वास्तव में वह एक नया रचयिता कहलाता है और उसे अनादरण का नोटिस प्राप्त होने पर, आहर्ता, निर्माता या स्वीकर्ता द्वारा अनादरण के कारण, प्रत्येक पश्चातवर्ती धारक को उन्हें पहुंची क्षति हेतु क्षतिपूर्ति करने के लिये बाध्य होता है। जब रचयिता उसी वचन पत्र पर हस्ताक्षर कर देता है तब उस पर प्रकट शब्दों के अनुसार बिना किसी शर्त के पत्र का भुगतान उसे करना होता है। वह परिपक्व होने से पहले भुगतान करने के लिये बाध्य नहीं है और तब भी अगर वह ऐसा करता है बिना उसके समक्ष उसके आत्मसमर्पण किये। वह देय होने से पहले बिना सूचना के, कीमत के बदले सद्भावनापूर्ण किसी पश्चातवर्ती धारक को मूल्य चुकाने के लिये उत्तरदायी होगा। जैसे ही यह मान लिया जाता है कि पत्र के रचयिता या बिल के प्रतिग्रहीता ने रचित या स्वीकार कर लिया हैं, तब उस पर यह जिम्मेदारी होती है कि वह अपने दायित्व से छुटकारा पाये, जब तक कि जिस व्यक्ति पर बिल या पत्र के लिये मुकदमा चल रहा है उसके विरूद्ध धोखाधड़ी व कोई प्रथम दृष्टया मामले का आरोप तय न हो, उसी व्यक्ति को दस्तावेज में लिखी पूरी राशि के लिये उत्तरदायित्व माना जायेगा जिसके बिल पर हस्ताक्षर होंगे। जब एक व्यक्ति अपने सहभागी को पत्र देता है जो कि फर्म पर बाध्य न होकर, सहभागी पर हो तब सहभागी द्वारा उस व्यक्ति पर मुकदमा चलाया जा सकता है हालांकि पत्र जिस पर प्रश्न उठाया गया है साझेदारी लेन—देन के संदर्भ में हो एवं भागीदारी पर अंतिम निर्णय न लिया गया हो। एक महत्वपूर्ण मामले में, प्रोनोट के रचयिता ने यह तर्क दिया कि उसने दस्तावेज अपने साले को ऋण दिलाने के लिये एक गारन्टर के

रूप में निष्पादित किये थे और यह समझौता उसके व उसके साले के बीच में प्रभावी है। इस मामले कोर्ट ने कहा कि उस व्यक्ति पर राशि का भुगतान करने का कोई दायित्व नहीं बनता और अगर प्रोनोट के गारंटर या प्रतिभू के रूप में निष्पादित किया है तो वह पूर्ण रूप से विचार करने योग्य होगा और प्रतिवादी प्रोनोट के दायित्व को वह पूरा करने को बाध्य होगा।

यदि विनिमय पत्र का रचयिता विनिमय पत्र को स्वीकार करता है, तो वह उस विनिमय पत्र के लिये उत्तरदायी हो जाता है। उसके द्वारा स्वीकृति का मतलब होता है कि विनिमय पत्र पर प्रकट शब्दों के अनुसार उसे राशि का भुगतान करना होगा। विनिमय पत्र के स्वीकारकर्ता का उत्तरदायित्व वचन पत्र के रचयिता के समान है। विनिमय पत्र बिना शर्त का आदेश धारित करता है और जब देनदार या ऊपरवाल राशि का भुगतान करता है तब विनिमय पत्र पर प्रकट शब्दों के अनुसार बिना किसी शर्त के उसे भुगतान करना होता है। स्वीकृति करने के बाद, स्वीकारकर्ता की यह मुख्य जिम्मेदारी हो जाती है कि वह परिपक्वता होने पर विनिमय पत्र की राशि का भुगतान करे। विनिमय पत्र का स्वीकर्ता खुद में ही प्रमुख ऋणी बन जाता है और सम्यक् अनुक्रम धारक को भुगतान करने के लिये मुख्य रूप से जिम्मेदार व्यक्ति भी है। विनिमय पत्र के रचयिता या अदाकर्ता प्रतिभू की स्थिति से हस्तान्तरित होने की पूरी कोशिश करते हैं। एक प्रमुख देनदार के रूप में स्वीकर्ता का दायित्व पूर्ण है। इस प्रकार, एक हद तक स्वीकर्ता का दायित्व बाध्य नहीं है हुंडी की परिपक्वता से पहले भुगतान करने के लिये। लेकिन यदि वह इसे बिना समर्पित किये ऐसा करता है तो वह इसके, कीमत के बदले सद्भावनापूर्ण किसी पश्चातवर्ती धारक को मूल्य चुकाने के लिये उत्तरदायी होगा बिना किसी सूचना के। विनिमय पत्र के स्वीकर्ता के विरूद्ध वाद में जहां रचयिता मुकदमे का हिस्सा नहीं बना वहां अधिनियम के तहत विनिमय पत्र का स्वीकर्ता प्रमुख देनदार के रूप में उत्तरदायी होगा। अधिनियम की धारा 42 के अनुसार यदि कोई विनिमय पत्र फर्जी नाम से बनाया गया है और रचयिता के आदेश पर देय है, तो ऐसे सम्यक् अनुक्रम धारक के प्रति जो लेखीवाल के हस्ताक्षर जैसे ही हस्ताक्षर द्वारा और लेखीवाल द्वारा रचित तात्पर्यित पृष्ठांकन के अधीन दावा करता है, विनिमय पत्र का स्वीकारकर्ता अपने दायित्व से नहीं बच सकेगा कि रचयिता एक कल्पित व्यक्ति है। आमतौर पर फर्जी पृष्ठांकन एक अच्छे स्वामित्व को नहीं पा सकते यहां तक कि सम्यक अनुक्रम धारक के लिये भी नहीं और इसीलिये कोई भी व्यक्ति **पराक्रम्य लिखत** पर उत्तरदायी नहीं होगा किसी ऐसे व्यक्ति के लिये जिसने अपना स्वामित्व फर्जी पृष्ठांकन के आधार पर प्राप्त किया हो। इस सामान्य नियम का एक अपवाद भी है कि अगर स्वीकृति से पहले फर्जी पृष्ठांकन लापरवाही द्वारा स्वीकृत किया गया है तो स्वीकर्ता ऐसे बिल के लिये उत्तरदायी होगा। पहले से ही पृष्ठांकित विनिमय पत्र का प्रतिगृहीता दायित्व से इस कारण से मुक्त नहीं हो जाता

कि ऐसा पृष्ठांकन कूटरचित है यदि जबकि उसने विनिमय–पत्र प्रतिगृहीत किया था, वह जानता था या विश्वास रखने का कारण रखता था कि वह पृष्ठांकन कूटरचित है। 'फर्जी पृष्ठांकन पर स्वीकर्ता के दायित्व का कारण है कि या तो उसे इसकी (फर्जी होने की) जानकारी थी या उसके पास विश्वास करने का कारण था कि उसकी स्वीकृति से पहले जो पृष्ठांकन विनिमय पत्र पर था वह कूटरचित था और इस तरह स्वीकर्ता अपनी ही गलती का लाभ नहीं ले सकता। उसे चाहिये कि वह इस तरह के बिल स्वीकार न करे लेकिन एक बार स्वीकार कर लिया तो पृष्ठांकन फर्जी है इस दावे से वह दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता। हालांकि एक स्वीकर्ता स्वीकृति से पहले फर्जी पृष्ठांकन का उत्तरदायी तब नहीं होगा जब वह न तो जानता हो और न ही यह जान सकने के लिए युक्तियुक्त व्यक्ति हो। बिल स्वीकृत करने के बाद फर्जी पृष्ठांकन के लिए धारक के प्रति स्वीकर्ता उत्तरदायी नहीं होगा। **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम की धारा 35 में प्रावधान है कि हर पृष्ठांकक विवक्षित रूप से उत्तरदायी होगा हर अनुवर्ती धारक के निर्माता, अदाकर्ता और स्वीकर्ता द्वारा अनादर के लिये। इस प्रकार पृष्ठांकन की स्थिति पूर्व पक्षकारों के लिये प्रतिभू जैसी है। उसका दायित्व तभी होता है जब परिपक्व होने पर मुख्य पक्षकार द्वारा लिखत का भुगतान करना हो। पृष्ठांकक अपने स्वयं के दायित्व पृष्ठांकन में व्यक्त शब्दों के द्वारा अपवर्जित या सशर्त कर सकता है। अधिनियम की धारा 62 अनुमति देता है कि पृष्ठांकक पृष्ठांकन बनाते समय या तो अपने दायित्व को अपवर्जित करेगा (दायित्व रहित पृष्ठांकन द्वारा) या उस पर देय राशि प्राप्ति के लिए इस तरह दायित्व या पृष्ठांकिती का अधिकार बनायेगा है जो किसी निर्दिष्ट घटना के घटित होने पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिये X द्वारा बनाये गये पृष्ठांकन में वह लिखता है कि Y को दायित्वरहित भुगतान करो। X इस लिखत पर अपना कोई दायित्व नहीं रखता और Y भी X के विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं कर सकता। तब भी जब उन लोगों द्वारा लिखत का अनादरण हो जाए जो उसके भुगतान के लिये बाध्य है । इस तरह के लिखत को दायित्वरहित पृष्ठांकन कहते हैं। इसी तरह X अपने पृष्ठांकन में लिख सकता है– अगर जहाज आ जाये तो Y को भुगतान कर दे। इस तरह के मामले में Y, पृष्ठांकिती का अधिकार है कि वह राशि प्राप्त करे या X का भुगतान करने का दायित्व तब तक नहीं उत्पन्न होता जब तक जहाज आ नहीं जाता।

अनादरण दो प्रकार के होते हैं –

1. अस्वीकार्यता के कारण विनिमय पत्र का अनादरण।

2.वचन पत्र, विनिमय पत्र या धनादेश का भुगतान न होने के कारण अनादरण।

स्वीकृति की आवश्यकता केवल विनिमय पत्र के मामले में पड़ती है एवं इसीलिये ऐसा केवल विनिमय पत्र के मामले में है कि स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण है। धारा

91 में प्रावधान है कि अस्वीकार्यता के कारण विनिमय पत्र का अनादरण किसी भी निम्न तरीकों में हो सकता है–

1.अगर आहर्ती पत्र को स्वीकृति के प्रस्तुतीकरण के समय से 48 घण्टों के अन्दर स्वीकृत नहीं करता या स्वीकृत करने से मना कर दे, पत्र का उसी समय अनादरण हो जाता है। अगर दो या दो से अधिक आहर्ती है जो कि भागीदार नहीं है और उनमें से कोई एक स्वीकृत करने को मना कर देता है, तब बिल का अनादरण होता है, जब तक अनेक आहर्ती भागीदार हैं।18 आमतौर पर जब अनेक आहर्ती होते हैं तो उन सबको स्वीकृत करना होता है, लेकिन जब आहर्ती भागीदार हो तो एक की स्वीकृति सबकी स्वीकृति मानी जाती है।

2.जब स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण को माफ किया जाये, और बिल को स्वीकृत न किया जाये, तो इसे अस्वीकार्यता के कारण अनादरण कहते हैं। परिस्थितियां जब स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण को छोड़ या माफ कर दिया जाता है वह निम्नलिखित है–

अ.जहां उचित खोज के बाद आहर्ती को पाया न जा सके।

ब.जहां आहर्ती अनुबंध के लिये सक्षम हो।

स.जहां आहर्ती एक फर्जी व्यक्ति हो।

द.जहां आहर्ती दिवालिया हो गया हो या मर चुका हो, धारा 75 के तहत स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण रिसीवर या कानूनी प्रतिनिधि के लिये वैकल्पिक बना दिया है, शायद इस आधार पर कि स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण जहां तक सम्भव हो व्यक्तिगत होना चाहिये।

य.अगर स्वीकृति के लिये प्रस्तुतीकरण अगर अनियमित हो, तो कुछ अन्य आधारों पर स्वीकृति से इन्कार किया जा सकता है।

3.जब आहर्ती योग्य स्वीकृति देता है, धारक विनिमय पत्र को अनादरण की तरह व्यवहार करेगा। यह उम्मीद की गई है कि आहर्ती बिनाशर्त स्वीकृति देगा। अगर आहर्ती शर्त सहित स्वीकृति देता है और धारक सहमत हो जाता है, वे सभी पक्ष जो कि सहमत नहीं है इस तरह की स्वीकृति देने के लिये, धारक के प्रति अपने दायित्वों से उन्मोचित हो जाते हैं।19 यह अतः धारक के हित में है कि आहर्ती द्वारा शर्त सहित स्वीकृति दी गई है उसे विनिमय पत्र को अनादरित मान लेना चाहिए। बिनाशर्त स्वीकृति के उदाहरण है अलग राशि का भुगतान करने के लिये स्वीकृति या शर्त की पूर्ति के अधीन भुगतान करना या आहरणकर्ता द्वारा विनिमय पत्र में बताये गये स्थान की जगह किसी दूसरे स्थान पर संदाय।

निर्देश

1.ग्लास कोड बनाम बेल्स (1889) 24 क्यूबीडी 13 (सीए)

2.नेयर अली बनाम खैरचन्द 36 आईसी 996

3.सरबूलाल बनाम विशाल चन्द्र (1960) एमपी113

4.बैंक ऑफ महाराष्ट्रा बनाम स्वास्तिक कोरपो, 11 (1992) बीसी 590; (1992) (1) सी सी सी 462
5. भाष्यम एण्ड आदिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 16 वां संस्करण 1997, पृष्ठ 325
6.धारा 41
7.आर के बॉगिया, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम 6 th संस्करण 1997
8.धारा 30
9.पंजाब नेशनल बैंक बनाम बैंक आफ बड़ौदा (1994) 71 आई ए 124, ए आई आर 1944 पीसी 58
10.जगजीवन मावजी बनाम रणछोड़दास ए आई आर 1954 एससी 554
11.(1994) ए सी 176
12.फ्लेमिंग बनाम बैंक ऑफ न्यूजीलैण्ड (1990) एसी 577; रेनर एण्ड जी बनाम हेमब्रोस बैंक, (1942) 2 एएलएल ईआर 5914
13.विलिअर्स बनाम बैंक ऑफ मान्ट्रियल, (1993) ओ डब्लू एन 649.
14.रेनिश्च बनाम कन्सोलिडेट नेशनल बैंक
15.रि डाल्टन (1993)। सीएच 336; 2 ए एल एल ई आर 497 (सीए)
16.ऑर के बॉगिया, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम 6 वां संस्करण 1997
17.दृष्टान्त, धारा 38
18.धारा 33 एवं 314
19.धारा 86
20.वीरप्पा चेट्री बनाम वील्डानेट एम्बुलम, 101 डब्लू 39; 52 आई सी 370
21.ए आई आर 1958 पंजाब दृ 222
22.भाष्यम एण्ड आदिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 16 वां संस्करण 1997

14.5 महत्वपूर्ण शब्दावली

आरहणकर्ता– लिखत का रचयिता या रचनाकार
आहर्ती– अदाकर्ता, वह व्यक्ति जिससे यह आशा की जाती है कि लिखत (चैक) के भुगतान हेतु प्रस्तुत करने पर वह उसका भुगतान कर देगा।
अनादरण– लिखत को स्वीकार करने या उसका भुगतान करने से इंकार करना।

14.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक पाठ्य सामग्री

1.भाश्यम् और अडिगा, **पराक्रम्य लिखत** अधिनियम, 16 वां संस्करण 1997
2.आर0के0 बागिया, परक्राम्य लिखित अधिनियम, 6 वां संस्करण 1997
3.अवतार सिंह, मर्केन्टाइल लॉ के सिद्धान्त, 6 वां संस्करण 1996

4.चालमर्स बिल ऑफ एक्सचेंज, 31st संस्करण
5.पेजैट की बैंकिंग की विधि, 8 वां संस्करण

14.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1.**पराक्रम्य लिखत**के निर्माता व स्वीकार्यता के दायित्वों पर चर्चा कीजिए।
2.पृष्ठांकक के दायित्वों पर चर्चा करें।
3.चैक के अनादरण पर निबन्ध लिखें।